महात्मा गांधी

प्राकृतिक चिकित्सा के प्रबल समर्थक

दो बात

[राय बहादुर डाक्टर लक्ष्मीनारायण चौधरी रिटायर्ड सिविल सर्जन, की लिखी प्रस्तावना]

मुझे बेहद खुशी है कि हिन्दुस्तानी भाषा में श्रीयुत् जानकीशरण वर्मा, बी० ए०, ने 'रोगों की अचूक चिकित्सा' जैसी फ़ायदेमन्द किताब लिखी है। मुझे पूरी उम्मीद है कि इस किताब से हर खासो-आम को अच्छी तनदुरुस्ती क़ायम रखने में और बीमारियों को सहज ही भगा देने में पूरी-पूरी मदद मिलेगी। इस किताब के लेखक ने किसी स्कूल या कालेज में डाक्टरी की तालीम नहीं पाई है, लेकिन यह अच्छा ही है, क्योंकि तब तो वह इलाज के सीधे-सादे, सही और अचूक ढंगों को नहीं बता सकते थे। लेखक ने तनदुरुस्ती और कुदरती इलाज की बहुत सी किताबें और पर्चे—अख़बारात पढ़े हैं, और इसके साथ ही काफ़ी तजुर्बा हासिल किया है। मैं उनके ख़यालात की क़द्र करता हूँ और इस किताब को बहुत मुफ़ीद समझता हूँ। इस किताब में सही और अचूक इलाज की सभी तरकीबें—ठीक-ठीक खाना, हवा, धूप, पानी और मिट्टी का इस्तेमाल; कसरत और आराम के तरीके; अलग अलग बीमारियों के इलाज के तरीके—बताए गए हैं। छोटे छोटे किस्से कहानियों से यह किताब और भी दिलचस्प हो गई है। किसी भी हिन्दुस्तानी भाषा में अभी तक ऐसी किताब नहीं निकली है, और अंगरेज़ी में भी ऐसी किताबों की गिनती कम ही होगी। भाषा इसकी ऐसी है कि मामूली पढ़े-लिखे मर्द और औरत सभी इसमें दी हुई बातों को अच्छी तरह समझ सकते हैं। इस किताब की एक बड़ी खूबी

यह है कि लेखक ने मुश्किल बातों को भी इस तरह समझाया है कि वे सभी की समझ में आ जाती हैं।

तनदुरुस्ती का मसला बहुत आसान है, लेकिन अफ़सोस है कि इन दिनों लोगों ने उसे बहुत मुश्किल बना लिया है। तनदुरुस्त रहना ही शरीर की मामूली कुदरती हालत है, लेकिन इन्सान ने कुदरत के रास्ते में बहुत सी अड़चनें डाल रखी हैं। इसी से इन दिनों बीमारियों की भरमार है। इलाज करने वालों ने इस उल-झन को बढ़ाकर तनदुरुस्ती के मसले को और भी पेचीदा कर दिया है। लेकिन यह मसला इतना पेचीदा नहीं है। कुदरत की राह में अड़चन न डालिए, आप तनदुरुस्त बने रहिएगा। अगर आप बीमार हैं तो जो अड़चनें आपने पहले से डाल रखी हैं उन्हें हटा दीजिए—आप अच्छे और तनदुरुस्त हो जाइएगा। इस सीधी बात को समझना मुश्किल न होना चाहिए। अगर कुदरत के उसूलों की पाबन्दी की जाय तो आदमी की उम्र कम से कम १०० साल की हो, और इसके बाद भी यह हँसता हँसता अपने शरीर को छोड़े, रट भुगतकर न मरे। दवा से कुछ भी फ़ायदा नहीं हो सकता। मैं मामूली दवाओं से लेकर कीमती दवाओं को अपनी ज़िन्दगी में अच्छी तरह आज़मा चुका हूँ, और मुझे यह कहने में कोई हिचक नहीं है कि वे बेकार ही नहीं बल्कि नुक़सानदेह भी हैं। शरीर को मामूली गिज़ा और हवा, पानी, धूप के सिवा और किसी चीज़ की भी ज़रूरत नहीं है। कुदरत ने उसे ऐसा ही बनाया है कि वह अपनी मरम्मत और सफ़ाई आप ही कर लेता है। मुझे खुशी है कि श्रीयुत जानकीशरण वर्मा ने अपनी किताब में इस बात पर ज़ोर दिया है और साथ ही उन कुदरती तरकीबों का भी ज़िक्र किया है, जिनसे बीमारी दूर की जा सकती है।

ऐसी किताब की इस मुल्क में सख्त ज़रूरत थी। यहां गुरबत फैली है। लोगों को पेट भर खाने को नहीं मिलता। फिर बीस

और दवा के लिए रुपए कहां से लाय। अगर लायें भी तो यह जरूरी नहीं है कि बीमारी अच्छी हो ही जायगी। ऐसी हालत में शर्तिया क़ुदरती इलाज ही काम कर सकता है। बुखार या किसी भी तेज बीमारी में उपवास और एनीमा का इस्तेमाल कर के देख लीजिए—आपको खुद ही पता चल जायगा। याद रखिए, अव्वल तो किसी को भी बीमार न होना चाहिए और अगर कोई बीमार हो जाय तो उसे जल्द ही और बिना खर्च के अच्छा हो जाना चाहिए।

मुझे पूरी उम्मीद है कि इस किताब से मुल्क के अमीर-गरीब सब को फ़ायदा पहुंचेगा और जिस मकसद से लेखक ने इसे तैयार किया है वह पूरा होगा। यह किताब सब के घरों में रहनी चाहिए और इसको पढ़कर फ़ायदा उठाना चाहिए।

जबलपुर
जुलाई, १९३९

—लक्ष्मीनारायण चौधुरी
रिटायर्ड सिविल सर्जन

डाक्टर इकबालकृष्ण जैमिनि

और

श्रीमती कुँवर जैमिनि

को

सादर समर्पित

*

आपकी सौजन्यता से ही इस विषय में मेरी रुचि हुई और आपने ही पहले-पहल किताबें दे देकर इस विषय को सीखने के लिए मुझे उत्साहित किया।

—लेखक

आवश्यक सूचना

जो अचूक चिकित्सा-विधियों को जानकर अच्छे और सफल चिकित्सक बनना चाहते हैं वे पहले इस किताब को शुरू से आखीर तक तीन-चार बार अच्छी तरह पढ़ जायें और तब चिकित्सा करना शुरू करें।

जो किसी खास रोग की चिकित्सा के लिए सिर्फ उसी रोग के विवरण को पढ़ेंगे वे उचित लाभ न उठा सकेंगे। किताब को शुरू से आखीर तक कई बार पढ़ जाना ज़रूरी है।

कुछ पाठक सरसरी तौर पर इस किताब को पढ़ कर या इधर-उधर देख कर अपनी शंकाओं को दूर करने के लिए मेरे पास खत भेजते हैं। उनसे मेरी प्रार्थना है कि वे ध्यान देकर पूरी किताब पढ़ें, उन्हें कोई शंका नहीं रहेगी।

—लेखक

मैंने यह पुस्तक क्यों लिखी

मैं यह बताना चाहता हूँ कि यह पुस्तक मैंने क्यों और कैसे लिखी।

कई साल हुए मैं बुरी तरह बीमार हुआ। महीनों खाट पर लाचार हो कर पड़ा रहा। तरह तरह की चिकित्साएं की गईं पर सभी असफल रहीं। जब यह आशंका दृढ़ होने लगी कि मैं शायद ही स्वस्थ हो सकू तब कुछ मित्रों और शुभैषियों ने, जिनमें स्वदेश के सुविख्यात नेता पंडित हृदय नाथ कुजरू का नाम विशेष उल्लेखनीय है, प्राकृतिक चिकित्सा को अजमाने की सलाह दी। इस चिकित्सा से मैं दस दिन के अन्दर ही उठ सका हुआ और यद्यपि पूरी तन्दुरुस्ती हासिल करने में दो वर्ष लगे, मैं हर रोज़ हर हफ्ते पहले से ज्यादा अच्छा होने लगा। मैं पहले भी थोड़ी बहुत होमियोपैथिक और आयुर्वेदीय चिकित्सा करता था, पर अब तो मुझे चिकित्सा का एक अचूक अस्त्र मिलासा मालूम होने लगा। मैंने देखा कि इस चिकित्सा, विधि में अन्दाज़ी और अटकल पच्चू बातें नहीं हैं। ऐसा नहीं है कि अगर यह दवा न लगी तो वह दवा दो। इस में प्रकृति के अचूक नियमों का सहारा है। जिस तरह दिन होता है, रात होती है, जन्म होता है, मृत्यु होती है, ऋतुएं अपना अपना काम करती हैं—जिस तरह विश्व की सभी बातें कारण और कार्य के समन्वय से ठीक ठीक होती हैं, उसी तरह तन्दुरुस्ती के नियमों को तोड़ने से रोग होता है और उन नियमों का फिर से पालन करने से तन्दुरुस्ती वापस आ जाती है। प्रकृति में जैसा तुला न्याय है—नियम तोड़ो दुख भोगो, नियमों का पालन करो, सुखी बनो। इसी विश्वास से प्रेरित होकर मैं प्राकृतिक चिकित्सा की अचूक विधियों को जानने की

कोशिश करने लगा। अपनी चिकित्सा के दिनों में ही, जब मैं स्वस्थ हुआ, तो इस विषय की पुस्तकें पढ़ने लगा। इसके साथ ही साथ इन्हीं दिनों दूसरे लोगों की चिकित्सा करने के मौके भी मिले। पहला अवसर अपने परिवार में ही मिला। एक लड़की ज्वर-ग्रस्त हुई। कई दिनों तक औषधि देने के बाद जब बुखार न उतरा तो जी में यह बात आई कि प्राकृतिक उपचार का सहारा क्यों न लिया जाय। इस उपचार से ज्वर दूसरे ही दिन जाता रहा। इसके बाद मुझे दो तीन मौके और मिले जिसमें से एक यक्ष्मा के रोगी की चिकित्सा के सम्बन्ध में था। ज्यों ज्यों अनुभव बढ़ता गया और चिकित्सा में सफलता मिलती गई त्यों त्यों प्रेरणा हुई कि मातृ-भाषा में एक पुस्तक लिखू जिससे साधारण ज्ञान वाले देश-वासियों, विशेष कर बहनों और माताओं को इस विषय का ज्ञान हासिल हो। देश की हालत को देखते हुए यह जरूरी है कि यहाँ के रहने वाले तन्दुरुस्त और तगड़े बनें रोग-पीड़ित न हों और अगर हों भी तो बिना ज्यादा खर्च के ही जल्दी से जल्दी और जरूर अच्छे हो जायें। रोगों की अचूक चिकित्सा तो मेरा उद्देश्य है लेकिन असली उद्देश्य है कि देश-वासी बीमार ही न हों। इस उद्देश्य से मैंने किताब लिखी और इसमें वैसी ही भाषा का प्रयोग किया, जो आसानी से समझ में आजाय। अचूक चिकित्सा के सिद्धान्त बहुत सरल हैं, लेकिन प्रकृति से दूर हो जाने के कारण हम उसे जल्दी नहीं समझ पाते। इसका ध्यान रखते हुए इस किताब में एक-एक बात को बहुत बार दुहराया गया है। कोशिश यह की गई है कि सधारण ज्ञान वाले लोग भी सभी बातों को अच्छी तरह समझ जायें। जिन सूत्रों से इस किताब के लिए मुझे 'मैटर' मिले वे नीचे दिए जाते हैं —

(१) Henry Lindlhar M D —The Philosophy and Practice of Natural Therapeutics

(२) Adolph Just—Return to Nature

(३) Louis Kuhne—The New Science of Healing, Facial Expression

(४) L N Choudhuri—Ideal Diet for Perfect Health and Rejuvenution Ideal Children and How to Get Them

(५) K L Sarma—Practical Nature Cure Vols 1 & 2 और Fasting Cure

(६) Bernarr Macfadden की बड़ी पुस्तकें Home Health Library उनकी मासिक पत्रिका Physical Culture, और उनकी बहुत सी छोटी-बड़ी पुस्तकें।

(७) Stanley Lief—Diet Reform Simplified How to Feed Children from Infancy onwards, और उनकी मासिक पत्रिका Health for All

(८) Harry Benjamin—Your Diet in Health and Disease Everybody s Guide to Nature—Cure और Better Sight without Glasses

(९) Sir William Arbuthnot Lane—Good Health और उनकी मासिक पत्रिका New Health

(१०) Reddie Mallett—Nature s Way और दूसरी-दूसरी पुस्तकें।

(११) Arnold Ehret—Rational Fasting Mucusless Diet Healing System और दूसरी-दूसरी किताबें।

(१२) विविध लेखकों की बहुत सी छोटी-छोटी पुस्तकें।

(१३) राय बहादुर डाक्टर लक्ष्मीनारायण चौधरी, रिटायर्ड सिविल सर्जन, जबलपुर, के साथ बात-चीत।

(१४) अपना अनुभव।

नं० १४ को छोड़कर औरों का मैं अत्यन्त ऋणी हूँ।

इनके अलावा मैं श्रीयुत गुरुप्रसाद (उस समय सब-पोस्टमास्टर, इलाहाबाद) श्रीयुत वागेश्वर प्रसाद सिंह (संचालक, प्राकृतिक-चिकित्सा स्वास्थ्य-गृह, लूकरगंज, इलाहाबाद), श्रीयुत मूलराज मेहरोत्रा (इलाहाबाद युनिवर्सिटी) और प्रिन्सिपल केदारनाथ गुप्त (अग्रवाल विद्यालय कालेज, इलाहाबाद) का भी ऋणी हूँ। इन मित्रों ने मुझे बराबर उत्साहित किया और अपने अनुभवों से मुझे लाभ पहुँचाने की कोशिश की।

मैं भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, के अधिकारियों का विशेष ऋणी हूँ जिनकी कृपा से अपने विचारों को मैं पाठकों के सामने रखने में समर्थ हो सका हूँ।

इलाहाबाद
अगस्त, १९३६

—जानकीशरण वर्मा

इसे जरूर पढ़िए

दूसरे संस्करण के विषय में

मुझे बेहद खुशी है कि इस किताब के पहले संस्करण का आशातीत आदर हुआ। किताब का आदर उसमें दिए सिद्धान्तों का आदर है, जिससे आशा होती है कि देश वासी शीघ्र ही प्राकृतिक जीवन के नियमों को फिर से अपना कर रोग और दुर्बलता की अवस्था से ऊँचा उठ जायँगे।

इस किताब के लिखने का मेरा वास्तविक उद्देश्य है अपने भाइयों और बहनों को रोग-ग्रस्त होने से बिल्कुल बचाना।

मेरी तरह से जिन लोगों की अवस्था कुछ ज्यादा है उनकी और हमसे भी ज़्यादा उम्र वालों की चिंता तो मुझे है ही, लेकिन ज़्यादा चिंता उनकी है, जिन्होंने अभी-अभी जीवन शुरू किया है। मैं बच्चों, बालकों और नवयुवकों को रोग से बिल्कुल बचाना चाहता हूं। इतना ही नहीं, मैं चाहता हूं कि वे पूर्णतया स्वस्थ हों। उनके शरीर, भाव और मन की सारी शक्तियां पूरी-पूरी पुष्ट और विकसित हों और वे जीवन का अत्यधिक आनंद लेते हुए दूसरों के काम आयें। हमें तो जो होना था वह बहुत कुछ हो चुका। हम भी अपनी उन्नति कर सकते हैं, अब से कहीं ज्यादा अच्छे हो सकते हैं, पर हम अपने अतीत से सीमित हैं। इसीलिए हमें अपने बच्चों की ज़्यादा फिक्र होनी चाहिए।

इस संस्करण में बहुत सी बातें नई हैं—तीन खंड—'बच्चों का पालन-पोषण', 'स्त्रियों का स्वास्थ्य' और 'प्राकृतिक चिकित्सा का इतिहास'—बिल्कुल नये हैं। इनके अलावा पुराने खंडों में कई नये

अध्याय मिलाये गये हैं। 'दुर्घटनाओं की चिकित्सा' और 'चिकित्सकों के प्रति' ऐसे दो नये अध्याय हैं। इतना ही नहीं, प्राय हर पेज में कुछ लाइनें बढ़ाई गई हैं और बहुत सी ऐसी बातों पर प्रकाश डाला गया है, जिनका जिक्र पहले संस्करण में बिल्कुल न था। पाठक इस संस्करण को एक नई किताब की तरह आदि से अंत तक पढ़ जाने की कृपा करें। मुझे पूरी आशा है कि इस संस्करण से पुराने पाठक भी बहुत संतुष्ट होंगे।

चिकित्सा और स्वास्थ्य से संबंध रखने वाले अनुभव रोज ही बढ़ते रहते हैं। मुझे हर्ष है कि आगे के लिए मेरे पास बहुत सी बहुमूल्य बातें अभी से इकट्ठी हो रही हैं। पुराने संस्करण को दुहराने से पहले जो वृद्धि मेरे अनुभव में हुई थी वह पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है।

इलाहाबाद
मार्च, १९३८

लेखक

तीसरे और चौथे संस्करण के विषय में

तीसरे संस्करण में मैंने कोई खास तब्दीली नहीं की, पर इस चौथे सस्करण में बहुत बातें बढ़ाई और कुछ बातें बदली गई हैं। इस वृद्धि और परिवर्तन के लिए बहुत सी बातें अपने अनुभव और पुस्तकों के अध्ययन से मिलीं और कुछ बातें इलाहाबाद के नेचरो होमियो डाक्टर ब्रजबिहारी दीक्षित और गुरुकुल कांगड़ी के नेचरो-पैथी (प्राकृतिक चिकित्सा शास्त्र) के अध्यापक श्री भवानीप्रसाद जी के परामर्श से मिलीं। इन सज्जनों को धन्यवाद।

इस संस्करण को भी बिल्कुल नई पुस्तक की तरह पढ़िए।

चौथे संस्करण के प्रकाशित होने के पहले मैंने नीची लिखी पुस्तकें पढ़ीं:-

(१) Macfadden—Encyclopedia of Physical Culture 5 vols

(२) Hay—Health via Food

(३) Kellogg—Rational Hydrotherapy

(४) Beman—How Do You Sleep

इन लेखकों को धन्यवाद। यह पुस्तक बहुत बड़ी हो सकती थी, पर मैंने तो इसे पारिवारिक प्रयोग के दृष्टिकोण से ही लिखा है।

—लेखक

कैम्प दिल्ली,

एप्रिल, १९४४

पांचवें संस्करण की भूमिका

यह इस पुस्तक का पाँचवाँ संस्करण है।

अक्सर मित्रों की सलाह आती रहती है कि मैं कुछ और रोगों की चिकित्सा पर प्रकाश डालूँ। शायद वे इस सिद्धान्त को जो इस पुस्तक में बार-बार दुहराया गया है, नहीं समझते कि प्राकृतिक-चिकित्सा पद्धति के दृष्टिकोण से विविध लक्षणों के होते हुए भी रोग एक ही हैं, चाहे उसका जो भी नाम रखा जाय। चिकित्सक का काम है अनुकूल उपचारों के सहारे जीवन शक्ति की रक्षा करना और विकारों के निकलने में शरीर की सहायता करना। अलग अलग रोगों के शीर्षक के नीचे जो बताया गया है वह राह दिखाने के लिए है।

अगर पाठक ध्यान पूर्वक पढ़ेंगे तो इस संस्करण में उन्हें बहुत बातें नई मिलेंगी

इलाहाबाद
जून, १९४७

—लेखक

चित्र-सूची

हाफ़टोन चित्र

[नोट—इनके अतिरिक्त भारत तथा अन्य देशों में भी अनेक प्रख्यात चिकित्सक हैं, जो प्राकृतिक उपचारों से ही रोग निवारण करते हैं]

सादे चित्र—

—

विषय सूची

विषय पृष्ठ

२ अचूक चिकित्सा के ढंग

३ रोगों का इलाज

४. कसरत और आराम

५. मन को ठीक रखना

६ बच्चों का पालन-पोषण

विषय पृष्ठ

७ स्त्रियों का स्वास्थ्य

विषय पृष्ठ

८. कुछ और बातें

रोग-वृक्ष

(डाक्टर लिन्डलहार के एक चित्र के आधार पर)

रोग शरीर में बाहर से नहीं आता। अप्राकृतिक जीवन से ही शरीर में विकार पैदा होता है और उसी विकार से तरह-तरह के रोग होते हैं। जड़ को ही न-ष्ट कीजिए, शाखा और पत्तियों के काटने से अच्छा लाभ नहीं हो सकता।

साधारण ज्ञान

तनदुरुस्ती, रोगों का कारण, रोगों के प्रकार,
चिकित्सा-सिद्धान्त, भोजन

तनदुरुस्ती

तनदुरुस्ती शरीर की मामूली हालत है। जरा से ध्यान से शरीर अच्छी हालत में रह सकता है। लेकिन तनदुरुस्ती और बीमारी के बारे में लोगों के कुछ अजीब विचार हैं। लोग समझते हैं कि अधिकतर बीमार रहना ही शरीर की मामूली हालत है। हमारे दिलों में भय सा बना रहता है कि न जाने हम कब बीमार हो जायें। होता भी ऐसा ही है। कभी जुकाम (सर्दी) होता है तो कभी बुखार (ज्वर), कभी पेट दुखता है तो कभी सर, कभी पेचिश (आंव) होती है तो कभी पतले दस्त आते हैं और कभी हैजा फैलता है तो कभी चेचक का प्रकोप भयंकर रूप धारण करता है। हर साल, हर मौसम, हर महीने, हर हफ्ते और हर दिन बीमार रहते-रहते हम ऐसा समझने लगे हैं कि बीमार रहना मानो मामूली और जरूरी बात है।

हमारी हालत—

हमारे देश-वासियों की दशा बहुत ही सोचनीय है। लड़कियाँ इतनी कमजोर रहती हैं कि वे माता बनने के बिलकुल योग्य नहीं रहतीं। बहुत से गर्भ नष्ट हो जाते हैं। लड़के अच्छी तरह नहीं बढ़ते। पूरे जवान होने के पहले ही वे बुड्ढे होने लगते हैं। समय के पहले बुढ़ापा सा मामूली बात हो रही है। टी० बी० (यक्ष्मा) के शिकार होने वालों की संख्या हर दिन बढ़ रही है। रोगों की सूची में नित नये नाम दर्ज किये जा रहे हैं और डाक्टरों की खोज, मेहनत और तरह-तरह की दवाइयों के प्रयोग से भी न तो रोग निर्मूल हो रहा है और न जनता की तनदुरुस्ती में उन्नति है। दूसरे देशों की हालत इतनी खराब नहीं है। आखिर, अपने यहां की खराबियों का कारण क्या है?

कारण और कार्य का सम्बन्ध—

सब बातों में कारण और कार्य का सम्बन्ध देखा जाता है। बिना कारण बिना सबब के कोई बात नहीं होती—यह हम खूब अच्छी तरह समझते हैं। अगर कोई कर्ज में पड़ता है तो हम कहते हैं कि वह अपनी आमदनी से ज्यादा खर्च करता है, इसलिए कर्जदार हुआ। अगर फसल अच्छी नहीं होती तो हम कहते हैं कि वर्षा अच्छी नहीं हुई, इसी से पैदावार सन्तोषजनक नहीं है। अगर मकान गिर पड़ता है तो कहते हैं कि नींव और दीवार मजबूत न थीं। इसी तरह प्रत्येक घटना या बात का कारण हम ढूंढ़ निकालते हैं। लेकिन जब तनदुरुस्ती की बारी आती है तो कारण और काम का सम्बन्ध हम बिलकुल भूल जाते हैं। अगर कोई पूछे कि तनदुरुस्ती क्यों खराब है तो हम कहते हैं, 'न जाने क्यों हमारी तनदुरुस्ती खराब रहती है। हम तो बराबर अच्छी तरह रहते हैं, मामूली खाना खाते हैं फिर भी तनदुरुस्ती अच्छी नहीं रहती। हमारे भाग्य में अच्छा रहना लिखा ही नहीं।' इस प्रकार अपने बीमार रहने का दोष हम अपने भाग्य या किसी और के मत्थे मढ़ते हैं। जुकाम क्यों हुआ? ठंढ लग गई। बुखार क्यों हुआ? गर्मी ज्यादा पड़ती है। फोड़े क्यों निकले? बरसात का मौसम है। मानो अपना कोई दोष ही नहीं। दोष या तो मौसम का है या किसी और का। हम यह भी देखते हैं कि उसी ठंढ या गर्मी में सभी लोग घूमते फिरते और रहते हैं फिर भी बहुतों को जुकाम या ज्वर नहीं होता। तो भी अपने लिए सारा दोष हम मौसम के ऊपर ही थोपते हैं। मौसम का, बाहरी सर्दी या गर्मी का, प्रभाव (असर) शरीर पर पड़ता जरूर है, पर यह भी तो देखना चाहिए कि शरीर कैसा है, उसे हम किस तरह रखते हैं, उसे कैसा भोजन देते हैं, उसके अन्दर का खून साफ है या विकार-युक्त—उसे हमने मजबूत बनाया है या कमजोर कर दिया है, वह गर्मी-सर्दी सह सकता है या नहीं और अगर नहीं, तो

क्यों नहीं। कारण और कार्य का सम्बन्ध ठीक नहीं समझने के कारण हम अपने को निर्दोष बताते हैं और इसी से दुखी बने रहते हैं।

पश्चिम की सभ्यता के प्रभाव में पड़कर हम अपने पुराने अच्छे संस्कारों को खो बैठे हैं। इन सदियों की गुलामी में हम धीरे-धीरे इतना बदल गये हैं कि हमारा खाने-पीने, रहने-सोने, सभी कुछ का ढंग अनुचित और रोग बढ़ाने वाला हो गया है। मुश्किल तो यह है कि हमारे सोचने-विचारने का ढंग भी इतना बदल गया है कि अपने आहार विहार और व्यवहार का सुधार हम करना ही नहीं चाहते। यूरप-अमेरिका की गलत बातें, वहां के गलत तरीके यहां आसानी से चालू हो जाते हैं, पर उनके यहां जो सुधार होते हैं उनसे हम फायदा नहीं उठाते।

जब तक हम अपने को बहुत अंशों में पुराने आदर्शों पर वापस नहीं लाते हमारी हालत नहीं सुधरने की।

सब से पहले कारण-कार्य का सम्बन्ध समझना होगा।

कुछ भ्रम—

रोग के बारे में एक भारी भ्रम कुछ वर्ष पहले फैला हुआ था। वह भ्रम अब धीरे-धीरे कम हो रहा है। कुछ लोग रोगों का कारण भूत प्रेतादि से सताया जाना बताते हैं। मैं इस भ्रम के सम्बन्ध में भी यही कहूँगा कि कारण और कार्य की समझदारी की कमी से हम लोग भूत प्रेत को अपने रोगों का कारण समझते हैं।

इन दिनों रोगों के कारण के बारे में एक दूसरी हवा फैली हुई है, और वह हवा इतनी जोरदार है कि आंधी का रूप धारण कर सबको अपने सामने झुकाये है। आम कल पढ़े लिखे लोग—प्रायः सारा सभ्य संसार—रोगों का कारण कृमि (छोटे-छोटे कीड़े—germs) बताते हैं। यदि मैलेरिया (जाड़ा बुखार) होता है तो कृमि (मच्छड़ों के काटने) से, प्लेग होता है तो कृमि से, हैजा कृमि से, यक्ष्मा (तपेदिक) कृमि से—रोगों में प्रायः सैकड़े-निन्यानबे रोग कृमि से ही पैदा होते हैं।

कारण और कार्य का सम्बन्ध—

सब बातों में कारण और कार्य का सम्बन्ध देखा जाता है। बिना कारण बिना वजह के कोई बात नहीं होती—यह हम खूब अच्छी तरह समझते हैं। अगर कोई कर्ज में पड़ता है तो हम कहते हैं कि वह अपनी आमदनी से ज्यादा खर्च करता है, इसलिए कर्जदार हुआ। अगर फसल अच्छी नहीं होती तो हम कहते हैं कि वर्षा अच्छी नहीं हुई, इसी से पैदावार सन्तोषजनक नहीं है। अगर मकान गिर पड़ता है तो कहते हैं कि नींव और दीवार मजबूत न थी। इसी तरह प्रत्येक घटना या बात का कारण हम ढूंढ निकालते हैं। लेकिन जब तनदुरुस्ती की बारी आती है तो कारण और कार्य का सम्बन्ध हम बिलकुल भूल जाते हैं। अगर कोई पूछे कि तनदुरुस्ती क्यों खराब है तो हम कहते हैं, 'न जाने क्यों हमारी तनदुरुस्ती खराब रहती है। हम तो बराबर अच्छी तरह रहते हैं, मामूली खाना खाते हैं, फिर भी तनदुरुस्ती अच्छी नहीं रहती। हमारे भाग्य में अच्छा रहना लिखा ही नहीं।' इस प्रकार अपने बीमार रहने का दोष हम अपने भाग्य या किसी और के माथ मढ़ते हैं। जुकाम क्यों हुआ? ठंढ लग गई। बुखार क्यों हुआ? गर्मी ज्यादा पड़ती है। फोड़े क्यों निकले? बरसात का मौसम है। मानो अपना कोई दोष ही नहीं। दोष या तो मौसम का है या किसी और का। हम यह भी देखते हैं कि उसी ठंढ या गर्मी में सभी लोग घूमते-फिरते और रहते हैं फिर भी बहुतों को जुकाम या ज्वर नहीं होता। तो भी अपने लिए सारा दोष हम मौसम के ऊपर ही छोड़ते हैं। मौसम का, बाहरी सर्दी या गर्मी का, प्रभाव (असर) शरीर पर पड़ता जरूर है, पर यह भी तो देखना चाहिए कि शरीर कैसा है, उसे हम किस तरह रखते हैं, उसे कैसा भोजन देते हैं, उसके अन्दर का खून साफ है या विकार-युक्त—उसे हमने मजबूत बनाया है या कमजोर कर दिया है, वह गर्मी-सर्दी सह सकता है या नहीं और अगर नहीं तो

क्यों नहीं। कारण और कार्य का सम्बन्ध ठीक नहीं समझने के कारण हम अपने को निर्दोष बताते हैं और इसी से दुखी बने रहते हैं।

पश्चिम की सभ्यता के प्रभाव में पड़कर हम अपने पुराने अच्छे संस्कारों को खो बैठे हैं। इन सदियों की गुलामी में हम धीरे-धीरे इतना बदल गये हैं कि हमारा खाने-पीने, रहने-सोने, सभी कुछ का ढंग अनुचित और रोग बढ़ाने वाला हो गया है। मुश्किल तो यह है कि हमारे सोचने-विचारने का ढंग भी इतना बदल गया है कि अपने आहार विहार और व्यवहार का सुधार हम करना ही नहीं चाहते। यूरप अमेरिका की गलत बातें, वहां के गलत तरीके यहां आसानी से चालू हो जाते हैं, पर उनके यहां जो सुधार होते हैं उनसे हम फायदा नहीं उठाते।

जब तक हम अपने को बहुत अंशों में पुराने आदर्शों पर वापस नहीं लाते हमारी हालत नहीं सुधरने की।

सब से पहले कारण-कार्य का सम्बन्ध समझना होगा।

कुछ भ्रम—

रोग के बारे में एक भारी भ्रम कुछ वर्ष पहले फैला हुआ था। वह भ्रम अब धीरे-धीरे कम हो रहा है। कुछ लोग रोगों का कारण भूत प्रेतादि से सताया जाना बताते हैं। मैं इस भ्रम के सम्बन्ध में भी यही कहूँगा कि कारण और कार्य की समझदारी की कमी से हम लोग भूत प्रेत को अपने रोगों का कारण समझते हैं।

इन दिनों रोगों के कारण के बारे में एक दूसरी हवा फैली हुई है, और वह हवा इतनी जोरदार है कि आंधी का रूप धारण कर सबको अपने सामने झुकाये है। आज कल पढ़े लिखे लोग—प्रायः सारा सभ्य संसार—रोगों का कारण कृमि (छोटे-छोटे कीड़े—germs) बताते हैं। यदि मैलेरिया (जाड़ा बुखार) होता है तो कृमि (मच्छड़ों के काटने) से, प्लेग होता है तो कृमि से, हैजा कृमि से, यक्ष्मा (तपेदक) कृमि से—रोगों में प्रायः सैकड़े-निन्यानवे रोग कृमि से ही पैदा होते हैं।

कृमि अवश्य हैं और उनका प्रभाव शायद शरीर पर पड़ता होगा, पर जिस तरह मजबूत और तनदुरुस्त शरीर में मौसम से खराबी नहीं होती उसी तरह ऐसे शरीर में कृमियों से भी रोग पैदा नहीं हो सकते। पर आज कल तो ऐसी शिक्षा दी गई है कि बड़े से बड़ा डाक्टर और गाँव-गँवई का एक मामूली आदमी, दोनों ही कृमि को ही मनुष्य शरीर को मिटाने और नाश करने वाला मानते हैं।

इन सब का अभिप्राय (मतलब) यह है कि आदमी अपने शरीर के लिए अपने ऊपर उत्तरदायित्व (जिम्मेदारी) लेना नहीं चाहता। चाहे हम बहुत ज्यादा खा लिया करें, चाहे हम देर से पचने वाली चीजें खा लिया करें, भूख न रहने पर भी पेट भर कर खाया करें, बिना अच्छी तरह चबाये ही खाए हुए कौर को गले के नीचे जाने दें, कुछ भी कसरत न करें, गन्दे स्थानों में रहा करें, गन्दे और कमजोर करने वाले विचारों को अपने मन में रहने दें, पर यदि इन कारणों से बीमारी हो तो जिम्मेदार होगा मौसम या भूत या कृमि या और कोई, हम नहीं। इसे ही कहते हैं समझ की कमी। इसी कमी के कारण हम दुःख भोग रहे हैं।

आज कल शायद ही कोई ऐसा माई का लाल होगा, जिसे कोई भी बीमारी न सताती हो। कब्ज तो साधारण बात है। क्या छोटा क्या बड़ा, क्या जवान क्या बुड्ढा क्या अंग्रेज क्या हिन्दुस्तानी, सभी इस कब्ज के शिकार हैं। फिर जुकाम-खांसी का हो आना तो मामूली-सी बात है। हर तीसरे चौथे महीने जुकाम रूपी मेहमान का स्वागत करना पड़ता है। साल में एक दो बार बुखार होना ही चाहिए। और इन सब तीव्र* (नये) रोगों के अलावा बवासीर, गठिया, मधुमेह दमा, आदि जीर्ण* (पुराने) रोगों की भी भरमार हो रही है। चालीस साल लगते लगते, कभी-कभी पहिले भी, एक न एक जीर्ण रोग जीवन का साथी बन जाता है और उससे मरन तक छुटकारा नहीं मिलता।

---

*तीव्र, जीर्ण का भेद आगे बताया जायगा।

एक मजेदार बात यह है कि उधर तो रोग-रूपी शत्रु कतार बांधे खड़े हैं और इधर चिकित्सकों (इलाज करने वालों) की भी संख्या बढ़ती जा रही है। चिकित्सकों की सेना में बेतरह वृद्धि हो रही है। फिर भी रोग दम नहीं लेने देता। यह कहना कठिन है कि आज दिन संसार में रोग अधिक हैं या चिकित्सक। चिकित्सकों के तो दल के दल, और वह भी तरह-तरह के, उमड़ पड़े हैं। आयुर्वेदीय वैद्य यूनानी हकीम, एलापैथिक डाक्टर, होमियापैथिक डाक्टर इत्यादि इत्यादि सभी अपने अस्त्र-शस्त्र, तीर-तरकस लगाये खड़े हैं, तो भी न तो कब्ज मरता है न जुकाम, न दमा भागता है न गठिया। लोग उसी तरह बीमार होते हैं और मरते हैं जिस तरह पहले। शायद पहले की अपेक्षा (बनिस्बत) अब बहुत ज्यादा बीमार होते हैं। प्राय ऐसा देखा जाता है कि अच्छे से अच्छे वैद्य और डाक्टर लगे रहते हैं, तो भी जाड़ा-बुखार हर रोज आ जाता है। अच्छी से अच्छी दवाएँ दी जाती हैं, तो भी कब्ज बना ही रहता है और यदि दो-चार दिनों के लिए जाता है तो फिर आ जाता है। बहुत से रोग तो ऐसे आ घेरते हैं कि वैद्य के बाद हकीम और हकीम के बाद डाक्टर और एक डाक्टर के बाद दूसरा डाक्टर, तीसरा, चौथा, पाँचवाँ डाक्टर, सभी अपनी अपनी युक्तियाँ लगाते हैं, फिर भी बीमारी टस-से मस नहीं होती। हो तो कैसे? हम तो अपनी जिम्मेदारी समझते ही नहीं। हम शरीर के चलाने वाले अचूक नियमों को नहीं मानते। डाक्टर भी हमें हमारी जिम्मेदारी नहीं समझाते और न शरीर के नियमों को ही समझने देते हैं। कभी हम मौसम या किसी बाहरी चीज को दोषी बताते हैं और अपनी तकलीफ से छुटकारा पाने के लिए डाक्टर और दवा का सहारा लेते हैं तभी हम अपनी जिम्मेदारी दूसरे के सर पटक देते हैं। नतीजा यह होता है कि हम बीमार के बीमार बने रहते हैं और लाचार होकर अपने दिन बिताते हैं। सारा दोष भाग्य के मत्थे मढ़ा जाता है, क्योंकि और हो ही क्या सकता है? अपने को दोषी
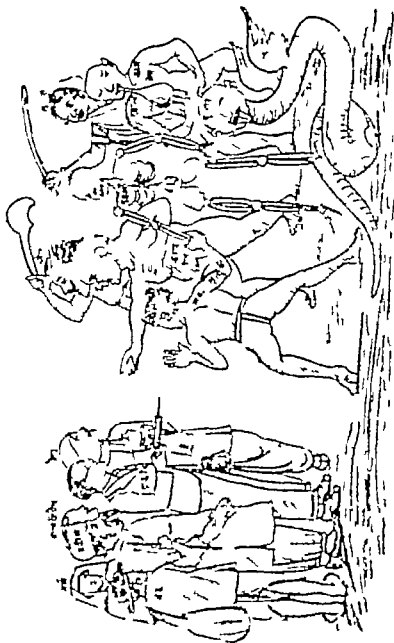
नहीं समझते और न डाक्टर-वैद्य को ही दोषी समझते हैं। भला, आयुर्वेद, या हिकमत पढ़ा हुआ वैद्य या हकीम या पांच-छः साल जान देकर एम० बी०, बी० एस० की डिग्री (उपाधि) पाया हुआ विद्वान डाक्टर क्योंकर दोषी ठहराया जा सकता है। इसलिए बेचारा भाग्य ही कोसा जाता है।

तन्दुरुस्त रहना आसान है—

तो क्या रोगी बना रहना या बार-बार बीमार होना मनुष्य-शरीर की मामूली हालत है? नहीं। जैसा हम ऊपर कह आये हैं, हम अपनी ना-समझी के कारण दुख भोगते हैं। सच पूछिए तो तनदुरुस्त रहना, बीमार न होना, तगड़ा बना रहना, आसान है, और यही हमारे शरीर की स्वाभाविक अवस्था है। जिस तरह और बहुत सी बातें उल्टी सीधी हो गई हैं उसी तरह तनदुरुस्ती के सम्बंध में हमारे विचार उल्टे हो गये हैं। इसलिये तनदुरुस्त बनने और रहने के लिए सब से पहले यह अच्छी तरह जान और समझ लेना चाहिए कि तनदुरुस्त रहना ही आसान और स्वाभाविक है और रोगी बनना कठिन और अस्वाभाविक। यह हमारा ही दोष है कि हम तनदुरुस्ती के सच्चे नियमों को जानने की कोशिश नहीं करते और अगर उन्हें जानते भी हैं तो उनको न मानकर हम बीमार होते हैं।

सोचिए तो सही—

सोचिए तो सही, क्या जानवर भी उतना बीमार होता है जितना कि मनुष्य? पालतू जानवर तो मनुष्य के संग-साथ रहने के कारण दो-तीन बार बीमार भी होता है, और उसके लिए अब अस्पताल भी खुल गये हैं, पर जंगली जानवर तो अपने जीवन में सिर्फ एक बार बीमार होता है और उसी समय अपने शरीर को छोड़ देता है। मनुष्य की तरह वह

बार-बार और हर साल बीमार नहीं होता और न रट-रट कर, दुख भुगत कर, अपने प्राण देता है। फिर यह तो सोचिए कि मांसाहारियों में सिर्फ आदमी ही क्यों चश्मा (ऐनक) लगाता है! गधे, घोड़े, बैल, कुत्ते इत्यादि जानवरों की आंखें उस तरह क्यों खराब नहीं होतीं जिस तरह आदमियों की होती हैं! क्या आदमी की आंखें कमजोर बनी हैं या उसकी आंखें उसकी अपनी ही करनी से खराब हो जाती हैं! यह भी सोचिए कि क्या आप की गाय के बच्चा जनने के समय किसी लेडी डाक्टर की जरूरत पड़ती है! लेडी डाक्टर द्वारा बच्चा जनने के बाद भी हमारी स्त्रियां अक्सर बुरी तरह बीमार होती और मरती हैं। ऐसा क्यों होता है! क्या ऐसी ऐसी घटनाओं के लिए हम मनुष्य, स्वयं जिम्मेदार नहीं हैं!

इस सृष्टि में मनुष्य और जानवर के अलावा पेड़ पौधे और लता गुल्म भी हैं। क्या ये भी आदमी की तरह दुःख भोगते हैं! यदि नहीं, तो क्या सिर्फ मनुष्य ही इतना कमजोर है कि वह बीमार हुआ करे! क्या उसके पढ़ने-लिखने, विद्योपार्जन करने, सभ्य बनने और सभी तरह शक्तिमान बनने का यही नतीजा है कि स्वस्थ और सुखी रहने के बदले वह रोगों का शिकार हुआ करे! मनुष्यों में भी जो कम पढ़े लिखे और सभ्यता में पीछे हैं वे पढ़े लिखों और सभ्यों की अपेक्षा कम रोग-ग्रस्त होते हैं। इसका कारण क्या है! यही कि हम प्रकृति से बहुत दूर हट गए हैं।

हमने तनदुरुस्ती की समस्या को टेढ़ी खीर बना दी है हमसे स्वाभाविकता और सादगी दूर भाग गई है, हम मामूली प्रकृति के नियमों को न तो समझते हैं और न समझ कर उन्हें मानते हैं, और साथ ही जैसा कि ऊपर कहा गया है, हम अपनी जिम्मेदारी कभी मौसम पर, कभी जल-वायु पर कभी चिकित्सकों पर, कभी औषधियों पर और ज्यादातर करम पर डाल देते हैं।

सीधा सादा, पाक-साफ प्रकृति के नियमों के अनुसार जीवन व्यतीत कर तनदुरुस्त रहना आसान है। तनदुरुस्ती मानव शरीर की स्वाभाविक

अवस्था है। मनुष्य, जैसा कि वह देखने में मालूम होता है, वैसा नहीं है। उससे कहीं ऊँचा है। वह इस पृथ्वी पर रोगी बने रहने के लिए नहीं आया है। वह स्वर्गीय है, ईश्वरीय है, दिव्य है। यदि वह अपने वास्तविक बड़प्पन को समझे और उसी के अनुसार जीवन बितावे तो वह कभी भी रोग-ग्रस्त न हो। बहुत समय तक अपने शरीर को अच्छी तरह धारण करने के बाद जब शरीर-त्याग करने का समय आयेगा तो जिस तरह कपड़े उतार कर रखे जाते हैं उसी तरह अपने पुराने शरीर को उतार कर वह चल देगा। ऐसे ही जीने को जीना कहते हैं और वैसा जीना, जिसमें हर रोम कोई न कोई रोग पीछे लगा है, मरने से भी बुरा है।

शरीर रखने के कुछ नियम हैं। बनावटी सभ्यता के इस युग में वे नियम खो से गये हैं और समझाने पर भी जल्दी समझ में नहीं आते। यदि उनके बारे में कोई कुछ कहता है तो सुनने वाले ताज्जुब करते और हँसते हैं, पर अब धीरे-धीरे उन नियमों के मानने वालों की संख्या बढ़ रही है। इस छोटी-सी किताब में वे नियम दुहराये जायंगे। साथ ही यह विश्वास दिलाया जाता है कि जिस तरह दिन के बाद रात और फिर रात के बाद दिन आता है उसी तरह प्राकृतिक नियमों के पालन करने के बाद तनदुरुस्ती आती है और यदि वह खराब हो गई है तो अच्छी हो जाती है। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

रोगों का कारण

पहले कहा जा चुका है कि, और बातों की तरह, रोगों के बारे में भी कारण और कार्य का सम्बन्ध देखना चाहिए। जब रोगों के सच्चे कारण का पता चल जायगा तो हम उन कारणों को दूर कर रोग को जड़-मूल से भगा सकते हैं। और यदि सच्चे कारण को न जाना, केवल इधर उधर की या ऊपरी बातों को ही मान कर सन्तुष्ट हो गये तो एक के बाद दूसरा और दूसरे के बाद तीसरा रोग बना रहेगा और जैसा कि अब है हकीम-वैद्य डाक्टरों के होते हुए भी मनुष्य जाति रोगों से पीड़ित रहेगी। सच्चा कारण जानने के बाद सच्चा उपचार भी सोचना चाहिए, लेकिन पहले आइये और गंभीरता पूर्वक विचार कीजिए कि रोगों का सच्चा कारण क्या है।

एक ही कारण—विकार—

सच पूछिए तो सारे रोगों का एक ही कारण है—शरीर में विकार का आ जाना। मनुष्य शरीर, प्रकृति के नियमों के अनुसार, अपने को बराबर ही साफ-सुथरा और अच्छी हालत में रखना चाहता है। इस बात को अच्छी तरह समझना चाहिए। हर रोज हम देखते हैं कि शरीर के अन्दर यह क्रिया बराबर ही जारी रहती है, जिससे भीतर की गन्दगी शरीर से बाहर निकाल दी जाती है। गंदगी दूर करने के चार रास्ते हैं—फेफड़े से सारे शरीर की एक खास तरह की गंदगी लेकर सांस का बाहर आना, चमड़े से पसीने के रूप में गन्दगी का बाहर निकलना, पाखाना और पेशाब के रूप में गन्दगी का फेंका जाना। यदि इन साधारण ढंगों से शरीर के अन्दर का विकार नहीं निकल पाता तो असाधारण ढंग काम में लाये जाते हैं। इस हालत में शरीर की शक्तियाँ

तेजी के साथ दूसरे ढंग से सफाई का काम शुरू कर देती हैं। या तो शरीर के अन्दर की गर्मी ज्वर के रूप में बढ़कर शरीर की गन्दगी को जला देती है या कुछ दस्त ज्यादा आते हैं या ऐसी ही कोई असाधारण बात होती है, जिससे शरीर के अन्दर की सफाई हो जाती है। याद रहे, शरीर की रक्षा के लिए विकारों का बाहर निकल जाना जरूरी है। इसी से जब जब यह असाधारण सफाई होने लगती है तभी कहा जाता है कि रोग हुआ। वैसे तो रोग का नाम ही बुरा है, लेकिन इस तरह गहराई में जाकर देखने से पता चलता है कि शरीर की गंदगी को बाहर निकाल फेंकने के लिए, विकारों को जला देने के लिए, प्रकृति की ओर से रोग का साधारण ढंग एक जबरदस्त साधन है। जितने नये (तीव्र) रोग (acute deseases) होते हैं, जैसे जुकाम, जोरदार बुखार, पतले दस्तों का आना, आंव (पेचिश) गिरना, फोड़ा फुन्सी निकलना, ये सभी गंदगी को निकाल देने के लिए शरीर की सफल चेष्टाएं (कोशिशें) हैं। शरीर बराबर ही इस कोशिश में रहता है कि वह विकारों को दूर कर, अपने को फिर से अच्छा और साफ-सुथरा बना ले, और यदि वह सांस पसीना और पेशाब-पाखाने के रूप में अपने अन्दर की गन्दगी को नहीं निकाल पाता तो रोग प्रकट कर अपनी गंदगी को जला देता है या बाहर फेंक देता है। इसलिए इन दोनों बातों पर ध्यान देना चाहिए :— (१) अधिकतर अंदर के ही विकार से रोग होते हैं और (२) अपने बाहर गंदगी को निकाल कर फिर से अपने को अच्छा बना लेने वाली शरीर की कोशिश को ही रोग कहते हैं।

शरीर के अन्दर विकार—

विकार उन फजूल और खराब चीजों को कहते हैं, जो हमारे शरीर के लिए बेकार हैं और जो शरीर के अन्दर के खून और मांस के साथ मिलकर शरीर का हिस्सा नहीं बन सकतीं। प्रकृति का नियम है कि

रोगों का कारण

पहले कहा जा चुका है कि, और बातों की तरह, रोगों के बारे में भी कारण और कार्य का सम्बन्ध देखना चाहिए। जब रोगों के असल कारण का पता चल जायगा तो हम उन कारणों को दूर कर रोग को जड़ मूल से मिटा सकते हैं। और यदि सच्चे कारण को न जाना, केवल इधर उधर की या ऊपरी बातों को ही मान कर मनुष्य रह गये तो एक के बाद दूसरा और दूसरे के बाद तीसरा रोग बना रहेगा और जैसा कि अब है इतने वैद्य डाक्टरों के होते हुए भी मनुष्य जाति रोगों से पीड़ित रहेगी। सच्चा कारण जानने के बाद सच्चा उपचार भी सीखना चाहिए, लेकिन पहले धैर्य और गंभीरता पूर्वक विचार कीजिए कि रोगों का सच्चा कारण क्या है।

एक ही कारण—विकार—

अब पूछिए तो सारे रोगों का एक ही कारण है—शरीर में विकार का आ जाना। मनुष्य शरीर प्रकृति के नियमों के अनुसार, अपने को बराबर ही साफ-सुथरा और अच्छी हालत में रखना चाहता है। इस बात को अच्छी तरह समझना चाहिए। हर रोज हम देखते हैं कि शरीर के अन्दर यह क्रिया बराबर ही जारी रहती है, जिससे भीतर की गन्दगी शरीर के बाहर निकाल दी जाती है। गंदगी दूर होने के चार रास्ते हैं—फेफड़े से सारे शरीर की एक खास तरह की गंदगी सांस के बाहर आना, चमड़े से पसीने के रूप में गन्दगी का बाहर निकलना, पाखाना और पेशाब के रूप में गन्दगी का फेंका जाना। यदि इन साधारण ढंगों से शरीर के अन्दर का विकार नहीं निकल पाता तो असाधारण ढंग काम में लाये जाते हैं। इस हालत में शरीर की शक्तियां

तेजी के साथ दूसरे ढंग से सफाई का काम शुरू कर देती है। या तो शरीर के अन्दर की गर्मी ज्वर के रूप में बढ़कर शरीर की गन्दगी को जला देती है या कुछ दस्त ज्यादा आते हैं या ऐसी ही कोई असाधारण बात होती है, जिससे शरीर के अन्दर की सफाई हो जाती है। याद रहे, शरीर की रक्षा के लिए विकारों का बाहर निकल जाना जरूरी है। इसी से जब जब यह असाधारण सफाई होने लगती है तभी कहा जाता है कि रोग हुआ। वैसे तो रोग का नाम ही बुरा है, लेकिन इस तरह गहराई में जाकर देखने से पता चलता है कि शरीर की गंदगी को बाहर निकाल फेंकने के लिए, विकारों को जला देने के लिए, प्रकृति की ओर से रोग का साधारण ढंग एक जबरदस्त साधन है। जितने नये (तीव्र) रोग (acute deseases) होते हैं, जैसे जुकाम, जोरदार बुखार, पतले दस्तों का आना, आंव (पेचिश) गिरना फोड़ा फुन्सी निकलना, ये सभी गंदगी को निकाल देने के लिए शरीर की सफल चेष्टाएं (कोशिशें) हैं। शरीर बराबर ही इस कोशिश में रहता है कि वह विकारों को दूर कर, अपने को फिर से अच्छा और साफ-सुथरा बना ले और यदि वह सांस पसीना और पेशाब-पाखाने के रूप में अपने अन्दर की गन्दगी को नहीं निकाल पाता तो रोग प्रकट कर अपनी गंदगी को जला देता है या बाहर फेंक देता है। इसलिए इन दोनों बातों पर ध्यान देना चाहिए — (१) अधिकतर अंदर के ही विकार से रोग होते हैं और (२) अपने बाहर गंदगी को निकाल कर फिर से अपने को अच्छा बना लेने वाली शरीर की कोशिश को ही रोग कहते हैं।

शरीर के अन्दर विकार—

विकार उन फजूल और खराब चीजों को कहते हैं, जो हमारे शरीर के लिए बेकार हैं और जो शरीर के अन्दर के खून और मांस के साथ मिलकर शरीर का हिस्सा नहीं बन सकतीं। प्रकृति का नियम है कि

रह जाय तो शरीर का नाश हो जाय। इसलिए शरीर रोग के रूप में झटपट उस ज़हर को निकाल देने का प्रबन्ध करता है। इस प्रकार हमने देख लिया कि शरीर के अन्दर विकार किस तरह आते हैं और यह भी समझ लिया कि शरीर उस विकार को या तो अपने मामूली रास्तों से (सांस, पसीना, पाखाना, पेशाब के रूप में) निकाल देता है या रोग-रूपी असाधारण ढंगों से निकाल कर अपने को फिर से साफ़-सुथरा बना लेता है।

विकार का निकलना—

ऊपर कहा जा चुका है कि शरीर से विकार का निकल जाना बहुत ज़रूरी है और यह भी कि उसके बाहर निकल जाने के लिए शरीर के मामूली रास्ते सांस, पसीना, पाखाना और पेशाब हैं। अक्सर यह देखा जाता है कि शरीर इन रास्तों से अपने अन्दर के विकार को निकालने में समर्थ नहीं होता। इसका मुख्य कारण यह है कि हमारे जीवन में बहुत बनावटीपन आ गया है, जिससे अपने बाहर विकार निकालने की शरीर की शक्ति बहुत कुछ कमज़ोर पड़ गई है। इन दिनों होता यह है कि सांस बाहर आती है पर पूरी-पूरी और बिलकुल फेफड़े के अन्दर से नहीं आती और इससे उस रास्ते से आने वाला पूरा पूरा विकार निकल नहीं पाता। हम गहरी सांस लेना और धीरे धीरे बाहर उसे निकालना भूल गये हैं। इसी से यह कठिनाई हो गई है। पसीना बहुतों के शरीर पर होता ही नहीं। जो हरदम कपड़े नहीं पहनते लाश में धूप और हवा लगने नहीं देते, व्यायाम और परिश्रम का काम नहीं करते उन्हें पसीना नहीं आता। कहने की ज़रूरत नहीं कि अपने देश के मध्य समाज में ऐसों की संख्या अधिक है। फिर पाखाना न होना या बिलकुल साफ़ न होना तो एक मामूली बात है। पेशाब सब को तो सभी को आता है पर यदि अच्छी तरह देखा जाय तो मालूम होगा कि सभी के पेशाब से उस रास्ते से आने वाला विकार पूरा मात्रा में नहीं निकल पाता।

इस तरह ज्यादातर आदमियों के शरीर अपनी सफ़ाई के काम में पूरा पूरा समर्थ नहीं होते। फिर अनुचित भोजन से भी हम अपने शरीर में गन्दगी की मात्रा अधिक भरते रहते हैं। प्रकृति (कुदरत) ने शरीर की सफ़ाई के रास्ते दिये हैं और शक्ति भी दी है, लेकिन प्रकृति के रास्ते से बहुत दूर हट जाने से शरीर की यह ताक़त कमज़ोर पड़ जाती है। इसी से सारा बखेड़ा पैदा होता है।

विकार निकालने में शरीर की शक्ति-हीनता क्यों—

अब यह देखना है कि शरीर की वह ताक़त, जिससे वह अपने को साफ़ करता है, क्योंकर कमज़ोर हो जाती है। यह एक पुराना किस्सा है और उसका सच्चा कारण बहुधा मनुष्य के जन्म के पहले से ही शुरू हो जाता है। यह कहानी करुण है। सुनिये—

कमज़ोर माता पिता के बच्चे भी कमज़ोर होते हैं। इसलिए ऐसे बच्चों के शरीर में सफ़ाई की ताक़त भी कमज़ोर होती है। यदि ये बच्चे अच्छी तरह रखे और नियम-पूर्वक खिलाये-पिलाये जायँ तो उनकी सफ़ाई की ताक़त ज़ोरदार हो सकती है, पर ऐसा नहीं होता। हमारे देश के प्राय: सभी बच्चे, चाहे वे कमज़ोर माता-पिता के हों या मज़बूत के, बड़े बुरे ढंग से रखे जाते हैं। उनके बदन में धूप और हवा लगने नहीं पाती, वे ठीक-ठीक नहलाये नहीं जाते, उनके कपड़े साफ़ नहीं किये जाते, वे दिन-रात किसी न किसी की गोद में पड़े या बैठे रहते हैं और जो इन सब से ज्यादा ख़राब और आपत्तिजनक है यह कि उनके खाने-पीने का समय बँधा नहीं होता। बच्चा जभी रोया माता ने उसे दूध पिलाया। इस तरह हमारे यहां के बच्चों को १५ १५ मिनट और आध आध घंटे पर दूध पिलाया जाता है। कहने की जरूरत नहीं कि इस तरह जन्म के बाद से ही उनकी पाचन-शक्ति ख़राब होने लगती है। ख़राब पेट और ख़राब हाज़मे के कारण उनका खून विकार-युक्त हो जाता है। अगर

साल में ही बुड्ढा और जर्जर हो जाता है। बहुत तो इससे पहले ही चल बसते हैं। फिर ऐसे कमजोर शरीर वालों की सन्तान (औलाद) भी कमजोर होती है और यह सिलसिला पुश्त-दर-पुश्त जारी रहता है।

कमजोर माता पिता के बच्चे तो कमजोर होते ही हैं, पर यह कठिनाई सिर्फ उन्हीं के साथ नहीं है। तनदुरुस्त और तगड़े लोगों की संतान भी कमजोर हो सकती है। अगर वह अच्छी तरह न रखी जाय। जन्म के बाद से बच्चे किस तरह रखे और खिलाये-पिलाये जाते हैं, इस पर बहुत कुछ निर्भर है।

ऊपर कहा गया है कि बच्चों को जरा-जरा सी देर पर दूध पिलाया जाता है, जिससे उनका हाजमा खराब हो जाता है। लेकिन यह जुल्म सिर्फ बचपन में ही नहीं होता। बच्चे ज्यों-ज्यों बड़े होते हैं यह जुल्म बढ़ता जाता है। ज्योंही लड़का अनाज खाने लगता है पिताजी के साथ बैठ कर उसका खाना जरूरी हो जाता है। बहुत से परिवारों में पिताजी और माताजी एक साथ खाना नहीं खाते। इसलिए लड़का पहले पिताजी के साथ और फिर घंटे आध घंटे बाद माताजी के साथ बैठ कर खाता है। पहले का खाया हुआ भोजन पचने भी नहीं पाता कि ऊपर से कुछ और ठूंस दिया जाता है। इतना ही नहीं, मकान के पास घंटे दो घंटे बाद अगर खोंचेवाला कुछ बेचने आया तो माता जी कुछ मिठाई-नमकीन खरीद कर बड़े प्यार से साथ लड़के को दे देती हैं। इसका कुछ विचार नहीं किया जाता कि इतने भोजन के पचने के लिए भी कम से कम चार पांच घंटे का समय चाहिए। फिर लड़का जैसे-जैसे सयाना होता है यह जुल्म यह स्वयं ऊपर आप ही करता है और इस तरह खराब खून, खराब नाड़ी-संस्थान और खराब स्वास्थ्य का चक्कर मरते दम तक चला जाता है। शरीर में सफाई की ताकत के कमजोर पड़ने का मुख्य कारण यही है। जिसका नाड़ी-बल (nerve tone) दुर्बल होगा उसकी विकारों के निकालने की शक्ति भी दुर्बल होगी। जैसा कि ऊपर बताया गया

है, नाड़ी-बल का ह्रास और कई कारणों से होता है। जरूरत से ज्यादा खा लेना भी इस ह्रास का एक कारण है, क्योंकि अधिक भोजन के पचाने में अधिक नाड़ी-बल लगता है। ब्रह्मचर्य-भंग से तो ह्रास होता ही है।

विकार निकालने के लिए प्रकृति का प्रबन्ध—रोग—

जैसा कि ऊपर बताया गया है, शरीर अपने को बराबर साफ रखना चाहता है—यह प्राकृतिक नियम है। यह अपने अन्दर किसी तरह की गन्दगी नहीं रहने दे सकता, क्योंकि अगर गन्दगी रह जाय तो उसके कल-पुर्जों का काम ठीक-ठीक न चले। इसलिए प्रकृति का इन्तजाम है कि अगर शरीर अपने साधारण ढंग से (सांस, पसीना, पेशाब-पाखाना के साथ) अपने अन्दर का विकार नहीं निकाल सकता तो रोग के रूप में असाधारण प्रबन्ध के सहारे उसके विकार निकाल दिये जायँ। रोग शरीर की ओर से सफाई की असाधारण चेष्टा है, जिससे कि यह फिर से स्वच्छ और अच्छी तरह काम करने वाला हो जाय।

असाधारण प्रबन्ध आवश्यक नहीं है—

सच पूछिए तो यदि शरीर अच्छी तरह रखा जाय, उसको उचित खान-पान दिया जाय, उससे उचित मेहनत ली जाय और उचित आराम दिया जाय और साथ ही साथ उसे उचित मात्रा में धूप और हवा मिलती रहे तो उसे अपनी सफाई के लिए रोग के रूप में असाधारण प्रबन्ध की जरूरत न पड़े। हमारी पहली चेष्टा होनी चाहिए कि रोग होवे नहीं। अभी हालत यह है कि रोग के सच्चे कारण को न जानने के कारण लोग पहले से डरते रहते हैं कि कहीं कोई रोग न हो जाय और जब रोग हो जाता है तो घबराते और उससे लड़ाई ठानते हैं। पर जब हम कारण और कार्य का, रोग के कारण और रोग का सम्बन्ध ठीक-ठीक समझ लेंगे तो हम अपने शरीर का इस तरह प्रकृति

रोगों के कारण—कीड़े—

इस सम्बन्ध में एक प्रश्न यह उठता है कि यदि रोग शरीर के अन्दर के विकारों के ही कारण पैदा होते हैं तो क्या रोगों की उत्पत्ति में कीड़ों का, जिन्हें अंगरेजी में 'जर्म्स' (germs) कहते हैं, कुछ हाथ नहीं है? बीसवीं सदी में इस सभ्य संसार का पढ़ा-लिखा डाक्टर-समुदाय गला फाड़-फाड़ कर जर्म्स की महिमा और रोगोत्पादक शक्ति (रोग पैदा करने वाली ताकत) का बखान करता है, प्रायः सभी रोगों की जड़ में किसी न किसी कीड़े की ही करतूत बताता है, फिर भी इस किताब में सारा दोष विकारों पर ही क्यों लादा जाता है? क्या ये पढ़े-लिखे डाक्टर भ्रम में पड़े हुए हैं या झूठ बोलते हैं? झूठ तो नहीं बोलते पर भ्रम में अवश्य हैं। विशेष रोगों से संबंध रखने वाले जर्म्स विशेष हो सकते हैं, पर वे वहीं जनते और जा सकते हैं, जहां उनके टिकने लायक विकार मौजूद है। यदि शरीर के अन्दर विकार नहीं है तो किसी प्रकार का बाहर से आया हुआ कीड़ा वहां टिक नहीं सकता। यदि शरीर के विकारों की सफाई कर दी जाय तो पहले से बसे हुए कीड़े खुद-ब-खुद (स्वयं) गायब हो जाते हैं। बहुत से आचार्यों का यह मत है कि ये कीड़े विकार से ही पैदा होकर फिर मेहतर का काम करते हैं। विकारों का खात्मा कर खुद ही नष्ट हो जाते हैं पर ये रहते वहीं हैं जहां विकार है। देखिए न, मकानों में जहां पर गन्दगी होती है वहां झुण्ड की झुण्ड मक्खियां आ बैठती हैं और गन्दगी को चाट-चाट कर उड़ जाती हैं। जहां गन्दगी नहीं रहती वहां मक्खियां जाती भी नहीं। जिस शरीर में विकार है वह तो कीड़ों का भोजन जरूर बनेगा ही, पर जिसका शरीर अन्दर-बाहर से साफ है, उसके खून में वह शक्ति है कि न तो उसके अन्दर कीड़े पैदा होंगे और न बाहर से आने वाले कीड़े उसमें भी प्रवेश।

अगर जर्म्स का ही सारा खेल होता तो सभी लोग बराबर बीमार होते और थोड़े ही दिनों में जर्म्स के प्रभाव से सारी मनुष्य-जाति नष्ट हो जाती। लेकिन ऐसा न हुआ और न होता है। इससे यह साफ़-साफ़ पता चलता है कि अगर जर्म्स से खराबियां होती भी हों तो भी शरीर के अन्दर कुछ ऐसी शक्ति है जिसके बने रहने से बहुत लोग बीमार नहीं होते। इसी शक्ति पर विशेष ध्यान देना चाहिए और उसे उचित आहार विहार से बढ़ाना चाहिए।

इस युग में जो भी इलाज जारी है उसमें बहुत बड़ा स्थान विषैली दवाओं और इन्जेक्शन (सुई लगाना) की मदद से बीमारियों के जर्म्स को, मारने और दूर करने का है। इन ढंगों से जर्म्स मरते तो ज़रूर है पर शरीर के अन्दर विकार बने रहने के कारण वहां फिर स हो जाते है। यह वैसा ही है जैसा कि कमरे के अन्दर की गन्दगी के कारण वहां रहने वाले चूहों और छछून्दरों को बार बार मारना। अगर कमरे में गन्दगी है तो चूहे और छछून्दर फिर से आ जाते हैं, पर अगर कमरा साफ़ है तो वे वहां आते ही नहीं। आज-कल हमारे विद्वान् डाक्टरों की जर्म्स से लड़ाई, मकान को बिना साफ किए हुए, बार बार छछून्दरों को मारते रहने की तरह है। असल काम है शरीर रूपी मकान को साफ रखना, जिससे छछून्दर रूपी जर्म्स वहां आयें ही नहीं, न कि शरीर रूपी मकान की अन्दरूनी गंदगी का ख्याल न कर, छछून्दर रूपी जर्म्स को मारने में योग्यता और समय को लगाना। इसलिए जर्म्स के भ्रम में न पड़ कर शरीर को विकार-रहित रखना हमारा परम कर्तव्य है, और यह तभी हो सकता है जब कि हम प्रकृति के नियमों के अनुसार खायें और रहें। भोजन से इस विषय का बहुत बड़ा संबंध है, क्योंकि भोजन से ही खून बनता है और खून पर ही शरीर की तनदुरुस्ती निर्भर है, पर इस विषय पर आगे रोशनी डाली जायगी।

अक्सर ऐसा देखा गया है कि उन जगहों में, जहाँ कोई ऐसा रोग फैल गया है, जिससे सभी बीमार हों, यदि एक या दो अन्दर और बाहर से साफ-सुथरे शरीर वाले लोग भी रहते हैं तो वे बिना किसी बचाव के ही बीमार नहीं होते। एक बार मेरे एक मित्र इंगलैण्ड के एक अस्पताल में काम कर रहे थे। उन दिनों वहाँ इनफ्लुएंजा (एक प्रकार का बुखार) का प्रकोप था। अस्पताल के सभी मरीज इस बुखार से पीड़ित हुए। धीरे धीरे कम्पाउण्डर और डाक्टर भी बीमार होने लगे और कुछ ही दिनों में प्रायः के सब बीमार हो गए। केवल मेरे मित्र ऐसे थे, जो बीमार न हुए। कारण इसका यह था कि उचित खान-पान, कसरत आराम इत्यादि से उन्होंने अपने शरीर को बिलकुल साफ-सुथरा रखा था।

यह भी पूछा जा सकता है कि महामारी के दिनों में गाँव के गाँव और शहर के शहर हैजा या प्लेग से एक साथ ही कैसे आक्रान्त हो जाते हैं। उत्तर यही है कि ९५ फी सदी से भी अधिक लोग अपने शरीरों को ठीक हालत में नहीं रखते। आस-पास के रहने वाले बहुत से लोग एक ही तरह की कुरीतियों के कारण एक तरह के विकारों को अपने शरीर के अन्दर छिपाए रखते हैं, जिसका यह नतीजा होता है कि सब के सब एक तरह की महामारी के शिकार बनते हैं।

इन सब बातों को देखते हुए फिर यही दुहराना पड़ता है कि रोगों का असली कारण शरीर के अन्दर अपनी करनी से आया हुआ विकार है, और यह भी कि विकार के बाहर निकल जाने में ही भलाई है।

हमारा कर्त्तव्य—

जब हमने यह जान लिया कि रोग का असली कारण शरीर के अन्दर का विकार है, जिसे प्रकृति रोग के रूप में बाहर निकालना चाहती है, तो रोगों को दूर करने में हमारा एक मात्र कर्त्तव्य है प्रकृति के साथ मिल-जुल कर काम करना, न कि उसके मार्ग में रोड़े अटकाना। प्रकृति के कार्य में दखल देना मानो बन्द कर देना है जिससे शरीर

के अन्दर पाचन की क्रिया बन्द हो जाय और सिर्फ एक ही क्रिया—सफाई की क्रिया—जारी रहे। इसके साथ-साथ उन तत्त्वों का भी समझदारी के साथ प्रयोग करना चाहिए, जिनसे हमारा शरीर बना है। 'छिति जल पावक गगन समीरा, पंच रचित यह अधम शरीरा।' इस शरीर के बनने में मिट्टी, पानी, आग, हवा और आकाश-तत्त्व लगे हैं। इन्हीं के प्रयोग से हम सारे रोगों को भगा सकते हैं। इस विषय की और बातें अगले अध्यायों में बताई जायँगी।

रोगों के प्रकार

भाँ की मरमार—

संसार में इतने प्रकार के रोग देखने को मिलते हैं कि बुद्धि चकरा जाती है और ऐसा मालूम होता है कि ये सब रोग एक दूसरे से अलग हैं। चिकित्सा करने वाले इन रोगों की चिकित्सा भी अलग अलग दवाओं और ढंगों से करते हैं। ऊपरी दृष्टि से तो रोगों के कई प्रकार हैं ही—जैसे, जुकाम (सर्दी), खांसी, दमा बुखार, अपच, सूजन फोड़ा-फुंसी निकलना, गठिया, बवासीर इत्यादि—लेकिन एक रोग के अन्दर भी लक्षण-भेद (अलग अलग हालतों) से अनेक प्रकार के रोग बताये जाते हैं। खांसी के दर्जे में सूखी खांसी, गीली खांसी, रात को उभरने वाली खांसी और सुबह को तकलीफ देने वाली खांसी सम्मिलित हैं। बुखार के तो अनेकों बच्चे हैं—मामूली बुखार जाड़ा बुखार, गर्दन तोड़ बुखार, प्लेग का बुखार इत्यादि। वैसे ही अपच (बदहजमी) का परिवार बहुत बड़ा है—पेट का फूला रहना, दस्त न आना, बहुत दस्त आना, पतले दस्त आना, पेचिश होना, संग्रहणी इत्यादि। इन बीमारियों के बड़े-बड़े नाम भी रखे गए हैं। हमारे देश में कुछ देशी नाम और कुछ अंगरेजी नाम प्रचलित हैं। देशी नामों में फारसी और संस्कृत के शब्द भी सुनने को मिलते हैं। इन दिनों अंगरेजी नामों का इस तरह प्रचार हो गया है कि जिससे सुनिए चार छः बीमारियों के अंगरेजी नाम बता देगा। मैलेरिया (जाड़ा-बुखार) थाइसिस (यक्ष्मा), प्लेग, टाइफायड (बहुत दिनों तक चलने वाला मियादी बुखार,) डायरिया (पतले दस्तों का आना) इत्यादि कुछ ऐसे नाम हैं, जो देहाती आदमियों के मुंह पर भी बने रहते हैं। सचमुच अंगरेजी में रोगों की बड़ी लम्बी-चौड़ी लिस्ट (सूची) बन गई है और हर रोज यह लिस्ट लम्बी हो रही है,

पर इन नामों में से अधिकतर नामों के देखने से पता चलता है कि वे किसी अंग-विशेष की सूजन, जलन या उसके विकारमय होने को बताते हैं। सूजन या जलन या किसी और तरह की तकलीफ सब में एक सी रहती है, लेकिन अलग-अलग अंग में रहने के कारण उन तकलीफों के नाम अलग अलग रखे गये हैं। इन अलग नामों के होते हुए भी ध्यान देने की बात यह है कि सभी रोगों में असली तकलीफ एक ही है। अंगरेजी के बहुत से नामों के अन्त में 'आइटीस' (itis) लगा होता है, जैसे ब्रांकाइटीस (bronchitis), टान्सिलाइटीस (tonsilitis), कोलाइटीस (colitis) इत्यादि। 'आइटीस' (itis) का अर्थ है 'दाह या जलन ज्वर की अवस्था'। जिस अंग में दाह या जलन या सूजन होती है उस अंग के नाम के साथ आइटीस' (itis) लगा देने से उस रोग विशेष का नाम तैयार हो जाता है। ब्रांकाइटीस (bronchitis) का अर्थ है वायु-नाली की सूजन और ज्वरावस्था। लेकिन अंगरेजी का नाम सुनकर जरूरत से ज्यादा डर मालूम होता है। इसी तरह टॉन्सिलाईटीस-(tonsilitis) का अर्थ है गले की कौड़ियों की सूजन और कोलाइटीस (colitis) का बड़ी आंतों के अन्दर की दाह और पीड़ा। संस्कृत और उर्दू-फारसी भाषाओं में भी जो रोगों के नाम प्रचलित हैं उनसे भी प्रायः अंग विशेष की पीड़ाएँ या उन पीड़ाओं के लक्षण मालूम होते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि एक ही प्रकार की तकलीफ होते भी हुए अलग अलग अंगों के कारण रोगों के नाम अलग अलग रखे गए हैं, जिससे रोगों के प्रकार के सबंध में बड़ा भारी भ्रम हो जाता है, और अलग अलग रोगों के लिए अलग अलग इलाज की जरूरत मालूम पड़ती है। ऐसा मालूम होता है कि हर रोग का खास इलाज है। पर सच पूछिए तो रोग केवल एक है—शरीर के अन्दर के विकार के कारण कभी इस अंग में और कभी उस अंग में और कभी-कभी एक ही साथ कई अंगों में उठने वाली पीड़ा।

तीन मुख्य प्रकार—

फिर भी एक ही रोग रहते हुए रोगों के तीन मुख्य प्रकार कहे जा सकते हैं। वे इस तरह हैं —

तीव्र (नये) रोग — ऐसे रोग, जो तेजी के साथ उठते हैं, जिनमें बहुत जलन या पीड़ा होती है और जो दो-चार दिन या दो-चार हफ्ते या कुछ ऐसे ही निश्चित समय तक रह कर चले जाते हैं और शरीर को भला-चंगा और निरोग छोड़ जाते हैं। ऐसे रोग बच्चों, जवान, हृष्ट-पुष्ट (तगड़े) और काफी मात्रा में जीवन शक्ति रखने वालों को ही होते हैं। जैसे-जैसे जीवन-शक्ति क्षीण पड़ती जाती है, तेज रोगों के बदले कोई जीवन के साथ-साथ चलने वाला रोग, जैसे बवासीर, दमा, गठिया इत्यादि आ घेरता है। तेज रोगों में लेटे रहना या कम से कम आराम करना रोगियों (मरीजों) के लिए जरूरी हो जाता है। इसी दर्जे में सब तरह के बुखार, पतले दस्तों का आना, पेचिश (आंव गिरना), जुकाम, नई खांसी, चेचक, खुजली (खारिश), हैजा, प्लेग इत्यादि सम्मिलित किये जा सकते हैं।

ऐसे रोगों को हम 'तीव्र' या 'नया' रोग कह सकते हैं। अंगरेजी में इन्हें 'एक्यूट' (acute) कहते हैं। <u>ये शरीर की वे असाधारण चेष्टाएँ (गैर मामूली कोशिशें) हैं, जिनसे अपने अन्दर के विकारों को दूर कर शरीर अपने को फिर से भला-चंगा बना लेता है।</u> अगर इन तीव्र रोगों की राह में दवा और भोजन की अड़चनें न डाली जायँ तो ये जल्दी ही दूर हो जाते हैं और अपने साथ शरीर के विकारों को ले जाते हैं। छेड़-छाड़ करने से या तो ये भयंकर रूप धारण करते हैं या देर से जाते हैं। जाने पर भी शरीर हल्का और ताजा नहीं मालूम होता। विषैली दवाओं के सेवन करने वाले ज्वर के रोगी बाहरी तौर से ज्वर के चले जाने पर भी अन्दर से सच्ची तनदुरुस्ती का आनन्द, नहीं उठाते। बुखार नहीं रहने पर भी बहुतों को भूख नहीं लगती

बहुतों को कब्ज (कोष्ठबद्ध) बना रहता है, कुछ के कंठों में खुश्की रहती है और ऐसी ही बहुत सी गड़बड़ी मालूम होती है। होना यह चाहिए कि ज्वर जैसे तेज रोग के चले जाने के बाद तबीयत हरी-भरी हो जाय और शरीर के अन्दर के मामूली काम (भूख लगना, पाखाना साफ होना इत्यादि) अच्छी तरह होने लगें। कुछ दिनों तक कमजोरी तो जरूर मालूम होगी, पर यह कमजोरी जल्द दूर होगी और बीमारी के जाते ही शरीर की हालत नई हो जायगी। लेकिन अनुभव बताता है कि औषधि सेवन करने वाले और बीमारी की हालत में पथ्य (गिजा) खाने (चाहे वह पथ्य हलका ही क्यों न हो) वाले रोगियों की हालत ऊपर से अच्छी दीखती हुई भी अन्दर से अच्छी नहीं रहती। कारण इसका यही है कि शरीर के अन्दर की सफाई अच्छी तरह न हो पाई। दवा इत्यादि से रोग अन्दर ही दबा दिया गया और शरीर के अन्दर का विकार अन्दर ही बना रहा। पर क्या इस विकार को शरीर अपने अन्दर रख लेगा ? नहीं, वह दूसरी, तीसरी और चौथी कोशिश करेगा और किसी न किसी रोग के बहाने विकार को निकालना चाहेगा। यदि शरीर की कोशिश दवा इत्यादि से बार-बार असफल करदी जायगी तो भी वह कोशिश करता रहेगा पर उससे कोई खास लाभ (फायदा) न होगा, और तब कोई जीर्ण (chronic) रोग खड़ा हो जायगा।

याद रहे, तीव्र रोग उन्हीं को होते हैं, जिनकी जीवन-शक्ति अच्छी है या जिनके शरीर अन्दर से इतने सबल और योग्य (लायक) हैं कि वे अन्दर से विकारों को तेज लक्षण के सहारे निकाल देते हैं।

कभी-कभी घातक रोगों में भी तीव्रावस्था चलती है, जैसे कि यक्ष्मा में, पर अनुभव से यह जान लिया जाता है कि यह रोग तीव्र है या घातक रोग की तीव्रावस्था है। घातक रोग का बयान आगे आया है।

(२) जीर्ण (पुराने) रोग—जो रोग बहुत दिनों तक बने रहते हैं, जिनमें किसी प्रकार की हल्की-हल्की लेकिन बराबर ही बनी रहने

भारी तकलीफ़ जारी रहती है, जिनमें आदमी चलते-फिरते और साधारण तौर से काम करते हुए भी दुखी और लाचार से बने रहते हैं, जिनके कारण जीवन भार सा मालूम होता है, उन रोगों को 'जीर्ण' या 'पुराना' रोग कहते हैं। पुराना दमा, गठिया में शरीर के जोड़ों का सख्त पड़ जाना, बवासीर, दमा, हल्के-हल्के बुख़ार का बना रहना, किसी न किसी ज़ख्म का बना रहना, संग्रहणी, मधुमूत्र रोग इत्यादि जीर्ण रोगों की श्रेणी में सम्मिलित हैं। उदाहरण के लिए दमा या बवासीर का रोगी चलता-फिरता और सभी साधारण काम करता है, पर उसके जीने से न जीना ही अच्छा है। ऐसे रोग अक्सर अधेड़ अवस्था में (लगभग चालीस साल की उम्र होने पर, कभी-कभी इससे पहले ही) और जीवन शक्ति के कमज़ोर पड़ जाने के कारण होते हैं, लेकिन इनका मुख्य कारण एक है—तीव्र रोगों के साथ अनुचित छेड़-छाड़ कर विकारों का शरीर के अन्दर ही बार बार दबाया जाना। जब अनुचित दवा और अनावश्यक पथ्य के कारण तीव्र रोग अपना काम अच्छी तरह नहीं कर पाता और शरीर की कोशिश विफल हो जाती है तो विकार अन्दर ही बना रहता है। इससे शरीर की जीवन शक्ति भी क्षीण पड़ती जाती है। फिर भी उस विकार को निकालने की कोशिश शरीर करता है, पर क्षीण शक्ति के कारण वह सफल नहीं हो पाता। नतीजा यह होता है कि किसी न किसी अंग से संबंध रखने वाला कोई जीर्ण रोग खड़ा हो जाता है। बहुत बार तो कई अंग से संबंध रखने वाले कई जीर्ण रोग एक ही साथ खड़े हो जाते हैं। इसलिए याद रहे कि जिस तरह तीव्र रोग अपने अन्दर के विकार को बाहर निकालने के लिए शरीर की सफल चेष्टाएं हैं उसी तरह जीर्ण रोग विकार को दूर करने के लिए शरीर की असफल चेष्टाएँ हैं। जैसा कि ऊपर बताया गया है, ये रोग लगभग चालीस वर्ष की अवस्था में, जब कि शरीर और दिमाग

कमजोर पड़ते जाते हैं, होते हैं, पर ऐसे रोगों का कम उम्र में ही हो जाना असंभव नहीं है। देखा गया है कि १८-२० वर्ष वाले नौजवानों (नवयुवकों) को भी दमा हो जाता है और २०-२५ वर्ष वाले आदमियों को या १४-१५ वर्ष वाले लड़कों को बवासीर के कारण दुख भोगना पड़ता है। इसका कारण कुछ तो रोगी और कमजोर माता-पिताओं से आया हुआ रोगी के शरीर में रोग और कमजोरी, कुछ रोगी की जीवन चर्या (रोज के रहने का ढंग) की गड़बड़ी और कुछ तीव्र रोग में विकारों को शरीर के अन्दर ही बारबार दबा देने वाली दवाओं की करतूत है। कुछ भी हो, एक बात तो पक्की है। वह यह है कि जिनकी जीवन-शक्ति काफी कमजोर होती है उन्हीं के शरीर में जीर्ण रोग पाये जाते हैं, क्योंकि यदि जीवन शक्ति अच्छी होती तो वह विकारों को तीव्र रोगों के रूप में बाहर फेंक देती।

कोई भी जीर्ण रोग, जिसमें शरीर का कोई जरूरी कल-पुर्जा—दिल, फेफड़ा, जिगर (यकृत), प्लीहा—बिलकुल खराब नहीं हुआ है, अचूक चिकित्सा-विधि से अच्छा किया जा सकता है। उचित उपचारों से तीव्रावस्था में आकर वह दूर होगा।

(३) घातक रोग—जो रोग किसी भी उपचार से अच्छे नहीं होते जैसे पुराना (शुरू शुरू का नहीं) यक्ष्मा (थाइसिस, क्षयी रोग), पुराना बिगड़ा हुआ कोढ़ इत्यादि, उन्हें 'घातक' या 'विनाशकारी' रोग कहते हैं। इन रोगों के रोगियों की जीवन-शक्ति इतनी कमजोर पड़ जाती है कि वह 'नहीं' के बराबर रहती है, और उस पर किसी तरह के इलाज का कोई असर (प्रभाव) नहीं पड़ सकता। ऐसे रोगियों के शरीर को मौत से ही छुटकारा मिलता है।

इस तरह रोगों के तीन मुख्य और सच्चे विभाग ऊपर बताये गये। अब इन के संबंध में कुछ और बातें, जो जानने योग्य हैं, नीचे दी जाती हैं —

वाली तकलीफ़ जारी रहती है, जिनमें आदमी चलते-फिरते और साधारण तौर से काम करते हुए भी दुखी और लाचार से बने रहते हैं, जिनके कारण जीवन भार सा मालूम होता है, उन रोगों को 'जीर्ण' या 'पुराना' रोग कहते हैं। पुराना दमा, गठिया में शरीर के जोड़ों का सख्त पड़ जाना, बवासीर, दमा, हल्के-हल्के बुखार का बना रहना, किसी न किसी जख्म का बना रहना, संग्रहणी, बहुमूत्र रोग इत्यादि जीर्ण रोगों की श्रेणी में सम्मिलित हैं। उदाहरण के लिए दमा या बवासीर का रोगी चलता फिरता और सभी साधारण काम करता है, पर उसके जीने से न जीना ही अच्छा है। ऐसे रोग अक्सर अधेड़ अवस्था में (लगभग चालीस साल की उम्र होने पर, कभी-कभी इससे पहले ही) और जीवन शक्ति के कमजोर पड़ जाने के कारण होते हैं, लेकिन इनका मुख्य कारण एक है—तीव्र रोगों के साथ अनुचित लेप-खाप का विकारों का शरीर के अन्दर ही बार बार दबाया जाना। जब अनुचित दवा और अनावश्यक पथ्य के कारण तीव्र रोग अपना काम अच्छी तरह नहीं कर पाता और शरीर की कोशिश विफल हो जाती है तो विकार अन्दर ही बना रहता है। इससे शरीर की जीवन शक्ति भी क्षीण पड़ती जाती है। फिर भी उस विकार को निकालने की कोशिश शरीर करता है, पर क्षीण शक्ति के कारण वह सफल नहीं हो पाता। नतीजा यह होता है कि किसी न किसी अंग से संबंध रखने वाला कोई जीर्ण रोग खड़ा हो जाता है। बहुत बार तो कई अंग से संबंध रखने वाले कई जीर्ण रोग एक ही साथ खड़े हो जाते हैं। इसलिए याद रहे कि जिस तरह तीव्र रोग अपने अन्दर के विकार को बाहर निकालने के लिए शरीर की सफल चेष्टाएं हैं उसी तरह जीर्ण रोग विकार को दूर करने के लिए शरीर की असफल चेष्टाएँ हैं। जैसा कि ऊपर बताया गया है, ये रोग लगभग चालीस वर्ष की अवस्था में, जब कि शरीर और दिमाग

कमज़ोर पड़ते जाते हैं, होते हैं, पर ऐसे रोगों का कम उम्र में ही हो जाना असंभव नहीं है। देखा गया है कि १८-२० वर्ष वाले नौजवानों (नवयुवकों) को भी दमा हो जाता है और २०-२५ वर्ष वाले आदमियों को या १४-१५ वर्ष वाले लड़कों को बवासीर के कारण दुख भोगना पड़ता है। इसका कारण कुछ तो रोगी और कमज़ोर माता-पिताओं से आया हुआ रोगी के शरीर में रोग और कमज़ोरी, कुछ रोगी की जीवन चर्या (रोगी के रहने का ढंग) की गड़बड़ी और कुछ तीव्र रोग में विकारों को शरीर के अन्दर ही बारबार दबा देने वाली दवाओं की करतूत है। कुछ भी हो, एक बात तो पक्की है। वह यह है कि जिनकी जीवन-शक्ति काफ़ी कमज़ोर होती है उन्हीं के शरीर में जीर्ण रोग पाये जाते हैं, क्योंकि यदि जीवन शक्ति अच्छी होती तो वह विकारों को तीव्र रोगों के रूप में बाहर फेंक देती।

कोई भी जीर्ण रोग, जिसमें शरीर का कोई जरूरी कल-पुर्जा—दिल, फेफड़ा, जिगर (यकृत), प्लीहा—बिलकुल खराब नहीं हुआ है, अचूक चिकित्सा-विधि से अच्छा किया जा सकता है। उचित उपचारों से तीव्रावस्था में आकर वह दूर होगा।

(३) घातक रोग—जो रोग किसी भी उपचार से अच्छे नहीं होते, जैसे पुराना (शुरू शुरू का नहीं) यक्ष्मा (थाइसिस, क्षयी रोग), पुराना बिगड़ा हुआ कोढ़ इत्यादि, उन्हें 'घातक' या 'विनाशकारी' रोग कहते हैं। इन रोगों के रोगियों की जीवन शक्ति इतनी कमज़ोर पड़ जाती है कि वह 'नहीं' के बराबर रहती है, और उस पर किसी तरह के इलाज का कोई असर (प्रभाव) नहीं पड़ सकता। ऐसे रोगियों के शरीर को मौत से ही छुटकारा मिलता है।

इस तरह रोगों के तीन मुख्य और सच्चे विभाग ऊपर बताये गये। अब इन के संबंध में कुछ और बातें, जो जानने योग्य हैं नीचे दी जाती हैं—

(१) 'तीव्रता' रोगों की पहली अवस्था, 'जीर्णता' दूसरी अवस्था और 'घातक' तीसरी अवस्था है।

(२) इसलिए रोगों के तीन प्रकार होते हुए भी एक ही रोग तीव्र से जीर्ण और जीर्ण से घातक हो सकता है। जैसे ज्वर पहली अवस्था में तीव्र है, पर छेड़-छाड़ किये जाने के कारण वह जीर्ण हो सकता है और उसके बहुत दिनों तक बने रहने के कारण और कई कारणों के मिल जाने से वही यक्ष्मा के साथ रहने वाले ज्वर के रूप में घातक बन जा सकता है। फिर से यह बताने की आवश्यकता नहीं कि यदि ज्वर या किसी और रोग के साथ उसकी पहली अवस्था में इलाज के गलत तरीकों से छेड़खानी न की जाय तो वह जीर्ण या घातक नहीं बनता बल्कि शरीर के अन्दर की सफ़ाई करके खुद-ब-खुद (स्वयं ही) दूर हो जाता है।

(३) इसी बात को ध्यान में रखते हुए यदि जीर्ण रोगों की हालत में शरीर को सशक्त बना दिया जाय, उसकी जीवन-शक्ति को उचित भोजन और रहन-सहन से प्रबल कर दिया जाय, तो शरीर इस योग्य हो जाता है कि वह जीर्ण लक्षणों को तीव्र रोगों के रूप में लाकर अपने अन्दर के विकारों को बाहर निकाल कर और फिर से भला-चंगा हो जाय।

(४) इसी तरह जो जीर्ण रोग जीर्णता की अवस्था से बढ़ कर अभी हाल में ही घातक बने हैं वे उचित उपायों से घातक की अवस्था से जीर्णता की अवस्था में लौटाये जा सकते हैं, और फिर जीर्णता तीव्रता में बदली जाकर वे रोग बिल्कुल दूर किये जा सकते हैं।

(५) कोई कोई रोग एक ही साथ जीर्ण और तीव्र दोनों रहते हैं। जैसे, किसी किसी के महीनों और वर्षों खांसी चलती है। पुरानी हो जाने पर खांसी दबी-सी रहती है, लेकिन बीच-बीच में उभड़ कर तीव्र रूप धारण कर लेती है ऐसे रोगों को भी पूरी तीव्रावस्था में लाकर दूर किया जा सकता है।

विसेंज प्रीसनीज

(साइलीसिया निवासी किसान। आधुनिक प्राकृतिक चिकित्सा के जन्म दाता
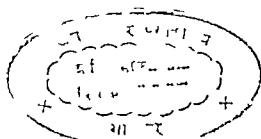
हमें क्या सीखना चाहिए—

मनुष्य को (१) पहले तो यह सीखना चाहिए कि वह इस तरह रहे कि उसके शरीर के अन्दर विकार जमा ही न हो और इसके बाद यह कि (२) विकार अगर जमा हो जाय तो किस तरह उसे बाहर निकालना चाहिए। (३) यह भी सीखना चाहिए कि जब प्रकृति के प्रबन्ध के अनुसार शरीर की अन्दरूनी सफाई के लिए तीव्र रोग हों तो क्या उपचार किया जाय, जिससे सफाई का काम न रुके। (४) साथ ही साथ यह भी जानने की जरूरत है कि अगर सफाई का काम बराबर रोके जाने के कारण और शरीर की जीवन शक्ति कमजोर हो जाने के कारण जीर्ण रोग पैदा हो गये हैं तो किस तरह यह जीवन-शक्ति फिर से जगाई और पुष्ट की जा सकती है और किस तरह रोग दूर किया जा सकता है। पर ये विषय अगले अध्याय में दिये गये हैं।

चिकित्सा सिद्धान्त

एक बहुत जरूरी बात—

चिकित्सा-सिद्धान्त के बारे में एक जरूरी बात यह है कि अगर रोग से न लड़कर स्वास्थ्य बनाने पर ही जोर दिया जाय तो काम आसान हो जाता है। स्वास्थ्य के अभाव को ही 'रोग' कहते हैं, इसलिए अपना दृष्टिकोण और उपचार इत्यादि रचनात्मक हों, स्वास्थ्य बनाने की मनोवृत्ति हो न कि रोग से लड़ने की। यह बात आगे के एक अध्याय में ज्यादा साफ हो जायगी। यहां इतना ही कहना जरूरी है कि अगर 'रोग' के संबंध में ज्यादा सोच-विचार किया जायगा, जैसा कि रोग से लड़ाई ठानने के मनोभाव से होता है, तो रोग पुष्ट होगा पर अगर स्वास्थ्य बनाने के दृष्टिकोण से उपचारों का प्रयोग किया जायगा तो स्वास्थ्य का भाव पुष्ट होगा और स्वास्थ्य जल्दी बन सकेगा। नियम यह है कि जो बार बार सोचा जायगा वह होकर ही रहेगा। इसलिए 'स्वास्थ्य' सोचना चाहिए न कि 'रोग'।

मनुष्य 'शरीर' नहीं है। वह 'विचार' और 'इच्छाओं' से घिरा हुआ 'ईश्वर का अंश'; 'जीवात्मा' है। 'शरीर' और उसकी क्रियाएं विचार और इच्छाओं का बाहरी रूप है। इसलिए चिकित्सा-क्रिया में 'जीवात्मा' भाव पर विशेष ध्यान देते हुए 'विचार' और 'इच्छाओं' का ठीक करने की कोशिश करनी चाहिए। तभी सफल चिकित्सा हो सकती है।

अब शरीर की एक विचित्रता सुनिए।

शरीर की विचित्रता—

रोगों की सफल चिकित्सा करने वाले को शरीर की एक विचित्रता अच्छी तरह समझनी और माननी चाहिए। जो इस विचित्रता को नहीं

जानता और उसमें पूरा पूरा विश्वास नहीं रखता वह शरीर के सबध में सब बातों को जानता हुआ भी कुछ नहीं जानता और न उसे चिकित्सा करने का अधिकार है। वह विचित्रता है—जीवधारियों के शरीर इस तरह बने हुए हैं और उनके अन्दर ऐसे ऐसे कल-पुर्जे हैं कि वे गड़बड़ी को दूर कर अपने अन्दर की सफाई आप ही कर लेते हैं, या बिना किसी बाहरी सहारे के शरीर अपने आपको ठीक कर लेने में समर्थ है। इस विचित्रता को समझना प्रकृति की जोरदार शक्ति को मानना और उसमें विश्वास रखना है। जो प्रकृति की शक्ति में—शरीर की आप ही आप अपने को सम्हाल लेने की शक्ति में—विश्वास रखता है वही सच्चा और सफल चिकित्सक हो सकता है।

शरीर के संबंध में यह एक बड़ी बात है, जिससे यह निष्कर्ष (नतीजा) निकलता है कि शरीर को तनदुरुस्ती की हालत में लाने के लिए औषधि जैसी बाहरी वस्तु की जरूरत नहीं है। पूछा जा सकता है कि इसका पता कैसे चला। इसका पता ऐसे चलता है कि जब गिरने पड़ने से किसी अंग की हड्डी टूट जाती है तो डाक्टर सिर्फ ऊपर से पट्टी इत्यादि बांध कर छोड़ देता है। हड्डी के टूटे टुकड़ों को जोड़ने के लिए खाल और मांस की तह को काटकर हड्डी पर कोई दवा नहीं लगाता। यह शरीर की प्राकृतिक विचित्रता है कि हड्डी स्वयं जुट जाती है और फिर वह अंग ज्यों का त्यों हो जाता है। इसी तरह लड़कों के या बड़े लोगों के भी छोटे-मोटे जख्म खुद-ब-खुद भर जाते हैं। बड़े जख्मों में दवाओं का प्रयोग जरूर किया जाता है, लेकिन इसका भी रिवाज कम कम हो रहा है, और यदि उन जख्मों को सिर्फ अच्छे पानी से धोकर साफ रखा जाय तो वे बिना औषधि के ही जल्द अच्छे हो जायें। फिर जानवरों को भी देखकर पता चलता है कि शरीर को दवा की जरूरत नहीं है। पालतू जानवर तो आदमियों के संग-साथ से कुछ बिगड़ गये हैं, लेकिन अक्सर यह देखने में आता है कि अगर घर में कुत्ता बीमार हो

है तो यह आप ही आप अच्छा हो जाता है। जब तक वह बीमार है भोजन देने पर भी नहीं खाता। जंगल के जानवर न तो बीमार होते हैं और न उनको दवा ही मिल सकती है। इसलिए, ऐसी बातों से जाहिर है कि प्रकृति की ओर से शरीर के अन्दर वह गुण मौजूद है जिससे वह अपने अन्दर की गड़बड़ी को आप ही ठीक कर लेता है। शरीर की इस विशेषता पर जितना भी जोर दिया जाय ज्यादा न होगा, और सफल चिकित्सक को शरीर की इस विशेषता का पूरा पूरा ख्याल रखना होगा। जो पहले बताया गया है, अगर शरीर नियम पूर्वक रखा जाय तो उसमें रोग होते ही नहीं और अगर नियमों के तोड़ने से रोग हो जाय तो उनके साथ अनुचित छेड़-छाड़ न की जाय। बार-बार अनुभव करके देखने से ही पता चल जायगा कि बिना छेड़-छाड़ के शरीर रोगों को दूर करने में किस आसानी से और कितना जल्द समर्थ होता है।

औषधि का प्रयोग—

औषधि का प्रयोग करना चाहिए या नहीं? ऊपर जो शरीर की विशेषता बताई गई है उससे तो यही सिद्ध होता है कि रोग को दूर करने के लिए दवाओं की कुछ भी जरूरत नहीं। देखने में आता है कि यदि दवाओं से कुछ रोग अच्छे होते (अच्छे क्या, थोड़े दिनों के लिए दबते) हैं तो बहुत से रोग दवाओं के दिए जाने की हालत में बढ़ जाते हैं। टाइफॉयड में यही होता है। कई दिन तक दवा देने से जब बुखार नहीं जाता तो कहा जाता है कि टाइफॉयड हो गया। इन सब बातों को देखते हुए कहना पड़ता है कि ऐसी चीज का भरोसा ही क्या जो कि हर हालत में अचूक न हो। हमें तो ऐसी चीज, ऐसा ढंग चाहिए, जो हर हालत में काम कर जाय।

औषधियों में बहुत-सी ऐसी हैं, जो विषैली हैं। अंग्रेजी एलोपैथिक दवाएँ तो अधिकतर विष की ही बनी हैं। जब हम तन्दुरुस्ती की हालत में विष नहीं खाते तो बीमारी की हालत में विषमयी दवाओं के सेवन से

लिए क्यों विवश किये जाते हैं, यह समझ में नहीं आता। विदेशी या देशी, किसी भी प्रकार की औषधि में यदि विष की थोड़ी सी मात्रा भी हो तो वह ग्रहण करने के योग्य नहीं है।

ऐसी जड़ी-बूटी और औषधियां भी हैं, जिनमें विष नहीं है। ऐसी ही बहुत सी आयुर्वेदीय और यूनानी दवाएँ हैं। उनके इस्तेमाल करने में कोई हर्ज नहीं। लेकिन उनका इस्तेमाल भी बहुत सी हालतों में अनावश्यक है। यह भी अनुभव की बात है कि बहुत से रोगी आयुर्वेदीय या यूनानी इलाज में रहते हुए भी अच्छे नहीं होते और तब वे अंगरेज़ी एलोपैथिक डॉक्टर के सुपुर्द किये जाते हैं। डॉक्टर साहब अगर रोग को दबा पाये (निर्मूल करना तो दूर रहा) तो ठीक, नहीं तो रोगी बिचारे किसी होमियोपैथिक डॉक्टर के हाथ में दिये जाते हैं या फिर वैद्य जी या हकीम साहब के ही पास लौट आते हैं। इसलिए सच्ची बात यह है कि शरीर को बिना विष वाली औषधियों की भी खास जरूरत नहीं।

जीर्ण रोगों में, तीव्र में नहीं, औषधियों की जरूरत पड़ सकती है, क्योंकि जीर्ण रोगों से उद्धार (छुटकारा पाना) तभी होता है जब कि शरीर की क्षीण जीवन-शक्ति फिर से पुष्ट होकर रोग की जीर्णता को तीव्रता में बदलकर शरीर के विकार का पूरा-पूरा बाहर निकाल देती है। लेकिन ये औषधियां प्रायः उचित भोजन से ही मिल जाती हैं। इस बात को भी अच्छी तरह समझने की जरूरत है। भोजन इसलिए किया जाता है कि उससे शरीर की सभी जरूरतें पूरी हों, अंग प्रत्यंग के लिए जो जो पदार्थ जरूरी हैं, वे सब के सब खून के अन्दर आ जायँ न कि सिर्फ इसलिए कि पेट का सन्दूक भर जाय और जीभ की साध पूरी हो जाय। यदि यह बात अच्छी तरह समझ में आ जाय तो भोजन इस प्रकार किया जाने लगेगा कि उससे बढ़िया, सर्व-गुणसम्पन्न (सब गुणों को रखने वाला) खून तैयार होगा। तब रोग होगा ही नहीं, और यदि किसी तरह खून के विकार-युक्त होने के कारण जीर्ण रोग हो जायँ तो

फिर भोजन को ही दुरुस्त कर खून साफ कर लिया जायगा, जिससे रोग भी दूर हो जायगा। जीर्ण रोगों में दवा की जरूरत पड़ती है पर यह दवा उचित आहार से मिल सकती है। जो दवा खाई जाती है वह भी पाचन-क्रिया में पड़कर भोजन की तरह पचती है और खून के अन्दर कुछ तबदीली (परिवर्तन) पैदा करती है। उसी से रोगी को लाभ होता है। पर यदि यह काम भोजन से ही हो जाय—पेट भरने और खून में तबदीली पैदा करने के काम दोनों ही यदि भोजन से हो जायँ—तो फिर अलग अलग भोजन और दवा खाने की क्या जरूरत ? अब सवाल यह है कि जीर्ण रोग की हालत में क्या खाया जाय कि पेट भी भरे और खून साफ होकर रोग भी दूर हो जाय। भोजन के विषय पर प्रकाश तो किसी अगले अध्याय में डाला जायगा, पर यहाँ इतना ही समझना काफी है कि किसी भी हालत में दवा की उतनी जरूरत नहीं जितना कि आज कल प्रचलित है।

कुछ प्राकृतिक चिकित्सक (जैसे अमेरिका के प्रसिद्ध डॉक्टर हेनरी लिंडल्हार) की राय में होमियोपैथिक औषधियों का प्रयोग प्राकृतिक पद्धति के अन्तर्गत है और प्राकृतिक उपचारों के साथ-साथ किया जा सकता है। अनेकों न जड़ी-बूटियों और बायोकेमिक (शुस्लर की निकाली बारह) औषधियों द्वारा चिकित्सा को प्राकृतिक चिकित्सा के अन्तर्गत माना है। असल बात यह है कि जो औषधि रोग के लक्षणों को नहीं दबाती, जो विकारों के निकलने में अड़चन नहीं डालती, वह प्राकृतिक चिकित्सा के प्रतिकूल नहीं है, पर जैसा कि ऊपर कहा गया है, सभी तीव्र रोगों में और सैकड़े ९५ से भी अधिक जीर्ण रोगों में किसी भी औषधि की आवश्यकता नहीं है।

जो जल-चिकित्सा इत्यादि प्राकृतिक उपचारों के साथ होमियोपैथिक या बायोकेमिक दवाओं का प्रयोग करते हैं उन्हें दोनों के प्रभाव और शरीर पर क्रिया प्रतिक्रिया को अच्छी तरह समझना चाहिए। कोई-कोई

होमियापैथिक या बायोकेमिक दवा प्राकृतिक उपचारों के प्रतिकूल पड़ती हैं। बहुतों से सहायता मिलती है, पर कुछ से हानि होती है—इसलिए बिना अच्छी तरह जाने-समझे दोनों का मिलाना ठीक नहीं।

कुछ दवाएँ सहायक हो सकती हैं, होती हैं, फिर भी दवा का भरोसा करना एक दृष्टि से खराब है। दवा खाने वाला मनुष्य रोगी होने का जिम्मेदार अपने को नहीं समझता। वह यह नहीं समझता कि अनियमित जीवन से रोग होता है और न यही समझता है कि नियमित और प्राकृतिक जीवन के बिना आदमी तन्दुरुस्त नहीं रह सकता। जो तनदुरुस्त होना और रहना चाहता है उसे अपनी जिम्मेदारी अच्छी तरह समझनी चाहिए। अपने आप को ठीक रखना तभी हो सकता है जब आदमी अपनी जिम्मेदारी समझे और दवा जैसी भी चीज का भरोसा न रखे। फिर जो ज्यादा खा लेने के बुरे असर को चूरन पाचक खाकर दूर कर देने में विश्वास रखता है वह क्योंकर तनदुरुस्त रह सकता है।

यह हमने मान लिया कि जीर्ण रोगों में उचित भोजन से मिलने वाली दवा से ही फ़ायदा होता है और यह भी कि ऐसी दवा रोगों का दूर करने के लिए जरूरी है। अब यह भी समझना चाहिए कि तीव्र रोगों में भोजन से प्राप्त दवा की भी जरूरत नहीं, या यों कहिये कि तीव्र रोगों में न भोजन की जरूरत है न दवा की।

औषधि प्रयोग के बारे में सब कुछ कहने के बाद यह बताना जरूरी नहीं है कि इन्जेक्शन देना चिकित्सा के सही ढंगों में नहीं है। इन्जेक्शन से औषधि मुँह में न डाली जाकर और रास्ते से शरीर में पहुँचाई जाती है। ये औषधियाँ प्राय जहरीली होती हैं। इसलिए इन्जेक्शन देना वैसा ही है जैसा कि विषधर काले नाग से अपने को डसवाना। ज्यादातर इन्जेक्शन से शुरू में कुछ फ़ायदा मालूम होता है, पर सच्चा और स्थायी लाभ किसी रोग में नहीं होता है, बहुधा में खराबी होती है।

तीव्र रोग, अपना चिकित्सक आप ही—

तीव्र रोग के संबंध में एक विशेष बात यह है कि वह आप ही अपना चिकित्सक है। वह बाहर से रोग की तरह मालूम होता हुआ अन्दर के असली रोग, विकार, को दूर करने की क्रिया है। जैसा कि पहले कई बार कहा गया है, तीव्र रोग, यदि उसके साथ छेड़ छाड़ न की जाय तो, शरीर के विकारों को दूर करने का अच्छा साधन है। तीव्र रोग इसीलिए होता है कि शरीर के अन्दर की गंदगी जल्दी से बाहर निकल जाय और शरीर फिर से स्वस्थ हो जाय। बल्कि यह समझना चाहिए कि जब तक तीव्र रोग नहीं हुआ था तब तक शरीर खतरे में था, क्योंकि उसके अन्दर बेकार और जहरीले पदार्थ भरे थे। पर जब तीव्र रोग हो गया तो समझना चाहिए कि प्रकृति की तरफ से सफाई का काम शुरू हो गया जिससे खतरा जाता रहा। इस दृष्टि से तीव्र रोग दुश्मन न होकर दोस्त है। हमारा काम उसकी मदद करना, उसके उद्देश्य को पूरा करना है, न कि उससे साथ लड़ना, उसे दबाना और उसके अच्छे काम को रोकना। इस दोस्त की सच्ची मदद तभी हो सकती है जब कि हम शरीर के अन्दर की सफाई का काम पूरा-पूरा जारी रहने दें और किसी तरह का भी पथ्य देकर सफाई के काम के साथ साथ भोजन पचाने का बोझ शरीर पर न दें। जब तीव्र रोग के कारण शरीर के अन्दर सफाई शुरू होती है तो सफाई के काम के अलावा और कोई भी काम शरीर में न होना चाहिए। साथ ही शरीर के सब अंगों और कल-पुर्जों को पूरा पूरा आराम मिलना चाहिए। तभी सफाई अच्छी तरह हो सकती है। हां, अगर सफाई के काम में किसी तरह की ऐसी मदद पहुँचाई जाय, जिससे सफाई अच्छी तरह हो जाय और शरीर के अन्दर किसी तरह का नुकसान न पहुँचे तो, बहुत अच्छा हो। ऐसी मदद मिट्टी, पानी, धूप इत्यादि के सहारे पहुँचाई जा सकती है। इस तरह की मदद के बारे में आगे बताया जायगा।

सभी रोगों की एक ही चिकित्सा—

सच्ची चिकित्सा के सिद्धान्तों के जानने वाले यह जानते हैं कि रोग के अनेक आकार प्रकार होते हुए भी वास्तव में रोग एक ही है— शरीर के अन्दर का विकार। जुकाम हो या ज्वर, प्लेग हो या हैजा, फोड़ा हो या पेचिश, खांसी हो या खुजली, जो कुछ भी हो सच्चा चिकित्सक बाहरी लक्षणों से न घबराकर अन्दर के विकार की ओर अपना ध्यान देगा। वह अच्छी तरह समझता है कि अगर रोग एक ही है तो चिकित्सा भी एक ही है। यदि रोग विकार है तो चिकित्सा केवल उस विकार को बाहर निकाल देने का सही ढंग है। बाहरी लक्षणों को भी जिनसे तकलीफ होती है, वह ज़रूर शान्त करेगा, पर अपनी चिकित्सा को वह विकार निकालने में ही लगायेगा।

चिकित्सा किसकी– शरीर की या बाहरी लक्षण की—

यह प्रश्न भी गहरा है और इसका उत्तर ऊपर की बातों से संबंध रखता है। मिसाल के लिए, अगर सिर में दर्द है तो चिकित्सा केवल सिर की न की जाकर सारे शरीर की की जायगी। सिर का दर्द तो सिर्फ बाहरी लक्षण है। सच पूछिए तो उसका असली कारण पेट की खराबी, पेट की खराबी से खून की खराबी और खून की खराबी से नाड़ी-संस्थान (देखो पृष्ठ २६ का फुटनोट) का ठीक हालत में न होना है। अब अगर इलाज सिर्फ सिर का किया जाय तो रोग क्योंकर जा सकता है। यह अक्सर देखा जाता है कि गलत इलाज से थोड़ी देर के लिए सिर का दर्द चला जाता है, पर वह फिर आ जाता है। इसी तरह खुजली (खारिश) में शरीर की खाल में खराबी दीखती है, पर सच्ची बात तो यह है कि खून की खराबी और पेट की खराबी से खून की खराबी हुई है। खांसी में क्या सिर्फ कंठ और वायुनाली की ही खराबी है? आंखों के उठने में (आंख आने में) क्या केवल आंखें ही खराब हालत में हैं? नहीं, इन सब बीमारियों में अन्दरूनी कारण कुछ और है और इन

सभों में सारे शरीर में थोड़ी बहुत खराबी रहती है लेकिन वह खास किसी एक भाग में या ज्यादा अंगों में प्रकट होती है। इसलिए समझदार चिकित्सक सभी बीमारियों में साधारण तौर से सारे शरीर का इलाज करता हुआ लक्षण विशेष का उपचार करता है।

चीरा या नश्तर—

इसी से मालूम होता है कि टॉन्सिलाइटीस (tonsilitis—गले के कौड़ियों की सूजन, जिससे खांसी भी आती है) में चीरा देकर कौड़ियों को निकलवा देना या बवासीर में मस्सों को कटवा देना या अपेन्डिसाइटीस (उपान्त्रदाह, appendicitis—उदर में छोटी आंत और बड़ी आंत के मिलने के स्थान के पास 'अपेन्डिक्स' नामक एक बहुत छोटे भाग के दाह और पीड़ा) में अपेन्डिक्स का नश्तर करा देना रोग का असल इलाज नहीं है। ऐसे नश्तरों से रोग के लक्षण दब जाते हैं और रोगी और चिकित्सक दोनों ही इस भ्रम में रहते हैं कि रोग जाता रहा। य रोग तो पेट की खराबी, खून की खराबी, नाड़ी संस्थान की खराबी या यों कहिए कि सारे अंग की खराबी से हुआ है। जब तक ये खराबियां बनी रहेंगी रोग भी बना रहेगा और महज ऊपरी चीर फाड़ से सच्चा लाभ न होगा।

गले की कौड़ियों का सूजना तो सिर्फ एक ऊपरी लक्षण है लेकिन उसके पीछे सारे शरीर की खराबी और कमजोरी है। सिर्फ लक्षण को दूर कर—टॉन्सिल को काट कर—यह समझना कि सच्चा रोग दूर हो गया अपने आप को धोखा देना है। आजकल नश्तर देने का ऐसा रिवाज चल गया है कि जहां बुद्धि काम नहीं करती नश्तर दे दिया जाता है। जिस अंग से रोग जाहिर होता है वह सिर्फ अपनी तसल्ली के लिए, अपने या भ्रम में डालने के लिए, काटकर फेंक दिया जाता है। गले की कौड़ी, आंतों का अपेन्डिक्स, नाकों की गिल्टियां, गर्भाशय इत्यादि स्थानों का नश्तर तो आरम्भ हो गया है। इसी तरह दांत भी उखाड़ा

दिये जाते हैं। अब कान, नाक और आँखें बच गई हैं। कुछ दिनों में शायद नाक-कान भी काटे जायँगे और आँखें भी निकाली जायँगी। पर क्या कौड़ियों के निकलवा देने से टॉन्सिलाइटीस की सच्ची तकलीफ जाती रहती है? यह तो फिर किसी न किसी रूप में प्रकट हो ही जाती है। देखा गया है कि टॉन्सिल कटवाने वालों को सर्दी-जुकाम बराबर बना रहता है। इसी तरह मस्सों के काट देने से बवासीर का रोगी अच्छा नहीं होता। उसको या तो फिर से मस्से निकल आते हैं या बवासीर बादी से खूनी या खूनी से बादी हो जाता है या किसी और तरह की तकलीफ हो जाती है। चिकित्सा के सच्चे ढंग के प्रचार से नश्तर का रिवाज बहुत कुछ कम हो जायगा और नश्तर उन्हीं हालतों में दिया जायगा, जिनमें चोट-चपेट या दुर्घटना के कारण नश्तर देना जरूरी हो गया है। उचित चिकित्सा-प्रणाली में नश्तर का स्थान अवश्य है, पर इतना बड़ा नहीं जितना कि उसे आज दिन मिला हुआ है।

शरीर के तत्त्वों से काम लेना—

रोग की अवस्था में यदि किसी चीज या पदार्थ से लाभ हो सकता है तो यह है जीर्ण रोगों में उचित भोजन और तीव्र और जीर्ण दोनों ही प्रकार के रोगों में उन तत्त्वों से काम लेना, जिनसे यह शरीर बना है। हवा, पानी, आग या धूप, मिट्टी और आकाश-तत्त्व के प्रयोग से तीव्र और जीर्ण दोनों ही प्रकार के रोगों में समुचित लाभ पहुँचता है। पर जैसा कि ऊपर बताया गया है, इन सबों के साथ उचित आहार विहार, मेहनत आराम का ध्यान रखना होगा।

भोजन और व्यायाम (कसरत)—

सैकड़े निन्यानवे तीव्र रोगों में भोजन बन्द कर देना जरूरी है। बचे हुए एक प्रकार के रोग में बहुत हल्का भोजन करना हितकर होता है। जीर्ण रोगों में पहले ही भोजन बन्द करना बराबर जरूरी या हितकर नहीं

होगा। उनमें पहले खास तरह के भोजन की आवश्यकता होती है और बीच-बीचमें उपवास करना पड़ता है।

तीव्र रोगों में कसरत की आवश्यकता नहीं होती। उनमें से बहुतों में ऐसी तकलीफ रहती है कि आराम करना जरूरी हो जाता है। जीर्ण रोगों में कसरत से बहुत लाभ होता है, पर रोग के भेद के साथ कसरत के भी भेद हैं, जो आगे बताये जायेंगे।

चिकित्सा के मोटे-मोटे सिद्धान्त ऊपर बताये गये। इनको अच्छी तरह समझ लेना जरूरी है, क्योंकि इन्हीं की बुनियाद (नींव) पर अचूक चिकित्सा के ढंग बताये जायगे। अब इन सिद्धान्तों से सम्बंध रखने वाले विषय—भोजन, तत्त्वों के प्रयोग इत्यादि पर—प्रकाश डाला जायगा।

फादर नीप

बवेरिया निवासी। जल-चिकित्सा और जड़ी बूटी द्वारा

अचूक चिकित्सा और भोजन—

शरीर को बनाये रखने और साथ ही शरीर के बिगाड़ने, शरीर के अन्दर विकार पैदा करने और साथ ही इस विकार को निकालने में भोजन का इतना हाथ है कि अचूक चिकित्सा के ढंगों में हम उचित भोजन को पहला स्थान देते हैं।

भोजन ही हमारा क्षिति (पृथ्वी) तत्व है। यों तो प्राकृतिक उपचारों में मिट्टी की पट्टी और मिट्टी के लेप से बहुत काम लिया जाता है और मालूम ऐसा होता है कि वही पृथ्वी तत्व का प्रयोग है। मिट्टी का प्रयोग पृथ्वी तत्व का प्रयोग अवश्य है, पर इसके वास्तविक प्रयोग का साधन भोजन ही है। पृथ्वी से ही पृथ्वी तत्व का बहुत बड़ा अंश लेकर खाद्य पदार्थ उगते हैं। और स्थूल शरीर के पृथ्वीमय पिंड के निर्माण में यह खाद्य पदार्थ लगते हैं।

आज कल जो प्राकृतिक चिकित्सा के बहुत से तरीके निकले हैं उनमें भोजन का उचित ख्याल किया जाता है फिर भी किसी में पानी, किसी में भाप, किसी में बिजली और कुछ में पानी-भाप-बिजली तीनों को ही अधिक भेय दिया जाता है। आप हिन्दुस्तान के बड़े बड़े शहरों में जगह-जगह पर बड़े-बड़े साइनबोर्ड लगे देखेंगे, जिन पर मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा होता है, 'पानी का इलाज,' 'बिजली का इलाज' या कहीं कहीं एक साथ दूर से चमकता हुआ दिखाई देता है, 'पानी, भाप और बिजली का इलाज।' प्राकृतिक चिकित्सा का दम भरते हुए सिर्फ पानी या भाप या बिजली की दुहाई देना अपने आपको और जन-साधारण को धोखा देना है, क्योंकि यदि पानी या भाप या बिजली के प्रयोग के साथ भोजन दुरुस्त न किया जाय तो कभी आरोग्य लाभ नहीं हो सकता, और यदि बिना इन चीजों के खास प्रयोग के भी सिर्फ भोजन दुरुस्त कर

दिया जाय तो सैकड़े पंचानवे रोग दूर हो जायेंगे। स्वयं लेखक का और बहुत से भारतीय तथा यूरोप और अमेरिका के प्राकृतिक चिकित्सकों का अनुभव है कि गठिया, बवासीर, दमा और एक्ज़िमा जैसे कठिन और हठी रोग केवल भोजन-सुधार से ही जाते रहे हैं। जर्मनी के लूई कुने के 'नया चिकित्सा-विज्ञान' (New Science of Healing) के अनुसार स्नानों के साथ भोजन की बहुत कड़ी पाबन्दी है। यदि यह पाबन्दी न की जाय तो उन स्नानों से कुछ लाभ न हो। इसलिए अचूक चिकित्सा विधि में ठीक-ठीक भोजन पर बहुत ज़ोर दिया जाता है। दावा यह है कि यदि भोजन ठीक हो तो रोग अपने पास फटकने न पावे और यदि पहले के अनुचित भोजन इत्यादि से रोग हो भी जायें तो उनमें से सैकड़े पचानवे से अधिक भोजन-सुधार से ही निर्मूल हो जायेंगे।

भोजन प्राणदाता नहीं है—

भोजन से शरीर इस हालत में रहता है कि उसके अन्दर प्राण रह सके। एक भूल जो बहुतों के दिमाग में बनी है कि भोजन से ही शरीर जीवित रहता है। नहीं, जीवन एक अलग चीज़ है, पर उसके धारण करने की योग्यता शरीर में उचित भोजन से आती है। जीवन, या यों कहिए कि प्राण, उसी शरीर में रहता है, जो अच्छे भोजन (और भोजन के ही साथ-साथ व्यायाम, आराम, सफ़ाई इत्यादि) के कारण अच्छी हालत में है। यदि शरीर स्वस्थावस्था में न रहेगा तो प्राण उसके अन्दर काम न करेगा और प्राण के न रहने और न काम करने को ही जीवन का अन्त या मृत्यु (मौत) कहते हैं। इसलिए जीवन के लिए प्राण आवश्यक है न कि भोजन, लेकिन भोजन इसलिए आवश्यक है कि बिना उसके शरीर इस योग्य न रहेगा कि प्राण उसके अन्दर बसा करे। यह बात इसलिए बताई गई कि लोग भोजन को इतना ज़रूरी समझने लगे हैं जितना कि वह है नहीं। इसी से यदि किसी से कहा जाय कि दो दिन भोजन न करो तो वह बिना कारण ही बहुत डर जाता है और

समझता है कि खाना मन्द कर देने से ही प्राण निकल जायेंगे। एक दो दिन का उपवास तो हर कोई—एक बच्चा भी—हँसता-खेलता कर सकता है। कभी ज़रूरत हो पेट और पाचन-क्रिया को एक दिन की छुट्टी दी जा सकती है।

पूछा जा सकता है कि प्राण कहाँ से आता है? इसका उत्तर देना कठिन है। कोई कहता है कि प्राण ईश्वर की ओर से मिलता है और कोई सूर्य को प्राण का भंडार बताता है। पर इतना ठीक है कि यह किसी बाहरी शक्ति से आकर दिमाग़ से होता हुआ सुषुम्ना (नाड़ी संस्थान की धड़ जो रीढ़ में रहती है) में आता है। यही जीवन शक्ति देता है।

भोजन जिलाने वाला और मारने वाला, दोनों है—

यद्यपि हर रोज़ देखने में आता है कि लोग ज़्यादा खाने से, बिना ज़रूरत के खाने से, जो नहीं खाना चाहिए उसे खाने से, बीमार होते हैं और मरते हैं, बीमारी से अच्छा होते-होते फिर भी बीमार हो जाते हैं, तो भी यह बात हृदय में अंकित नहीं होती कि भोजन, यदि जिलाने वाला है तो, मारने वाला भी है। हमारी सारी शारीरिक दुर्गतियों का कारण यही एक ना-समझी है। संस्कृत के 'अन्न' (अनाज) शब्द का अर्थ इस बात पर प्रकाश डालता है। 'अन्न' शब्द 'अद्' धातु से बना है। 'अद्' का अर्थ है, 'खाना', इसलिए लिखा है कि 'जो (दूसरों से) खाया जाय' और 'जो (दूसरों को) खाय' उसे 'अन्न' कहते हैं। यह बात जानकर 'अन्न' से सावधान रहना चाहिए, क्योंकि यदि उसे अच्छी तरह पचा पाया और यदि उसके स्वास्थ्यप्रद होने के कारण शरीर में अच्छा खून बना तो सचमुच उसे खाया और यदि पचा न पाया या शुद्ध रक्त न बना तो वह हमें ही खा जायगा। कहने की ज़रूरत नहीं कि ज़्यादातर ऐसा ही हो रहा है।

भोजन का पचाना—

भोजन का पचाना शरीर के लिए शायद सब से बड़े परिश्रम का काम है। जो लोग इसे नहीं जानते—सैकड़े निन्यानवे इसे नहीं जानते—वह महज स्वाद के लिए अपने पेट में तरह-तरह की चीजें बहुत-बहुत मात्रा में ठूंसते जाते हैं। फिर उनको पचाने के लिए चूरन, सोडा वाटर इत्यादि चाटों और दवाओं का व्यवहार करते हैं। इस तरह के दुर्भोजन का बुरा परिणाम (फल) क्या होता है, सभी जानते हैं।

भोजन के पाचन के संबंध में यह याद रखना चाहिए कि भोजन के पेट में पहुँचते ही शरीर की सारी शक्तियां उसके पचाने में लग जाती हैं। इससे देखा जाता है कि भोजन, खास कर अति भोजन, के बाद देर बाद कुछ सुस्ती मालूम होने लगती है। इसका कारण यही है कि पचाने का काम जारी करने के लिए शरीर के सभी अंगों का बल खिंच खिंच कर पेट की ओर चला जाता है। बहुत ज्यादा खा लेने पर यह शक्ति हीनता साफ-साफ मालूम होती है।

शरीर उतना ही भोजन पचा सकता है, जितने के लिए उस शक्ति है, और यह शक्ति सब आदमियों में एकसी नहीं होती। यदि अपनी शक्ति से अधिक काम शरीर को करना पड़ा तो वह जैसे तैसे निभा लेगा, पर फिर थक जायगा। आजकल ... यही उस के बहुत से रोगी बने जाते हैं, जिन्हें अपच की शिकायत रहती है चूरन खाने और जुलाब लेने से पेट साफ नहीं होता जिन्हें महीनों बरसों, भूख नहीं लगती और खून की कमी के कारण जिनका बदन पीला पड़ता जाता है, ये सब हि मत शक्ति शक्ति से अधिक खाने वाले भजन-भट्ट हैं। अचूक-चिकित्सा प्रणाली में शुरू शुरू इन महाशयों के भोजन की मात्रा कम कर दी जाती है, और फिर धीरे धीरे इन्हें सिर्फ फलों के रस पर रखा जाता है। यह रस इन्हें दिन में तीन-चार बार दिया जाता है। इसके पथ्य के बाद से ही उनकी तबीयत पहले से ज्यादा अच्छी मालूम होने लगती है।

फिर नियमित भोजन और बीच-बीच में उपवास कराया जाता है, जिससे और भी लाभ होता है।

भोजन किस लिए—

भोजन इसलिए किया जाता है कि उससे शरीर की क्षीणता दूर हो, शरीर के अन्दर की जरूरियात पूरी हों, न कि केवल स्वाद के लिए। इसलिए अपनी जरूरत और शक्ति को ध्यान में रखते हुए भोजन करना चाहिए, नहीं तो अति-भोजन से बहुत सी खराबियां, विशेषकर नाड़ी-बल का ह्रास होता है। भगवान् मनु कहते हैं—

> अनारोग्यं अनायुष्यं अस्वर्ग्यंचाति भोजनम्।
> अपुण्यं लोकविद्विष्टं तस्मात् तत्परिवर्जयेत्।

अर्थात्

अधिक भोजन रोग पैदा करने वाला, आयु को कम करने वाला, स्वर्गावस्था के प्रतिकूल, पुण्यावस्था के विरुद्ध और लोक-व्यवहार के विपरीत है—इसलिए उसे छोड़ देना चाहिए। इस कथन से भी यही सिद्ध होता है कि भोजन केवल स्वाद के लिए नहीं बल्कि शरीर की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए है।

भोजन से खून बनता है और खून शरीर के अंग अंग में पहुँच कर उसको खुराक दे आता है। यदि खून अच्छा है, खुराक की सभी सामग्री रखता है विकार-हीन है तो इन अंगों को उससे पुष्टि और शक्ति मिलेगी और भोजन का सच्चा काम पूरा होता रहेगा। इसलिए भोजन के विषय में यह जानना चाहिए कि किन चीजों के खाने से खून में कौन-कौन सामग्री आ जाती है यह आगे बताया जायगा।

भोजन और स्वाद—

तो क्या स्वाद का कुछ भी ख्याल न करना चाहिए? जरूर करना चाहिए। स्वाद से भोजन में आनन्द आता है, और आनन्द के साथ

खाया हुआ भोजन अच्छी तरह पचता और खून बनाता है। लेकिन ऐसा भी न होना चाहिए कि स्वाद के लिए पेट में इतना और ऐसा खाना ठूँस दिया जाय जिसे वह सम्हाल न सके और जिसके पचाने में ज़रूरत से ज्यादा नाड़ी-बल लगे।

साथ ही यह भी जानने की बात है कि इन दिनों हम लोगों का स्वाद बहुत बिगड़ गया है। अमरूद अमरूद की तरह यों ही न खाकर नमक और काली मिर्च के साथ हम खाते हैं। गुणकारी तरकारी और सब्जियाँ तब तक हमें नहीं भातीं, जब तक कि वे अच्छी तरह मसाले में तली और बहुत मिर्च-मसालों से उनका प्राकृतिक स्वाद नष्ट नहीं किया जाता। तरबूज और खरबूजों को जब हम शक्कर के साथ खाते हैं तब वे हमें अच्छे लगते हैं। सच पूछिए तो न हमें आटे का असल स्वाद मालूम है न आलू, लौकी इत्यादि साग-सब्जियों का। बिना मसाले के या अन्दाज़ से मसाला देकर अगर तरकारी बने तो हम नाक-भौं सिकोड़ते हैं, कहते हैं कि यह तो गाय-बैल का खाना है। इसका कारण यही है कि हमने प्राकृतिक स्वाद का मज़ा अप्राकृतिक चीज़ों को खा खाकर खो दिया है। इसलिए सादी चीज़ों में हमें कुछ स्वाद नहीं मालूम होता। पर कुछ दिन नियम-पूर्वक भोजन करने से हम फिर भी अपना असली स्वाद पा लेंगे, और तब हमें लौकी, आलू, भिंडी, पालक इत्यादि के सच्चे स्वाद की फिक्र रहेगी न कि केवल मसालों की ही। बहुत मसालों से अधिक घी या तेल और बहुत नमक डालने और तलने-भुनने से, साग सब्जियों का प्राकृतिक स्वाद और साथ ही साथ प्राकृतिक गुण जाता रहता है। इन बातों से कृत्रिम स्वाद का आनन्द भले ही आवे, लेकिन भोजन से जो लाभ होना चाहिए वह नहीं होता। इसलिए स्वाद के संबंध में यह याद रखना चाहिए कि स्वाद बहुत ज़रूरी है, पर स्वाद के लिए (१) न तो भोजन का गुण कम करना चाहिए और (२) न इतना खा जाना चाहिए कि उसका पचना असम्भव हो जाय और अन-पच के कारण शरीर रोगों का अड्डा बन जाय।

भोजन और खून—

भोजन से रस और रस से खून बनता है, फिर खून ही शरीर को खुराक देकर उसके अंग-अंग को पुष्ट करता है। इसीलिए भोजन पर पूरा पूरा ध्यान देना चाहिए और नियमानुसार भोजन करना चाहिए। अगर हम अच्छी चीज़ें (अच्छा क्या है, यह आगे बताया जायगा) खायेंगे और उसे ठीक ठीक पचा पायेंगे तो अच्छा खून बनेगा। यदि हम अच्छी चीज़ें न खाकर ऐसी चीज़ें खायेंगे, जिनसे विकार पैदा होते हैं, तो खून भी विकार-युक्त बनेगा और तरह तरह की बीमारियाँ पैदा करेगा। लेकिन अगर खून खराब है, जिससे कोई बीमारी या बहुत सी बीमारियाँ हो गई हैं, तो भोजन में कमी या रद्दो-बदल करने से खून साफ हो जायगा और रोग भी जाते रहेंगे, क्योंकि खून में यह शक्ति आ जायगी आ रोगों को रहने नहीं दे सकती। यह एक सीधी-सादी बात है जिसे समझने में कठिनाई न होनी चाहिए, और इसी एक बात को समझ लेने और उस पर अमल करने से शरीर अच्छी हालत में रहेगा, रोगी न होगा और तब जीवन सुखमय होकर आनन्द से दिन कटेंगे।

इन बातों पर ध्यान दीजिए—

कोशिश यह रहे कि भोजन से पूरा पूरा लाभ हो। मेहँगे भोजन के लिए पैसा खर्च करना और उसके कारण बीमार होकर डाक्टर की फीस और दवा पर पैसा खर्चना बुद्धिमत्ता नहीं है। इसके लिए यह बातें जरूरी हैं —

(१) भूख को शान्त करने, अर्थात् शरीर की आवश्यकता पूरी करने के लिए ही, भोजन किया जाय। मामूली हल्के नाश्ते और भोजन में साढ़े तीन, चार, घंटे का अंतर जरूरी है, भोजन के बाद कम से कम ६ घंटे तक कुछ न खाना चाहिए। यह एक मामूली बात है कि जो लोग दिन में २ बार डट कर नाश्ता और फिर २ बार जो खोज

कर खाना खाते हैं वे ही ज्यादातर बीमार रहते हैं। घंटे में सिर्फ २ बार खाने वाला बहुत कम, या नहीं, बीमार होता है

(२) जो भी खाया जाय अच्छी तरह चबाये जाने के बाद के नीचे उतारा जाय। नियम है—'ठोस पदार्थों को पिओ और पदार्थों को खाओ।'

(३) कभी अति-भोजन न करना चाहिए।

(४) क्या खाया जाय, इस पर ध्यान देना बहुत जरूरी है। इ विषय पर आगे प्रकाश डाला जायगा।

भोजन का विषय बहुत आवश्यक है, इसलिए इस संबंध की बातें बारबार दुहराई जायेंगी।

अचूक चिकित्सा के ढंग

भोजन के नियम, खाद्य पदार्थ, हवा से फायदा उठाना; पानी को काम में लाना, धूप या भाप से काम लेना, मिट्टी को काम में लाना, एनीमा के सहारे आंतों की सफाई

भोजन के नियम

खून की सफ़ाई—

जैसा कि पहले बताया गया है, प्रकृति चिकित्सा के ढंगों में ठीक ठीक भोजन करने का पहला और सब से ऊँचा स्थान है। यहाँ फिर से उसी पुराने सिद्धान्त को दुहराने में कुछ हिचक नहीं मालूम होती कि भोजन से ही खून बनता है और खून के विकारों से ही रोग होते हैं। अगर मामूली सिर-दर्द भी हो तो समझना चाहिए कि खून विकृत है। साधारण सिर-दर्द से लेकर डाक्टर और वैद्य को चक्कर में डालने वाले गर्दन तोड़ बुखार या हैजा या प्लेग या दमा या गठिया जैसे कठिन से कठिन रोग में खून का विकार-मय होना ही रोग का सच्चा कारण है। इस लिए चतुर चिकित्सक खून को ही साफ करने की कोशिश करता है। एक तो तीव्र रोग खुद ही प्रकृति की ओर से विकार को शरीर से बाहर निकाल देने और खून को साफ करने की कोशिश है। दूसरे, चतुर चिकित्सक प्रकृति को मदद पहुँचाकर इस सफाई की क्रिया को और भी पूरा और प्रभावशाली कर देता है।

प्राकृतिक चिकित्सक तीव्र रोग में खाना न देगा। तीव्र रोग में खाना देना, चाहे कितना ही हल्का क्यों न हो, प्रकृति के रास्ते में अड़चन डाल कर रोग को बढ़ाना है या जल्दी दूर होने से रोकना है। इसी से मामूली बुखार बढ़कर मियादी बुखार या चेचक का बुखार हो जाता है और मामूली जुकाम और बुखार न्यूमोनिया के रूप में बदल जाता है।

जीर्ण रोगों में चतुर प्राकृतिक चिकित्सक भोजन को बदल कर और साथ ही साथ उपवास का सहारा लेकर खून को साफ करता है और वर्षों से

अन्दर के रुके हुए रोग को निकाल फेंकता है। यह सिर्फ कहने की बात नहीं है। यह हर रोज के अनुभव की बात है कि गठिया या दमा के रोगी, जिनके रोगों को विद्वान डाक्टरों ने असाध्य कह कर उनकी चिकित्सा करना छोड़ दिया था, प्राकृतिक चिकित्सक के हाथ में आने के कुछ दिन बाद से ही अपने रोग में कमी और विशेष आराम का अनुभव करने लगते हैं। पूरा आराम तो देर से होता है लेकिन उसकी शुरुआत हो जाती है।

यह भी ध्यान देने की बात है कि खून को साफ करने के लिए किसी बाहरी उपाय की जरूरत नहीं है। जैसा कि बताया जा चुका है, शरीर की बनावट ही ऐसी है और उसका धर्म ही यह है कि वह अपने आपको दुरुस्त कर ले और फिर से भला-चंगा बना ले। उसकी राह में अड़चनें न होनी चाहिए, फिर तो अपने आपको वह जल्दी ठीक कर लेगा। शरीर की इस विचित्रता को प्राकृतिक चिकित्सक कभी नहीं भूलता और वह या तो भोजन बन्द कर के या उचित भोजन देकर खून की सफाई में शरीर की मदद करता है। यदि वह किसी बाहरी चीज का प्रयोग करता है तो, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, उन्हीं पदार्थों का जिनसे कि यह शरीर बना है—पानी, मिट्टी, हवा, आग या धूप।

अचूक चिकित्सा संबंधी भोजन के नियम—

अब अचूक चिकित्सा से संबंध रखने वाले भोजन के नियमों को एक एक कर के बताया जाता है —

(१) तीव्र (नये) रोगों में भोजन न देना चाहिए—किसी तरह के बुखार, जुकाम (सर्दी), बदन के किसी हिस्से में दर्द, बड़े फोड़े का आरम्भ, खाँसी पेचिश, दस्त आमा इत्यादि नये रोगों के लक्षण देखते ही खाना बन्द कर देना चाहिए। ऐसे रोगों में शरीर अपने अन्दर के विकारों की सफाई करने पर तुला हुआ है। इस हालत में किसी प्रकार

का भी भोजन देने से पाचन-क्रिया जारी हो जायगी और सफ़ाई के काम में रुकावट होगी। इससे शरीर खतरे में हो जायगा।

यह ख्याल गलत है कि उपवास से रोगी कमजोर हो जाता है। सच्ची बात यह है कि रोगी की रक्षा के लिए और रोग के जल्दी से जल्दी निकल जाने के लिए उपवास सब से अच्छा साधन है।

नये रोगों में भूख स्वयं ही जाती रहती है, जिसका अर्थ है कि शरीर को भोजन की जरूरत नहीं। फिर जरूरत नहीं रहने पर शरीर को भोजन देना उसपर बेकार भार लादना और अपनी मूर्खता साबित करना है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, यह सोचना ही गलत है कि भोजन न देने से रोगी कमजोर हो जायगा। रोगी कुछ कमजोर हो सकता है पर रोग के वेग से ऐसा होता है न कि उपवास से। फिर यह भी है कि उचित चिकित्सा से अच्छे होने पर वह शीघ्र ही पहले से भी अधिक बलवान और ताजा हो जाता है।

खास हालतों में कुछ चीजें नये रोगों में दी जा सकती हैं। हर प्रकार के बुखार में और जुकाम-खांसी में भी एक प्याला ठंडे या गरम पानी के साथ आधे नींबू का रस निचोड़ कर हर तीन या चार घंटे पर रोगी को पिला सकते हैं। बुखार इत्यादि में यदि भीतरी दाह ज्यादा हो तो या पेचिश या दस्त लगने की हालत में ठंडे पानी में ही नींबू का रस निचोड़ कर पिलाते हैं। कुछ लोग जुकाम-खांसी में नींबू का रस पिलाने से डरेंगे, पर नींबू का व्यवहार प्रायः हर हालत में लाभदायक है। नींबू भीतरी विकारों को बाहर निकालने में सहायता पहुँचाता है, दस्त साफ़ लाता है खून को साफ़ करता है और बहुत से उपद्रवों को दूर करता है। जुकाम में हो सकता है कि नाक से और भी पानी निकले और छींकें अधिक आवें, पर इन बातों से तो विकार जल्द दूर हो जाते हैं। जुकाम में, कब्ज में, पेट के दर्द में, गरम पानी के साथ नींबू का

रस पिलाने से लाभ होता है। कोई भी नींबू अच्छा है पर कागजी नींबू ज्यादा अच्छा है।

नये रोगों में बच्चे को, बहुत बुड्ढे को, कमजोर को और गर्भिणी स्त्री को सन्तरे (नारंगी) का रस मीठे नींबू या मौसंबी का रस, अंगूर या मीठे अनार का रस, पके (लेकिन बिना आग पर पकाये) टमाटर का रस, अगर कमजोरी ज्यादा नहीं है तो जामुन का रस, अनन्नास का रस, नाशपाती का रस या सेब का रस पानी के साथ या अकेला ही थोड़ी थोड़ी मात्रा में और हर तीन या चार घंटे के बाद, दे सकते हैं। अंगूर का रस भी दिया जा सकता है, पर उसमें चीनी की मात्रा अधिक रहती है, इसलिए यदि उसके बदले किसी और फल का रस दिया जाय तो अच्छा हो। कुछ न मिले तो पानी में ५-६ घंटे किशमिश भिगो कर उस पानी को काम में लाना चाहिए। पानी निकालने से पहले चमचे से १५-२० बार किशमिश और पानी को अच्छी तरह चला लेना चाहिए।

ऊपर की बातें कहने के बाद फिर भी मैं यही कहूँगा कि जुकाम में २-३ दिन, बुखार में जब तक बुखार रहे या लम्बा चलने वाले बुखार के शुरू में ४-५ दिन, दस्त लगने की बीमारी में जब तक दस्त न रुकें सिर्फ पानी पीकर रह जाना या पानी में सिर्फ नींबू का रस मिलाकर पीना बहुत अच्छा है। बहुत कमजोर रोगी को रस देना आवश्यक है पर साधारण हालतों में रसाहार भी बहुत ठीक नहीं है।

अपनी चिकित्सा में मैं बच्चों को पहले और दूसरे दिन सिर्फ नींबू के रस और पानी पर रखने की कोशिश करता हूँ। तीसरे दिन किसी फल का रस दिन में तीन चार पिलाता हूँ। नये रोग उपवास करने और एनीमा लेने से (एनीमा के बारे में आगे बताया जायगा) दो तीन दिन में ही चले जाते हैं। अधिक उम्र या कमजोर रोगियों को पहले दिन कुछ भी नहीं देते। प्यास मालूम होने पर सिर्फ पानी पीने को देते हैं। दूसरे दिन नींबू का रस पानी के साथ दिन में तीन-चार बार देते हैं। आगे भी इसी तरह रखते हैं पर यदि रोगी ने इच्छा प्रकट की तो

तीसरे-चौथे दिन से ही फल का रस देना शुरू कर देते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि बड़े रोगों के नये रोग भी, जो बहुत पेचीदे नहीं हैं, दो-तीन दिनों के उपवास और एनीमा प्रयोग से जरूर चले जाते हैं। पेचीदे रोगों में, जैसे टाइफॉयड बुखार में, ज्यादा दिन लग सकते हैं, लेकिन उनमें भी बिना किसी उपद्रव के सफलता होती है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है, सबल रोगियों को रोग रहने के समय तक पानी या नींबू के रस मिले पानी के साथ उपवास कराना अच्छा है। ऐसा उपवास प्रकृति के अनुकूल है और कुछ हानि नहीं करता। फिर भी नये रोगों में फल के रस देने से कोई खास हानि नहीं हो जाती। रस पाचन-क्रिया पर भार नहीं पहुँचाते और इनके पीने से रोगी को तसल्ली रहती है। नींबू के रस के प्रयोग से तो फायदा ही होता है।

कुछ चिकित्सकों की राय है कि लौकी, परवल, नेनुआ, तरोई टमाटर, शलजम, पालक इत्यादि हरी और ताजी भाजियों में से तीन चार को हल्की आँच पर एक डेढ़ घंटे धीरे-धीरे उबालकर और फिर उनका अर्क (सूप) निकालकर दे सकते हैं। जो चाहे तो उस अर्क में नींबू का रस भी छोड़ सकते हैं। रोगावेग में नमक न देना ही अच्छा है। इस सूप (अर्क) में भाजी के टुकड़े न होने चाहिए, फल और तरकारी के रस दवा का काम भी करते हैं। उनके अन्दर बहुत से प्राकृतिक लवण (कुदरती नमक) रहते हैं, जो खाने में नमकीन नहीं मालूम होते पर जिनसे शरीर को बहुत लाभ पहुँचता है। मेरी अपनी राय है कि नये रोगों के आरम में सूप न देना ही अच्छा है। अगर चार पांच दिन के बाद यह मालूम हो कि रोग कुछ दिन चलेगा और फल न मिलते हों तो सूप दे सकते हैं।

नये रोगों के चले जाने पर एक-दो दिन रोगी को सिर्फ दूध या मठा या फल या तरकारी पर रखना चाहिए। धीरे-धीरे उसे रोटी-भाजी पर लाना चाहिए। मान लीजिए कि एक रोगी है, जिसका बुखार ३ ४ दिनों

के बाद ज्वर उतर गया। कल हम उसको लगभग ८ बजे सुबह, २ बजे दिन और ६ बजे शाम को बिना पानी मिलाये फलों के रस पर रखेंगे। परसों उसे हम दो बार कोई एक हल्का फल (दो छोटे सन्तरे या थोड़ से अनार के दाने या एक सेब या थोड़े से अंगूर या किशमिश या आधा पपीता) और एक बार रस देंगे। नरसों हम सुबह के फल के साथ आधा पाव कच्चा या एक उफान का उबला दूध भी, बिना चीनी या मिश्री के, देंगे। दो बजे दिन में फिर सिर्फ फल और शाम को एक मामूली तौर पर बनी हरी भाजी (जैसे लौकी या भतुआ (पेठा) या नेनुआ या तराई या परवल) देंगे। आलू, शुइयां, बंडा जैसी कन्द भाजी या गोभी बैंगन जैसी बादी भाजी एक हफ्ते या और ज्यादा दिनों तक न दी जायगी। चौथे दिन सुबह में ७ या ८ बजे दूध, ११ १२ बजे दोपहर में रोटी और ऊपर की भाजियों में से कोई एक भाजी देंगे, और फिर शाम को सिर्फ भाजी या दूध-मुनक्के देंगे। भोजन का क्रम नमूने के लिए बताया गया है। आशा है कि पाठक इस नमूने से सच्चा आशय समझ जायंगे। नये रोग के जाते ही रोटी या चावल दाल शुरू नहीं करना चाहिए, क्योंकि शरीर उस हालत में थका और कमजोर सा रहता है। उसे एक प्रकार की लड़ाई लड़नी पड़ी थी। इसलिए धीरे-धीरे उसे अन्न देना चाहिए।

ऊपर बताया गया है कि बड़े फोड़े के आरंभ होने की हालत में भी भोजन न देना चाहिए। बड़े फोड़े जब उठने लगते हैं तो थोड़ी या ज्यादा हरारत भी रहती है। डाक्टर लोग तो ऐसी हालत में सभी कुछ खाने को देते हैं। वे समझते हैं कि आगे इस फोड़े को पकाकर इसमें नश्तर दिया जायगा। इसलिए भोजन रोकने से क्या लाभ। पर मोटे फोड़ों में से बहुत से भोजन के परहेज, एनीमा प्रयोग, मिट्टी के लेप (यह आगे बताया जायगा) और दूसरे उपचारों से शीघ्र ही या तो दब जाते हैं या फूट कर अच्छे हो जाते हैं। लगाने की जरूरत ही नहीं पड़ती।

(२) जीर्ण रोगों में या तो उपवास कराना चाहिए या क्षारमय (alkaline) भोजन देना चाहिए—मान लीजिए कि मेरे पास कोई गठिया जैसे जीर्ण रोग से ग्रस्त रोगी आया। अगर वह साधारण तौर पर अच्छी हालत में है, बहुत कमजोर नहीं है, तो मैं पहले ही उसे तीन दिन का उपवास पानी या अम्ल-खट्टे (प्रभाव में क्षार) फलों (जैसे सतरा) के रस पर कराऊँगा और तब फल और भाजी पर ७ से १० दिनों तक रखूंगा, जिससे शरीर के अन्दर का खून बदल जाय। खून के बदलने पर रोग का दूर होना निर्भर है, और खून का अच्छा या बुरा होना भोजन पर निर्भर है। इसलिए या तो उपवास या भोजन के बदलने से ही मैं अपनी चिकित्सा शुरू करूँगा। अगर रोगी कुछ कमजोर है तो पहले उसे मैं केवल ऐसी चीजें खाने को दूँगा, जो क्षारमय हैं और जिनसे खून सौ फी सदी यानी बिल्कुल क्षार-मय हो जाय। क्षार-मय भोजनों के बारे में अभी आगे बतलाया जायगा, पर उदाहरण के लिए यहां यह कहा जाता है कि गठिया के रोगी को मैं पहले एक-डेढ़ सप्ताह तक एक समय रोटी भाजी और एक या दो और समय फल (सेब या सन्तरा या गाजर या अमरूद) पर रखूंगा, फिर ७ दिन सिर्फ फल और भाजी पर रखूंगा। उसे इन दिनों हर रोज और आगे भी बीच-बीच में एनीमा दिया जायगा, जिससे वर्षों का इकट्ठा विकार शरीर से निकल जाय। साथ ही आवश्यकतानुसार कुछ जल और भाप या धूप का सहारा भी लिया जायगा। पुराना गठिया देर से जाता है, लेकिन जाता जरूर है, इसलिए इस रोगी को १५-२० दिन फल और भाजी पर रख कर तीन दिन का उपवास रस पिला कर या पानी पर हो करा दूंगा। इस तरह के तीन दिनों के उपवास के बाद उसे फिर फल और भाजी पर ७-८ दिन रखूंगा और तब सुबह का फल, दोपहर में कच्ची सब्जी (सलाद, आगे देखिए) और एक-दो चोकरदार आटे की रोटी और शाम को पकी भाजी और मुनक्के या सिर्फ मुनक्के खिलाना शुरू करूंगा। इस तरह दो-ढाई महीने

चलाऊँगा। इस अर्से में रोग बहुत कुछ दूर हो जायगा। अगर फिर भी उपचार की जरूरत रहेगी तो दो-ढाई महीने के बाद फिर तीन दिन का उपवास कराऊँगा। इसके बाद उसे फिर एक सप्ताह फल और तरकारी पर रखा जायगा और तब रोगी मामूली का साधारण भोजन शुरू हो जायगा। आशा है कि इतने दिनों के फलाहार, शाकाहार और बीच बीच में तीन दिनों के उपवास से रोगी जरूर ही तनदुरुस्त हो जायगा

अगर कोई सोरियासिस (सुजली-कजकज), दाद या एक्ज़ीमा (एक प्रकार का जख्म, जो चमड़े पर फैलता है, कभी दब जाता है और कभी उभड़ता है) का रोगी हुआ तो उसे तरकारी न दे कर सिर्फ फलों पर रखा जायगा। तरकारी में नमक मिलाना जरूरी सा हो जाता है, और पुराने जख्म वाले रोगी को नमक से परहेज करना चाहिए। ऐसे रोगों को फलाहार और बीच-बीच के उपवास के साथ-साथ एनीमा प्रयोग इत्यादि के सहारे अच्छा किया जाता है।

अगर कोई ऐसा रोगी है, जिसका रोग जीर्ण है पर बीच-बीच में उभड़ कर तीव्र हो जाता है और जिसका शरीर बहुत दुर्बल नहीं है, तो इलाज के शुरू से ही उससे उपवास कराया जायगा।

उपवास से कुछ लोग बहुत डरते हैं, पर प्राकृतिक चिकित्सकों का अनुभव बताता है कि जिन बीमारियों में दर्द, जलन और सूजन है, चाहे उनके नाम कुछ भी हों, उपवास और एनीमा से बढ़ कर उनका कोई इलाज नहीं है। एक-दो दिन के ही इस तरह के उपचार से उनकी तकलीफ या तो बिलकुल चली जाती है या बहुत कुछ कम हो जाती है। इसी तरह दमा, बवासीर, गठिया, रक्तचाप का बढ़ना (high blood pressure) इत्यादि जीर्ण रोगों में भी उपवास या फलों के रस पीकर रहने से ही आश्चर्य जनक लाभ होता है। इसलिए अचूक चिकित्सा विधि में उपवास एक बड़ा जोरदार अस्त्र है। फिर तीन दिन के छोटे उपवास से कुछ भी हानि नहीं हो सकती। उपवास में कुछ कमजोरी जरूर,

मालूम होती है, पर यह ऐसी नहीं है कि कुछ हानि पहुँचावे। बहुतों को यह कमजोरी सिर्फ सोचने के कारण होती है। जो समझदार हैं वे यह जानते ही नहीं कि मैं कमजोर होता जा रहा हूँ। उपवास के बाद उचित भोजन से पहले से भी ज्यादा बल शरीर में आ जाता है। उपवास में एनीमा-द्वारा हर रोज पेट साफ करना बहुत जरूरी है।

फलाहार के सम्बन्ध में याद रखना चाहिए कि जहाँ तक हो सके मीठे और हल्के फल खाये जायँ। किसी भी रोग के रोगी को केला और कटहल न खाना चाहिए। केला बहुत अच्छा फल है, पर केले और रोटी में बहुत कम अन्तर है। हल्कापन और लाभ के विचार से रोगियों को दिये जानेवाले फलों का क्रम इस प्रकार हो सकता है—सन्तरा (नारंगी) मौसंबी, मीठे नींबू और चकोतरे, शरीफा इत्यादि, अनार, मकोय (रसभरी), टमाटर, अंगूर, गन्ना अनन्नास, सेब, नाशपाती, शहतूत फालसा, पपीता, तरबूज, खरबूजा, खीरा, ककड़ी, अमरूद आम। किसी भी रोगी को चिकित्सा काल में केला, कटहल नहीं दिये जायँगे और दस्त लगने की बीमारी वालों को जहाँ तक हो सकेगा रसदार फल ही दिये जायँगे।

फलों के रस के संबंध में यह याद रखना चाहिए कि जहाँ तक हो वे मीठे फल के रस हों। संतरा और उसकी जाति के फल (नींबू भी) कुछ-कुछ या बिलकुल खट्टे होते हुए भी शरीर के अन्दर पहुँच कर मीठे फलों जैसा ही काम देते हैं। पर जिनके खटास की बीमारी (जैसे बहुत खट्टी डकारों का आना) है उन्हें पहले मीठे रसों के फल से शुरू कर इस तरह के अध-खट्टे फलों का रस शुरू करना चाहिए। उन्हें इन खट्टे या अध-खट्टे फलों से हानि नहीं होगी पर शुरू-शुरू में कुछ तकलीफ बढ़ सकती है।

(१) बराबर ही भोजन में क्षार की अधिकता होनी चाहिए—यह नियम बहुत ही जरूरी है। अगर इस नियम की पाबन्दी की जाय तो

कभी रोग न हो और अगर रोग हो गया है तो वह अच्छा हो जाए। इस नियम को समझने के लिए यह जानना जरूरी है कि खून में खारापन (क्षारता—alkalinity) और खटाई (अम्लता—acidity) ये विशेष गुण हैं। खून के अंदर बहुत से पदार्थ हैं, पर साधारण अन-पढ़ चिकित्सक का काम इतना ही समझने से चल जायगा कि खून में खारापन और खटाई है और यह भी कि शरीर को निरोग और तन-दुरुस्त रहने के लिए यह जरूरी है कि ऐसी ही चीजें खाई जायँ, जिनसे खून में ८० फी सदी खारापन रहे और सिर्फ २० फ़ी सदी खटाई की मात्रा। अगर कोई रोग हो जाय, चाहे वह मामूली सर दर्द हो या प्लेग या टाइफॉइड या पक्षाघात (फ़ालिज), तो यह निश्चय है कि खून में खटाई की मात्रा बढ़ गई है। इसलिए अगर भोजन-क्रम को सुधार कर खून के अन्दर के खारेपन और खटाई का अन्दाज ठीक कर दिया जाय तो रोग जाता रहेगा, और इसीलिए अगर रोज के भोजन में ऐसी ही चीजें ज्यादा खाई जायँ जिनमें खारेपन का गुण है तो न तो खून खराब होगा और न रोग होगा।

याद रहे कि खून में खटाई का होना भी जरूरी है पर उसकी मात्रा २०% ही रहनी चाहिए।

लोगों के दिलों में खेद पैदा करने वाली बात यह है कि जितने पकवान और मिठाई और बहुत मसालेदार तरकारियां और स्वादिष्ट भोजन आजकल मिलते हैं वे सभी खटाई पैदा करने वाले हैं। सच पूछिए तो ये भोजन स्वादिष्ट नहीं हैं। हमारा स्वाद कुछ ऐसा अस्वाभाविक और बनावटी हो गया है कि हम उन्हीं भोजनों को पसन्द करते हैं, जिनके गुण नष्ट कर दिये गये हैं।

एक बात और भी है। एक ही चीज खारापन और खटाई पैदा करने वाली दोनों हो सकती है। बिना छने आटे की रोटी कुछ खारापन रखती है, पर घी की बनी पूरी, पराठा या मैदे की बनी हुई कोई भी

चीज खटाई पैदा करने वाली है। ऊख (ईख) के रस से तैयार गुड़ क्षारमय है पर उसी गुड़ से बनी हुई चीनी या मिश्री अम्लगुण वाली है। चीनी को तो सफेद ज़हर समझना चाहिए। बच्चों को सूखा रोग का ख़ास कारण माताओं से खाई गई बहुत चीनी है।

अब नीचे एक सूची दी जाती है कि कौन-कौन पदार्थ क्षारमय हैं और कौन अम्ल —

क्षारमय पदार्थ, जिनसे खून में क्षारापन आता है

(अ) सभी मीठे फल और ऐसे फल जो पक कर मीठे हो जाते हैं—नींबू, नारंगी, सन्तरा, चकोतरा और अनन्नास थोड़ा या ज्यादा खट्टे होते हुए भी क्षारमय हैं। लेकिन बेर, जो पकने पर भी कुछ खट्टा रह जाता है, क्षारमय नहीं है। किशमिश, मुनक्के, अंजीर, पिंड-खजूर क्षारमय हैं।

(ब) सभी पत्तीदार भाजियां (सभी तरह के साग, करमकल्ला इत्यादि) और ऐसी फलदार हरी भाजियां, जो ज़मीन के ऊपर होती हैं, जैसे लौकी तरोई, नेनुआ, परवल, टिन्डा, सहजन इत्यादि। ताज़ा सेम, लोभिया (बोड़ा) क्षारमय हैं लेकिन कुछ कम। सभी कन्द भाजियां, जैसे आलू, खटाई वाली नहीं हैं पर भारी और देर से पचने वाली होती हैं। रोगी को ये भाजी नहीं देते। छिलकेदार आलू क्षारमय है, पर देर से पचता है।

कोई कन्द भाजियां, जैसे शलजम, गाजर, मूली, बहुत अच्छी हैं लेकिन उन्हें ठीक तरीके से पकाना चाहिए। शलजम, गाजर और मूली के साथ उनकी मुलायम पत्तियों को मिलाकर तरकारी बनानी चाहिए। छिलगाभी (कोबी) बहुत अच्छी क्षारमय है पर बादी है, इसलिए रोगियों को नहीं देते। लौकी, तरोई, नेनुआ इत्यादि के छिलके को न फेंकना चाहिए। इन्हीं छिलकों में प्रकृति ने बहुत सी चीज़ें दी हैं, जो दवाई का काम करती हैं। आलू का छिलका न फेंकना चाहिए। जिन तरकारियों के छिलके कड़े और कड़वे हों उन्हें फेंक सकते हैं। तरकारियां

के छिलके में गुण है और उनसे पेट भी साफ होता है, लेकिन संबंध में याद रखने लायक एक बात यह है कि जिन्हें अक्सर पे दर्द उठता है या पतले दस्त आते हैं या आंव गिरती है उनको बिना छिलके की बनी भाजी देनी चाहिए। इन रोगियों को छिल पेट में जलन सी होगी और दस्तों की मात्रा बढ़ जायगी। जब उपचारों से बंधे दस्त आने लगें तो फिर छिलकेदार भाजी शुरू चाहिए।

(ख) दूध और दूध से बने पदार्थ, घी, मक्खन क्षारमय का पर भारी होने के कारण सभी हालत में रोगियों को नहीं दिये ज दूध बहुत रोगों में काम में लाया जा सकता है। पर घी, मक्ख व्यवहार तनदुरुस्ती की हालत में ही लाभदायक हो सकता है।

दही या मठा, जो खट्टा नहीं हुआ है, अच्छा क्षारमय पदार्थ

मठा एक बहुत उत्तम पदार्थ है। उसमें दूध के सभी गुण रह हैं, पर मक्खन नहीं रहने से दूध का भारीपन उसमें नहीं रहता। अलावा जब दूध का दही जमता है तो उसमें एक खटाई (लैक्टि एसिड—lactic acid) आ जाती है, जो पेट के लिए अच्छी है। खटाई मठे में रहती है। सभी जीर्ण रोगों में, पुरानी खांसी और द भी, मठे का इस्तेमाल कर सकते हैं। मठे का खट्टा न होना चाहि उसमें मक्खन बिल्कुल न हो और मठा गाय के दूध के दही क हो। एक दमा के रोगी और एक दूसरे गठिया के रोगी को मैंने तीन दिन का उपवास कराया, फिर उनको दिन में चार बार मठा पि पिलाकर रखा। दो महीने में दोनों के रोग जड़ से जाते रहे। की आवश्यकता नहीं कि इन रोगियों को पहले कुछ दिनों तक बरा और फिर अक्सर एनीमा दिया जाता था, जिससे वर्षों का इकट्ठा वि बाहर निकल गया। मठा पीकर रहने से शरीर का मल भी बना और पाचन-क्रिया भी ऐसी हल्की रही कि शरीर भोजन के पश्चात

ची हुई अपनी बहुत-सी शक्तियों को अपनी सफ़ाई और मरम्मत में गा सका।

मठे से अक्सर वायु पैदा होती है और किसी किसी को मठा बिल्कुल नुकूल नहीं पड़ता। एक दो दिन के प्रयोग से जाना जा सकता है कि ठा या कोई विशेष खाद्य पदार्थ अनुकूल होगा या नहीं। मठे के साथ िरा या मासंबी का रस मिला कर देने से यह अनुकूल होने लगता है।

बहुत से जीर्ण रोगों में, खास कर जिनमें रोगी बहुत कमज़ोर हो गया , दूध का इस्तेमाल जरूरी हो सकता है।

(८) ऐसा आटा, जिसका चोकर नहीं निकाला गया है, और ऐसे ावल, जिनकी ऊपर की भूसी (कन) नहीं निकाली गई है—आटे चोकर और चावलों की लाल-पीली ऊपर वाली तह में बहुत तरह प्राकृतिक लवण (नमक) रहते हैं, लेकिन इनको हम निकालकर ाटे और चावल के गुण खराब कर देते हैं।

अक्सर लोग आटे में चोकर मिला देते हैं या सिर्फ़ चोकर की ही टी बनाते हैं। यह भी ठीक नहीं है। गेहूँ जैसा खाद्य भी प्रकृति स नाया गया है हमारे काम के लिए ठीक है। न हम उसमें से कुछ काल सकते हैं और न ऊपर से कुछ डाल सकते हैं। सफ़ेद चावलों क ारण इन दिनों बहुत से रोग फैल रहे हैं। 'बेरी-बेरी' रोग से सभी मि परिचित हैं। इसका खास कारण सफ़ेद चावल और बिना चोकर ाले आटे का व्यवहार है।

चावल गुण में आटे से थोड़ा ही कम है, अगर चावल से उसकी ुखी और उसका पानी माड़ के रूप में न निकाला जाय। माड़ फेंकन चावलों के सभी गुण निकल जाते हैं। चावल को उतनी आसानी नहीं चबाया जा सकता, जितनी आसानी से रोटी चबाई जाती है, ौर बिना अच्छी तरह चबाया हुआ पदार्थ ठीक ठीक नहीं पचता— ावलों के साथ यही खास कठिनाई है।

(ए) छिलके सहित (साबुत) दाल । —दाल प्रोटीन अर्थात् बढ़ाने वाला पदार्थ है । इसका इस्तेमाल तभी तक जरूरी है जब शरीर में मांस बनता है और बढ़ता है । तीस साल से अधिक उम्र का दाल का इस्तेमाल कम कर देना चाहिए । पचास साल लगते दाल बिलकुल छोड़ देनी चाहिये ।

चोकरदार आटे, भूसी वाले चावल, साबुत दाल क्षारमय पर की सूची में हाते हुए भी बहुत थोड़ी मात्रा में क्षारमय हैं ।

दाल छिलके के साथ और गाढ़ी बनी हो । रोटी या चावल के सिर्फ उतनी ही ली जाय, जितनी से दाल खाने का आनन्द और मिल जाय पर पेट में कीचड़ न इकट्ठा हो । कीचड़ पर पेट के अन्दर निकले हुए पचाने वाले रसों का असर (प्रभाव) नहीं हो पाता अक्सर पतली दाल की तारीफ की जाती है, पर उसके सम्मिश्रण खाई हुई कठिन चीज को अच्छी तरह पचाना कठिन होता है । इ में भी कमी होती है ।

रोगों की चिकित्सा करते समय दाल बिल्कुल नहीं दी जाती । रोटी भाजी या चावल भाजी या रोटी या भाजी खिलाते हैं । मैं अप मरीजों को सिर्फ रोटी खाकर रहने के लिए कहता हूँ । जहां भ बिलकुल नहीं मिलती वहां ऐसा करना जरूरी होता है । मरीज पर और पूछते हैं कि रोटी किस चीज के साथ खाऊँ । उन्हें बताना प है कि तनदुरुस्ती हासिल करने के लिये अगर पहले कुछ दिनों तक रोटी अच्छी न लगे तो भी उसे चबा चबा कर खा जाओ । दो-चार दि में ही अकेली रोटी का स्वाद मिलने लगता है ।

(न) गुड़ और शहद । जब गुड़ मामूली तौर से साफ कि जाता है, यानी जब उसके गुणदायक पदार्थ उससे अलग कर दिये ज हैं, तब देसी चीनी बनती है । और जब वह देसी चीनी और भी

[ब]न जाती है तो देखने में बढ़िया लेकिन बहुत नुकसान करने वाली [अ]लबामयी चीनी बनती है। दोनों खराब हैं, भूरी शकर खराब नहीं है।

शहद बहुत अच्छी चीज है। इसकी चीनी प्राकृतिक और शरीर में [र]क्त खप जाने वाली होती है। लेकिन शहद शुद्ध हो।

अम्ल पदार्थ, जिनसे खून में खटाई आती है

(अ) मांस, मछली—अंडे—अंडे के बारे में कुछ लोगों का कहना कि उसकी सफेदी में खटाई है और जर्दी में खारापन।

इन दिनों अंडे खाने का रिवाज बहुत बढ़ गया है। मांसाहार के [प]दार्थों में अंडा सब से कम हानिकर जरूर है, लेकिन, जैसा कि पढ़े-लिखे [स]माज में समझा जाने लगा है, यह स्वास्थ्य के लिए अनिवार्य नहीं [है]। इसमें कोई शक नहीं कि कुछ हालतों में अंडा बड़े काम का साबित [हो]ता है। कच्चे या आधे उबले अंडे की जर्दी बहुत जल्द पचती और [त]ाकत पैदा करती है। इसलिए अगर अंडा खाना ही हो तो कच्चा या [आ]धा उबला खाना चाहिए। सख्त हो जाने से वह बहुत देर में पचता [है] और बहुत से विकार पैदा करता है।

अंडा खाने का सब से अच्छा ढंग यह है—कच्चे अंडे की जर्दी [(]पीले हिस्से) को नीबू या नारंगी के रस के साथ अच्छी तरह मिलाइए [औ]र फिर उसमें थोड़ा शहद मिलाकर पी जाइए। ऊपर से थोड़ा सा [पा]नी या एक उफान का दूध पी जाइए।

जिनके शरीर में बहुत गर्मी है उन्हें अंडे का व्यवहार न करना [च]ाहिए। वीर्यदोष वालों के लिए भी शुरू से ही अंडा खाना ठीक नहीं [है]। फिर अंडे का व्यवहार अगर किया जाय तो वह जाड़े में ही ठीक [हो]ता है।

अंडा, जहां तक हो सके, ताजा हो। बासी अंडा के अंदर का पदार्थ [ब]हुत तेजी से सड़ता है और उससे आंतों में बहुत कीड़े पैदा हो जाते हैं।

मांस हानिकर इसलिए है कि जानवर के शरीर के बहुत से टूटे-फूटे

तरकारियों के सूप (रस) तैयार किए जा सकते हैं, पर रोगियों के लिए टमाटर, करमकल्ला, परवल, नेनुआ, तरोई मिंडी (रामतरोई), पालक, बथुआ, लौकी में से किसी दो-तीन को मिलाकर रस (सूप) तैयार करना अच्छा होता है। करीब करीब सेर भर भाजियों को पतला काट कर उसमें थोड़ा (आध-पाव) पानी देकर आग पर चढ़ा दो। आंच धीमी रहे और बर्तन का मुँह ढका रहे। पानी खूब निकलेगा। घंटे भर बाद बर्तन को उतार कर चमचे से तरकारी को खूब मसलो और साफ़ कपड़े से छान कर सूप निकाल लो। इस सूप में थोड़ा नमक और कुछ बूंद नीबू के रस की, यदि इच्छा हो तो, मिला सकते हैं। फलों के रस और भाजियों के सूप पेट भरते हैं और साथ ही दवा का काम भी करते हैं। फल और भाजियों में प्रकृति (कुदरत) ने वह गुण रख छोड़े हैं जिनसे खून साफ़ होता है और दूसरे बहुत से लाभ होते हैं।[1]

कमजोरी की हालत में रसाहार के साथ साथ एक छोटे चम्मच भर शहद भी दिन में दो-तीन बार लेना चाहिए। शहद से ताक़त बनी रहती है।

(व) उपवास या रसाहार के बाद बहुत धीरे धीरे रोटी-भाजी पर आना चाहिए। निरे उपवास के बाद एक-दो दिन चार बार रस पीकर ही रहना चाहिए। फिर तीसरे दिन दो बार रस लेना चाहिए और दो बार थोड़ा दूध। फिर एक बार कोई पत्तीदार भाजी या हल्का फल थोड़ी मात्रा में, और दूध। उसके बाद एक भोजन में बिना छने आटे की एक या दो छोटी छोटी चपातियां या बिना छूटे चावलों का थोड़ा सा भात—इस तरह उपवास के बाद धीरे धीरे साधारण भोजन पर

[1] फलाहार या रसाहार के समय एनीमा ज़रूर लेना चाहिए। मामूली शीघ्र रोग तीन चार दिनों के फलाहार और एनीमा प्रयोग से ही निरवण जाते रहते हैं।

लूई-कूने

लिपजिग (जर्मनी) निवासी। इन्होंने सिद्ध किया कि सभी रोगों का एक कारण है—शरीर के अन्दर का विकार

आना चाहिए। दाल का व्यवहार दसवें-बारहवें दिन से शुरू करना चाहिए। दाल गाढ़ी और छिलके के साथ यानी पूरे दाने की हो और बहुत थोड़ी हो। पहले मूंग, तब मसूर और सात आठ दिनों के बाद उड़द या अरहर, इस क्रम से दाल खानी चाहिए।

इसी तरह फलाहार के बाद रोटी भाजी शुरू करने में जल्द बाजी न करनी चाहिए।

(८) तन्दुरुस्ती की हालत में, (चिकित्सा के समय में नहीं) प्रत्येक दिन के भोजन में क्षारमय पदार्थ की मात्रा तीन-चौथाई से भी अधिक हो। खटाई पैदा करने वाले पदार्थ एक चौथाई से भी कम हों। नमूने के लिए एक साधारण तनदुरुस्त आदमी को, जो कचहरी में काम करता है या स्कूल-कॉलेज में पढ़ने जाता है, इस प्रकार खाना चाहिए—

सुबह—नाश्ता, मसलन कुछ नहीं, खासकर अगर १० बजे स्कूल या दफ्तर जाना हो। सारी रात पेट खाए हुए भोजन के पचाने में लगा रहता है, इसलिए सवेरे पेट को आराम देना चाहिए। हां, एक बात की जा सकती है। रात को एक-डेढ़-छटांक साफ और धुली किशमिश पाव-डेढ़ पाव पानी में छोड़ दी जायें और उसी समय उसमें आधे नींबू का रस निचोड़ दिया जाय। शीशे के बर्तन में ऐसा करना ठीक होगा। सुबह इस पानी को एक चमचे से अच्छी तरह चलाकर और पानी को बर्तन में निकाल कर उसे पी सकते हैं। किशमिश ६ बजे खाते समय खा सकते हैं। यह रस बड़ा लाभदायक है। यह खून साफ करता है और पाखाना साफ लाने में मदद पहुंचाता है, पुष्टिकारक है और तबीयत में ताजगी बनाये रखता है। इस रस को हर हालत में पी सकते हैं।

सुबह भरपेट नाश्ते का रिवाज बहुत बुरा और रोगों का उत्पादक है। हां, अगर भोजन देर से—१२ बजे दोपहर में—मिलता हो तो

खाना चाहिए। दाल का व्यवहार दसवें-बारहवें दिन से शुरू करना चाहिए। दाल गाढ़ी और छिलके के साथ यानी पूरे दाने की हो और बहुत थोड़ी हो। पहले मूंग, तब मसूर और सात आठ दिनों के बाद उड़द या अरहर, इस क्रम से दाल खानी चाहिए।

इसी तरह फलाहार के बाद रोटी भाजी शुरू करने में जल्द बाजी न करनी चाहिए।

(द) तनदुरुस्ती की हालत में, (चिकित्सा के समय में नहीं) प्रत्येक दिन के भोजन में क्षारमय पदार्थ की मात्रा तीन चौथाई से भी अधिक हो। खटाई पैदा करने वाले पदार्थ एक चौथाई से भी कम हों। नमूने के लिए एक साधारण तनदुरुस्त आदमी को, जो कचहरी में काम करता है या स्कूल-कॉलेज में पढ़ने जाता है, इस प्रकार खाना चाहिए—

सुबह—नाश्ता, भरसक कुछ नहीं, खासकर अगर १० बजे स्कूल या दफ्तर जाना हो। सारी रात पेट खाए हुए भोजन के पचाने में लगा रहता है, इसलिए सवेरे पेट को आराम देना चाहिए। हां, एक बात की जा सकती है। रात को एक-डेढ़-छटांक साफ और धुली किशमिश पाव डेढ़ पाव पानी में छोड़ दी जाय और उसी समय उसमें आधे नीबू का रस निचोड़ दिया जाय। शीशे के बर्तन में ऐसा करना ठीक होगा। सुबह इस पानी को एक चमचे से अच्छी तरह चलाकर और पानी को बर्तन में निकाल कर उसे पी सकते हैं। किशमिश ६ बजे खाते समय खा सकते हैं। यह रस बड़ा लाभदायक है। यह खून साफ करता है और पाखाना साफ लाने में मदद पहुँचाता है, पुष्टिकारक है और तबीयत में ताजगी बनाये रखता है। इस रस को हर हालत में पी सकते हैं।

सुबह भरपेट नाश्ते का रिवाज बहुत बुरा और रोगों का उत्पादक है। हां, अगर भोजन देर से—१२ बजे दोपहर में—मिलता हो तो

सुबह दूध या मठा या उसके साथ कोई ताजा फल या किशमिश थोड़ी मात्रा में ७, ७-१० बजे ले सकते हैं। लेकिन इस हालत में फिर तीसरे पहर नाश्ता न करना चाहिए।

लगभग ६ बजे सुबह—पहला हिस्सा—मौसम अनुसार टमाटर, गाजर, खीरा, ककड़ी पतली मूली, मूली की पत्ती, करमकल्ले की पत्ती, पालक की पत्ती, धनिया की पत्ती, लेटिस (सलाद) की पत्ती, चने का साग, प्याज और प्याज की पत्ती—इनमें से किसी तीन या चार (जिनमें एक पत्तीदार पदार्थ हो, कच्चा साग, जिसे अंगरेजी में 'सलाद' कहते हैं। इन कच्ची भाजियों को अच्छी तरह धो कर सलाद बनाना चाहिए। इसके बारे में आगे बताया जायगा। सारे भोजन में इस सलाद की मात्रा कम से कम एक तिहाई जरूर होनी चाहिए। यह सलाद बहुत अच्छी चीज है। इससे खून में क्षार का आधिक्य और पाखाना साफ होता है। सलाद में यदि इच्छा हो तो नमक और थोड़ी मात्रा में हरी मिर्च (तनदुरुस्ती की हालत में ही), नींबू का रस या मक्खन या तिल या जैतून या सरसों का तेल (सिर्फ चार-छः बूंद) डाल सकते हैं। उसमें खोपरे (नारियल की गरी) के कुछ पतले टुकड़े और किशमिश भी ऊपर से छोड़ सकते हैं।

अगर सलाद बनाने के लिए दो-तीन चीज न मिलें तो कम से कम एक प्रकार का ताजा फल या कच्ची भाजी, जैसे टमाटर या खीरा या ककड़ी या करमकल्ले की पत्ती या पतली मूली (मूली पत्तों के साथ) या अमरूद का इस्तेमाल करना चाहिए। कुछ न मिले तो थोड़ी तुलसी और बेल की पत्ती चबा कर खा लेना चाहिए। भाजी के सलाद के बदले किसी किसी दिन फलों के सलाद (जैसे अमरूद, केला, संतरा, सेब, नासपाती, मकोय इत्यादि में से किसी दो-तीन के टुकड़ों को मिला कर) दही या मलाई या क्रीम के साथ ले सकते हैं।

कच्ची सब्जी या ताजे फल जरूर खाना चाहिए। कारण यह है कि आग पर भोजन पकाने से साग-सब्जियों के बहुत से गुण नष्ट हो जाते हैं। कच्ची सब्जी या ताजे फलों से भोजन का सच्चा लाभ मिलता है। अक्सर लोग पेट भरने पर फल खाते हैं। इसका नतीजा बुरा होता है।

दूसरा हिस्सा—रोटी या चावल और एक या दो पकी भाजियाँ [आलू या आलू-फूलगोभी और एक पत्तीदार भाजी या लौकी या परवल या नेनुआ या तरोई या भिंडी (राम तरोई) या सहजन (मुनगा) या पत्ती के साथ शलजम की तरकारी, जिसमें मिर्च या बहुत मसाले न हों और जो हल्की आँच पर पकाई गई हो]; घी के साथ थोड़ी सी साबुत दाल। जिसे किसी भी तरह का रोग हो उसे किसी तरह की भी दाल न खानी चाहिए। आलू का व्यवहार भी परिमित हो। इस हिस्से के भोजन की मात्रा अधिक न हो।

रोटी या चावलों के साथ आलू-गोभी का व्यवहार अच्छा नहीं है। इसका कारण यह है कि इन पदार्थों में श्वेतसार (सफेदी) प्रधान है। श्वेतसार की ज्यादती से पाखाना नहीं होता और बहुत सी खराबियाँ पैदा होती हैं। लेकिन तनदुरुस्ती की हालत में थोड़े आलू से खराबी न होगी। अच्छा तो यह होगा कि आलू हफ्ते में सिर्फ दो तीन बार लिया जाय।

तीसरा हिस्सा—मुँह मीठा करने के लिए दो-तीन पिंडखजूर या अंजीर या कुछ मुनक्के या थोड़ा गुड़ या शहद या दही-गुड़।

इस भोजन के तीन हिस्से किए गए। इसके सम्बन्ध में यह याद रखना चाहिए कि कई चीजों के रहने के कारण अति भोजन न हो। दूसरी बात यह है कि यह तीन हिस्से तनदुरुस्ती के समय के लिए ही ठीक हैं। चिकित्सा के दिनों में रोटी और एक भाजी काफी होगी।

लगभग १२ बजे दोपहर—पानी, सादा या नींबू के रस के साथ। खाने के साथ पानी पीना ठीक नहीं है।

लगभग १ १० बजे दिन—कच्चा या एक उफान का औटा दूध और शहद या भूरी शक्कर, या एक प्रकार का कोई ताजा फल, या मठा, या तरकारी का सूप (रस) या किसी फल का रस, या फल और दूध या मठा—अपनी शक्ति के अनुसार।

लगभग ७ बजे शाम—एक प्रकार का ताजा फल और दूध, या एक प्रकार की पकी भाजी और मुनक्का या अंजीर जैसा एक प्रकार का सूखा फल; या फल या भाजी और कुछ मूंगफली या बादाम या पिस्ता या नारियल की गिरी, या रोटी, थोड़ा मक्खन या घी और एक या दो प्रकार की हरी भाजियां—इनमें से किसी एक प्रकार का भोजन खाना चाहिए। मुंह मीठा करने के लिए बहुत थोड़ा गुड़ या शहद। यह देख लेना चाहिए कि इनमें से कौन भोजन उपयुक्त होता है।

ख्याल रहे कि रात का भोजन काफी हल्का हो। जहां तक हो सके इस भोजन को चिराग़ बत्ती जलाने के बहुत देर बाद तक न रोक रखना चाहिए; अगर दिन रहते कर लिया जाय तो और अच्छा हो।

लगभग ६ १० बजे रात या दूसरे दिन बड़े सवेरे या रात में जब नींद खुले—पानी।

रात में सोते समय दूध पीने की प्रथा बहुत हानिकारक है। कुछ ही देर पहले खाया हुआ भोजन पचने भी नहीं पाता और ऊपर से हम दूध पी लेते हैं। ऐसा करने से आगे चल कर किसी न किसी तरह का अपच जरूर होता है। अगर दूध पीना जरूरी हो तो फल-दूध का भोजन करना अच्छा है या सिर्फ रोटी-भाजी (दाल नहीं) खाने के २० मिनट बाद एक प्याला दूध पी सकते हैं। ज्यादा देर न करनी चाहिए और न साथ ही दूध पीना चाहिए। रोटी पर लार का असर २० मिनट तक रहता है। उसके बाद पेट की झिल्लियों से खट्टे रस निकलते हैं, जो दूध को पचा देते हैं।

लार का असर जारी रहे और पूरा-पूरा हो, इसके लिए २० मिनट समय देना चाहिए।

ऊपर बताए क्रम के अनुसार अगर तनदुरुस्त आदमी अन्दाज़ का ख्याल रखता हुआ भोजन करेगा तो वह कभी बीमार न होगा— इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

ऊपर के भोजन-क्रम में अपनी अपनी ज़रूरत और अवस्था के ख्याल से कुछ हेर-फेर किया जा सकता है। यदि सुबह कुछ खाना ही हो तो कुछ हल्का फल या शहद के साथ पाव भर दूध लिया जा सकता है लेकिन इस नाश्ते और अगले खाने के बीच कम से कम तीन घंटे का अन्तर ज़रूर होना चाहिए।

भोजन कैसा हो, यह इस पर भी निर्भर है कि खाने वाले की आर्थिक अवस्था कैसी है। कुछ लोगों के लिए शायद यह क्रम ठीक और उपयुक्त हो—

सवेरे—अंकुर निकले चने का नाश्ता। इसमें थोड़ी किशमिश या ऋतु के अनुसार थोड़ा खीरा या अमरूद भी मिलाया जा सकता है।

दोपहर—चावल या रोटी, दाल, भाजी, दही।

शाम—रोटी, भाजी और एक तरह का मीठा सूखा फल (मुनक्का या अंजीर या खजूर या छुहारा)

अच्छा है कि सुबह से ६ बजे तक कुछ न खाया जाय। बिना भूख के खाया हुआ अमृत भी विष का काम करता है और बहुतों को सच्ची भूख लगती ही नहीं।

नाश्ते में अन्न की चीज़ें खाना रोगों को न्योता देना है। अक्सर अन्न का ही व्यवहार नाश्ते में किया जाता है। कहीं डबल रोटी-मक्खन, कहीं पूरी-कचौरी, कहीं दाल सेव और कहीं पकौड़ी की बहार नाश्ते में चलती है। यह हानिकारक सिद्ध होता है। दिनभर में ४ बार अन्न के व्यवहार से खून में खटाई आती है। अगर फल-दूध मिलना कठिन हो तो अंकुरित चना या मूंग या मसूर का व्यवहार किया जा सकता है।

तो क्या पकवान, मिठाई इत्यादि पदार्थ कभी न खाए जायें ? सच पूछिए तो यह चीजें आदमियों के खाने की नहीं हैं। इन्हें सिर्फ देवताओं को दिखा सकते हैं। पर जब कभी दिन के भोजन के साथ घर की बनी एक-दो अच्छी मिठाई आ जाय तो खाई जा सकती है। लेकिन सब मिला कर भोजन की मात्रा ज्यादा न हो। दावत के समय कभी कभी पूरी पकवान अन्दाज़ से खा सकते हैं, वह भी अगर कोई बीमारी नहीं है तो। इन्हीं पकवान और मिठाइयों के कारण हम बार बार बीमार होते हैं और अपनी शक्ति, समय और रुपए बर्बाद (नष्ट) करते हैं। फिर महज जीभ के क्षणिक आनन्द के लिए इनके खाने से क्या लाभ!

कुछ लोग कहेंगे कि ऊपर बताए ढंग से भोजन करने का क्रम बता कर मैंने जीवन के सारे आनन्द छीन लिए। उनसे मैं कहूँगा कि वे खुद ही सोचें—सभी तरह के खाना खाते हुए बीमार रहना वे पसन्द करेंगे या परहेज से खाते हुए बहुत बहुत दिनों तक निरोग और हृष्ट-पुष्ट बना रहना ! अपने देश में जो लोग सिर्फ दो समय रोटी, दाल या भाजी या सिर्फ रोटी खाते हैं वे कैसे तगड़े बने रहते हैं ! बीमार तो वे ही होते हैं, जो अपने भोजनों पर बहुत रुपए खर्च करते हैं।

अगर कोई सब तरह की चीजें खाता-पीता हुआ निरोग और हट्टा कट्टा बना रहे या सब चीजें खाते हुए रोग को दूर कर सके तो मेरी उससे हरगिज लड़ाई नहीं है, पर ऐसा होता कहां है। कठिनाई तो यह है कि जो लोग साधारण भोजन भी अच्छी तरह पचा नहीं सकते वे भी चिकित्सा के दिनों में सब कुछ खाना चाहते हैं—संयम की सलाह पर नाक सिकोड़ते हैं। अगर असंयम के साथ-साथ स्वास्थ्य बनाए रखना संभव होता तो सभी चिकित्सक असंयम की ही सलाह देते।

इन दिनों यूरप अमेरिका में जो भोजन-सुधार चला है वह बड़े मार्के का है। उसके अनुसार लोग इस तरह खाते हैं:—

लगभग ८ बजे सुबह—ताजे फल और दूध।

लगभग १ ३० बजे दिन सब्जियों का सलाद, काफ़ी मात्रा में, चोकरदार आटे की डबल रोटी और मक्खन। कुछ सूखे मीठे फल।

लगभग ७ बजे शाम—एक या दो पकी हरी भाजी गोश्त, मछली, अंडे में से कोई एक चीज़। जो मांसाहारी नहीं हैं वे पनीर या बादाम-अखरोट इत्यादि सूखे मेवे खाते हैं।

इस तरह के भोजन में श्वेतसार, प्रोटीन, चिकनाई, विटामीन और प्राकृतिक लवण * सभी कुछ मिलते हैं। अपने देश में काम करने के समय कुछ ऐसे ऊट-पटांग हैं कि यह क्रम नहीं चल सकता। इसलिये मैंने ९ बजे सुबह, ३ ३० बजे तीसरे पहर और ७ ३० बजे शाम रखे हैं। लेकिन अगर हम भी ऊपर बताए ढंग से वे ही या वैसी ही चीजें खायें तो बहुत अच्छा हो। डबल रोटी के बदले हम अपनी हिन्दुस्तानी रोटी खा सकते हैं।

(४) खाना खाने और पानी के समय अलग होने चाहिए— भोजन के साथ पानी या बहुत मात्रा में कोई भी रसदार पदार्थ पीने से पेट में कीचड़ सा बन जाता है। इस कीचड़ पर पेट के अन्दर निकलने वाले पाचक रसों का असर पूरा-पूरा नहीं पड़ता, जिससे बदहज़मी, कब्ज और बहुत सी और बीमारियां धीरे-धीरे होती हैं। इसी नियम के अनुसार भोजन के साथ दूध, बहुत रसे वाली तरकारी, बहुत पतली दाल, मठा इत्यादि खाना अच्छा नहीं है। खीर भी स्वास्थ्य-प्रद भोजन नहीं है। दूध अगर किसी पदार्थ के साथ-साथ लिया जा सकता है तो केवल फलों के साथ।

भोजन के कम से कम दो घंटे बाद जी खोल कर पानी पीना चाहिए। जानवर भी अपने खाने और पानी पीने के समय अलग अलग रखते हैं। थोड़े अभ्यास से ही आप भोजन के समय पानी पीना बन्द कर सकते हैं। अगर भोजन में मिर्च मसाले या तेल की ज्यादती

*इन पदार्थों के बारे में आगे बताया जायगा।

नहीं है और आप उसे अच्छी तरह चबाते हैं तो आप खुद ही खाने के समय पानी पीना न चाहेंगे। जब तक आदत न पड़ जाय तबतक के लिए खाने के समय थोड़ा पानी चूस सकते हैं।

बहुत सबेरे कुल्ला करने के बाद पानी पीने की आदत बड़ा अच्छा है। यदि पांच बजे सुबह चारपाई छोड़ते हो तो चार बजे पानी पीकर एक घंटे तक फिर लेटे रहना या सो जाना और भी अच्छा है। सुबह के नियमित जलपान से आदमी बहुत सी बीमारियों से बच सकता है।

पानी बिना उबाला हुआ ही पीना चाहिए। हां, जाड़ों में पानी बहुत ठंडा हो तो उसे जरा गुन-गुना कर लेना चाहिए। या यदि सन्देह हो कि पानी विकार-युक्त है तो उसे अच्छी तरह उबाल कर छान लो और फिर ठंडा कर के पियो,

बहुत लोग बताते हैं कि खूब पानी पियो। यह भूल है। जिस तरह बिना भूख के भोजन करना ठीक नहीं उसी तरह बिना प्यास के पानी पीना ठीक नहीं। पानी भी उसी तरह पचता है जिस तरह कि भोजन, पर पानी के पचने में बहुत कम समय लगता है।

(५) खाई हुई चीज को गले के नीचे उतारने से पहले उसे खूब चबा लेना चाहिए—जब तक एक ग्रास लेई की तरह न हो जाय दूसरा ग्रास न लेना चाहिए। दांत इसीलिए दिए गए हैं कि भोजन अच्छी तरह चबाया जाय, जिससे पचाने वाले रस उस पर अच्छा काम कर सकें। पेट में दांत नहीं हैं, इसलिए यदि मुंह में भोजन न चबाया गया तो वह पेट के अन्दर लोंदे की तरह पड़ा रहेगा। भोजन चबाते समय होठों को बन्द रखना चाहिए और चबाने का काम मजबूती के साथ पर धीरे धीरे करना चाहिए। खाते समय मुंह से आवाज न हो।

दूध, मठा और पानी को भी चूसन की तरह धीरे धीरे (बिना मुंह से आवाज निकाले) पीना चाहिए।

(६) बिना भूख के कभी नहीं और कुछ नहीं खाना चाहिए—भोजन शरीर की अच्छाई के लिए किया जाता है और शरीर अपनी ज़रूरत को भूख के रूप में प्रकट करता है। अगर भूख न लगी तो समझना चाहिए कि शरीर को भोजन की ज़रूरत नहीं, ऐसी हालत में यदि भोजन का समय हो भी गया हो तो न खाना चाहिए। अगले खाने के समय तक सच्ची भूख लग जायगी और तभी आप लाभ के साथ खा सकते हैं।

बहुतों को झूठी भूख लगती है। अगर पेट में कुलबुली मचे, भूख लगकर तुरन्त बुझ जाय और भूख की हालत में कमजोरी या घबराहट या गुस्सा मालूम हो तो समझना चाहिए कि सच्ची भूख नहीं लगी है। सच्ची भूख में पेट में खालीपन नहीं मालूम होता, लेकिन फिर भी खाने की ज़ोरदार इच्छा होती है, तबीयत में ताज़गी बनी रहती है और सच्ची भूख बहुत देर तक बनी रहती है। झूठी भूख में सिर्फ़ पानी (सादा या नींबू के रस के साथ) पीजिए। इससे लाभ होगा।

(७) खाद्य-पदार्थ के विविध विभागों को जानिए और समझिए। फिर भी याद रखिए कि हर रोज़ के भोजन में ८० फी सदी ऐसे पदार्थ हों जो क्षारमय हैं—खाद्य पदार्थ के विविध विभाग यों हैं —

(अ) श्वेतसार जिससे शरीर में गर्मी और फुर्ती आती है—गेहूँ, चावल, गुड़, चीनी, फलों की मिठास और ऐसी सभी चीज़ें, जिनके चबाने से सफ़ेद लेई सी बनती है और स्वाद में कुछ मिठास आ जाती है। आलू, घुइयाँ, (अरवी, `कची), मड़ा (आल, (कन्दा), सूरन (जिमीकन्द) और केले की गणना भी इसी में है। इनमें कुछ चीज़ें क्षारमय भी हैं, पर अनियमित रूप से खाए जाने पर यह सभी खटाई पैदा करती हैं।

(ब) प्रोटीन, जिससे मांस बढ़ता है और फुर्ती और ताक़त भी आती है—मांस, मछली, अंडा, दलहन, सेम, लोबिया और सूखे मेवे जैसे बादाम, काजू, अखरोट, पिस्ता इत्यादि। इनमें बिना

छिलकेदार दालों को छोड़ सभी खटाई पैदा करनेवाले हैं। उबाले हुए दूध से भी खटाई पैदा होती है।

दूध कच्चा या बहुत हुआ तो एक उफान का पीना चाहिए। मैदानों में घूम-घूमकर घास चरनेवाली तनदुरुस्त गाय या बकरी का कच्चा दूध पीने से कुछ भी हानि नहीं हो सकती। इन दिनों जो दूध में कीटाणु (जर्म्स) का डर बताया जाता है वह थोथी है। गर्मी में भी कच्चे दूध के बरतन को पतले कपड़े से छिपाकर एक बड़े पानी से भरे बरतन के बीच हवा में रखने से कच्चा दूध खराब नहीं होता। अगर शुद्ध दूध न मिले तो दूध न पीना अच्छा है।

(ख) चिकनाई, जिससे शरीर में फुर्ती और गरमी आती है और चेहरा इत्यादि गड्ढे वाले स्थान भरे-पूरे मालूम होते हैं। चिकनाई शरीर के जोड़ों को फ़ायदा पहुँचाता है और चमड़ा चिकना और मुलायम मालूम होता है-घी, तेल, खोपरा (नारियल, गोला,), बादाम और मूंगफली का कुछ हिस्सा अंडे की जर्दी (पीला हिस्सा)। अगर ये पदार्थ अन्दाज से खाए जायँ तो खून में खारापन आता है। लेकिन घी या तेल में बना हुआ आटे का पकवान या पकौड़ी इत्यादि खटाई पैदा करने वाले हैं। घी को दाल और तरकारी के साथ अन्दाज से खाना चाहिए। बुरे घी से शुद्ध तेल अच्छा है। रोटी के साथ मक्खन का व्यवहार तनदुरुस्ती की हालत में बहुत अच्छा है।

चिकित्सा के समय रोगियों को घी-तेल से, जितना हो सके, बचाना चाहिए।

(द) विटामीन और खनिज लवण (कुदरती नमक), जिनसे खून साफ़ होता है और रोगों से बचने की शक्ति मिलती है—पत्तेदार शाक-भाजी, ताजे और सूखे मीठे फल, नीबू-संतरे की जाति के खट्टे फल। यह सभी क्षार बढ़ाने वाले हैं।

विटामीन कई प्रकार के हैं। इनमें से बहुत से आग की आंच से नष्ट हो जाते हैं। इसीलिए भोजन के साथ या नाश्तों में कच्चे साग और ताजे पके फलों का आधिक्य होना चाहिए।

साग-भाजी के पकाने में हल्की आंच से काम लेना चाहिए और बर्तन का मुँह ढक देना चाहिए। इकमिक (या और किसी) कुकर में पका भोजन तनदुरुस्ती के लिए अच्छा है क्योंकि उस में भाप से भोजन तैयार होता है और कोई भी पदार्थ नष्ट नहीं होता। उबाल कर उसका पानी फेंकना न चाहिए। बहुत मसालों से भी तरकारियों के प्राकृतिक गुण नष्ट हो जाते हैं। तनदुरुस्ती की हालत में थोड़ी हल्दी, धनिया और जीरा के व्यवहार से खराबी न होगी, पर चिकित्सा के दिनों में सिर्फ जीरा ही काम में लाना चाहिए। काली मिर्च में विटामीन और खनिज द्रव्य की मात्राएं हैं। स्वस्थावस्था में बहुत थोड़ी मात्रा में हरी मिर्च ले सकते हैं, पर कोई भी मिर्च न लेना अच्छा है।

प्याज में बहुत गुण और थोड़े अवगुण हैं। अगर कोई धार्मिक विचार न रोकता हो तो थोड़ी मात्रा में प्याज खाना (तनदुरुस्ती की हालत में) अच्छा है। हरे प्याज की पत्तियों की भाजी, कच्ची या पकी, बहुत लाभ दायक है।

(न) जल भोजन को पचाता है, शरीर से विकार निकालता है, खून को साफ रखता है और शरीर का अधिक गरम होने से बचाता है।

ऊपर की सूची से खाद्य पदार्थ के सभी विभाग मालूम हो जायगे और पहले बताए गए भोजन के नियम से यह मालूम हो जायगा कि किन किन चीजों का किस तरह खाने से खून में क्षार की मात्रा काफी रहेगी, जिससे रोग न होंगे और पहले से हुए रोग भी दूर हो जायेंगे। यह क्षार और खटाई की बात अभी हाल में ही निकली है। प्रयोग से यह बहुत सच्ची साबित हो चुकी है। बहुत से पुराने आहार शास्त्रियों को इसकी खबर नहीं है।

छिलकेदार दालों का छोड़ सभी खटाई पैदा करनेवाले हैं। उबाले दूध से भी खटाई पैदा होती है।

दूध कच्चा या बहुत हुआ तो एक उफान का पीना चाहिए। में घूम-घूमकर घास चरनेवाली तनदुरुस्त गाय या बकरी का कच्चा पीने से कुछ भी हानि नहीं हो सकती। इन दिनों जो दूध में (जर्म्स) का डर बताया जाता है वह थोथी है। गर्मी में भी दूध के बरतन को पतले कपड़े से छिपाकर एक बड़ पानी से भरे के बीच हवा में रखने से कच्चा दूध खराब नहीं होता। अगर दूध न मिले तो दूध न पीना अच्छा है।

(ख) चिकनाई, जिससे शरीर में फुर्ती और गरमी आती है। चेहरा इत्यादि गड्ढे वाले स्थान भरे-पूरे मालूम होते हैं। चिकनाई शरीर के अङ्गों को फायदा पहुँचाता है और चमड़ा चिकना और मालूम होता है-घी, तेल, खोपरा (नारियल, गोला), बादाम मूँगफली का कुछ हिस्सा अंडे की जर्दी (पीला हिस्सा)। अगर पदार्थ अन्दाज से खाए जायें तो खून में खाराबी आता है। घी या तेल में बना हुआ आटे का पकवान या पकौड़ी इत्यादि पैदा करने वाले हैं। घी का दाल और तरकारी के साथ अन्दाज खाना चाहिए। बुरे घी से शुद्ध तेल अच्छा है। रोटी के साथ का व्यवहार तनदुरुस्ती की हालत में बहुत अच्छा है।

चिकित्सा के समय रोगियों को घी-तेल से, जितना हो सके, बचा चाहिए।

(ग) विटामीन और खनिज लवण (कुदरती नमक), खून साफ होता है और रोगों से बचने की शक्ति मिलती है—सागभाजी, ताजे और खूब मीठे फल, नीबू-संतरे की भाँति फल। यह सभी क्षार बढ़ाने वाले हैं।

विटामीन कई प्रकार के हैं। इनमें से बहुत से आग की आंच से नष्ट हो जाते हैं। इसीलिए भोजन के साथ या नाश्तों में कच्चे साग और ताजे पके फलों का आधिक्य होना चाहिए।

साग-भाजी के पकाने में हल्की आंच से काम लेना चाहिए और बर्तन का मुँह ढक देना चाहिए। इकमिक (या और किसी) कुकर में पका भोजन तनदुरुस्ती के लिए अच्छा है क्योंकि उस में भाप से भोजन तैयार होता है और कोई भी पदार्थ नष्ट नहीं होता। उबाल कर उसका पानी फेंकना न चाहिए। बहुत मसालों से भी तरकारियों के प्राकृतिक गुण नष्ट हो जाते हैं। तनदुरुस्ती की हालत में थोड़ी हल्दी, धनिया और जीरा के व्यवहार से खराबी न होगी, पर चिकित्सा के दिनों में सिर्फ जीरा ही काम में लाना चाहिए। काली मिर्च में विटामीन और खनिज लवण की मात्राएं हैं। स्वस्थावस्था में बहुत थोड़ी मात्रा में हरी मिर्च ले सकते हैं, पर कोई भी मिर्च न लेना अच्छा है।

प्याज में बहुत गुण और थोड़े अवगुण हैं। अगर कोई धार्मिक विचार न रोकता हो तो थोड़ी मात्रा में प्याज खाना (तनदुरुस्ती की हालत में) अच्छा है। हरे प्याज की पत्तियों की भाजी, कच्ची या पकी, बहुत लाभ दायक है।

(न) जल भोजन को पचाता है, शरीर से विकार निकालता है, खून को साफ़ रखता है और शरीर को अधिक गरम होने से बचाता है।

ऊपर की सूची से खाद्य पदार्थ के सभी विभाग मालूम हो जायगे और पहले बताए गए भोजन के नियम से यह मालूम हो जायगा कि किन किन चीजों को किस तरह खाने से खून में क्षार की मात्रा काफ़ी रहेगी, जिससे रोग न होंगे और पहले से हुए रोग भी दूर हो जायेंगे। यह क्षार और खटाई की बात अभी हाल में ही निकली है। प्रयोग से यह बहुत सच्ची साबित हो चुकी है। बहुत से पुराने आहार शास्त्रियों को इसकी खबर नहीं है।

छिलकेदार दालों को छोड़ सभी खटाई पैदा करनेवाले हैं। उबाले हु[ए] दूध से भी खटाई पैदा होती है।

दूध कच्चा या बहुत हुआ तो एक उफान का पीना चाहिए। [जंगल] में घूम-घूमकर घास चरनेवाली तनदुरुस्त गाय या बकरी का कच्चा दू[ध] पीने से कुछ भी हानि नहीं हो सकती। इन दिनों जो दूध में कीटाणु (जर्म्स) का डर बताया जाता है वह थोथी है। गर्मी में भी कच्चे दूध के बर्तन को पतले कपड़े से छिपाकर एक बड़े पानी से भरे बर्तन के बीच हवा में रखने से कच्चा दूध खराब नहीं होता। अगर शुद्ध दूध न मिले तो दूध न पीना अच्छा है।

(ख) *चिकनाई, जिससे शरीर में फुर्ती और गरमी आती है* और चेहरा इत्यादि गड्ढे वाले स्थान भरे-पूरे मालूम होते हैं। चिकनाई शरीर के जोड़ों को फायदा पहुँचाता है और चमड़ा चिकना और मुला[यम] मालूम होता है-घी, तेल, खोपरा (नारियल, गोला,), बादाम और मूँगफली का कुछ हिस्सा अंडे की जर्दी (पीला हिस्सा)। अगर ये पदार्थ अन्दाज से खाए जायँ तो खून में खारापन आता है। लेकिन घी या तेल में बना हुआ आटे का पकवान या पकौड़ी इत्यादि गर्मी पैदा करने वाले हैं। घी को दाल और तरकारी के साथ अन्दाज से खाना चाहिए। बुरे घी से शुद्ध तेल अच्छा है। रोटी के साथ मक्खन का व्यवहार तनदुरुस्ती की हालत में बहुत अच्छा है।

चिकित्सा के समय रोगियों को घी तेल से, जितना हो सके, बचना चाहिए।

(ग) विटामीन और खनिज लवण (कुदरती नमक), जिनसे खून साफ होता है और रोगों से बचने की शक्ति मिलती है—हरी तरकारी, साग-भाजी, ताजे और सूखे मीठे फल, नीबू-संतरे की जाति के खट्टे फल। यह सभी क्षार बढ़ाने वाले हैं।

आम फल टिन के डिब्बों में बन्द बहुत से बे-मौसम के फल मिलते हैं। इसी तरह शर्बतों की बोतलें भी मिलती हैं। अगरेजी पढ़े-लिखे शौकीन इन फलों और शर्बतों को बड़े चाव से खाते पीते हैं। इनके प्राकृतिक गुण सभी नष्ट हो जाते हैं और इनमें चीनी की मात्रा अधिक रहती है। कहने की आवश्यकता नहीं कि इनका इस्तेमाल भी न करना चाहिए।

भोजन के मामले में जितनी सादगी बर्ती जाय, खाद्य पदार्थ का रूप संभवतः जितना प्राकृतिक हो और एक भोजन में एक साथ खाने के लिए जितनी कम चीजें हों भोजन उतना ही हितकर और स्वास्थ्य प्रद होगा।

(६) भोजन पचाने के भार से कभी कभी पेट को छुट्टी देना चाहिए—कहने का तात्पर्य है कि तनदुरुस्ती बनाये रखने के लिए कभी कभी उपवास करना जरूरी है। पेट ही शरीर के अन्दर का इंजन है। उसे कभी छुट्टी नहीं मिलती। अधिकांश लोग अपने इस इंजन से, खाने के छः सात घंटों के सिवा, बराबर ही काम लेते रहते हैं। इसी से कुछ ही दिनों में यह इंजन मंद हो जाता है और आगे चलकर बुरी तरह बिगड़ जाता है। सच पूछिए तो साधारणतः अच्छे जीवन में, जिसमें मनुष्य अन्दाज से और नियमानुसार खाता है, उपवास की बिलकुल जरूरत नहीं, पर खाने-पीने की जैसी मामूली हालत जारी है उसमें तो बिना बीच-बीच उपवास के काम नहीं चल सकता। अगर आप अपनी तबियत से खुशी खुशी उपवास न करेंगे तो प्रकृति आपके शरीर में रोग पैदा करके आप से जबर्दस्ती उपवास करावेगी। अब आप तय कर लीजिए कि आप अपनी तबियत से उपवास करेंगे या जबर्दस्ती प्रकृति के दबाव से।

बीमार न रहने पर भी महीने में दो-चार उपवास कर लेना बहुत अच्छा है। हमारे देश में एकादशी, इतवार इत्यादि दिनों के व्रत

भोजन की मात्रा का ख़याल ज़रूर रखना चाहिए। एक ... इतना ही भोजन करना चाहिए कि पेट भरा हुआ न मालूम हो।

(८) कुछ प्रचलित खाद्य पदार्थों से बचना चाहिए।

सफ़ेद मैदे की बनी डबल रोटी (पाव रोटी), बिस्कुट, केक, ... कचौरी और अंग्रेज़ी मिठाइयों और पकवानों को न खाना चाहि... इनका रिवाज आजकल बहुत बढ़ गया है। डाक्टर और अब वैद्य हकीम भी डबल रोटी और बिस्कुट अपने रोगियों को देते हैं। यह ... हल्की ज़रूर हैं, पर न मालूम कब की और किस तरह बनी हुई... फिर मैदे की बनी होने के कारण पेट में चिपकती हैं और कब्ज़ पै... करती हैं। खाद्य-पदार्थ को तो ऐसा होना चाहिए कि उसकी पच... और रूखापन के कारण मलशोधक भी हो। फलों, साग-सब्ज़ियों, बि... चून आटे की रोटी और छिलकेदार दालों में यह गुण मौजूद है... अमरूद, सेव और नाशपाती जैसे फलों को, जिनके छिलके मुलायम हैं, बिना छीले ही खाना चाहिए। सफ़ेद डबल रोटी और बिस्कुट ... रिवाज अब विलायत में कम हो रहा है, पर विलायत की दुम हिन्दुस्तान में यहाँ की फ़ालतू हुई चीज़ें भी बहुत दिनों तक जारी रहती हैं।

साबूदाना (सागूदाना) और बार्ली के पथ्य में कुछ तत्त्व नहीं। बार्ली तो किसी क़दर अच्छी भी है, पर साबूदाना तो किसी काम ... नहीं है। प्राकृतिक चिकित्सा में पहला पथ्य फलों के रस या तरकारियों के यूष से, दूसरा पथ्य दूध या हल्के रसदार फल और पत्तोंदार भाजियों से और तीसरा पथ्य रोटी भाजी या दलिया-भाजी से दिया जाता है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, फलों के रस और तरकारी के यूष पेट भरते हैं और साथ ही साथ दवा का भी काम करते हैं।

अगर पतले दस्तों की बीमारी हो तो साबुत बार्ली का पानी नमक के साथ या पतला मठा १। या ०॥ घंटे पर दिया जा सकते हैं।

आज कल ठिन के डिब्बों में बन्द बहुत से बे-मौसम के फल मिलते हैं। इसी तरह शर्बतों की बोतलें भी मिलती हैं। अंगरेजी पढ़े-लिखे शौकीन इन फलों और शर्बतों को बड़े चाव से खाते पीते हैं। इनके प्राकृतिक गुण सभी नष्ट हो जाते हैं और इनमें चीनी की मात्रा अधिक रहती है। कहने की आवश्यकता नहीं कि इनका इस्तेमाल भी न करना चाहिए।

भोजन के मामले में जितनी सादगी बर्ती जाय, खाद्य पदार्थ का रूप संभवत जितना प्राकृतिक हो और एक भोजन में एक साथ खाने के लिए जितनी कम चीजें हों भोजन उतना ही हितकर और स्वास्थ्य प्रद होगा।

(९) भोजन पचाने के भार से कभी-कभी पेट को छुट्टी देना चाहिए—कहने का तात्पर्य है कि तनदुरुस्ती बनाये रखने के लिए कभी कभी उपवास करना जरूरी है। पेट ही शरीर के अन्दर का इंजन है। उसे कभी छुट्टी नहीं मिलती। अधिकांश लोग अपने इस इंजन से, सोने के छ: सात घंटों के सिवा, बराबर ही काम लेते रहते हैं। इसी से कुछ ही दिनों में यह इंजन मंद हो जाता है और आगे चलकर बुरी तरह बिगड़ जाता है। सच पूछिए तो साधारणत अच्छे जीवन में, जिसमें मनुष्य अन्दाज से और नियमानुसार खाता है, उपवास की बिलकुल जरूरत नहीं, पर खाने-पीने की जैसी मामूली हालत जारी है उसमें तो बिना बीच बीच उपवास के काम नहीं चल सकता। अगर आप अपनी तबियत से खुशी खुशी उपवास न करेंगे तो प्रकृति आपके शरीर में रोग पैदा करके आप से जबर्दस्ती उपवास करावेगी। अब आप तय कर लीजिए कि आप अपनी तबियत से उपवास करेंगे या जबर्दस्ती प्रकृति के दबाव से।

बीमार न रहने पर भी महीने में दो-चार उपवास कर लेना बहुत अच्छा है। हमारे देश में एकादशी, इतवार इत्यादि दिनों का व्रत

करने, या रमज़ान में रोज़ा रखने की प्रथा बहुत अच्छी है, पर बहुत लोग दिन भर भूखे रहने के बाद शाम को पेट भरकर पकवान आदि उड़ाते हैं। इससे भलाई के बदले नुकसान होता है। मेरी राय है कि इतवार को सिर्फ़ फलाहार किया जाय और दोनों एकादशी को २४ घंटे का उपवास किया जाय तो बहुत अच्छा हो। ऐसा करने से आदमी चाहे बहुत बदपरहेज़ी करता हुआ भी, जो नहीं करना चाहिए, निरोग रहेगा और बहुत दिनों तक सुख से जिएगा। पूरे उपवास के बाद दूसरे दिन सुबह को एनीमा लेना अच्छा है और एक दिन के भी उपवास के बाद का पहला भोजन बहुत हलका होना चाहिए—कुछ फल और दूध या एक रोटी और थोड़ी पकी हरी भाजी।

उपवास से पेट को आराम मिलता है, जिससे उसकी शक्ति फिर से नई हो जाती है साथ ही ख़ून साफ़ होता है, जिससे रोग की संभावना कम हो जाती है। जो लोग चेचक या महामारी के दिनों में टीका लगवाकर ज़हरीले पदार्थों से अपने ख़ून को दूषित करते हैं वे यदि बीच बीच में नियमानुसार उपवास करें तो उन्हें यह या कोई छूत का रोग कभी न हो। साफ़ ख़ून वाले को छूत के रोग लगते ही नहीं।

साल में एक बार—होली या दशहरे के बाद, हो सके तो दोनों बार, अपने पेट को लगभग एक महीने के लिए आराम देना चाहिए। पहले तीन दिन का उपवास, जिसमें दिन में १४ बार पानी के साथ नीबू का रस और सुबह शाम दोनों समय एनीमा लिया जाय; फिर चार दिन तक दिन में तीन बार फलों के रस या तरकारियों के सूप या शोरबे पर रहना और दिन में एकबार एनीमा लेना, फिर एक हफ़्ते तक (जिसमें भी हर रोज़ एकबार एनीमा लेना ज़रूरी है) दिन में तीन बार सिर्फ़ फल या पकी हरी भाजी पर रहना; तीसरे हफ़्ते में बिना एनीमा लिए हुए फलों के साथ-साथ थोड़ा दूध लेना और चौथे हफ़्ते में एक समय रोटी और पकी हरी भाजी (दाल नहीं) और दो बार फल ...

इस तरह की एक महीने की क्रिया से पहले तो कुछ दुबलापन आयगा लेकिन फिर दो-तीन हफ्ते में ही शरीर तगड़ा बन जायगा। इस तरह शरीर हर साल नया हो जाया करेगा, किसी तरह के भी रोग पास नहीं फटकेंगे, बुढ़ापा दूर हो जायगा, मरने के दिन दूर हो जायँगे, चेहरा सुर्ख देख पड़ेगा और इस पृथ्वी पर ही स्वर्ग का आनन्द मिलेगा। उपवास से बहुत से लोग बहुत डरते हैं। आजकल अंगरेज़ी सभ्यता के दिनों में, जब कि दिन में चार-पांच बार डट-डटकर खाना धर्म सा हो गया है, उपवास के नाम से ही लोग घबराते हैं। डाक्टर लोग तो रोग की हालत में भी ताक़त बनाये रखने के लिए सभी तरह के भोजन देते हैं। इसी से लोगों के दिलों में उपवास के बारे में भ्रम हो गया है। पर अनुभव कहता है कि उपवास से किसी प्रकार का डर न होना चाहिए। स्वर्गं लेखक के परिवार में, जहां कुछ वर्षों से औषधि का व्यवहार नहीं होता, छोटे-छोटे बच्चे भी हँसते हँसते उपवास कर लेते हैं। यह बताने की ज़रूरत नहीं कि लेखक के परिवार में पहले की अपेक्षा बीमारी कम हो गई है।

उपवास में पहले दिन भोजन का कुछ लालच बना रहता है। दूसरे दिन कमज़ोरी मालूम होती है और तीसरे दिन यह कमज़ोरी घट जाती है। साथ ही जीभ (ज़बान) मैली हो जाती है, और मुँह और शरीर से बदबू निकलने लगती है। इसका कारण यह है कि पाचन-क्रिया के बन्द हो जाने के कारण शरीर अपनी सारी शक्तियों को सफ़ाई के काम में लगा देता है। शरीर के रग-रेशे कोष और मांस पेशियों से विकार निकल निकलकर खून में आते हैं और कुछ आंतों में पहुँचते हैं। खून फेफड़े में जाकर सांस के साथ आई हुई आक्सीजन से साफ किया जाता है। पर भोजन बन्द कर देने से पेट और आँतें कमज़ोर पड़ जाते हैं और अक्सर पाख़ाना होना बन्द हो जाता है। इसलिए ज़रूरी है कि उपवास की हालत में एनीमा-द्वारा पेट साफ़ किया जाय। यदि पहले

ही दिन से सुबह शाम दो बार एनीमा लिया जाय तो कमजोरी और घबराहट नहीं या बहुत कम मालूम होगी। उपवास के चौथे या पांचवें दिन कभी कभी सातवें दिन से फिर ताकत मालूम होने लगती है और तबीयत पहले से कहीं अच्छी और ताजी मालूम होती है। जो बहुत बहुत कमजोर नहीं है वह सात दिन का उपवास बिना भय के कर सकता है और उससे लाभ उठा सकता है। पर पहले तीन दिन के उपवास से ही शुरू करना चाहिए। फिर दो या तीन महीने के बाद सात दिन का उपवास किया जा सकता है। तीन दिन का उपवास तो हर कोई कर सकता है और इसमें किसी तरह का नुकसान नहीं है। किसी किसी रोग में बहुत लम्बे उपवास की जरूरत पड़ती है, जिससे रोग बिल्कुल निर्मूल हो जाता है। लेकिन लम्बा उपवास किसी अनुभवी की देख-रेख में करना चाहिए। और कोई बात नहीं है, सिर्फ कभी कभी तबीयत घबराती है। हां, कई छोटे छोटे उपवासों के बाद आदमी एक लम्बा उपवास शुरू कर सकता है।

जिसके शरीर में ज्यादा विकार है, या मांसाहार के कारण बहुत दूषित पदार्थ इकट्ठे हो गये हैं उसे उपवास से विशेष कष्ट होता है। इसका कारण यह है कि शरीर को बहुत विकार निकालने के लिए चेष्टा करनी पड़ती है। ऐसे लोगों को चाहिए कि वे उपवास के लिए अपने शरीर को तैयार करें—पहले सप्ताह में दिन में सिर्फ दो बार भोजन (रोटी-साग, नाश्ता इत्यादि नहीं), दूसरे में एक बार रोटी-साग और दो बार फल, तीसरे में दिन में सिर्फ तीन बार फल और चौथे में तीन-चार बार फल का रस। इन दिनों हर रोज एनीमा लेना चाहिए। इस तरह शरीर को धीरे-धीरे अभ्यास कराने से शरीर उपवास के लिए तैयार हो जाता है। ऊपर का क्रम चलाने से ही बहुत से रोग जाते रहते हैं।

उपवास के बाद जैसा कि पहले कई बार दुहराया गया है, बहुत धीरे धीरे अपने मामूली भोजन पर आना चाहिये। तीन दिन के उपवास

इसके बाद चौथे दिन सिर्फ़ तीन बार फल के रस या तरकारी का सूप, पाँचवें दिन एक बार रस या सूप और दो बार फल या भाजी, छठे दिन तीनों बार फल या भाजी, सातवें दिन एक भोजन में रोटी सब्ज़ी—इस तरह धीरे धीरे भोजन की मात्रा बढ़ानी चाहिए। याद रखिए उपवास का ख़तरा उपवास के दिनों में नहीं बल्कि उपवास तोड़ने के दिनों में है।

उपवास में चुपचाप बैठे या लेटे रहना न चाहिए। अगर नई (तीव्र) बीमारी में उपवास करना पड़ता है तो आराम करना ज़रूरी है, पर यदि तनदुरुस्ती को तरक्की देने के लिये या किसी जीर्ण रोग में, जिसमें चलना-फिरना बन्द न हुआ हो, उपवास किया जाय तो अपना मामूली काम जारी रखना चाहिए और शक्ति भर कसरत करनी चाहिए या टहलना चाहिए। इसका ख़याल रखना चाहिए कि थकान न हो। कुछ हालतों में लेटे रहना ही अच्छा होता है। शरीर की शक्ति समझ कर काम करना चाहिए। कभी कभी बैठे रहने के बाद उठने से सिर चकराता है। इससे डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। हाँ, मौके से उठना बैठना न चाहिए।

इस किताब में लम्बे उपवास के बारे में कोई ख़ास बात नहीं कही जा रही है। पर दो-तीन छोटे उपवास के बाद एक लम्बा उपवास करने की योग्यता खुद ही आ जाती है। दूसरी बात यह है कि लम्बा उपवास या छोटा उपवास भी तभी करना चाहिए, जब यह निश्चय हो जाय कि अब असंयम न होगा। उपवास करना, फिर ठूस कर खाना-पीना, फिर उपवास करना मानों शरीर को खींच-तान की हालत में रखना है, जिससे हानि छोड़ कर लाभ नहीं होता। साधारणतः अच्छी तरह लेकिन संयम के साथ खाने-पीने की आदत डालना कठिन न होना चाहिए।

पेट को आराम देने के लिए पूरे उपवास के अलावा और कई तरीके हैं—

ही दिन से सुबह शाम दो बार एनीमा लिया जाय तो कमज़ोरी व घबराहट नहीं या बहुत कम मालूम होगी। उपवास के चौथे या पांचवें दिन कभी कभी सातवें दिन से फिर ताकत मालूम होने लगती है और तबीयत पहले से कहीं अच्छी और ताज़ी मालूम होती है। जो आदमी बहुत कमज़ोर नहीं है वह सात दिन का उपवास बिना भय के कर सकता है और उससे लाभ उठा सकता है। पर पहले तीन दिन के उपवास से ही शुरू करना चाहिए। फिर दो या तीन महीने के बाद सात दिन का उपवास किया जा सकता है। तीन दिन का उपवास तो हर कोई कर सकता है और इसमें किसी तरह का नुकसान नहीं है। किसी किसी रोग में बहुत लम्बे उपवास की ज़रूरत पड़ती है, जिससे रोग बिल्कुल निर्मूल हो जाता है। लेकिन लम्बा उपवास किसी अनुभवी की देख-रेख में करना चाहिए। और कोई बात नहीं है, सिर्फ कभी कभी तबीयत घबराती है। हां, कई छोटे छोटे उपवासों के बाद आदमी एक लम्बा उपवास शुरू कर सकता है।

जिसके शरीर में ज़्यादा विकार है, या मांसाहार के कारण बहुत दूषित पदार्थ इकट्ठे हो गये हैं उसे उपवास से विशेष कष्ट होता है। इसका कारण यह है कि शरीर को बहुत विकार निकालने के लिए चेष्टा करनी पड़ती है। ऐसे लोगों को चाहिए कि वे उपवास के लिए अपने शरीर को तैयार करें—पहले सप्ताह में दिन में सिर्फ दो बार भोजन (रोटी-साग, नाश्ता इत्यादि नहीं) दूसरे में एक बार अन्न-साग और दो बार फल, तीसरे में दिन में सिर्फ तीन बार फल और चौथे में तीन-चार बार फल का रस। इन दिनों हर रोज़ एनीमा लेना चाहिए। इस तरह शरीर को धीरे-धीरे अभ्यास कराने से शरीर उपवास के लिए तैयार हो जाता है। ऊपर का क्रम चलाने से ही बहुत से रोग जाते रहते हैं।

उपवास के बाद जैसा कि पहले कई बार दुहराया गया है, बहुत धीरे धीरे अपने मामूली भोजन पर आना चाहिये। तीन दिन के उपवास

चाहिए। इस तरह के डेढ़ दो महीने के भोजन से न सिर्फ रोग ही जाते हैं बल्कि मोटे आदमी कुछ दुबले और दुबले आदमी कुछ मोटे हो जाते हैं। दूध या मठा पीने के दिनों में कम-कभी एनीमा लेने की जरूरत पड़ती है।

(४) एक बार एक ही चीज खाना, जैसे आज सुबह को सिर्फ रोटी, शाम को केवल भाजी कल सुबह को हरे चने, शाम को आलू गाजी की तरकारी, परसों सुबह का अमरूद, शाम को रोटी। इस तरह पेट को आराम देना उसके लिये अच्छा है, जिसे कोई सख्त तकलीफ तो नहीं है लेकिन जो कुछ भी है उसे दूर कर स्वास्थ्य को बढ़ाने की आवश्यकता है।

* * * *

अन्त में यह बताना मैं जरूरी समझता हूँ कि अवसर के अनुसार भोजन होता है। चिकित्सा के दिनों के भोजन कुछ और हैं और तन दुरुस्ती के दिनों के कुछ और। चिकित्सा के दिनों के भोजन में शरीर के विकार निकालने की शक्ति रहती है न कि शरीर को पुष्ट करने की। मिसाल के लिए, दूध पुष्टिकारक है न कि विकार निकालने वाला। ताजे पक्के और कच्चे (ज्यादातर कच्चे ही) विकार निकालने वाले भोजन हैं।

(१) तीन चार दिन या एक सप्ताह फल के रस पीकर ही जाना। इस हालत में भी एनीमा जरूरी है। ऐसे मर्द उपवास से बहुत लाभ होता है।

(२) पन्द्रह बीस दिन हल्के फल या पकी हरी भाजी पर ही जाना। इसमें कभी कभी एनीमा लेने की जरूरत पड़ती है। गठिया के अनेक रोगियों को महीना डेढ़-महीना सिर्फ फल और खिलाकर ही आराम किया है।

किसी किसी के पेट में एक-ब-एक के फलाहार से गड़बड़ी होती है। इसका कारण यह है कि पहले से आँतों के अन्दर सड़ते हुए पदार्थ इ स और भी विकृत हो उठते हैं। ऐसे आदमियों को दो-तीन दिन उपवास या रसाहार और एनीमा प्रयोग के बाद पहले पकी (मुलायम) भाजी और तब फलाहार शुरू करना चाहिए।

कभी कभी ऐसा भी होता है कि कोई फल गुणदायक होते हुए किसी के अनुकूल नहीं होता। ऐसी हालत में कुछ दिनों के लिए उस फल को छोड़ देना चाहिए। फल जिसके अनुकूल न हो उसे सिर्फ भाजी खाकर कुछ दिन रहना चाहिए और हर रोज एनीमा ले चाहिए। फिर धीरे धीरे फलों पर आना चाहिए।

(३) दिन में तीन चार बार मठा या दूध पीकर ही रहना। केवल इस दूध या मठा के सेवन से सभी प्रकार के पुराने रोग अच्छे होते हैं। दूध या मठे की मात्रा पर ध्यान रखना चाहिए। शुरू शुरू में एक या तीन छटांक ही काफी है। दूध में शहद मिला सकते हैं, चीनी का मि नहीं। अगर पतले दस्त आने की या कमजोर पाचन शक्ति की शिकायत है तो कुछ दिन मठा पीने के बाद दूध शुरू करना ठीक रहता है। सिर्फ दूध का भोजन शुरू करने से पहले दो तीन दिन उपवास करना और उपवास के दिनों में एनीमा लेना जरूरी है। दूध असल और ताजा हो। मठे को भी अच्छा, घी-रहित और मीठा (या कम खट्टा) लेना

चाहिए। इस तरह के डेढ़ दो महीने के भोजन से न सिर्फ रोग ही जाते हैं बल्कि मोटे आदमी कुछ दुबले और दुबले आदमी कुछ मोटे हो जाते हैं। दूध या मठा पीने के दिनों में कभ कभी एनीमा लेने की जरूरत पड़ती है।

(४) एक बार एक ही चीज खाना, जैसे आज सुबह को सिर्फ रोटी, शाम को केवल भाजी कल सुबह को हरे चने, शाम को आलू गोभी की तरकारी, परसों सुबह को अमरूद, शाम को रोटी। इस तरह पेट को आराम देना उसके लिये अच्छा है, जिसे कोई सख्त तकलीफ तो नहीं है लेकिन जो कुछ भी है उसे दूर कर स्वास्थ्य को बढ़ाने की आवश्यकता है।

० ० ० ०

अन्त में यह बताना मैं जरूरी समझता हूँ कि अवसर के अनुसार भोजन होता है। चिकित्सा के दिनों के भोजन कुछ और हैं और तन दुरुस्ती के दिनों के कुछ और। चिकित्सा के दिनों के भोजन में शरीर के विकार निकालने की शक्ति रहती है न कि शरीर को पुष्ट करने की। मिसाल के लिए, दूध पुष्टिकारक है न कि विकार निकालने वाला। ताजे फल और सब्जी (ज्यादातर कच्ची हो) विकार निकालने वाले भोजन हैं।

खाद्य पदार्थ*

भोजन के बारे में बहुत कुछ बताया जा चुका है, लेकिन यह फिर इतना जरूरी है कि इस संबंध में कुछ और बातें बताई जाती हैं। पुरानी बातें भी दुहराई जा रही हैं।

प्रचूक-चिकित्सा-विधि में भोजन के बारे में जो खयाल है वह दूसरे चिकित्सा-विधियों के खयाल से कुछ भिन्न है। उदाहरण के लिए, कुछ चिकित्सक बुखार इत्यादि के बाद मूंग की दाल के पानी का पथ्य देते हैं। कुछ लोग बुखार में ही या बुखार के बाद दूध साबूदाना देते हैं। इसी तरह बीमारी के अच्छा होते ही खिचड़ी का पथ्य दिया जाता है। अक्सर लोग फलों से डरते हैं और कहते हैं कि उनसे ठंड लग जायगी। फिर हैजे के दिनों में भाजी खाना मना किया जाता है। इसी तरह के बहुत से विचार हैं, जिनसे प्रचूक-चिकित्सा-विधि वाले मतभेद रखते हैं।

पहली बात तो यह है कि नये रोगों में कुछ भी खाने का न देना चाहिए, लेकिन अगर रोग ज्यादा दिन चले तो फलों का रस देना चाहिए। रोग के अच्छा हो जाने पर एक-दो दिन तक रोगी को रस पर ही रखकर उसके अलावा थोड़ा-थोड़ा दूध देते हैं। फिर एक दो दिन फल या भाजी और तब रोटी-भाजी या चावल भाजी देते हैं। दाल तभी शुरू कराते हैं जब कि रोगी की पाचन शक्ति अच्छी हो जाती है।

प्रचूक-चिकित्सा-विधि से रोग की अवस्था में अगर कुछ भी खाने को दिया जाता है तो यह सिर्फ इसी विचार से कि खून को ठीक करने

*इस लेख का कुछ अंश (पहले लेखक द्वारा संपादित) 'जीवन सखा' पत्र में प्रकाशित, लेखक के एक लेख से लिया गया है।

के लिए रोगी को प्राकृतिक लवणों (नमक) के रूप में जरूरी दवाइयां मल जायें और साथ ही पचाने में भी बहुत शक्ति न लगे। यह लवण फल और भाजी से अच्छी तरह मिलते हैं।

फल—

फलों में नींबू और नींबू की भांति के सभी फल, जैसे सन्तरे, मीठे नींबू, मोसबी, चकोतरे, अच्छे हैं। मकाइया (रसमरी) और अनन्नास का गुण भी करीब करीब वैसा ही है। यह कुछ खट्टे होते हैं तो भी खून की खटाई का दूर कर उसमें खारापन लाते हैं। सभी बीमारियों में इनके रसों का इस्तेमाल कर सकते हैं, लेकिन जो बहुत कमजोर हैं या जिनके बहुत खट्टी डकार आती है या जिन्हें वीर्य-दोष है उन्हें खट्टे फलों से या तो परहेज करना चाहिए या उनका इस्तेमाल थोड़ी मात्रा में करना चाहिए। यह भी देखना चाहिए कि कब गरम पानी के साथ, कब ठंडे पानी के साथ और कब बिना पानी के ही नींबू के रस का पी सकते हैं। जुकाम-खांसी में नींबू के रस से पहले कुछ सर्दी या खांसी बढ़ी सी मालूम हो सकती है, लेकिन उससे फायदा छोड़कर नुकसान नहीं हो सकता। नींबू के रस का पानी के साथ या वैसे ही जख्म या फोड़े-फुंसी पर बहुत फायदे के साथ लगाया जा सकता है। यह कुछ चुभेगा, लेकिन जितना टिंक्चर आयडीन (tincture iodine) चुभता है उससे ज्यादा न चुभेगा और उससे ज्यादा लाभ पहुँचायेगा।

और रसदार फल अनार, अंगूर, टमाटर, गन्ना हैं। इनमें अनार और टमाटर के रस प्रायः सभी हालतों में सब रोगियों को दे सकते हैं। खट्टे अनारों का इस्तेमाल न करना चाहिए, लेकिन सुर्ख (लाल) कंधारी अनारों का इस्तेमाल खांसी की हालत को छोड़ कर और सभी हालतों में कर सकते हैं।

खट्टे फलों के रस में खांसी बढ़ी सी मालूम होती है। अगर कष्ट बढ़े तो मीठे फलों का रस काम में लाना चाहिए। लेकिन शुरू के शुरू होते ही नींबू के रस का प्रयोग जरूर करना चाहिए।

अंगूर और गन्ने में चीनी की मात्रा ज्यादा है, इससे उनके पचने में ज्यादा देर लगती है। रोग के चले जाने पर ही इनके रसों का देना ठीक है। नये रोग के दूर होते ही अंगूर का रस दे सकते हैं। मात्रा का भी ख्याल रखना चाहिए। सन्तरे या टमाटर का रस अगर एक या दो छटांक दिया जा सकता है तो अंगूर का रस एक ही छटांक देना चाहिए।

सेब और नाशपाती को कुचलकर भी रस निकलता है। इसे सन्तरे के रस की तरह समझना चाहिए।

छोटे छोटे पके बीजू (चूसने) आमों का रस पुराने रोग वाले के लिए बहुत फायदेमंद है लेकिन एक-दो दिन देकर देख लेना चाहिए कि कष्ट बढ़ तो नहीं रहा है। नये रोगों में रोग के चले जाने पर ही आम का रस देना चाहिए।

जामुन का ताजा रस भी बहुत लाभ के साथ नये और पुराने रोगों में इस्तेमाल किया जा सकता है, लेकिन जिसके शरीर में बहुत खटाई है उसे शुरू शुरू में कुछ कष्टकर हो सकता है। बात यह है कि व्यक्तिगत विशेषता और आवश्यकता को भी देखना होता है।

इसके बाद गूदेदार फलों का नम्बर आता है, जैसे तरबूज, खरबूजा, शरीफा, शहतूत, जामुन, अनन्नास, पपीता, देसी आम इत्यादि। इनको नये रोग के बाद या पुराने रोगों में इस्तेमाल करते हैं। तरबूज किसी किसी को शुरू में कष्ट देता है पर है यह अच्छा फल। फिर सख्त फलों में खीरा, ककड़ी मीठा सेब, नाशपाती, अमरूद इत्यादि हैं। खीरा और ककड़ी बहुत अच्छे हैं, लेकिन इनके पचने में देर लगती है।

जितने तरह के भी फल हैं, रसदार या गूदेदार या सख्त, इन सबों का इस्तेमाल शक्ति देख कर पुराने रोगों में किया जा सकता है, लेकिन एक ही फल का एक बार इच्छा भर खाना चाहिए। पहले पके और रसदार फलों से शुरू करना चाहिए। कोई भी पुराना रोग सिर्फ फलाहार पर रह कर दूर किया जा सकता है। एक ही दिन में कई तरह के फल अदल-बदल कर खाये जा सकते हैं, जैसे सुबह को सन्तरे, दोपहर में अमरूद या गाजर या टमाटर और शाम को सेब (या किशमिश)।

सेब बहुत अच्छा फल है, लेकिन मँहगा जरूर है। फलाहार शुरू करने पर किसी किसी को कब्ज रहने लगता है। ऐसे लोगों को कुछ दिनों तक लगातार एनीमा लेना चाहिए। एनीमा तब तक लिया जाय जब तक कि खुद-ब-खुद पाखाना साफ न आने लगे।

सेब, नाशपाती, अमरूद जैसे मुलायम छिलकेवाले फलों के छिलके फेंकना चाहिए।

केला और कटहल का इस्तेमाल रोग की हालत में न करना चाहिए। लेकिन केला वैसे बहुत गुणकारी है। जब कोई खास रोग न रहे तो ताकत और वजन बढ़ाने के लिए केले का प्रयोग बहुत अच्छा है। इसके साथ दूध भी लिया जा सकता है। यूरप-अमेरिका वाले केले के साथ दूध मना करेंगे, पर दोनों के मेल से कोई खास खराबी नहीं होती। हां, इसके खाने के पहले और बाद काफी अन्तर होना चाहिए। दिन के भोजन में केला-दूध ही लेना बहुत अच्छा होगा। कमजोर लड़के-लड़कियों को तो केला जरूर देना चाहिए। कुछ लोग कहते हैं कि केले से कब्ज होता है। पर कब्ज तो कमजोरी में होता ही है। उसकी परवाह न करनी चाहिए।

सूखे फलों में किशमिश, मुनक्के, अंजीर और पिंडखजूर का इस्तेमाल तो नये रोग के बाद या पुराने रोगों में जरूर कर सकते हैं,

लेकिन बादाम, अखरोट, काजू, पिस्ता, मूंगफली इत्यादि का
पुराने रोगों में भी परहेज नहीं करते। नारियल की गिरि बहुत
होती है। इन गिरीदार मेवों को गाजर या टमाटर या अमरूद या
जैसे ताजे फलों के साथ खाना चाहिए—नाश्ते की तरह नहीं,
समय के भोजन की तरह।

जो फल ऊपर बताये गये हैं उनके अलावा कुछ और भी फल हैं।
अगर वे पक जाने पर मीठे हो जाते हों तो उन सबों का इस्तेमाल
पुराने रोग की हालत में किया जा सकता है। इतना जरूर याद रखना
चाहिए कि नये रोगों में सिर्फ रस दिया जाता है। पुराने रोगों में कुछ
दिनों की सफाई के बाद सबेरे हल्का फल और दूध, दोपहर में रोटी-भाजी
और रात में फिर सेब या गाजर या नाशपाती या अमरूद के
४-५ दाने बादाम या काजू का खाना अच्छा क्रम है। यह भोजन
चल सकता है।

भाजी-तरकारी—

नये रोगों में सिर्फ इनका रस (यूष) देना चाहिए, लेकिन
के रस ज्यादा अच्छे होते हैं। यूष में नमक देने की जरूरत होती है,
और नमक रोग के देने का पदार्थ नहीं है। पुराने रोगों में यह
के बदले या फल के साथ अदल-बदल कर दी जा सकती है, लेकिन
यह कह देना जरूरी है कि तरकारी से फल ही अच्छे होंगे। फिर भी
जहाँ फल न मिलें या अच्छे न मिलें वहाँ साग-भाजियों से यही काम
निकल सकता है। पुराने रोगों में सिर्फ तरकारी खाकर ही रहा जा सकता
है। इनको पकाने की तरकीब जाननी चाहिए। सब से अच्छी तरकारी
वह होती है जो भाप से पकाई जाती है, जैसे इकमिक कूकर (Ikmic
cooker) में। अगर यह न हो सके तो किसी बड़े बर्तन में पानी
खौलाना चाहिए और उसी में तरकारी से भरे एक डब्बे या कटोरदान
को, जिसका मुँह बन्द हो, छोड़ देना चाहिए। उस बड़े बर्तन के भी

ढ देना चाहिए। खौलते पानी की गरमी से ढक्कने के अन्दर की भाप्ती (जायगी। अगर यह भी न हो सके तो धीमी आंच पर और बर्तन का (बन्द कर तरकारी पकानी चाहिए।

लौकी, नेनुआ, तरोई, परवल इत्यादि भाजियों के छिलके मुलायम ते हैं। उन्हें फेंकना न चाहिए। हां, अगर कोई रोगी ऐसा है, जिसकी चन-शक्ति बहुत ज्यादा कमजोर हो गई है, या जिसको पतले दस्त आते , या खाते ही पेट में किसी तरह की तकलीफ होती हो तो उसके लिए इन जियों के छिलके छीलकर और उन्हें खूब अच्छी तरह गलाकर देना हिए। थोड़े दिनों के बाद छिलके सहित तरकारी पकाना और रोगी खिलाना शुरू कर देना चाहिए। छिलकों में तनदुरुस्ती के लिए हुत सी चीजें रहती हैं, लेकिन हम लोग सिर्फ दिखावे के लिए असली ज को फेंक कर बेकार या कम फायदे की चीजों का खाना अच्छा मझते हैं। आलू का छिलका कभी न फेंकना चाहिए।

पकाते समय तरकारी से निकला हुआ पानी भी न फेंकना चाहिए। नमें बहुत-सी प्राकृतिक दवाइयां रहती हैं।

चिकित्सा के दिनों में पहले तरकारी में घी या तेल न पड़े। कुछ नों के बाद थोड़ा घी डाल सकते हैं। मसाले में सिर्फ जीरा। रोग के हुत कुछ दूर हो जाने पर थोड़ी हल्दी, धनिया भी अच्छी तरह पीस र डाल सकते हैं—बस, और किसी मसाले का इस्तेमाल न रना चाहिए।

जियों के दर्जे इस तरह हैं—

(१) पत्तीदार भाजी, जिसमें सभी तरह के साग, जैसे पालक, थुआ, चौलाई, मर्सा (लाल साग), पोई, ऊगल, चने का साग, रमकल्ले (पात गोभी या बन्द गोभी) की पत्ती, मूली की पत्ती, शल म की पत्ती, लेटिस इत्यादि आते हैं। इनकी तरकारी सब से ज्यादा

लाभदायक है, क्योंकि इनमें प्राकृतिक नमक और प्रायः सभी तरह
विटामीन रहते हैं। लेकिन कुछ लोगों को हरा साग वायु करता
ऐसे लोगों को चिकित्सा के दिनों में साग से परहेज रखना चाहिए।
साधन में भी सागों का इस्तेमाल सब को छोड़ देना चाहिए। चिकि
के दिनों में पहले हरी भाजी से शुरू करके फिर धीरे धीरे पत्ते
भाजियों पर आना चाहिए, लेकिन इन्हें दिन में ही खाना अच्छा है।

इसमें से कुछ साग कच्चे खाये जा सकते हैं, जैसे पालक (नीबू
रस या दही के साथ, रोटी से पहले), चने का साग, करमकल्ला, मू
की पत्ती, लेटिस। कच्चा खाने से वायु नहीं होती या कम होती है।

(२) हरी भाजी, जैसे लौकी (लौआ कदुआ), परवल, नेनु
(घरार, गोंगरा, घीया तरोई), तरोई (तोरी झिंगी), कच्ची भि
(राम तरोई), करेला वन-करेली (खेखसा, ककेड़), टिंडा, चचिं
(कैंता), सेम, लोभिया (बोड़ा) इत्यादि। नये रोग के दूर होने
बाद ही और पुराने रोगों में इन भाजियों में से सेम और लोभिया
छोड़कर और सभी भाजियों को खा सकते हैं। इलाज के समय भिं
और करेला का इस्तेमाल भी कम ही करना चाहिए। जब पुराने रो
आधे से ज्यादा चले जायं तो कभी-कभी सेम और लोभिया ख
सकते हैं।

टमाटर भाजी भी है और फल भी। टमाटर का आग पर पका क
खाना मानो उसको नष्ट करके खाना है। पके हुए लाल टमाटर है
कच्चा ही 'सलाद' के रूप में खाना (रोटी-भाजी से पहले) अच्छा है।

फूल-गोभी और गांठ-गोभी का स्थान हरी भाजियों में है। फू
गोभी जरा वायुकारक (बादी) है। इसका इस्तेमाल तनदुरुस्ती की
हालत में ही करना चाहिए। गांठ गोभी का इस्तेमाल पुराने रोगों में
कभी-कभी कर सकते हैं।

फल-गोभी भी कच्ची खाई जा सकती है।

(३) कन्द भाजी, जैसे आलू, घुइयां (अरबी पेक्वी), मंडा
दा), सूरन (ओल मिमीकन्द), रतालू (आर, लमार), शलजम,
, गाजर, चुकन्दर इत्यादि। इनमें शलजम, मूली, चुकन्दर, और
र का इस्तेमाल नये रोग के बाद और पुराने रोगों में करना चाहिए।
जम और मूली को उनकी जड़ के पास की मुलायम पत्ती के साथ
ना चाहिए। मोटी मूली वायुकारक (बादी) होती है। रतालू
कभी-कभी पुराने रोगों में खा सकते हैं। आलू पुराने रोगों में तभी
ना चाहिए जब कि रोग आधे से ज्यादा दूर हो गया हो, वह भी
-कभी।

(४) कुछ और भाजियां, जैसे बैंगन (भटा, बताऊँ), कोंहड़ा
द्दू, काशी फल), टमाटर (जिसकी गिनती फलों में कर ली गई है),
या केला इत्यादि। पके टमाटर के बारे में पहले कह चुके हैं।
न बादी होता है और केला देर से पचता है। कोंहड़ा कुछ बादी है।

आलू और केले को रोटी के बदले खाना चाहिए। दो पके आलू
एक छोटा केला एक मामूली रोटी के बराबर है। अक्सर लोग
ी-चावल के साथ आलू की बहुत तरह की तरकारियां खाते हैं। ऐसा
ना कब्ज का निमंत्रण देना है। अगर आप चार रोटी खाते हैं और
ी के साथ-साथ आलू की तरकारी भी खाना चाहते हैं या खाने के
र पका केला खाना चाहते हैं तो ऊपर बताये अन्दाज से रोटो का
र कम कर दीजिए। ~॥१८

आलू बहुत अच्छा, और तनदुरुस्ती बढ़ाने वाली चीज है, लेकिन
दुरुस्ती के दिनों में ही इसे खाना चाहिए।

जैसा कि ऊपर बताया गया है, कुछ भाजियां कच्ची खाई जा सकती
जैसे टमाटर, खीरा, ककड़ी करमकल्ला, शलजम, लेटिस, चुकन्दर
गोभी, पालक, चने का साग, धनिया की पत्ती, पुदीने की पत्ती,
ी, मूली की पत्ती। इनको पकाना मानो इनकी जान लेना है। इनमें

से तीन-चार भाजियों को पतला-पतला काटकर और एक साथ मिलाकर 'सलाद' (salad) बनाते हैं। इसमें नमक, नीबू का रस, घी या जैतून (olive) या सरसों के तेल की दो-चार बूँदें, अगर इच्छा हो तो, डाल सकते हैं। तनदुरुस्ती की हालत में सलाद में प्याज, अदरख (अदी) और हरी मिर्च के चार छः टुकड़े भी डाल सकते हैं। ऊपर से नारियल की गिरी के पतले छिले हुए टुकड़े भी दे सकते हैं। सिरका न डालना चाहिए। सिरका सड़ी-गली चीज है। उससे पहिले पचाने में आसानी होती है, लेकिन आगे चलकर मेदे और खून पर बुरा असर पड़ता है। सिरके का सभी फायदा नीबू के रस से मिल जाता है। सलाद में आम एक पत्तीदार भाजी जरूर हो। तनदुरुस्ती में और पुराने रोगों की हालत में सलाद हर रोज खाना चाहिए, क्योंकि इसके खाने से भाजी खाने का पूरा-पूरा लाभ जरूर मिल जाता है। पकाने से भाजियों का कुछ गुण जरूर नष्ट होता है।

फलों का भी सलाद बनता है। दो-तीन फलों या मेवे के टुकड़ों को एक साथ मिला कर ऊपर से थोड़ा दूध या दही डाल देने से फल-सलाद बनता है।

अनाज —

(१) गेहूँ का आटा बहुत अच्छा है, अगर वह हाथ की चक्की में पीसा जाय और उसका चोकर न निकाला जाय। अगर हाथ की चक्की का पिसा आटा न हो तो मिल का ही सही, लेकिन चोकर न निकाला जाय। बहुत से पुराने रोगों में जिन रोगियों को फल की सुविधा न हो तो वे सिर्फ रोटी (गेहूँ या जौ की, और कुछ नहीं) खाकर ही अपना रोग दूर कर सकते हैं। इससे पेट भरता है, ताकत बनी रहती है और रोग भी दूर होता है।

(२) चावल गेहूँ के बराबर है, अगर धान का छिलका निकालने के बाद चावल कूट-कूट कर साफ न किये जायं तो। चावल का माँड़ कभी न निकालना चाहिए। रोटी और चावल को एक ही खाने में खाना

अच्छा नहीं है। चावल की खराबी यही है कि उसका चबाना मुश्किल है और उसमें बहुत पानी है।

(१) दालों को छिलके के साथ (साबुत दाने की दाल) खाना चाहिए। अरहर की दाल जितनी कम खाई जाय अच्छा है। उड़द की दाल ताकत पैदा करने वाली पर बादी है। कमजोर मेदे वालों के लिए मूंग की दाल और साधारण तनदुरुस्ती वालों के लिए मसूर की दाल बहुत अच्छी है। मसूर ताकतवर है, और साथ ही उतनी बादी नहीं है जितनी कि उड़द। दाल गाढ़ी बनानी चाहिए, जिससे कि उसके साथ खाये गये चावल या रोटी के चबाने में कठिनाई न हो। रात में दाल न खानी चाहिए। चालीस साल की उम्र लगते-लगते दालों का इस्तेमाल बहुत कम कर लेना चाहिए। दाल तन्दुरुस्ती के दिनों की चीज है।

मटर और चने का फसल के दिनों में हरा और कच्चा ही खाना चाहिए। तनदुरुस्ती के दिनों में दिन के भोजन में दिल खोलकर सिर्फ मटर या चना खाइए। मटर बादी है, लेकिन अकेली और कच्ची खान से बुरा असर न होगा। सूखे चने भी अगर भिगाकर और उनके कल्लो (अंकुर) निकल आने पर खाये जायँ तो बहुत फायदा हो। भुने चने खाने का रिवाज ठीक नहीं है। भुट्टे के दिनों में दिन के भोजन में किसी नाश्ते में नहीं, सिर्फ भुट्टे खाये जायँ तो नुकसान न होगा।

यह फिर दुहराया जा रहा है कि सभी को सब चीजें अनुकूल नहीं होतीं एक-दो दिन के प्रयोग से यह जाना जा सकता है कि क्या अनुकूल होता है और क्या नहीं। साथ ही यह भी है कि स्वस्थ और बलवान को प्राय सभी चीजें अनुकूल होती हैं। इसलिए स्वस्थ और बलवान बनना चाहिए न सिर्फ रोग रहित।

दूध, दही, घी—

दूध के बारे में बहुत बहस है। दूध एक पूरी खुराक है। उसे हल्का न समझना चाहिए। किसी भी नये रोग में दूध का इस्तेमाल हानिकर

होगा। पुराने रोगों में भी रोग के आधे से ज्यादा दूर होने पर दूध का व्यवहार करना चाहिए। दूध का मेल फलों के साथ ही अच्छा होता है। रोटी, चावल के साथ भरसक दूध न पीना चाहिए। रात में आठ-नौ बजे खाना खाकर सोते समय दूध पीने का रिवाज बहुत हानिकारक है। उससे न तो खाना ही पचता है न दूध।

खांसी की हालत में या जिन्हें बार-बार खांसी होती है या जिन्हें आंव या पेचिश की शिकायत रहती हो उन्हें दूध से परहेज करना चाहिए।

दूध अगर अच्छा मिल सके तो लेना चाहिए, नहीं तो उसके लिए चिंता करने की कुछ जरूरत नहीं। फिर दूध कच्चा ही पीना चाहिए अगर धूप में घूम घूमकर घास चरने वाली मामूली तनदुरुस्त गाय का दूध अच्छे बर्तन में दुहा जाय। कच्चा पीने में कुछ डर न है। औटने से दूध का गुण जाता रहता है। और, खोये मलाई अच्छी चीजें नहीं हैं। वे पचाई नहीं जा सकतीं। रबड़ी-मलाई खाना शरीर में ? इकट्ठा करना है। ऐसी ऐसी चीजों को अगर त्योहार में ही कभी कभी खाया जाय तो बहुत बुरा न होगा।

गाय के दूध का मठा, घर का जमा हुआ जिससे मक्खन निकाल लिया गया है, दूध से ज्यादा और अपच रोग वालों के लिए दूध से ज्यादा हितकर है। मठा से डरना न चाहिए। सुबह नाश्ते में मठा का व्यवहार अच्छा होता है। दूध या मठे में सफेद चीनी नहीं, लाल शक्कर, गुड़ या शहद डालना चाहिए, पर भी जब कोई खास रोग न हो। चीनी का इस्तेमाल बहुत बुरा है। बहुत से रोग उससे हो जाते हैं। दही अच्छी चीज है। तनदुरुस्ती के दिनों में खाने के साथ थोड़ी मात्रा में दही खाना अच्छा है। रोगियों को दही के बदले मठा ही लेना चाहिए। भी तनदुरुस्ती की हालत में दाल या तरकारी के साथ ले सकते हैं।

घोड़े, बैल इत्यादि काम करने वाले जानवर या शेर, चीते जैसे बलवान जानवर भी, दूध नहीं खाते पीते, फिर भी उनके बने रहते हैं।

डाक्टर हेनरी लिंडल्हार

शिकागो (अमरिका) निवासी। इन्होंने एलोपैथिक डाक्टर होते हुए भी औषधि का व्यवहार छोड़ दिया और प्राकृतिक चिकित्सा को अपनाया। इन्होंने सिद्ध किया कि तीव्र रोग अपना चिकित्सक आप ही है

खुद गाय, जिसका दूध पिया जाता है, दूध नहीं पीती। सच पूछिए तो दूध या तो बचपन (जब दांत नहीं होते) या बुढ़ापे (जब दांत गिर जाते हैं) के दिनों का आहार है। फिर भी अगर नियम से दूध-घी लिये जायें तो बहुत लाभ हो सकता है।

रोग दूर होने पर, और आंव की शिकायत जब किसी तरह न रहे तो, दूध के इस्तेमाल से तनदुरुस्ती बनती है।

* * * *

अगर सफेद चीनी, सफेद मैदा, सफेद छुटे चावल और बिना छिलके की दाल का इस्तेमाल छोड़ दिया जाय, घी में पके पकवान और मिठाइयों का इस्तेमाल बहुत कम कर दिया जाय, चाय, काफी, कोका, ओवलटीन दिल से उतार दिया जाय और साथ ही नाश्ते में अन्न की चीजें बिलकुल न खाई जायें तो रोग दूर या बहुत कम हो जायगा। अगर भोजन के परहेज के साथ कसरत नियमानुसार की जाय तो रोग हो ही नहीं।

* * * *

इन दिनों प्रायः सैकड़े निन्यानवे आदमियों का पेट किसी न किसी तरह खराब रहता है। ऊपर से देखने में वे भले-चंगे मालूम होते हैं, लेकिन सच्ची तनदुरुस्ती इनके पास नहीं होती। अगर ये सब तीन दिनों के उपवास और दोनों समय एनीमा प्रयोग के बाद एक महीने तक सिर्फ फल या भाजी या फल-दूध खाकर रहें और इन दिनों भी दिन में एक बार या जब जरूरत मालूम हो तब एनीमा लें तो शरीर करीब करीब नया सा हो जायगा। इसके बाद नियमित भोजन और कसरत से चार छ महीनों में ही वे पूरी तरह तनदुरुस्त और हट्टे-कट्टे हो जायंगे। इस तरह का सालाना काया-कल्प प्रायः सभी २० साल से ज्यादा उम्र वालों के लिए फायदेमन्द होगा।

पहले मैं विटामिनों को ही लूंगा। विटामीन क्या है, यह प्रश्न कठिन है इसके संबंध में इतना ही कहा जा सकता है कि विटामीन स्वास्थ्य के लिए जरूरी है। अभी तक साधारणतः नीचे दिये विटामिनों का पता चल सका है :—

(अ) विटामीन 'ए' साधारण तौर से शरीर के बढ़ने और पुष्ट होने के लिए जरूरी है। आंखों को शक्ति भी इसी से मिलती है। यह विटामीन दूध, घी, मक्खन गाजर, टमाटर, लेटिस (एक पत्तीदार भाजी, जो सलाद में पड़ती है) और अंडे की जर्दी में पाया जाता है। मांस-मछली में भी इसका कुछ अंश रहता है।

(ब) विटामीन 'बी' नाड़ी संस्थान (nervous system) के लिए जरूरी है और टमाटर, पालक, गाजर, कच्ची बन्द-गोभी (करम कल्ला), सेम, मटर, प्याज, चुकन्दर, लेटिस, फलों के रस, छिलके सहित साबुत अनाज और घी-मक्खन में पाया जाता है।

(स) विटामीन 'सी' दांत, हड्डी और त्वचा के लिए हितकर है। यह सभी पत्तीदार और हरी भाजियों, दूध, सन्तरे, टमाटर, सभी फल, बन्द गोभी, प्याज, गाजर और पालक में विशेष रूप से पाया जाता है। आंवले में इसकी मात्रा बहुत ज्यादा है।

(द) विटामीन 'डी' बच्चों के सूखा (मिठुआ) रोग का रोकने वाला, अंडे की जर्दी, मक्खन दूध, छिलके सहित साबुत अनाज, कच्चे भाजियां मछली और अंगूर में पाया जाता है। अगर सूखा में बच्चों को धूप में रखा जाय—जितनी धूप सही जा सके—और अंगूर का पेड़ा या रस दूध के बाद या पहले या साथ पिलाया जाय तो कुछ ही दिनों में सूखा रोग जाता रहे।

(न) विटामीन 'ई' बन्ध्यापन (बांझपन) को रोकता है और तेल, अनाज के दानों, सेम, मटर, मसूर, पालक, अंडे की जर्दी और बादाम, मूंगफली में पाया जाता है।

अब मुख्य खनिज तत्वों का वर्णन किया जायगा।

(अ) कैलशियम (calcium—चूना) के अभाव से हड्डियां कम ज़ोर और पतली रहती हैं, खून में ताकत नहीं होती और शरीर पुष्ट नहीं होता। शलजम के ऊपर का हिस्सा और पत्ते, बादाम, सूखे अंजीर, अंडे की ज़र्दी, फूल-गोभी, दूध, आटे का चोकर, मसूर, मटर, पालक, नींबू, लेटिस, बन्द-गोभी, मूली, प्याज की पत्ती, शलजम, सन्तरे और चकोतरे में कैलशियम मिलता है।

(ब) आयरन (Iron—लोहा) की कमी से खून की कमी, कमज़ोरी और बीमारियों को रोकने की अयोग्यता होती है। यह तत्व अंडे की ज़र्दी, मसूर, मटर, चोकर सहित आटा, बादाम, पालक, खजूर, छुहारा, अंजीर, आलू बुखारा, किशमिश, मुनक्के, अखरोट, प्याज की पत्ती लेटिस और मूली में मिलता है।

(स) सोडियम (sodium) की कमी से बदहज़मी और खून में लोहे की कमी होती है। सोडियम आलू-बुखारा, दूध, फूल-गोभी, शलजम, सेब, चुकन्दर, मूली, अंडा, खीरा, ककड़ी, अंजीर, बन्द-गोभी, पालक, लेटिस, किशमिश, गाजर और प्याज की पत्तियों में मिलता है।

(द) फास्फोरस (phosphorus) की कमी से दिमाग की कमज़ोरी और थकावट, नाड़ियों की कमज़ोरी और हड्डियों का पतलापन होता है। यह तत्व अंडे की ज़र्दी, बादाम, मसूर, बे-छना आटा जौ, मटर, अरारोट, बंद-गोभी, फूल-गोभी खीरा, ककड़ी, लेटिस, सेब, लौकी मूली, पालक और मछली में पाया जाता है।

(न) सल्फर (sulphur—गन्धक) की कमी से यकृत की खराबियां होती हैं और शरीर में विकार इकट्ठे होते हैं। सल्फर शलजम, पालक, गोभी, मूली, प्याज की पत्ती, शफ़तालू, अंडा, मूंगफली बे छना आटा, प्याज और सन्तरे में मिलता है।

(व) पोटाशियम (potassium) की कमी से यकृत की खराबियां, कब्ज़ तथा फुन्सियां पैदा होती हैं और ज़ख्म देर से भरता है। यह

टमाटर, शलजम, लेटिस, प्याज, बन्द-गोभी, फूलगोभी, मसिया (साग), दूध, अनन्नास, आलू-बुखारा, नींबू, सन्तरे, शफ्तालू, नाशपाती और चकोतरे में पाया जाता है।

(प) मैगनेशियम (magnesium) की कमी से नाड़ियों की खराबी, बेचैनी और खून में खटाई की ज्यादा मात्रा होती है। बाजरा, बादाम, मूंगफली, टमाटर, लेटिस, पालक खजूर, अंजीर, आलू-बुखारा, किशमिश, नींबू, सन्तरा चुकन्दर, बन्द-गोभी और सेब में यह पाया जाता है।

(म) आयडीन (iodine) की कमी से गिल्टियों (gland) की बीमारी होती है और शरीर में विकार इकट्ठे होते हैं। आयडीन, गाजर, आलू, बन्द गोभी नाशपाती, अनन्नास, केला और लेटिस में मिलती है।

(स) क्लोरीन (chlorine) की कमी से शरीर में बहुत ज्यादा मात्रा में विकार इकट्ठे होते हैं। टमाटर, पालक, दूध, बन्द गोभी, अंडे की सफेदी, लेटिस, केला, खजूर नींबू अनन्नास, नारियल और बे-छने आटे में मिलती है।

इनके अलावा और भी खनिज तत्त्व हैं जैसे सिलिकान (silicon) फ्लूरीन (flurine) इत्यादि, पर मुख्य मुख्य ऊपर बताये गये।

विटामिनों और खनिज तत्त्वों के सम्बन्ध में इन बातों को भी जानना चाहिए :—

निरोग रहने की अवस्था में जो जो चीजें खाई जाती हैं वे सारी की सारी रोग की अवस्था में नहीं खाई जा सकतीं।

कुछ चीजों में इन दो पदार्थों के अलावा और भी कई तत्त्व हैं, जो शरीर के लिए हितकर नहीं हैं। जैसे, मांस में बहुत से रोग पैदा करने वाले तत्त्व हैं। अगर मांस खाया ही जाय तो उसे पहले १० मिनट तक खौलते पानी में उबाल कर उसका सारा विकार-मय रस फेंक देना चाहिए, तब उसे पकाना चाहिए। जिस रस को डाक्टर या हकीम

ताकत की चीज बताते हैं यह ताकत तो देता है पर ताकत के साथ मुर्दे की मांसपेशियों के अन्दर के सभी जहरीले पदार्थों को भी शरीर में छोड़ देता है।

अंडा, अगर खाना ही हो तो, कच्चा या आधा उबला खाना अच्छा है बनिस्बत सख्त उबले या पके हुओं के।

फल और भाजी अनाज से ज्यादा हितकर हैं रोज के भोजन में इनकी मात्रा आधी से ज्यादा होनी चाहिए।

आग के सम्पर्क से कुछ विटामीन और कुछ हद तक खनिज तत्व भी नष्ट हो जाते हैं। भाजियों को बहुत हल्की आंच पर पकाना चाहिए और उनसे निकले पानी को कभी फेंकना न चाहिए।

भोजन में कुछ कच्ची सब्जी, जिसे अंगरेजी में 'सलाद' (salad) कहते हैं, जरूर खाना चाहिए।

जब शरीर में किसी तत्व की कमी हो तो चुनकर अपनी पाचन-शक्ति के अनुसार उन्हीं चीजों को खाना चाहिए, जिनसे यह कमी पूरी हो जाय।

कुछ लोग कहते हैं कि फलाहार में बहुत पैसे लगते हैं। उन्हें मैं सिर्फ यही याद दिलाना चाहता हूँ कि डाक्टरों की फीस, बेशकीमती लेकिन जहरीली दवाओं और इन्जेक्शनों में फलाहार से भी ज्यादा पैसे लगते हैं और फिर भी रोग नहीं जाता।

हवा से फायदा उठाना

हवा के काम—

हवा ही जीवन की सांस है। बिना पानी और भोजन के मनुष्य कुछ दिनों तक जी सकता है, पर बिना हवा के एक क्षण भी जी नहीं सकता।

हवा बिना दाम के ही घर बैठे मिलती है, इसलिए हम उसकी कद्र नहीं करते। पर वह हमारी तनदुरुस्ती को ठीक रखने और बिगड़ी तनदुरुस्ती को सुधारने के लिए बड़े काम की चीज है।

हवा सांस के रूप में फेफड़े में आकर अपनी आक्सीजन से शरीर के अन्दर के खून को साफ करती है। यह एक बहुत जरूरी बात है, जिसे अच्छी तरह समझना चाहिए। हम जानते हैं कि शरीर को अच्छी हालत में रखने या बीमारी पैदा करने का काम खून का ही है। यह खून दिल से चल कर शरीर के सभी हिस्सों में जाता है, वहां उनको खुराक पहुँचाता है और उनके विकारों को अपने साथ लेकर फेफड़ों में पहुँचता है। जब वह दिल से चलता है तो चमकीले लाल रंग का रहता है, पर फेफड़ों में पहुँचते पहुँचते बहुत कुछ स्याह और धुमैला हो जाता है। इसका कारण, जैसा कि ऊपर बताया गया, यही है कि यह शरीर के अंग प्रत्यंग को उसका आहार और पुष्टि देकर उसके अन्दर के विकारों को अपने साथ ले आता है। फेफड़ों में ही उसकी सफाई होती है। सांस के साथ आई हुई आक्सीजन से मिलकर वह साफ होता है और अपने अन्दर के बहुत से विकारों को वह सांस के साथ बाहर निकाल देता है। फेफड़ों में साफ होकर, फिर से अपना असली लाल रंग पाकर और आक्सीजन से लदकर खून दिल में आता है और दिल से फिर सारे शरीर में भेजा जाता है। खून के साथ आई हुई आक्सीजन शरीर के

हर हिस्से के विकारों को जलाती और साफ़ करती है। विकारों की राख (सफ़ाई के बाद उनके बदले हुए रूप) को लेकर खून फिर फेफड़े में आ जाता है। इससे साफ़ साफ़ मालूम हो जायगा कि खून और खून के कारण शरीर को अच्छी हालत में रखने के लिए हवा कितनी ज़रूरी है।

इतना ही नहीं, हवा हमारी खाल में भी लगकर हमें तनदुरुस्त रखने में हमारी मदद करती है। खाल में बहुत छोटे छोटे अनेकों सूराख हैं। खाल भी एक तरह से सांस लेती है। इसी से सारे बदन में हवा का हर रोज़ और अक्सर धूप का भी लगना बहुत ज़रूरी है। हवा और धूप से ही प्राण और जीवन-शक्ति मिलती है, पर इन दिनों हम अपने शरीर को इस तरह ढक कर रखते हैं, उस पर तरह तरह की पोशाकों का इतना सा ढेर लाद देते हैं कि उसे हवा और धूप से कुछ भी फ़ायदा नहीं पहुँचता। यह आज़मा कर देखने की ही बात है। आप अपने सारे शरीर में घंटे डेढ़ घंटे हर रोज़ हवा और कभी कभी धूप भी लगने दीजिए। आप देखेंगे कि थोड़े ही दिनों में आप के शरीर की हालत पहले से बहुत अच्छी हो जायगी।

कठिन चर्म-रोग के कई रोगियों को लेखक ने उचित भोजन के साथ साथ हर रोज़ हवा और धूप में तीन-चार घंटे बिल्कुल नंगा रखकर भला चंगा किया है। यह रोगी पहले और तरह के इलाज करके हार चुके थे। इस रोग में सारे शरीर में हवा और प्रकाश का लगना बहुत लाभदायक होता है।

अपने शरीर के प्रति हमारा धर्म है कि काफ़ी मात्रा में हम सांस-द्वारा हवा अपने अन्दर लें—क्योंकि उसी के साथ विकारों को जलाने और खून को फिर से साफ़ करने के लिए ऑक्सीजन ली जा सकती है—और साथ ही अपने सारे शरीर में हवा लगने दें। हिन्दुस्तानी रहन

रक्त संचार
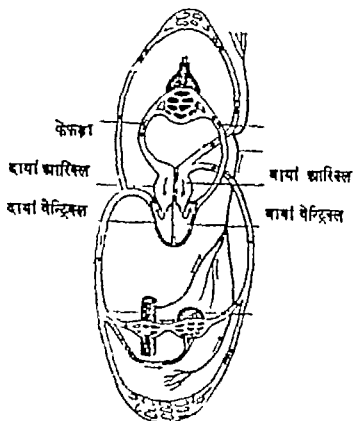
खून दिल के बायें वेन्ट्रिक्ल से चल कर शरीर के सभी हिस्सों में जाता है। वहां खुराक पहुँचाकर और उन हिस्सों से विकारों को लेकर दायें आरिक्ल में पहुँचता है। यहाँ से यह दायें वेन्ट्रिक्ल में आकर फेफड़ों में भेजा जाता है। वहीं आक्सीजन से साफ होकर यह बायें आरिक्ल में आता है और तब बायें वेन्ट्रिक्ल में आकर शरीर में फिर भेजा जाता है।

[यह चित्र रक्त-संचार (खून का दौरान) समझाने के लिए है यह शरीर के उन भागों का अच्छा चित्र नहीं है।]

रहन, पोशाक और जीवन-चर्या में हवा और धूप से फायदा उठाने के बहुत मौके मिलते थे, पर अंगरेजी सभ्यता के साथ साथ अब लोग हिंदुस्तान को भी सर्दियों वाला इंगलैंड समझने लगे हैं, और गर्मी में भी अपने बदन को गर्दन से एड़ी तक बुरी तरह ढक लेते हैं। इसका परिणाम सभी को मालूम है—खून की कमी के साथ शरीर की कमजोरी मांसपेशियों (muscles) की ढीलापन चमड़े की बीमारियां इत्यादि इत्यादि। मामूली समझने की बात है कि जब पेड़-पौदे भी बिना हवा और धूप के नहीं बढ़ते और जब जानवर भी अपने शरीर में हवा और धूप बराबर लगने देते हैं तो मनुष्य इनसे बचकर क्योंकर तनदुरुस्त और भला चंगा रह सकता है। जाड़ों में ज्यादा कपड़ों की जरूरत जरूर पड़ती है, पर उन दिनों भी दोपहर में या किसी न किसी समय हवा और धूप का आनन्द लिया जा सकता है।

हवा किस तरह ली जा सकती है—

नाक के द्वारा काफी हवा अन्दर लेने का सबसे अच्छा उपाय खुली जगह या मैदान में कसरत करना, खेलना और तेजी से टहलना है। बच्चों, लड़कों और नौजवानों के लिए हर रोज खेलना जरूरी है। लड़कों और नौजवानों को खेलने के अलावा हर रोज पांच-दस मिनट या इससे ज्यादा समय के लिए कसरत करना भी जरूरी है। चालीस पैंतालीस साल के लगभग उम्र वालों को यदि वे पहले से कसरत करते और खेलते रहे हैं तो, इन आदतों को जारी रखना चाहिए। लेकिन ज्यों ज्यों उम्र बढ़ती जाती है, टहलना सब से अच्छी कसरत का काम देता है। अपनी शक्ति भर तेजी से जितनी दूर बन सके, टहलना एक बहुत ही अच्छी कसरत है, जिसे हर कोई बहुत लाभ के साथ कर सकता है। कहने का मतलब यह है कि खुले मैदान में या किसी भी खुली जगह में खेलने, कसरत करने या टहलने से खुद-ब-खुद बहुत सी हवा

फेफड़े में पहुँचती है और खून की सफ़ाई का काम अच्छी तरह कर रहता है। रात में जहाँ तक हो खुले में ही सोना चाहिए। अगर घर के ही अन्दर सोना पड़े तो खिड़कियाँ जरूर खुली हों।

गहरी साँस लेने की आदत डालनी चाहिए।

गहरी साँस क्या है—

गहरी साँस उसे कहते हैं जो खुली जगह में या खुली खिड़की दरवाज़ा के सामने सीधा खड़े होकर या सीधा बैठकर या पीठ के बल सीधा लेटकर इस तरह धीरे धीरे ली जाती है कि पेट और सीने के अन्दर के सभी हिस्से और कल पुर्जे हवा से अच्छी तरह भर जाते हैं। गहरी साँस से एक खास फ़ायदा यह है कि साधारण या मीठे रोग की हालत में जब कि बदन में इतनी ताक़त नहीं है कि सैर करने जा सके या कसरत की जाय तो बैठे-बैठे और लेटे लेटे मनुष्य जब कभी गहरी साँस लेके अपने को मदद और जरूर अच्छा कर सकता है। जिन रोगों में जिनमें खून, मांसपेशियाँ, रग-रेशे और शरीर के रोम प्रति-रोम शिथिल मय हो जाते हैं, गहरी साँस लेने से अन्दर के विकारों की सफ़ाई हो जाती है।

गहरी साँस कैसे ली जा सकती है—

सीधे खड़े हो जाओ या सीधे बैठो, जिसमें पीठ सीधी रहे या पीठ के बल सीधा आराम से लेट जाओ। खड़े होने या बैठने में ध्यान रखना कि पीठ सीधी तो रहे लेकिन इतनी न तने कि कष्ट मालूम होने लगे। चेहरे का सामने, जरा (बहुत नहीं) ऊपर का उठा रखना और नथनों को बिना सिकोड़े हुए खुला रखना। अब धीरे धीरे नाक से साँस लो। साँस लेने में यह ध्यान रखो कि सिर्फ़ सीना ही फूले। कुछ लोग पेट भी हवा भरने की सलाह देते हैं, पर यह ठीक नहीं है। सीने को ही ऊपर तक इतना हलका फूलना और तानना चाहिए। पसलियों का ही फैलना जरूरी है। अब धीरे धीरे नाक से हवा को निकालो। शुरू शुरू

अवस्था में हवा को अन्दर रोक रखना ठीक नहीं है। काफी अभ्यास के बाद, हवा रोकी जा सकती है। जितनी देर में हवा अन्दर ली गई थी उससे दूनी देर में बाहर निकाली जानी चाहिए। पहिले यह कठिन होगा पर अभ्यास से जरूर आ जायगा। पहले सांस का बाहर फेंक कर सांस लेना शुरू करना अच्छा होता है।

थोड़े अभ्यास के बाद सांस लेने और निकालने में इस नियम का पालन करना चाहिए—५ सेकंड में सांस लो और १० सेकंड में निकालो। अभ्यास से यह होने लगेगा। पहले ७ बार करो, फिर हर हफ्ते ३ ३ बार बढ़ा कर २८ बार तक करो। मतलब यह है कि जब इस तरह सांस लेने का अभ्यास हो जाय तो पहले हफ्ते में ७ बार (७ बार लेना और ७ बार निकालना) करो, दूसरे हफ्ते में १० बार, तीसरे में १३ बार—इसी तरह बढ़ाकर २८ बार तक ले जाओ।

गहरी साँस से लाभ—

(१) काफी हवा शरीर के अन्दर आ जाती है।

(२) काफी हवा के अन्दर आने से ऑक्सीजन भी पर्याप्त मात्रा में फेफड़ों में पहुँचती है।

(३) ऑक्सीजन से खून साफ होता रहता है और खून के विकार अन्दर ली हुई हवा के साथ मिल कर बाहर निकलने वाली सांस के साथ शरीर के बाहर फेंक दिए जाते हैं।

(४) खून के साथ ऑक्सीजन शरीर के सब हिस्सों में पहुँच कर वहां के विकारों को खून के साथ फेफड़े में आने में सहायक होती है।

(५) साफ खून से शरीर के सभी भाग पुष्ट और तनदुरुस्त रहते हैं।

(६) गहरी सांस लेने वाले को फोड़े, फुन्सी, जख्म या साधारणतः और कोई बीमारी नहीं होती। खान-पान का ध्यान रखना भी जरूरी है, क्योंकि उसी से तो खून बनता है।

(४) जीर्ण (पुराने) रोगों में रोगियों को नियम नम्बर (३) के पालन करने के अलावा कम कभी गहरी सांस भी लेनी चाहिए। थकावट न हो, इसका ध्यान जरूर रहे।

जीर्ण रोग की चिकित्सा के समय या वैसे भी गहरी सांस का अभ्यास आरंभ करते समय पहले दो-तीन गहरी सांस सुबह में, दो-तीन दोपहर में और दो-तीन खाने से पहले लेना काफी होगा। चार-पांच दिन पर एक एक सांस तीनों वक्त बढ़ाई जा सकती है। खाने के बाद तुरन्त ही गहरी सांस न लेनी चाहिए।

टहलते समय भी गहरी सांस ली जा सकती है। हर कदम के साथ गिनती गिनो और आठ की गिनती तक अपने सीने को हवा से भर लो, फिर सोलह गिनते-गिनते हवा को धीरे धीरे निकाल दो।

(५) कसरत करते समय हर दो कसरतों के बीच में दो तीन बार गहरी सांस लेनी चाहिए।

* * * *

सांस की और भी बहुत सी लाभदायक क्रियाएँ हैं, पर वे इस किताब में नहीं दी जा सकतीं। ऊपर जो लिखा गया है वह साधारणतः स्वस्थ रहने और रोगों को भगाने के लिए काफी है। जो कठिन क्रियाएँ हैं वे किसी योग्य शिक्षक की देख रख में सीखना और करना चाहिए।

पानी को काम में लाना

पानी की करामात—

तनदुरुस्ती को ठीक रखने और नये या पुराने रोग को दूर करने के लिए पानी एक बहुत ज़रूरी पदार्थ है। जल की महिमा के ही कारण 'जल-चिकित्सा' (पानी का इलाज) जैसी एक चिकित्सा प्रणाली प्रसिद्ध हो गई है। लेकिन, जैसा कि पहले कहा गया है, जल-चिकित्सा प्राकृतिक चिकित्सा का सिर्फ़ एक अंग है। जल के उचित प्रयोग से बहुत फ़ायदा ज़रूर होता है, पर यदि उसके साथ साथ भोजन, हवा, धूप और उचित कसरत और आराम का ख़याल न रखा जाय तो जल-चिकित्सा के लाभ में बहुत कमी हो जाती है और कुछ हालतों में नुक़सान भी होता है।

पानी के बहुत से फ़ायदे हैं, जिनमें से कुछ नीचे दिये जाते हैं :—

(अ) पानी शरीर के अन्दर की गर्मी को दूर करता है, जिससे जलन, सूजन और दर्द में पानी के इस्तेमाल से फ़ायदा पहुँचता है। किसी भी फोड़े, फुन्सी या बुख़ार की हालत में पानी का इस्तेमाल प्राकृतिक और उचित है, पर बुख़ार में लोग बदन को पानी से बचाने की कोशिश करते हैं; कहते हैं कि निमोनिया या सिरसाम हो जायगा। लेकिन संसार भर के प्राकृतिक चिकित्सकों का तजुर्बा है कि पानी के नियमपूर्वक प्रयोग से किसी तरह का नया बुख़ार भाग जाता है और पुराना बुख़ार या किसी तरह का पेचीदा रोग भी पीछा छोड़ता है। पानी के ही इस्तेमाल से कितने ही ६-७ दिन के बुख़ारों को, जिन को डाक्टरों ने मियादी या टाइफ़ाइड बताया, प्राकृतिक चिकित्सकों ने दो-तीन दिनों में ही मार भगाया।

(ब) शरीर के अन्दर के विकारों को घुलाकर उनको फिर से पतला बनाना और शरीर के बाहर निकाल देना—यह काम पानी का ही है।

भोजन के ठीक ठीक न पचने से शरीर के अन्दर वायु का प्रकोप रहता है। यह वायु भाप की तरह है। सभी जानते हैं कि किसी ठंडी सतह को छूने से भाप फिर पानी बन जाती है। बस, शरीर के अन्दर की भी भाप (वायु) ठंडे पानी के बाहरी इस्तेमाल से पानी बन कर पेड़ू में चली आती है और फिर पेशाब-पाखाने के रास्ते शरीर के बाहर निकल जाती है। इस विकार-मय भाप को शरीर के बाहर निकाल देने के लिए पानी के नियमित प्रयोग से बढ़ कर कोई भी दूसरा सीधा-सादा और असर ही सफल होने वाला उपाय नहीं है। इसी से उन रोगों को भी, जो असाध्य कह कर छोड़ दिये जाते हैं, प्राकृतिक चिकित्सा जल के प्रयोग से जड़ से उखाड़ देती है।

(ख) पानी से नाड़ी संस्थान (nervous system) को आराम और शक्ति, दोनों ही, मिलते हैं। पाठकों को मालूम है कि शरीर के अन्दर नाड़ी संस्थान ही राजा का काम करता है। उसी के हुक्म से भोजन का पाचन, पेट की सफ़ाई, नींद का आना इत्यादि सभी ज़रूरी काम होते हैं। नाड़ियों की कमज़ोरी से शरीर की कमज़ोरी होती है, जिससे शरीर रोगों का शिकार बनता है, और फिर शरीर की कमज़ोरी से नाड़ियों की कमज़ोरी बढ़ती है। नाड़ी संस्थान को ठीक अवस्था में रखने के लिए पानी का प्रयोग बहुत ज़रूरी है।

पानी के कुछ साधारण इस्तेमाल हैं और कुछ असाधारण। मामूली इस्तेमालों में रोज़ रोज़ का नहाना और पानी पीना है। ग़ैर-मामूली इस्तेमालों में तरह तरह की पट्टियाँ और स्नान हैं। पहले जल के साधारण प्रयोगों के बारे में ज़रूरी बातें बताई जायँगी।

पानी का मामूली इस्तेमाल—

पानी पीना और नहाना रोज़ की मामूली बातें हैं, इसीलिए इन पर काफ़ी ध्यान नहीं दिया जाता। पर इन मामूली बातों को अच्छी तरह जानने और करने से तनदुरुस्त रहने और रोगों से छुटकारा पाने में

बहुत कुछ मदद मिलती है। इसलिए इन बातों के संबंध में नीचे लिखे नियम बराबर याद रखिए।

पानी पीना—

(अ) ठंडा पानी (स्नान लेने के बाद) पीना अच्छा है लेकिन जाड़ों में अगर पानी ठंडा हो तो उसे इतना ही गर्म करना चाहिए कि उसकी ठंड मर जाय ज्यादा नहीं। सर्दी-जुकाम या खांसी में इस बात का ध्यान जरूर रखना चाहिए।

अगर सन्देह हो कि पानी अच्छी जगह का नहीं है या अगर ठीक ठीक मालूम हो कि पानी विकार-युक्त है तो उसे अच्छी तरह उबालने के बाद ठंडा कर और तब छान करके पीना चाहिए।

(ब) पानी सादा ही पीना चाहिए, जरूरत पड़ने पर नीबू का रस मिला सकते हैं। सोडा, लेमनेड इत्यादि पीने की प्रथा हानिकर है। पहले तो इनके पीने से कोई नुकसान नहीं मालूम होता, पर धीरे धीरे यह पाचन शक्ति और नाड़ियों को कमजोर कर देते हैं। जो बहुत वर्षों तक निरोग जीना चाहता है वह सादा पानी पिये। पानी में बर्फ मिलाना भी बुरा है। इससे पाचन शक्ति नष्ट हो जाती है। अगर बर्फ मिलाना ही हो तो चूर करके न छोड़ी जाय। एक दो सेकेंड के लिए पानी में बर्फ के टुकड़े को रहने दीजिए और फिर निकाल लीजिए। यह सभी को मालूम है कि बर्फ के पानी से प्यास नहीं जाती।

(स) पानी काफ़ी मात्रा में पीना चाहिए, पर बिना प्यास के नहीं। शरीर का बहुत भाग पानी है, खून भी पानी है, इसलिए शरीर को ठीक हालत में करने के लिए पानी बहुत जरूरी है। पर बिना प्यास के पानी पीना वैसा ही है जैसा कि बिना भूख के भोजन करना।

सुबह उठते ही मुंह आंखें धो और कुल्ला करके एक डेढ़ गिलास पानी धीरे धीरे पी जाना बहुत लाभदायक है। वैसे ही रात को सोने से पहले पानी पीकर सोना भी अच्छा है। कब्ज की हालत में एक या दो नीबू का रस मिला लेना गुणकारी होता है।

(द) पानी इच्छा भर पीना चाहिए, न ज्यादा न कम। कोई नेश्चित मात्रा नहीं बताई जा सकती।

(न) भोजन के साथ पानी न पीना चाहिए। यह नियम बड़े महत्व का है और इसके तोड़ने से बहुत सी खराबियां इन दिनों हो रही हैं। भोजन के आध घंटे पहले और कम से कम दो घंटे बाद पानी पीना अच्छा है। भोजन के समय पानी पीने की आदत को रोकने के लिए यह जरूरी है कि भोजन में मिर्च, मसाले और तेल की ज्यादती न हो और यह भी कि भोजन अच्छी तरह चबाया जाय।

(प) थके रहने की हालत में तुरन्त पानी न पीना चाहिए।

(फ) थकावट या किसी प्रकार के बुखार की हालत में आचमन लेना बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। आचमन का मतलब है—दो दो सेकेंड की देर पर ठंडे पानी की (पानी जितना ठंडा हो अच्छा है, लेकिन बर्फ मत मिलाओ) १०—१२ बूंद चूस लेना। दस-बारह बार चूसने के बाद पांच सात मिनट के लिए रुक जाना चाहिए। और तब फिर दुहराना चाहिए। बीच बीच में रुक रुक कर चार-पांच बार इस तरह करना चाहिए। चाय पीने वाले छोटे चमचे में जितना पानी आता है उसका छठवां भाग एक बार चूसना चाहिए। यह दस बारह बूंदों के बराबर होगा। बुखार के शुरू में आचमन जरूर लेना चाहिए। कुछ बुखार तो सिर्फ पांच-सात बार के आचमन से ही उतर जायेंगे। जोरदार बुखारों में भी इससे लाभ होता है—परेशानी कम हो जाती है। लेकिन आचमन का तरीका ठीक वैसा ही हो जैसा कि ऊपर बताया गया है।

मामूली नहाना—

(ब) साधारण तनदुरुस्ती वालों को सभी मौसम में ठंडे पानी से ही नहाना चाहिए। ठंडे पानी से नाड़ी संस्थान जग उठता है। कमजोर आदमी को ऐसे पानी से नहाना चाहिए, जिसकी ठंड थोड़ा गर्म पानी

(५) जिन रोगियों के बदन में हल्का-सा दर्द रहा करता है, जैसा कि कभी कभी गठिये की पुरानी हालत में रहता है, उन्हें पहले कुछ दिनों तक सर का ठंडे पानी में निचोड़े कपड़े से दो-तीन बार अच्छी तरह पोंछ कर या ठंडे पानी से धोकर गर्दन से नीचे गर्म पानी से नहाना चाहिए और उसके बाद ही या तो ठंडे पानी से नहा लेना चाहिए या ठंडे पानी में निचोड़े कपड़े से बदन को अच्छी तरह पोंछना चाहिए। आठ-दस दिनों के बाद नम्बर (न) वाली क्रिया, जो ऊपर बताई गई है, करनी चाहिए।

पानी का असाधारण इस्तेमाल—

पानी के जो इस्तेमाल नीचे दिये जाते हैं वे हर रोज़ के नहीं हैं। ज़रूरत होने पर इन असाधारण प्रयोगों से बहुत फ़ायदा उठाया जा सकता है। इनको अच्छी तरह समझना और सीखना चाहिए। पहले कुछ ज़रूरी बातें समझ लीजिए, जिससे आप यह जान सकें कि किस अवसर पर ठंडा या गर्म पानी का कितनी देर प्रयोग करना चाहिए।

पानी के ठंडा या गर्म होने का अन्दाज़—

बहुत ठंडा पानी—	लगभग	३२ से ५० डिग्री फ़र्नहाइट
ठंडा पानी—	"	५० से ६५ " "
मामूली ठंडा पानी—	"	६५ से ८० " "
नाम के लिए ठंडा पानी—	लगभग	८० से ६२ डिग्री फ़र्नहाइट
न ठंडा न गर्म पानी—	"	६२ से ६७ " "
मामूली गर्म पानी—	"	६८ से १०० " "
गर्म पानी—	"	१०० से १०४ " "
बहुत गर्म पानी—	"	१०४ से ज़्यादा " "

अगर पानी का ताप मापने वाला एक थर्मामीटर पास में हो तो बहुत अच्छा है। अगर थर्मामीटर न हो तो अन्दाज़ से काम लिया जा सकता है।

जल के प्रयोग से शरीर पर क्या प्रभाव पड़ेगा, यह इस पर निर्भर है कि जल का ताप कितना है, कितनी देर का प्रयोग है, शरीर के कितने भाग पर प्रयोग हुआ, कैसा प्रयोग हुआ और रोगी की शारीरिक अवस्था कैसी है। नीचे इस विषय पर और प्रकाश डाला जा रहा है।

जल के प्रयोग का शरीर पर जो प्रभाव नीचे बताया जा रहा है वह दूसरी क्रिया है। हर प्रयोग की दो प्रतिक्रियाएं होती हैं—पहली (थोड़ी देर तक टिकने वाली) और उसके बाद ही दूसरी (व्यापक और टिकाऊ)। ठंडे पानी से स्नान करने से पहले ठंड लगती है। यह पहली प्रतिक्रिया है, जो थोड़ी देर रहती है। इसके बाद ही बदन में गर्मी छा जाती है। यह दूसरी प्रतिक्रिया टिकाऊ है। इस दूसरी प्रतिक्रिया पर ही (खाने-पीने, जल प्रयोग, सभी विषयों में) प्राकृतिक चिकित्सा में जोर दिया जाता है। यह याद रखना चाहिए कि अगर पहली प्रतिक्रिया आराम की होती है तो दूसरी दुखद और अगर पहली दुखद तो दूसरी टिकाऊ प्रतिक्रिया सुखद और रोगनाशक होती है।

बहुत थोड़ी देर (५ से १५ सेकंड) के लिए गर्म जल के प्रयोग का प्रभाव

१ शरीर की गर्मी कम करता है। २ सांस की हरकत को धीमा करता है। ३ रक्तचाप (blood pressrue) पर कोई खास प्रभाव नहीं होता ४ नाड़ी-संस्थान को उत्तेजित करता है। ५ दिल की गति को तेज करता है। ६ मांसपेशियों को सिकोड़ता है। ७ खाल के पास वाली खून की नालियों को संकुचित करता है। ८ कोषों के बनने की क्रिया पर बहुत कम असर डालता है। ९ सांस को उत्तेजित करता है।

काफी देर (२ से १० मिनट) के लिए गर्म जल के प्रयोग का प्रभाव

१ शरीर का ताप बढ़ाता है। २. सांस की हरकत को कम करता है। ३ रक्त-चाप को घटाता है। ४ नाड़ियों में थोड़ी शिथिलता

(सुरती) लाता है। ५ हृदय की गति को तेज और कमजोर करता है। ६ मांसपेशियों को ढीला करता है। ७ खाल के पास की खून की नलियों को फैलाता है। ८ कोषों के बनने की क्रिया का उत्तेजित करता है। ९ सांस को तेज और कमजोर करता है।

बहुत थोड़ी देर (५ से २५ सेकण्ड) के लिए ठंडे पानी के प्रयोग का प्रभाव

१ शरीर का ताप बढ़ाता है २ खाल की हरकत को बढ़ाता है। ३ रक्त-चाप को बढ़ाता है। ४ नाड़ी-संस्थान को मदद पहुँचाता है। ५ हृदय की गति को धीमा और मजबूत करता है। ६ मांसपेशियों को उत्तेजित करता है। ७ खाल के पास के खून की नलियों को फैलाता है। ८ कोषों के बनने की क्रिया का उत्तेजित करता है। ९ सांस का धीमा और गहरा करता है।

काफ़ी देर के लिए ठंडे पानी के प्रयोग का प्रभाव

१ शरीर का ताप घटाता है। २ खाल की हरकत का कम करता है। ३ रक्तचाप को घटाता है। ४ नाड़ी संस्थान पर कोई विशेष प्रभाव नहीं डालता। ५ हृदय की गति को कमजोर करता है। ६ मांसपेशियों का सिकुड़ता है ७ खाल के पास की खून की नलियों को सिकोड़ता है। ८ कोषों के बनने की क्रिया का मंद करता है। ९ सांस को धीमा और कमज़ोर करता है।

इस प्रभाव के विषय को अच्छी तरह समझना चाहिए और शुरू से ही जल के प्रयोग में ज्यादती न करनी चाहिए। हर क्रिया की प्रति क्रिया का हो जाना भी जरूरी है। ठंड के बाद गर्मी आनी चाहिए और गर्मी के बाद ठंडक पहुँचानी चाहिए और फिर ठंडक के बाद गर्मी। बहुत बुड्ढे या कमजोर शरीरों के लिए बहुत गर्म या बहुत ठंडे जल का प्रयोग हानिकर होता है। धीरे-धीरे और अभ्यास डालते हुए

पानी की गर्मी या ठंडक को बढ़ाना चाहिए। इस विषय को अच्छी तरह समझने से चिकित्सा का काम आसान हो जाता है।

अब कुछ जरूरी प्रयोग बताये जाते हैं।

सेंक

(अ) दर्द और सूजन में सेंक से बहुत लाभ होता है, लेकिन सेंक से पूरा फ़ायदा उठाने के लिए गर्म और ठंडी सेंक होनी चाहिए।

एक बर्तन में काफ़ी गर्म और दूसरे में ठंडा पानी लीजिए। दोनों में फ़्लालैन या किसी भी मोटे कपड़े के टुकड़े डाल दीजिए। अगर जरूरत हो तो कपड़ों के दो तीन तह कर लीजिए। पहले गर्म पानी वाले कपड़े को निचोड़ कर १ से २ मिनट तक दर्द के मुक़ाम पर रखिए और इतने में ठंडे पानी वाले कपड़े को निचोड़ कर तैयार कीजिए। फिर गर्म कपड़े को हटाकर ठंडे कपड़े को दर्द वाली जगह पर रखिए और इधर गर्म पानी वाले कपड़े को निचोड़ कर तैयार कीजिए। ठंडे कपड़े को गर्म कपड़े के बनिस्बत कम देर तक रखिए। अगर गर्म कपड़े को २ मिनट रखा है तो ठंडे कपड़े को आध मिनट के लिए ही रखिए। इस तरह बारी बारी से गर्म और ठंडी सेंक १५-२० मिनट के लिए देनी चाहिए। ठंडी सेंक से ख़तम कीजिए। सेंक देते समय हवा लगने न देना चाहिए, पर कमरे बिलकुल बन्द करने की भी जरूरत नहीं। सेंक ख़तम होने पर शरीर को थोड़ी देर के लिए ढक रखिए।

[1] गर्म के बाद ठंडी सेंक इसलिए दी जाती है कि दोनों से खून में अच्छी हरकत पैदा हो जाय। गर्मी से खून खिंच आता है और ठंडक से दूर होता है। इस तरह हरकत आती है लेकिन गर्मी कमजोर करती है, इसलिए थोड़ी ठंडक से ताक़त भी लाना जरूरी होता है।

किसी भी दर्द और सूजन में या अकेला दर्द या सूजन में और शरीर के किसी अंग पर यह सेंक दी जा सकती है। इस सेंक को जब जब तकलीफ़ उठे, देना चाहिए। अगर तकलीफ़ बहुत दिन तक चलने-

पड़ती है तो दिन और रात में दो तीन बार, समय निश्चित करके सेंक देनी चाहिए।

सेंक के कपड़े इतने बड़े और चौड़े जरूर हों कि दर्द की जगह और चारों तरफ से थोड़ी और जगह को अच्छी तरह ढक सकें।

दमा, पुरानी खांसी, निमोनिया और यक्ष्मा में छाती और पीठ के ऊपर के हिस्सों पर इन सेंकों से बहुत आराम मिलता है। जब दर्द ज्यादा हो या रोगी बहुत बक रहा हो तो दो या तीन गरम सेंक के बाद एक ठंडी सेंक देनी चाहिए। अंत में ठंडी ही।

सूखा (सूखी) सेंक, जिसमें सिर्फ कपड़े या रुई या फलालैन से सेंकते हैं, बहुत खराब है। गठिया में तो इससे बाल सख्त पड़ जाते हैं।

(क) बोतलों में गर्म पानी भर कर (एक तिहाई हिस्सा खाली रहे) उनके मुंह अच्छी तरह बन्द कर लीजिए और उनको छाती और पेट के दोनों तरफ या अगर जरूरत हो तो टांगों के बीच या दोनों तरफ या पैरों के पास रख कर ऊपर से कपड़ा डाल दीजिए।

कभी कभी कई बोतलें तैयार रखने की जरूरत पड़ती है और साथ ही चूल्हे पर गर्म पानी भी तैयार रखना पड़ता है, जिससे कि बोतलें बदली जा सकें।

बोतल (पानी से) इतनी गर्म हो कि बर्दाश्त (सहन) की जा सके। उसको कपड़े से लपेट लेना अच्छा होता है। ऐसी बोतलें रबर की बनी मिलती हैं पर कांच की बोतलें भी काम में लाई जा सकती हैं।

बोतल में गर्म पानी डालने से पहले उसे हल्के गर्म पानी से धो लेना चाहिए, नहीं तो एकाएक गर्म पानी से वह टूट जा सकती है।

पेट के दर्द में भी गर्म पानी की बोतलों से काम लेते हैं, पर खास कर जब बदन में कमजोरी से ठंड आने लगती है, जैसा कि हैजे में या शरीर से बहुत खून निकलने के बाद हो सकता है, तो गर्म बोतलों से विशेष लाभ होता है।

सेंक से फायदा जरूर होता है, लेकिन अगर गठिया जैसे रोग में खून विकारयुक्त हो गया है तो सेंक से सिर्फ आराम मिलेगा। सच्चा काम तो तभी होगा जब कि भोजन-सुधार के साथ साथ दूसरे दूसरे उपायों से खून साफ कर लिया जाय। फिर भी आराम पहुँचाने के लिए सेंक से काम जरूर लेना चाहिए।

पट्टियाँ—

(अ) स्थानीय (मुकामी) गीली पट्टी (आर्द्र वेष्टन)

कपड़े की गीली पट्टियों से बहुत हालतों में जादू का सा असर होता है। दर्द या सूजन की जगहों पर, किसी अंग के फटने पर और जख्म पर भी, ठंडे पानी में निचोड़े साफ कपड़े के टुकड़े को इस तरह लपेटिए कि वह उस जगह को तीन-चार बार अच्छी तरह ढक ले या कपड़े की चार-पाँच तह कर चोट की जगह पर उसे रखिए और तब ऊपर से एक गर्म ऊनी कपड़े को हल्का कसकर लपेट दीजिए। पट्टी की तहें कितनी हों, यह इस बात पर निर्भर है कि तकलीफ कैसी है। अगर तकलीफ ज्यादा है या किसी अंग के बुरी तरह कट जाने से खून जोरों में और बहुत बह रहा है तो पट्टी को काफी मोटा होना चाहिए। इसको लगभग एक घंटे तक या जब तक अन्दर की पट्टी गर्म न हो जाय उसी जगह पर रहने दीजिए। फिर ठंडे गीले कपड़े से उस जगह को पोंछ दीजिए। अगर जख्म है या कट गया है तो अच्छी तरह धो दीजिए।

जब तक तकलीफ दूर न हो एक-एक या दो-दो घंटे का या १५ १० मिनट का अन्तर देकर पट्टी को दुहराते जाइए।

बहुत जगहों में पट्टी लपेटी नहीं जा सकती। वहाँ पट्टी को सिर्फ रख देते हैं और ऊपर से गर्म कपड़े रख देते हैं या अगर हो सके तो लपेट देते हैं।

बुखारों में इन गीली पट्टियों को नाभी (नाफ़) से नीचे तमाम पेड़ू पर रखने से बुखार बढ़ने नहीं पाता और रोगी को बहुत आराम मिलता है। बुखार में मिट्टी की पट्टियां भी रखी जाती हैं। मिट्टी की पट्टी के बारे में आगे बताया जायगा।

पेड़ू पर कपड़े की गीली पट्टी के लिए कपड़े का काफ़ी मोटा होना चाहिए और उसकी दो-तीन या तीन-चार तहें कर लेना ज़रूरी है। ऊपर से गर्म कपड़ा रखना या लपेटना न भूलिए, या अगर मुमकिन हो सके तो गर्दन से नीचे सारे बदन को कम्बल से ढक दीजिए। अगर पेड़ू पर या कहीं भी गीली पट्टी रखने से पहनने के कपड़े भीग जाय तो उन्हें बदल देना चाहिए। कहने की ज़रूरत नहीं कि बुखारों में अगर शुरू से ही उपवास कराया जाय एनीमा दिया जाय और पेड़ू पर गीली पट्टियां रखी जाय तो दो-तीन दिन में ही बुखार उतर जाता जायगा और कोई भी उपद्रव न होगा।

गीली पट्टियों के लिए ठंडा पानी काम में लाना चाहिए। पानी जितना ठंडा हो अच्छा है, पर बर्फ़ मिलाकर पानी ठंडा करना ठीक नहीं। गर्मी में, जहां ठंडा पानी बिलकुल नहीं मिलता, थोड़ी बर्फ़ मिलाकर पानी ठंडा कर सकते हैं।

जब किसी रोग में बहुत तेज दर्द है, और अगर बन सके तो, गर्म और ठंडी सेंक देनी चाहिए। सिर्फ़ गर्म सेंक से भी लाभ होता है। रख लेना चाहिए कि कैसी सेंक काम करती है। अगर सामान जुटे तो गीली पट्टियों से ही काम लेना चाहिए। अगर तकलीफ़ में जलन की मात्रा ज़्यादा हो तो गीली पट्टियों का इस्तेमाल ज़्यादा अच्छा है। बात यह है कि दोनों के असर क़रीब क़रीब बराबर हैं, क्योंकि गीली पट्टी पर गरम ऊनी कपड़ा लपेटने से शरीर को गर्म और ठंडी सेंक का लाभ और आनंद मिलता है।

(व) सारे शरीर की गीली पट्टी—

एक तख्त (चौकी) पर या ज़मीन पर ही चटाई पर या अच्छी तनी खाट पर कम्बल फैलाइए। उस पर मोटी साफ चद्दर ठंडे पानी में इस

सारे शरीर की गीली पट्टी, पहली अवस्था

तरह निचोड़ कर कि पानी न तो बिलकुल ही निकल जाय और न टप कता ही रहे, फैला दीजिए। उस पर एक ऐसा पतला कपड़ा ठंडे पानी में निचोड़ कर फैलाइए जो रोगी के बगल से निकल कर पीठ के नीचे से होता हुआ उसके सीने और पेट को ढँक ले। (१) अब रोगी को नंगा करके (या हल्की भीगी तहमत या भीगा पाजामा पहना कर) इन कम्बल और गीले कपड़ों पर इस तरह पीठ के बल लिटा दीजिए कि गरदन से ऊपर उसका सिर बाहर निकला रहे पर शरीर का और सारा हिस्सा उन कपड़ों पर ही रहे। (२) अब जल्दी से पहले छोटे कपड़ े को सीने और पेट पर हाथों को बाहर छोड़ते हुए लपेट दीजिए और हाथों को आराम के साथ बगल में ही रखते हुए (३) बड़ी चादर का पल्ले एक तरफ और फिर दूसरी तरफ से लाकर लपेटिए। यह खयाल रहे कि शरीर का सारा हिस्सा गीले कपड़े के सम्पर्क में आ जाय। कपड़े का जो हिस्सा पैरों के आगे निकला हुआ है उसे पैरों से मिलाते हुए अच्छी तरह मोड़कर पैरों के ऊपर लाकर रख दीजिए। सारी टांगों का

गीले कपड़े के सम्पर्क में अच्छी तरह आना जरूरी है। (४) अब कम्बल को पहले एक तरफ़ से और फिर दूसरी तरफ़ से ऊपर लाकर इस तरह
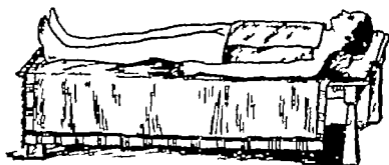
सारे शरीर की गीली पट्टी, दूसरी अवस्था

लपेटिए कि गर्दन से पैरों तक सारा शरीर उसके अन्दर आ जाय कम्बल का जो हिस्सा पैरों के आगे निकला हुआ है उसे भी मोड़ कर पैरों के ऊपर लाकर रखिए और अगर जरूरत हो तो यहां पर और ऊपर भी दो तीन सेफ्टी पिन लगा दीजिए, जिससे कम्बल खुलने न पावे
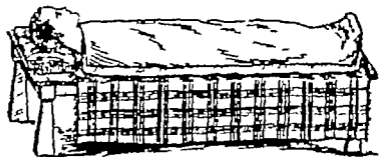
सारे शरीर की गीली पट्टी, तीसरी अवस्था

गर्दन के पास भी कम्बल अच्छी तरह लपेटा रहे। नीचे के गीले कपड़े और कम्बल को ढीला न रहना चाहिए और न इस तरह कसा ही रहना चाहिए कि रोगी को तकलीफ़ मालूम हो। इस पृष्ठ के पहले और इस

पृष्ठ में दिये चारों चित्रों से यह सारी बातें अच्छी तरह समझ में आ जायेंगी।

पहले तो रोगी को ठंड मालूम होगी। छोटे बच्चे रोने जैसा करेंगे। लेकिन दो-तीन मिनटों में ही आराम मालूम होने लगता है और कम्बल के कारण शरीर में गर्मी फैलने लगती है। रोगी को उसी हालत में २० से ३० मिनट तक या और ज्यादा देर तक रहने दीजिए। उम्मीद है कि रोगी को पसीना निकलेगा। अगर पसीना न भी निकले तो काफी गर्मी मालूम होगी। समय हो जाने पर पट्टी खोल दीजिए। अगर रोगी
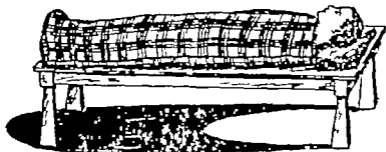
सारे शरीर की गीली पट्टी पूरी हो जाने पर

पट्टी में ही सो जाय तो उसे सोने दीजिए। नींद खुलने के बाद पट्टी खोलिए। पट्टी खोलने पर, अगर रोगी मामूली तौर पर है तो, उसे अच्छी तरह, लेकिन जल्दी से, सिर से नहलाकर (डरिए नहीं) कपड़े पहना दीजिए और बिस्तर पर लिटा दीजिए। गर्म कपड़े ओढ़ा देने से उसे आराम मालूम होगा। अगर रोगी सबल नहीं है तो गीले कपड़े या तौलिए से सिर से लेकर सारे शरीर को अच्छी तरह पोंछ दीजिए। बिस्तर पर लेटने के बाद बिस्तर और ओढ़ने के कपड़ों की गर्मी से अगर उसे फिर पसीना निकले तो पसीने को गीले कपड़े से अच्छी तरह पोंछ दीजिए। फिर रोगी को आराम से लेटने दीजिए।

इस पट्टी का इस्तेमाल किसी तरह के तेज बुखार में करते हैं। पट्टी देने के बाद ही बुखार दो तीन डिग्री कम हो जाता है और धीरे धीरे घटता ही जाता है। (एक बार लगभग के ही चार साल के एक लड़के को अल्मोड़े के पास एक पहाड़ी गांव में, जहां ठंड बहुत रहती है, रात के ६ बजे १०६ डिग्री का भारदार बुखार हो गया। पट्टी देने के बाद बुखार पहले १०३ डिग्री और फिर १०१ डिग्री तक आ कर रुक गया।) अगर बुखार उसी दिन फिर तभी से बढ़ने लगे तो तीन-चार घंटे बाद पट्टी का फिर दुहराइए। इसने की जरूरत नहीं है। अगर बुखार आज बहुत कम हो कर कल फिर बढ़ने लगे तो फिर पट्टी दीजिए। तीन चार दिन के लगातार इस्तेमाल से भी बुखार निश्चय जाता रहता है। सैकड़े पीछे ५० बुखार तो पहले ही दिन चले जाते हैं।

जुकाम के शुरू-शुरू में दो दिन इस तरह की पट्टी देना मानो शरीर के विकारों को निकाल कर जुकाम को जल्दी से विदा करने के लिए जादू करना है। जुकाम में पट्टी इतनी देर तक रहे कि पसीना निकल जाय। बताने की जरूरत नहीं कि जब तक बुखार बना रहे या तब तक जुकाम का वेग बिलकुल कम न हो जाय उपवास करना या रस पीकर रहना जरूरी है। पट्टी में लिपटे रहने के ही समय रोगी को गर्म पानी के साथ नींबू या संतरे का रस देना अच्छा होता है।

बुखार में इस तरह सारे शरीर को ठंडे कपड़े से लपेटने और नहलाने से लोग डरेंगे। लेकिन यह तो मामूली बात है कि बुखार में बदन में आग लगी रहती है। उस हालत में पानी से ही आराम मिल सकता है। पानी का इस्तेमाल किसी भी रूप में इस तरह करना चाहिए कि आग न तो बिलकुल बुझ जाय और न बढ़ने ही पावे; धीरे धीरे विकारों को जलाते हुए बुझे।

देखिए, पट्टियों से किस तरह फायदा होता है। पहले तो ठंडे कपड़े के लगने से खाल के पास का खून ठंड के कारण अन्दर भाग जाता

है और अपनी जगह को बिलकुल खाली छोड़ जाता है। लेकिन प्रकृति (कुदरत) किसी भी जगह को खाली रखना नहीं चाहती कुछ नहीं तो हवा से ही भर देती है। इस नियम के मुताबिक दूसरे ही क्षण शरीर के अन्दर के हिस्सों से खून आकर खाल के पास की खाली जगहों को भर देता है। इससे खून में हरकत होती है। आप जानते हैं कि शरीर में सारा खेल खून का ही है, और खून में अच्छी तरह हरकत होना जरूरी है। फिर कम्बल से गर्मी पैदा होती है, जिससे रोएँ के छेद खुल जाते हैं और अन्दर के विकार बाहर आ जाते हैं। साथ ही एक तरह की बिजली पैदा होती है, जिससे जीवन-शक्ति बढ़ कर रोग को भगा देती है।

अब यह देखना है कि पट्टी में एक ही कम्बल इस्तेमाल करना चाहिए या ज्यादा, एक ही ठंडी चादर हो या ज्यादा। अगर बुखार तेज और ज्यादा है तो एक कम्बल काफी है, लेकिन गीली चादरें दो हों। अगर बहुत दिनों तक चलने वाले बुखार की गर्मी हल्की रहे तो एक गीली चादर और एक कम्बल इस्तेमाल करने चाहिए। (यह बात कम्बल पर भी निभर है। कोई कोई कम्बल भारी और ज्यादा गर्म होता है और कोई हल्का।)

कभी कभी ऐसी हालत में भी, जब कि रोगी का शरीर ठंडा पड़ गया है, सारे शरीर की गीली पट्टी से बहुत लाभ होता है। इस हालत में एक हल्की गीली चादर और दो-तीन या चार कम्बलों को इस्तेमाल करना चाहिए। कम्बलों के लपेटने के बाद बाहों और टाँगों के पास गर्म पानी की बोतलें रखकर (ऐसी हालत में बोतलों को तौलिए से लपेटने की जरूरत नहीं है) ऊपर से एक और कम्बल ओढ़ा देना चाहिए। इतना खयाल रहे कि जिस रोगी का शरीर ठंडा पड़ गया है उसे पसीना आने की जरूरत नहीं है। पट्टी खोलने के बाद उसके शरीर को ठंडे पानी के बदले मामूली गर्म पानी में भीगे कपड़े से पोंछना चाहिए। पसीना आने से कमजोरी बढ़ेगी।

गीली पट्टी के चार असर मामूली तौर पर होते हैं। पहला ठंडा, फि न ठंडा, न गर्म, तब गर्म और अंत में पसीना निकालने का। लगभग १५ मिनट तक ठंडा, फिर ठंडा न गर्म, २० मिनट के बाद गर्म और २५ ३० मिनट के बाद पसीना निकालने का असर शुरू होता है। ग खास समय के अलावा गीली चादर और कम्बलों के नम्बर पर भी निर्भ है। १०१ डिग्री तक के बुखार में पसीना निकालने की कोशिश करनी चाहिए, पर १०४, १०५, १०६ डिग्री की हालत में टेम्परेचर कम करने पर ही ध्यान रखना चाहिए। अगर बुखार १०४ डिग्री का ह उससे भी ज्यादा हो तो कम्बल लपेटने की जरूरत नहीं। १० मिन के बाद पट्टी खोल कर शरीर को पोंछ देना चाहिए।

इस पट्टी का बिल्कुल बन्द जगह में न देना चाहिए। और भी हव नहीं, पर काफ़ी हवा का होना जरूरी है। हां, नहलाते या बदन पोंछते समय थोड़ी देर के लिए कमरा बन्द कर देना या बन्द कमरे में रोगी को ले जाकर नहलाना चाहिए।

जैसा कि ऊपर बताया गया है, सभी रोगियों को पट्टी की हालत में गर्म पानी के साथ नींबू या सन्तरे का रस निचोड़ कर या सिर्फ गर्म पानी (काफ़ी गर्म पर इतना कि आसानी से पिया जा सके) पिलाना अच्छा है। इससे बदन में गर्मी आती है और पसीना निकलने की संभावना रहती है।

किसी किसी रोगी को आध-आध घंटे तक भी पट्टी में पड़े रहने पर गर्मी नहीं मालूम होती। ऐसी हालत में भी बोतलों में गर्म पानी भर कर बगल और टांगों के पास रख, ऊपर से एक और कम्बल ओढ़ा देना चाहिए। अगर बोतल न मिल सके तो ईंट या पत्थर के टुकड़ों को आग में रख कर गरम कर और उन्हें मोटे कपड़ों में लपेट कर बोतलों की ही तरह इस्तेमाल करना चाहिए।

लेखक ने इस सारे शरीर की गीली पट्टी का बुखार, जुकाम, चेचक, खारिश (खुजली), कोढ़, दमा और निमोनिया की हालतों में बहुत लाभ और सफलता के साथ इस्तेमाल किया है। दमा में सिर्फ पीठ, सीने और पेट का हर रोज ढकना चाहिए। और बीच बीच में दो तीन दिन के बाद सारे शरीर को। खाज के कठिन रोग में १५-२० दिनों तक यह पट्टी हर रोज दी जाय। यक्ष्मा में इस पट्टी का प्रयोग शुरू से ही करना चाहिए।

नोट—(१) पट्टी में इस्तेमाल किये हुए कपड़े को दूसरी बार तब तक इस्तेमाल न करना चाहिए जब तक कि वह अच्छी तरह धोया जाकर धूप में न सुखा लिया जाय, (२) पानी ताजा और मामूली ठंडा हो।

(ख) रीढ़ की गीली पट्टी—तख्त पर या जमीन पर ही चटाई या कम्बल फैलाकर (खाट पर नहीं) पहले एक तकिया सिरहाने रखिए। फिर इस तकिये से समकोण बनाती हुई कपड़े की एक ऐसी गीली पट्टी रखिए, जो कम से कम आध या एक चौथाई इंच मोटी, एक फुट चौड़ी और दो फुट लम्बी हो। फिर उस पर इस तरह आराम के साथ लेट जाइए कि गर्दन के नीचे से रीढ़ का सारा हिस्सा गीली पट्टी पर अच्छी तरह पड़े। अगर तकिया के ऊँचा रहने से गर्दन के ठीक नीचे का हिस्सा गीली पट्टी से कुछ ऊपर रह जाय तो उस जगह पट्टी के नीचे एक अखबार का गोला लपेट कर या किसी दूसरी चीज को रख दीजिए, जिससे गीली पट्टी ऊपर उठकर शरीर के उस हिस्से के सम्पर्क में आ जाय। साथ ही एक पतला लेकिन पानी में भिगोया और अच्छी तरह निचोड़ा कपड़ा तैयार रखिए। पट्टी पर लेट जाने के बाद इस कपड़े को सीने और पेट पर अच्छी तरह फैला दीजिए। इसके बाद आराम के लिए और अन्दर गर्मी बनाये रखने के लिए ऊपर से एक हल्की गर्म चादर या दो कम्बल ओढ़ लीजिए। चेहरा खुला रहे।

दो-तीन मिनट के बाद ही आराम मालूम होने लगेगा। पांच-दस मिनट में सिर, आंख, कान, नाक, मुंह में ठंडक मालूम होगी और सोने की इच्छा सी होगी। अगर पहले या दूसरे दिन नींद न भी लगे तो तीसरे चौथे दिन से झपकी जरूर आ जाया करेगी। इस पट्टी से नींद ज्यादा से ज्यादा एक घंटे तक रहती है। नींद खुल जाने पर, या अगर पहले दिन नींद न लगी तो १५, २० मिनट के बाद, उठने से पहले सिर को ठंडे पानी से धोकर अच्छी तरह पोंछ लीजिए। फिर सूखे कपड़े से सारे शरीर को अच्छी तरह पोंछ कर कपड़े पहन लीजिए।

किसी साफ खुली जगह पर या कमरे में जहां अच्छी हवा आती है, इस पट्टी को लेना चाहिए, लेकिन गर्मियों में बन्द और अंधेरे कमरे में ही जहां पंखा चलता हो, इसे लेना लोग पसन्द करेंगे।

इस पट्टी से भी जादू का सा असर होता है। आप जानते हैं कि रीढ़ के अन्दर नाड़ी-संस्थान (nervous system) की जड़ रहा करती है और नाड़ी-संस्थान के ठीक रहने से ही शरीर की सब क्रियाएं ठीक होती हैं। बे-ढंगा खाने-पीने और रहन से उसमें गर्मी आ जाती है जिससे बहुत सी खराबियां पैदा होती हैं। इस गर्मी को दूर कर रीढ़ को मजबूत करने के लिए रीढ़ पर यह गीली पट्टी बहुत अच्छी है। एक आदमी को, जिसे १० वर्षों से अजीर्ण और कब्ज की शिकायत रहती थी, पट्टी के हर रोज बाद साफ पाखाना होने लगा और कुछ ही दिनों में भूख खुल कर लगने लगी। कहने की जरूरत नहीं कि वह खाने के नियमों का भी पालन करता था। जिन्हें नाड़ी-संबंधी कमजोरी है, नींद बिलकुल नहीं या अच्छी नहीं आती, सिर में दर्द सा रहता है या यों भी जो तनदुरुस्ती को अच्छा रखना चाहते हैं, उनके लिए रीढ़ की पट्टी बहुत लाभदायक है। गर्दन-तोड़ बुखार (cerebro spinal meningitis) में इससे बहुत लाभ होता है।

यों तो यह पट्टी जभी जरूरत मालूम हो तभी ली जा सकती है लेकिन मामूली तौर से तनदुरुस्ती को ठीक रखने और फायदा के लि

दोपहर के खाने के एक घंटे बाद इसको लेना बहुत अच्छा है। गर्मी के दिनों में, जब कि स्कूल कालेज या दफ्तर सुबह में ही होते हैं या बन्द हो जाते हैं और सभी लोग दोपहर में सोना पसन्द करते हैं, यों ही न लेट कर इस पट्टी पर लेटना बहुत लाभदायक होगा।

पट्टी के लिए पानी काफ़ी ठंडा हो। यानी की बर्फ़ का इस्तेमाल तभी किया जाय जब कि ठंडा पानी न मिलता हो। इस हालत में भी अगर घड़े में पहले से रखा ठंडा पानी हो तो वह सब से अच्छा है। कमज़ोरों के लिए या ठंडे पानी से डरने वालों के लिए या गर्दनतोड़ बुख़ार में एक दो बार पहले ऐसे पानी में जो न ठंडा हो न गर्म, पट्टी कान भिगोना और निचोड़ना चाहिए। गर्दनतोड़ बुख़ार में, दिन रात में, दो-दो या तीन-तीन घंटों का अन्तर देकर वह पट्टी तीन-चार बार दी जा सकती है।

इस रीढ़ की पट्ट के बदले उपस्थ-स्नान (मेहन नहान) किया जा सकता है। किसी किसी के लिए पट्टी अच्छी होती है और किसी किसी के लिए 'उपस्थ-स्नान'। 'उपस्थ-स्नान' के बारे में आगे बताया जायगा। उपस्थ-स्नान के बदले पट्टी ली जा सकती है।

विशेष स्नान या खास खास नहान

प्राकृतिक चिकित्सा में कई तरह के स्नान या नहान का प्रयोग
इनमें से कुछ जरूरी नहान नीचे बताये जाते हैं :—

कटि-स्नान (कमर-नहान)* —
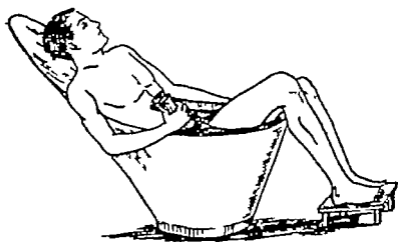
यह लुई कूने का फ्रिक्शन हिप बाथ (Friction hip-bath) है
तस्वीर में दिए हुए टब की तरह एक अच्छा सा टब चाहिए
ऐसा टब इलाहाबाद के बाजार में कोतवाली के पास पहले ढाई-ती
रुपये में मिलता था। दूसरी जगह भी मिलता होगा या बनवाया ज
सकता है। किसी धातु या लकड़ी का यह टब हो सकता है, पर मामू
तौर से लोहे की चद्दर का टब अच्छा है। देहातों में मिट्टी के नाँ
(नाद) से ही काम निकालते हैं, क्योंकि इस नहान में जरूरी बात य
है कि नाभी से लेकर जाँघ से कुछ आगे तक का बदन का सारा हिस्
पानी के अन्दर रहे। पेट का कुछ हिस्सा भी अगर पानी में रहे तो कुछ
हर्ज नहीं लेकिन सीना जिसके अन्दर बाईं तरफ दिल और उसके पा

---

* पहले इसका नाम पेडू नहान था।

टांगो दाहिनी तरफ फेकते हैं, और गर्दन-सिर को पानी से ऊपर रहना चाहिए। इसी तरह घुटनों के ऊपर का कुछ हिस्सा, घुटनों और सारी टांगो को पानी के बाहर रहना चाहिए। पीठ की तरफ अगर पानी कुछ ऊँचा भी पहुँच जाय तो हर्ज नहीं। तस्वीर में दिखाये गये की तरह बिलकुल जमा होकर टब में आराम से बैठना चाहिए। पैरों के आराम के लिए, अगर जरूरी हो तो एक तिपाई या लकड़ी की ऊँची पटरी या ईंट को काम में लाना चाहिए।

पहले से ही एक मोटे चिकने कपड़े के टुकड़े या तौलिये को तहकर और लपेट करके एक गोला सा बना लेते हैं। उसी से पूरे पेड़ू को एक तरफ और ऊपर से नीचे लगातार रगड़ना चाहिए। रगड़ इतने जोर की न हो कि तकलीफ मालूम होने लगे और न इतनी हल्की ही हो कि कुछ भी जोर न मालूम हो। शुरू शुरू में इस नहान को ५ से ७ मिनट तक ही लेते हैं, फिर हर दो-तीन दिनों के बाद एक-एक या दो-दो मिनट बढ़ाते रहना चाहिए। पन्द्रह मिनट तक पहुँच कर कम से कम सात दिन आगे न बढ़ना चाहिए। इसके बाद फिर समय को धीरे धीरे बढ़ाना चाहिए। ज्यादा से ज्यादा आध घंटे का समय काफी है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, समय को धीरे धीरे बढ़ाना चाहिए। जल्दबाजी करना ठीक नहीं। गर्मी के दिनों में या अगर रोगी सबल है तो, पहले दिन से ही १० मिनट का नहान शुरू कर सकते हैं।

मामूली तौर पर तनदुरुस्ती ठीक रखने की गरज से एक मामूली तनदुरुस्त आदमी के लिए सबेरे या शाम को एक बार २० मिनट का कमर-नहान काफी होगा।

शुरू बुखार की हालत में दो-तीन दिन सुबह शाम ७-७ मिनट का (गरमी में १०-१० मिनट तक का) नहान (अगर रोगी कमजोर हुआ तो ५ मिनट का ही) लेना चाहिए। बुखार छूट जाने के बाद भी ५-७ दिन तक उसे जारी रखना चाहिए। अगर बुखार में परेशानी बढ़ने लगे

तो पहले दिन से ही तीन नहान दिन भर में दे सकते हैं। अगर रोगियों को भी ज्यादा तेज बुखार की हालत में दो तीन घंटे का फ़र्क देकर तीन तीन मिनट का नहान देते हैं। तेज बुखार की हालत में दिन में छः छः बार तक नहान दिये जा सकते हैं।

पानी के अन्दर पेड़ू का मलना कोई खतरनाक बात नहीं है, लेकिन बदन में ठंड पहुँच जाने के बाद फिर से गर्मी का आ जाना जरूरी है। इस लिए नहान के बाद ही बदन का अच्छी तरह पोंछकर कमज़ोर रोगियों को बिस्तर पर लिटा देते है और ऊपर से काफ़ी गरम कपड़े डालते हैं। इस तरह गरम कपड़ा ओढ़ कर लेटे रहना आध घंटे के लिए काफ़ी होगा। जिनके बदन में गर्मी जल्द नहीं आती उनके पेड़ू पर फलालैन या किसी भी ऊनी कपड़े को लपेट कर ऊपर से रजाई या कम्बल डाल देना चाहिए। जो ज्यादा कमज़ोर नहीं है उसे गर्म कपड़े पहन या ओढ़कर जितनी तेज़ी से बन सके टहलना चाहिए। जो कसरत कर सकता है उसे या तो बिलकुल नंगा या हल्के कपड़े पहनकर अपनी ताकत भर कसरत करनी चाहिए। गर्मी के दिनों में गरम कपड़े पहनने की जरूरत नहीं है। इस नहान के बाद बदन पर पसीना का आना बहुत अच्छा समझा जाता है, लेकिन कमज़ोर रोगियों को ऐसी कोई भी हरकत न करनी चाहिए, जिससे थकान हो। उनके लिए इतना ही काफ़ी है कि बदन में गर्मी आ जाय। किसी भी हालत में पसीने के लिए चिंता न करनी चाहिए।

मामूली तौर पर जीर्ण रोगों का, खास कर अपच के किसी प्रकार को, दूर करने के लिए सबेरे और शाम दोनों ही समय कमर-नहान अच्छा रहता है। नहान के बाद एक समय शक्ति भर कसरत और दूसरे समय टहलना अच्छा रहता है। दोनों बार सिर्फ़ टहलना भी अच्छा है।

इस नहान को ऐसे बन्द कमरे में, जहाँ थोड़ी सी साफ हवा भी हती हो, लेना चाहिए।

माता बच्चे को कमर-नहान दे रही है

अब सवाल यह है कि पानी कितना ठंडा हो। जितनी भी ठंड आसानी से सही जा सके ठीक है। जाड़ों में कमजोर रोगियों के

लिए ठंडे पानी में बहुत थोड़ा गरम पानी मिलाकर ठंड को मार देते हैं। उसे गरम न करना चाहिए। साधारण हालत में पहले नल ए कुएँ के ताजे पानी से काम लेना चाहिए। फिर धीरे धीरे ज्यादा ठंडा पानी इस्तेमाल करना चाहिए। गर्मियों में या वैसे भी घड़ों में पहले से पानी भर कर और घड़ों को रेत पर रख कर पानी को तैयार करना जरूरी होता है। जब किसी भी तरह ठंडा पानी न मिले तो थोड़ा बर्फ मिला कर पानी का ठंडा कर लेते हैं। ज्यादा बर्फ मिलाने से पानी जल्द गरम हो जाता है और गरम पानी से तो अपना काम निकल ही नहीं सकता। यहाँ तो कमर के पास के नाड़ी-जाल को ठंडा और उत्तेजित करना और बदन के अन्दर की दाह को, जो कि ज्यादातर पेट में ही रहती है, शान्त करना है—इसलिए पानी जितना ठंडा हो अच्छा है।

अगर पानी ठंडा नहीं है तो उससे लाभ न होगा। हाँ कमजोर रोगियों को अभ्यास डालने के लिए शुरू-शुरू में कम ठंडा पानी ठीक होता है। मोटे, चर्बीदार पेट वाले आदमी के लिए काफी ठंडा पानी चाहिए।

जाड़ों में भी अगर कमरे के अन्दर एक या दो बिल्कुल गरम कोयलों की (जिसमें धुआँ न हो) अंगीठी टब के पास रख ली जावें तो ठंडे पानी से आराम मिलता है। अगर अंगीठी न मिले तो ऊपर से एक कम्बल इस तरह डाला जा सकता है कि वह पीठ की तरफ से आकर बीच में ऊपर को उठता हुआ पैर के नीचे दबा रहे। यह इस तरह किया जाता है—टब के पीछे एक कुर्सी रखिए। उस कुर्सी पर ईंट के सहारे कम्बल का एक सिरा दबा कर कम्बल को सिर के ऊपर से पैर की तरफ से दूसरे को या तो पैरों के नीचे दबा दीजिए या उधर भी एक दूसरी कुर्सी रख कर ईंट के सहारे कम्बल को ठीक ठीक रख दीजिए। इसी हालत में कमजोर रोगियों को स्नान लेना चाहिए।

किसी किसी कमज़ोर रोगी के पैर ठंडे रहते हैं। इनके लिए गरम मोज़े पहन कर या पैर पर गरम कपड़ा डाल कर कमर-नहान ठीक होगा। बहुत कमज़ोर रोगियों के लिए और मैलेरिया बुखार में अच्छा होगा कि साथ ही 'पैरों का गरम-नहान' (आगे देखो) भी दिया जाय। जैसा कि ऊपर बताया गया है, सीना न भीगे।

कमर-नहान में बदन का ढकना

इस नहान का सभी इलाज के शुरू में कुछ दिनों तक लेना चाहिए। बुखार के शुरू में अगर यह नहान लिया जाय तो दो-तीन नहान के, या कभी कभी तो पहले ही नहान के, बाद बुखार भाग जाता है। जितने भी बुखार होते हैं शुरू शुरू में मामूली होते हैं। आगे चल कर वे या तो टाइफायड (मियादी) या निमोनिया आदि या चेचक के या गदनतोड़ बुखार या और किसी बीमारी का रूप धारण करते हैं। अगर शुरू में ही कमर-नहान या सारे शरीर को गीली पट्टी से काम लिया जाय तो कोई भी उपद्रव न हो। हां, मैलेरिया में कुछ और उपचार की आवश्यकता होती है। यह आगे बताया जायगा।

यह पूछा जा सकता है कि बुखार में कब कमर-नहान और कब सारे बदन की गीली पट्टी लेनी चाहिए। इसके लिए कोई खास नियम नहीं है। हां, अगर सारे बदन में बहुत जलन हो, जैसी कि लू में या चेचक निकलने के पहले वाले बुखार में होती है, तो गीली पट्टी से बहुत आराम मिलता है। जब सारे शरीर की सतह पर असर डालना हो तो सारे शरीर की गीली पट्टी ही अच्छी होती है। अगर टब न मिल सके तो हर हालत में गीली पट्टी ही ठीक होगी। अगर बुखार बहुत तेज हो और बदन में जलन हो, जैसी कि चेचक के बुखार में होती है, तो ४-५ घंटों का अन्तर देकर दोनों लेना चाहिए। बस यह कि उपवास के साथ साथ कोई भी क्रिया करनी नाम या सिर्फ दूध ही ले कर पेट साफ कर लिया जाय तो वह बीमारी की कमर तोड़ देती है और आगे कुछ भी खतरा नहीं होता। खतरा या गड़बड़ी तो तब होती है जब कि गरम दवाएं भोंकी जाती हैं और दवाओं की गर्मी शान्त करने के लिए दूध या साबूदाना या और कुछ खिलाया-पिलाया जाता है।

किसी भी पुराने रोग में, उचित आहार (आकारदार आटे की मामूली रोटी या बे-कुटे चावल का भात और लौकी, परवल, नेनुआ आदि हरी की सादी पकी तरकारी या सिर्फ फल या सिर्फ भाजी-तरकारी, ज़रूरत के अनुसार) के साथ पहले एक महीने तक सुबह-शाम कमर-नहान लेना चाहिए। सैकड़े पीछे ५० पुराने रोग तो इसी से जाते रहेंगे, लेकिन कुछ पुराने रोग बहुत हठी होते हैं। उनको दूर करने के लिए और कई नहान और क्रियाएँ जरूरी होती हैं। इनमें एक नहान 'उपस्थ-स्नान' (पहले संस्करणों का 'मदन नहान') है, जो अभी आगे बताया जायगा।

कमर-नहान से कमर के पास का नाड़ी-जाल, जो शरीर को ठीक हालत में रखता है, जाग उठता है, और पेट के अन्दर के अंगों का काम पूरे ठीक होते हैं। पेट के अन्दर छोटी आंत और बड़ी आंत है। इन

पचे भोजन के रस खींचती है और बड़ी आंत भोजन के बचे बेकार (विकार या मल) को पाखाने के रूप में बाहर निकालती है। इन का काम ठीक होना चाहिए। खासकर अगर बड़ी आंत के रास्ते शरीर न्दर का विकार बाहर न निकल जाय तो अनेक गड़बड़ी पैदा होती पेशाब निकलने वाले कल पुर्जों को भी पेड़ू से सरोकार है। बेका रहन-सहन और खान पान से पाखाना-पेशाब ठीक ठीक नहीं होता, स पेड़ू के अन्दर विकार और गर्मी जमा रहती है। फिर यहीं से र दूसरे दूसरे रूपों में फैल कर शरीर के दूसरे हिस्सों में जा बसते जिससे तरह तरह की बीमारियां होती हैं। इसलिए कमर नहान से पेड़ू की ही गर्मी नहीं सारे शरीर की गर्मी दूर होती है। बुखार में से ज्यादा गरम शरीर का यही हिस्सा रहता है। इस हिस्से में बहुत दा गर्मी रहने से कभी कभी और हिस्सों में ठंडक आ जाती है और हालत में जाड़ा-बुखार कहते हैं। कमर-नहान लेने का मतलब है कि गर्मी की जड़ को ही ठंडा किया जाय, और इस नहान से, । कि ऊपर बताया गया है, और हिस्सा से भी विकार खिंच पेड़ू में वापस आ जाता है और पेशाब के रूप में बाहर निकल ता है।

लेकिन कमर-नहान से असल लाभ कुछ और होता है। कमर प नाड़ियों के गुच्छे रहते हैं। ये सब ठंडे और सजीव हो जाते हैं र इसका प्रभाव सारे शरीर पर पड़ता है। असल में यह कमर का नहान (hip bath) है पर लाभ कमर और पेड़ू दोनों का ता है।

कमर नहान या किसी भी नहान के साथ भोजन का परहेज जरूर। लोग पूछेंगे कि ऐसा क्यों है। परहेज इसलिए चाहिए कि विकारों निकलते समय ऐसा न हो कि बाहर से नए विकार आते रहें।

चिकित्सा के दिनों में वायुविकार बढ़ाने वाली चीजों को भी न ना चाहिए। अन्न में दाल, भाजियों में अरबी (घुइयाँ, पेरवी)

टब इतना बड़ा अवश्य हो कि एक स्टूल रक्खा जा सके और लगभग २० सेर पानी आ जाय। अगर टब छोटा होगा तो पानी गरम हो जायगा।

मर्दों के लिए इस नहान की वही विधि है जो स्त्रियों के लिए स्नान करने वाले पुरुष को चाहिए कि वह इन्द्री को बन्द कर फिर जिन उँगलियों से सुभिता हो उनके उसके अगले हिस्से के चमड़े बायें हाथ से खींच कर पानी के भीतर ले जाय और दायें में ले कर उससे उस (आगे के चमड़े को) लगातार ऊपर से नीचे रगड़ कर धीरे धीरे धोये। इन्द्री का बिल्कुल आगे का हिस्सा, सिचा हुआ चमड़ा ही, धोना इस नहान में जरूरी है। इसलिए खिंचे हुए चमड़े को सामने से बिलकुल नहीं पकड़ना चाहिए। एक तरफ से उँगलियों के सहारे इस तरह चमड़ा खींचना चाहिए इस हिस्से को अच्छी तरह धोया जा सके।

मुसलमानों को यह ऊपरी चमड़ा खतने के समय काट दिया जाता है। उनको इस तरह बैठना चाहिए कि वे उस हिस्से को तौलिए रगड़ सकें जो गुदकाद्वार और पाखाने के रास्ते के बीच है।

जो रोगी भीतर की सूजन से बीमार हैं या जिनके भीतरी पुराने रोग के कारण विकार आ गया है उनको भीतरी दूसरे नहान के बाद ही नीचे खिसक कर जननेन्द्रिय के दोनों तरफ आ है। इससे घबड़ाना न चाहिए। नहान को जारी रखना चाहिए और उस जगह पर मिट्टी की पट्टी (आगे देखिए) और भाप-नहान चाहिए।

सवाल यह है कि इस नहान के लिए जननेन्द्रिय को ही क्यों चुना गया। सच्ची बात यह है कि नहीं इस काम के लिए इससे बढ़ कर कोई भी दूसरी जगह नहीं है। शरीर के भी हिस्से में खास खास नाड़ियों के इतने सिरे हैं, जितने जन के इस हिस्से में। इसका धोना सारे शरीर पर उसका असर

है। जननेंद्रिय को धोने से भीतर बढ़ी हुई गर्मी केवल कम ही नहीं हो जाती बल्कि नाड़ी संस्थान में भी ताजगी आ जाती है। इससे शरीर के सभी हिस्सों में जीवन-शक्ति पहुँचती है। तनदुरुस्ती के लिए दो ही बातें जरूरी हैं—भोजन का ठीक ठीक पचना और नाड़ी-संस्थान का ठीक हालत में रहना। सो ये दोनों बातें कमर-नहान और उपस्थ स्नान से हो जाती हैं।

ऊपर बताया गया है कि टब में तिपाई रख और उसी पर बैठ कर यह नहान को लेना चाहिए, पर क्या बिना टब के यह नहान नहीं लिया जा सकता? जरूर लिया जा सकता है। जिस तरह भी बिना पैरों को भिगोए जननेन्द्रिय का अगला बाहरी भाग धुल जा सके धोना चाहिए। एक कुर्सी या चौकी पर बैठ और अपने बिलकुल पास सामने
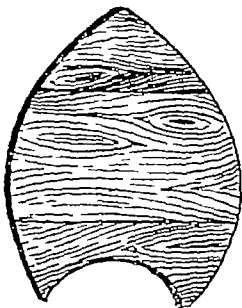
उपस्थ-स्नान के लिए काठ की पटरी

एक बड़ी बाल्टी रख कर भी वही काम हो सकता है। ध्यान सिर्फ यह रहे कि पानी उछल उछल कर पैरों पर न पड़े। टब में ही तिपाई रखने

के बदले तस्वीर में दी हुई पटरी की तरह काठ की पटरी इस्तेमाल की जा सकती है। इस पटरी पर बैठ कर आगे के आधी गोलाई के घेरे हिस्से में जो पानी दिखता रहता है उसी में इन्द्री को डुबो कर या न रखकर उपस्थ-स्नान लिया जा सकता है। जो रोगी बहुत कमजोर है उसके लिए अच्छा होगा कि लेटे रहने की अवस्था में ही एनीमा की टोंटी से उसके जननेन्द्रिय पर पानी की धार छोड़ी जाय। पानी लगातार गिरता रहे और वह जाय या किसी बर्तन में जमा हो। रोगी के नीचे मोमजामा या कायम पलास रखना चाहिए। उसके पैर न भीगें।

इस नहान के बारे में भी वही नियम लागू हैं जो कमर-नहान के लिए बताए गये हैं।

पूछा जा सकता है कि किन हालतों में कमर-नहान और किन हालतों में उपस्थ-स्नान लिया जाता है। बात यह है कि बहुत हालतों में दोनों साथ-साथ चलते हैं। पुराने रोगों में पहले तीन हफ्ते या दो महीना सुबह-शाम कमर-नहान और इसके बाद सुबह को कमर-नहान और शाम को उपस्थ-स्नान या सुबह को उपस्थ स्नान और शाम को कमर नहान लेते हैं। औरतों की बीमारियों में कुछ दिनों तक दोनों नहान लेकर सिर्फ उपस्थ-स्नान को ही दोनों समय जारी रखना होता है। किसी भी हालत में, जैसे चेचक में जब कि पेड़ू पर भी दाने निकले हों, या किसी हालत में जब कि कमर-नहान लेना न बने तो सिर्फ उपस्थ-स्नान से ही काम लेना चाहिए। नाड़ी की खराबियों में, नींद न आने की हालत में, सिर में बेचैनी रहने की हालत में, मृगी और पागलपन इत्यादि रोगों में उपस्थ-स्नान बहुत फायदे का होता है।

उपस्थ-स्नान के बदले या उसके साथ साथ रीढ़ की गीली पट्टी, जो पहले बतलाई जा चुकी है, बहुत फायदे के साथ ली जा सकती है। इन सब नहान या गीली पट्टी के इस्तेमाल में यह देखना चाहिए कि रोगी पानी से घबराता है या नहीं और अगर घबराता है तो कितना घबराता

है। फिर उसी के अनुसार काम करना चाहिए। पानी के इस्तेमाल से ख़राबी तो नहीं होती, पर पहले एक-दो बार रोगी का मिज़ाज और ख़्वाहिश देखना भी ज़रूरी है।

कमर-नहान और उपस्थ-स्नान के सम्बन्ध में इन बातों का ख़याल रखना चाहिए—(१) बँधे समय पर ये नहान हर रोज़ लिए जायँ। (२) इन नहानों के दो घंटे बाद या पहले मामूली स्नान कर सकते हैं। लेकिन चिकित्सा के लिए पहले यह नहान लेकर और तब दो घंटे के बाद मामूली तौर पर नहाना चाहिए। मज़बूत आदमी, या तनदुरुस्ती बनाए रखने के लिए यह नहान लेते हैं, मामूली तौर पर नहाने के बाद तुरन्त ही कमर-नहान या उपस्थ-नहान ले सकते हैं, लेकिन रोगियों और कमज़ोरों के लिए दोनों नहानों में अन्तर देना ज़रूरी है। इन नहानों के एक घंटे बाद भोजन कर सकते हैं, पहले नहीं। (३) नहान के बाद पानी पी सकते हैं, पर बहुत ठंडा नहीं। (४) भोजन के कम से कम दो घंटे बाद नहान लेना चाहिए। लेकिन अगर भोजन के बाद कोई तकलीफ़, ख़ासकर पेट की, शुरू हो जाय तो दो घंटे से पहले भी ये स्नान लिए जा सकते हैं। (५) नहान के दिनों में भोजन पर बहुत ख़याल रखना चाहिए। मिर्च मसाले, प्याज़-लहसुन और तेल की पकी चीज़ या और गरम चीज़ जैसे चाय, कहवा और तम्बाकू का व्यवहार बिल्कुल मना है। (६) ब्रह्मचर्य का पालन ज़रूरी है। (७) जब बदन ठंडा रहे तो कोई नहान न लेना चाहिए। बदन को रगड़ कर या गरम कपड़े से ढक कर गरम कर लीजिए।

ठंडा बैठक-नहान—

ऊपर बताए गए नहान जर्मनी के मशहूर चिकित्सक लुई कूने के निकाले हुए हैं। आजकल के प्राकृतिक चिकित्सक एक प्रकार के मामूली बैठक-नहान से काम लेते हैं और इसे भी वे सिज़-बाथ (sitz bath) कहते हैं। इसमें एक ऐसे मामूली गोल टब में बैठा जाता है, जिसमें ४-५

के बदले तस्वीर में दी हुई पटरी की तरह काठ की पटरी इस्तेमाल की जा सकती है। इस पटरी पर बैठ कर आगे के आधी गोलाई के हिस्से में जो पानी दिखता रहता है उसी में इन्द्री को डुबो कर या पास रखकर उपस्थ-स्नान लिया जा सकता है। जो रोगी बहुत कमज़ोर है उसके लिए अच्छा होगा कि लेटे रहने की अवस्था में ही एनीमा की टोंटी से उसके जननेन्द्रिय पर पानी की धार छोड़ी जाय। पानी लगातार गिरता रहे और बह जाय या किसी बर्तन में जमा हो। रोगी के नीचे मोमजामा या ऐसा ही पदार्थ रखना चाहिए। उसके पैर न भीगें।

इस नहान के बारे में भी वही नियम लागू हैं जो कमर-नहान के लिए बताए गये हैं।

पूछा जा सकता है कि किन हालतों में कमर-नहान और किन हालतों में उपस्थ-स्नान लिया जाता है। बात यह है कि बहुत हालतों में दोनों साथ-साथ चलते हैं। पुराने रोगों में पहले तीन हफ़्ते या एक महीना सुबह शाम कमर-नहान और इसके बाद सुबह का कमर-नहान और शाम का उपस्थ-स्नान या सुबह का उपस्थ-स्नान और शाम का कमर-नहान लेते हैं। औरतों की बीमारियों में कुछ दिनों तक दोनों नहान लेकर सिर्फ़ उपस्थ-स्नान को ही दोनों समय जारी रखना होता है। किसी भी हालत में, जैसे चेचक में जब कि पेड़ू पर भी दाने निकले हों, या किसी हालत में जब कि कमर-नहान लेना न बन तो सिर्फ़ उपस्थ-स्नान से ही काम लेना चाहिए। नाड़ी की खराबियों में, नींद न आने की हालत में, सिर में बेचैनी रहने की हालत में, मृगी और पागलपन इत्यादि रोगों में उपस्थ-स्नान बहुत फ़ायदा करता है।

उपस्थ-स्नान के पहले या उसके साथ साथ रीढ़ की गीली पट्टी, जो पहले बतलाई जा चुकी है, बहुत फ़ायदे के साथ दी जा सकती है। इन सब नहान या गीली पट्टी के इस्तेमाल में यह देखना चाहिए कि रोगी पानी से घबराता है या नहीं और अगर घबराता है तो कितना घबराता

है। फिर उसी के अनुसार काम करना चाहिए। पानी के इस्तेमाल से खराबी तो नहीं होती, पर पहले एक-दो बार रोगी का मिजाज और तबीयत देखना भी जरूरी है।

कमर-नहान और उपस्थ-स्नान के सम्बन्ध में इन बातों का खयाल रखना चाहिए—(१) बँधे समय पर ये नहान हर रोज लिए जायँ। (२) इन नहानों के दो घंटे बाद या पहले मामूली स्नान कर सकते हैं। लेकिन चिकित्सा के लिए पहले यह नहान लेकर और तब दो घंटे के बाद मामूली तौर पर नहाना चाहिए। मजबूत आदमी या तनदुरुस्ती बनाए रखने के लिए यह नहान लेते हैं, मामूली तौर पर नहाने के बाद तुरन्त ही कमर-नहान या उपस्थ-नहान ले सकते हैं, लेकिन रोगियों और कमजोरों के लिए दोनों नहानों में अंतर देना जरूरी है। इन नहानों के एक घंटे बाद भोजन कर सकते हैं, पहले नहीं। (३) नहान के बाद पानी पी सकते हैं, पर बहुत ठंडा नहीं। (४) भोजन के कम से कम दो घंटे बाद नहान लेना चाहिए। लेकिन अगर भोजन के बाद कोई तकलीफ, खासकर पेट की, शुरू हो जाय तो दो घंटे से पहले भी ये स्नान लिए जा सकते हैं। (५) नहान के दिनों में भोजन पर बहुत खयाल रखना चाहिए। मिर्च-मसाले, प्याज-लहसुन और तेल की पकी चीज या और गरम चीज जैसे चाय, कहवा और तम्बाकू का व्यवहार बिल्कुल मना है। (६) ब्रह्मचर्य का पालन जरूरी है। (७) जब बदन ठंडा रहे तो कोई नहान न लेना चाहिए। बदन को रगड़ कर या गरम कपड़े से ढक कर गरम कर लीजिए।

ठंडा बैठक-नहान—

ऊपर बताए गए नहान जर्मनी के मशहूर चिकित्सक लुई कूने के निकाले हुए हैं। आजकल के प्राकृतिक चिकित्सक एक प्रकार के मामूली बैठक-नहान से काम लेते हैं और इसे भी वे सिट्-बाथ (sitz bath) कहते हैं। इसमें एक ऐसे मामूली गोल टब में बैठा जाता है, जिसमें ४५

इंच गहरा ठंडा पानी रहे। रोगी इस तरह बैठ जाय कि पैर, मूत्र और जननेन्द्रिय (बहुत कुछ) पानी में रहें और घुटने पानी के बाहर ऊपर उठे रहें। टब में बैठने के बाद ही घुटनों को अगल-बगल फैलाते हुए हाथों से पेड़ू पर पानी छिड़कना चाहिए और तब दोनों हाथों से पेट को तेजी से रगड़ना चाहिए। फिर पानी में डूबे अंगों को हाथों से खूब रगड़ना चाहिए और तब पानी से निकल कर तौलिए से बदन पोंछ लेना चाहिए। सबल आदमी हाथ से ही शरीर को रगड़-रगड़ कर पानी को सुखा सकते हैं। इस नहान को २ या ३ मिनट से शुरू कर के १०-१२ मिनट तक ले जा सकते हैं। पानी सहन के लायक ठंडा हो, पर जितना ठंडा हो उतना अच्छा होगा।

इस नहान से शरीर के निचले हिस्से के अंग पुष्ट, खासकर जननेन्द्रियों, की हालत सुधरती है। पुराने रोगों में कमर-नहान और उदर-स्नान के पहले यह नहान सुबह में लिया जा सकता है।

गरम और ठंडा बैठक-नहान—

इस नहान में दो टबों में से एक में ४-५ इंच गहरा गरम पानी और दूसरे में उतना ही ठंडा पानी रखकर पहले गरम पानी वाले टब में २, ३ या ४ मिनट और तब १ मिनट के लिए ठंडे पानी वाले टब में बैठना चाहिए। इसी तरह दो-तीन बार बारी-बारी से गरम और ठंडे पानी में बैठना चाहिए। बैठने का ढंग वही रहे जैसा कि ठंडे बैठक-नहान के लिए बतलाया गया है, लेकिन इसमें शरीर को बहुत हल्के हल्के या नहीं रगड़ना चाहिए।

यह नहान उन रोगों में, जिनमें कठिनाई के साथ मासिक होता है, गुर्दे और पेशाब की थैली में तकलीफ की हालत में या बुरे पेट-दर्द में, विशेषकर लाभदायक होता है। इसे मामूल रात में सोने से पहले लेना चाहिए, लेकिन कम से कम एक घंटे का अंतर खाना और नहान में रहना हो।

मेरी राय में पैर को बाहर निकाल कर ही, जिस तरह कमर-नहान में बैठा जाता है बैठना चाहिए। इस तरह के नहान को गरम और ठंडा कमर-नहान कहेंगे।

गरम और ठंडा कमर-नहान वैसी हालतों में बहुत लाभदायक होता है, जब कि पेट या आंतों में किसी तरह की अदरूनी जलन या सूजन रहती है। ऐसे नहान की कुछ ही दिनों जरूरत होती है। मंदाग्नि में ४ ५ दिन इस तरह के नहान के बाद मामूली (ठंडा) कमर-नहान से विशेष लाभ होता है। बीच बीच में २ १ दिन गरम और ठंडा नहान से लेना चाहिए।

टाँगों या पैर का गर्म-नहान—

पुराने या नए रोगों में जब कि हल्का हल्का दर्द बना रहता हो या बहुत कमजोरी मालूम होती हो और पैर ठंडे रहते हों तो रात में सोने से पहले और सुबह में बहुत सबेरे पैरों के गम-नहान से बहुत लाभ होता है। इसके लिए दो बाल्टी या ऐसे बर्तन चाहिए, जिनमें टखनों के कुछ ऊपर तक पैर आ सकें। इन बर्तनों में पहले से ऐसा गरम पानी रखना चाहिए, जिसे रोगी बर्दाश्त कर सके। फिर उसमें ज्यादा गरम पानी मिला देना चाहिए। पानी इतना गरम कभी न हो कि पैर जल जायँ। यह नहान ५ १० मिनट से लेकर १५ २० मिनट तक लिया जा सकता है। नहान के समय चेहरा छोड़ कर रोगी के सारे शरीर को अच्छी तरह ढके रखना चाहिए। नहान के बाद ठंडे पानी में भिगोए हुए कपड़े से पैरों को पोंछ देना चाहिए। उगलियों के बीच में पानी न रह जाय। अगर बदन में पसीना आ गया हो तो उसे भी पोंछना चाहिए। जिस कपड़े से शरीर ढका जाय वह इस तरह शरीर पर रखा जाय कि गदन से नीचे का सारा अंग और पानी का बर्तन भी अच्छी तरह ढक जाय। पानी बिस्तर पर न गिरे, इसका ख्याल रखना चाहिए।

धूप और भाप से काम लेना

धूप बड़े काम की चीज़ है। यह कुदरत की दवा है, लेकिन खेद है कि हम उससे लाभ नहीं उठाते। चमड़े की बीमारियों में, गठिया वगैरह के दर्दों की हालत में और उन हालतों में, जिनमें शरीर में जगह-जगह गोल गोल गाँठें और गुमड़ियाँ हो जाती हैं, धूप-नहान से बहुत फ़ायदा होता है।

तनदुरुस्ती की हालत में भी अगर हर रोज़ थोड़ी देर के लिए हमारे शरीर में धूप और हवा लगे तो बहुत अच्छा हो।

धूप से जीवन-शक्ति मिलती है और रोगों के कीड़े भी मरते हैं। धूप से विटामीन 'डी', जिसके बिना बच्चों को सूखा रोग होता है, मिलता है।

धूप नहान—

धूप-नहान के लिए ज़मीन पर या तख़्त या खाट पर चटाई या दरी या कम्बल डाल कर उस पर ऐसी जगह लेटिए, जहाँ धूप तो काफ़ी हो पर हवा तेज़ न हो और जहाँ आप नंगे लेट सकें। सिर को कपड़े या छतरी से अच्छी तरह ढक लीजिए और जितनी देर इच्छा हो और अच्छा मालूम हो धूप में लेटे रहिए। पसीना निकल आए तो बहुत अच्छा है, लेकिन शुरू-शुरू में ही पसीना निकालने के लिए ज़बरदस्ती कर के बहुत देर तक धूप में न रहिए। तीन-चार बार के धूप-नहान में पसीना ज़रूर निकलने लगेगा। बात यह है कि धूप से रोग के लिए दवा मिलने के अलावा शरीर के अन्दर का विकार भी उभड़ता है। इसलिए शुरू शुरू में उतावला न होना चाहिए। विकार को उभाड़ना और उसको बाहर निकाल देना ज़रूरी है, पर शुरू में ही जल्दबाज़ी न करनी चाहिए। गर्मियों में पहले तीन चार बार तक ७ से १० मिनट के लिए और जाड़ों में १० मिनट के लिए धूप-नहान

काफ़ी होगा। फिर दो घंटे या घंटे तक धूप-नहान का आनन्द ले सकते हैं। कमज़ोरी की हालत में गर्मियों में इसे ३ मिनट और जाड़ों में ७ मिनट से शुरू करना चाहिए।

ऐसा धूप-नहान, जिसमें शरीर से खूब पसीना निकलता है, हफ़्ते में एक बार या ज़्यादा से ज़्यादा दो बार लेना चाहिए। लेकिन थोड़ी देर का धूप नहान, जिसमें शरीर को ढँकने की ज़रूरत नहीं है, हर रोज़ (खासकर जाड़ों में) लाभ के साथ लिया जा सकता है।

पिछले साल लेखक एक बच्चे का इलाज कर रहा था। उसको जाड़ा-बुखार सता रहा था। दो हफ़्ते के उपवास, एनीमा प्रयोग पैरों के गरम-नहान और कमर-नहान से बुखार का वेग बहुत कम हो गया पर हर रोज़ ६६ डिग्री का ताप हो ही जाता था। इसको दूर करने के लिए बच्चे को हर रोज़ ५ ७ मिनट का धूप-नहान उसके बाद पूरा नहान और तब कमर-नहान दिया जाने लगा। एक और कमर-नहान ४ घंटे के बाद दिया जाता था। ऐसा मालूम होता था कि बच्चे के शरीर में लोहा और चूने की कमी है। इस कमी को दूर करने के लिए दिन में पालक की हरी पत्ती का एक छटांक रस शहद के साथ दिया जाता था। बच्चा १० दिन में भला-चंगा हो गया।

कुछ प्राकृतिक चिकित्सकों की, खास कर लूई कूने की, राय है कि धूप-नहान लेते समय सिर को अच्छी तरह ढँकने के अलावा सारे शरीर को केले के पत्ते या या किसी और पत्ते या एक बहुत पतले गीले कपड़े से ढक लेना चाहिए। इससे पसीना अच्छी तरह निकलता है। हरी पत्ती की हरियाली भी दवा का काम करती है। लेखक की राय में ऐसा करना अच्छा है, खास कर जब किसी क्षीण रोग की चिकित्सा चल रही हो।

जाड़ों में धूप-नहान के लिए १२ और २ बजे के बीच दोपहर का समय सब से अच्छा है। गर्मियों में ८ से १० बजे तक सुबह और फिर ३

से ५ बजे तक शाम के समय अच्छे हैं। ख्याल रहे कि लू चलते समय धूप में लेटना या बैठना ठीक नहीं।

ऊपर कहा गया है कि धूप-नहान से शरीर के विकार उभरते हैं, साथ ही शरीर में ज्यादा गर्मी आ जाती है। इस गर्मी को शान्त करने और विकारों को पेड़ में लाकर पेशाब-पाखाने के रूप में बाहर निकालने के लिए धूप-नहान के बाद बन्द कमरे में ठंडे पानी से सिर से जल्दी नहा कर बदन पोंछ लेना चाहिए और पोंछने के बाद शक्ति के अनुसार ७ से २० मिनट का कमर-नहान लेना चाहिए। अगर रोगी बहुत कमजोर है तो, और बहुत थोड़ी देर धूप में रहा है तो, उसे नहाने के बदले गीले कपड़े से सिर और सारा बदन अच्छी तरह पोंछ कर कमर-नहान लेना चाहिए। अगर धूप-नहान ज्यादा देर के लिए हुआ है तो कमर-नहान २० मिनट तक के लिए ले सकते हैं। अगर कमर-नहान के लिए टब नहीं है तो गीले कपड़े की ठंडी पट्टी पेड़ पर २० से २५ मिनट तक दिन में २-३ बार रखना चाहिए। पेड़ू-नहान के बाद कपड़े पहनकर कुछ टहलना या हल्की कसरत कर लेनी या कुछ देर के लिए सिर को ढँक कर फिर धूप में बैठ जाना अच्छा है। ऐसा करने से शरीर में मामूली गर्मी आ जाती है। अगर धूप-नहान के बाद ही कमर-नहान न बन पड़े तो उसी दिन किसी दूसरे समय यह नहान लेना चाहिए। लेकिन कम से कम सिर से नहा लेना या बदन पोंछना जरूरी है।

अगर जरूरत हो तो सारे शरीर को धूप में रखने के बदले किसी खास अंग को धूप में रख सकते हैं। धूप से उठने के बाद उस अंग को गीले कपड़े से पोंछ देना या पानी से धो देना चाहिए। स्थानीय (मुकामी) धूप-नहान में कमर-नहान की जरूरत नहीं।

भाप नहान—

जब धूप न हो या धूप हल्की हो या मैल की मटिया हालत में, रोगों में जबकि तकलीफ ज्यादा हो या पाखाना पुराना हो हालत में और

एक्जिमा और कोढ़ जैसे रोगों में सारे शरीर को या किसी खास अंग को भाप-नहान देते हैं। लेकिन भाप-नहान से ज्यादा कमजोरी होती है। इसलिए सारे शरीर का भाप-नहान हर रोज न लेना चाहिए। किसी खास अंग का भाप नहान हर रोज, और दिन में दो तीन बार भी, ले सकते हैं। पूरा भाप-नहान हफ्ते में एक बार (या अगर रोगी काफ़ी मजबूत है तो ज्यादा से ज्यादा दो बार) लिया जा सकता है। अगर भाप-नहान सारे शरीर का है तो धूप-नहान की तरह, नहान के बाद ठंडे पानी से नहाकर कमर-नहान लेना चाहिए। अगर किसी खास अंग का भाप-नहान है तो सिर्फ़ उसी को धोकर पोंछ देना चाहिए।

जो रोगी हर रोज धूप-नहान लेता है उसे भाप-नहान की कोई खास जरूरत नहीं, पर अगर जरूरत मालूम हो तो हर सात आठ दिन के बाद एक बार भाप-नहान भी फ़ायदे के साथ लिया जा सकता है। उस दिन धूप-नहान न लेना चाहिए।

पूरे भाप-नहान के लिए एक बेंत की बुनी बेंच या मामूली मूंज की खाट चाहिए। उस पर बिना बिस्तर बिछाये रोगी को नंगा लिटाकर ऊपर से कम्बल डाल देना चाहिए। बेंच या खाट के नीचे के हिस्से को पहले ही मोटे कपड़े से चारों तरफ़ इस तरह घेर देना चाहिए कि भाप बाहर न निकले। साथ ही रोगी को बेंत या खाट पर सुलाने के पहले दो स्टोव या जलते कोयलों से भरी अंगीठी पर दो चौड़े खुले मुंह के बरतन गर्म पानी से भरकर बेंच या खाट के नीचे रखना चाहिए। जब पानी खौलने लगे तो रोगी को बेंच या खाट पर सुलाना चाहिए। पानी का एक बर्तन रोगी की पीठ के नीचे (कमर से कुछ ऊपर) और दूसरा घुटनों के नीचे पड़े। लड़कों के लिए कमर के नीचे का एक ही बरतन काफ़ी होगा। रोगी का चेहरा न ढंकना चाहिए। अगर स्टोव या अंगीठी न हो तो अलग चूल्हों पर तीन बर्तनों में पानी खौलाना चाहिए। दो

बर्तन या रोगी के नीचे रहें और एक चूल्हे पर बदलने के लिए तैयार रहे। इस तरह बर्तन को बदल बदल कर काफी भाप पहुँचाई जा सकती

भाप-नहान
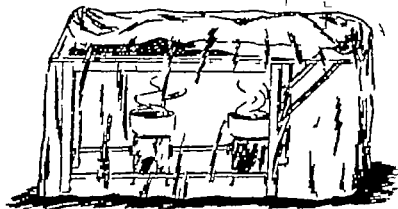
है। १० १५ मिनट भाप लेने के बाद पेट के बल लेट जाना चाहिए, तब पसीना और अच्छी तरह निकलने लगेगा।

इस नहान को ऐसे बन्द कमरे में लेना चाहिए, जहां हवा बहुत कम हो। पसीना आ जाने के बाद, ऊपर बताये ढंग से मामूली नहान और कमर नहान लेना चाहिए। किसी किसी को भाप-नहान से भी सिर में गर्मी आ जाती है। ऐसी हालत में रोगी को खाट से उतारकर उसके सिर और चेहरे पर पानी छोंकना चाहिये और सारे शरीर को नहलाकर टब में बिठा देना चाहिए। लेकिन यह हालत उन्हीं की होती है, जो या तो बहुत कमजोर हैं या जिन्होंने बहुत देर के लिए भाप-नहान लिया है। पहले से ही सिर को गीले मोटे कपड़े से लपेट लेना अच्छा होता है।

भाप-नहान कुर्सी पर बैठकर भी लिया जा सकता है। खौलते पानी का बर्तन शरीर से इतना अलग रहे कि भाप से शरीर न जले। रोगी को कुर्सी पर बैठाकर गर्दन से नीचे सारे शरीर और साथ ही कुर्सी को कम्बल से इस तरह लपेटना चाहिए कि भाप अन्दर से बाहर न

निकले। कुर्सी पर उकडू बैठना अच्छा होता है। तस्वीर में जो बैठने की बेंच दिखाई गई है उस पर बैठकर अगर गर्दन के पास से दो कम्बल इस तरह डाल लिये जांय कि सारा बदन ढँक जाय और बेंच के नीचे का हिस्सा भी चारों तरफ से घिर जाय तो भी बैठे ही बैठे पूरा भाप नहान अच्छी तरह हो सकता है।

भाप-नहान

किसी खास अंग में भाप पहुँचाने के लिए उस अंग को अंगीठी पर रखे बर्तन या पहले से खौलते पानी के बर्तन के ऊपर रखना चाहिए

और ऊपर से कोई मोटा कपड़ा डाल देना चाहिए। चाहे जिस तरह भी हो उस अंग-विशेष में भाप लगनी चाहिए और वहां से पसीना निकलना चाहिए।

पूरा धूप-नहान या भाप नहान उन रोगियों को न देना चाहिए जिनके कोई दिमागी रोग है या रक्त-चाप (blood pressure) बढ़ा है या दिल की कमजोरी है। फालिज और लकुवे के रोगी को भी शुरू शुरू में यह नहान नहीं देते। बुखार की हालत में भी इन नहानों की जरूरत नहीं, क्योंकि वहां तो प्रकृति (कुदरत) ने खुद ही भाप लगाई है। लेकिन चेचक (बड़ी या छोटी) में, जब कि बुखार कम हो गया हो पर दाने अच्छी तरह नहीं निकले हों, तो भाप-नहान जरूर देना चाहिए। जाड़ा-बुखार में भी भाप-नहान जरूरी होता है लेकिन यह नहान तभी दिया जाय जब कि टेम्परेचर ९९ से ज्यादा न हो। भाप-नहान के बाद पूरा नहान और फिर टब में बैठना भी जरूरी है। किसी तरह की भी बहुत कमजोरी की हालत में, सिर के रोगों में या फेफड़े, दिल या नाड़ी के रोगों में धूप और भाप-नहान खराबी करते हैं।

एडोल्फ़ यूस्ट

जर्मनी-निवासी। इन्होंने सिद्ध किया कि मिट्टी के लेप और पृथ्वी पर स्नान और नंगे पाँव टहलने से बहुत-से रोग चले जाते हैं

मिट्टी को काम में लाना

मिट्टी के प्रयोग से लाभ

मिट्टी इतनी मामूली चीज़ है कि हम उसके फ़ायदों पर ध्यान नहीं देते, लेकिन सच्ची बात यह है मिट्टी पर ही हमारी ज़िन्दगी का बहुत बड़ा हिस्सा बीतता है और मरने के बाद हमारा शरीर मिट्टी में ही मिल जाता है। मिट्टी से ही अनाज पैदा होते हैं, मिट्टी से या मिट्टी की बनी ईंटों से मकान बनते हैं, मिट्टी से जड़ी-बूटी की औषधियां उगती हैं, मिट्टी से हम बर्तन मॉजते हैं, और अपने हाथ इत्यादि धोते हैं। इन दिनों साबुन का इस्तेमाल इस तरह बढ़ गया है कि मिट्टी से हम कम काम लेने लगे हैं, पर सच पूछिए तो कुछ रेत मिली अच्छी मिट्टी से जितना बदन साफ़ और शुद्ध होता है उतना साबुन से नहीं हो सकता। साबुन गन्दी चीज़ है। न मालूम उसके अन्दर कौन कौन चीज़ें रहती हैं। हमें यह भी नहीं मालूम कि उन चीज़ों का खाल के ऊपर कैसा असर होता है, फिर भी उसका व्यवहार हम आँखें बन्द करके करते हैं और बिना मोल मिलने वाली मिट्टी के फ़ायदों की ओर हम कुछ भी ध्यान नहीं देते। गंगा की थोड़ी सी रेत मिली मिट्टी या किसी भी अच्छी जगह की साफ़ मिट्टी को गीला कर बदन में कुछ देर लगाने और फिर उसके बाद नहाने से चमड़े की पुरानी बीमारियां दूर हो जाती हैं। यह ज़रूरी है कि इसके के साथ साथ खाने-पीने का भी परहेज़ हो। खाना ठीक करने से अन्दर से खून साफ़ होता है और मिट्टी लगाने से ऊपर आई हुई ख़राबी दूर हो जाती है।

प्राकृतिक चिकित्सकों के लिए मिट्टी की पट्टी बड़े काम की चीज़ है। मिट्टी (१) अन्दर के पुराने विकार को उभाड़ती है, (२) अन्दर के विकार को बाहर खींच लेती है, (३) सूजन और दर्द में

फ़ायदा पहुँचाती है (४) जलन, ज़हर और तनाव की हालत को दूर करती है और (५) शरीर के अन्दर ज़रूरी ठंडक पहुंचाती है। इसी से प्राकृतिक चिकित्सक प्रायः सभी हालतों में मिट्टी का इस्तेमाल करते हैं।

मिट्टी की पट्टी के लिए अच्छी साफ़ मिट्टी होनी चाहिए। चिकनी मिट्टी या बहुत थोड़ी रेत मिली नदी के कछार की मिट्टी या जिस जगह जैसी भी मिट्टी मिल सके (लेकिन जो साफ़ हो, कुछ गहराई से ली गई हो और जिसमें कंकड़-पत्थर या घास लकड़ी के टुकड़े या किसी तरह की गन्दगी न हो) काम में लाई जा सकती है। मिट्टी को अच्छी तरह चूर कर और उसमें ठंडा पानी मिलाकर उसे आटे की तरह गूंध लेना चाहिए। हाथ लगाना ठीक नहीं। किसी लकड़ी के टुकड़े से काम लीजिए। फिर उसी लकड़ी से मिट्टी उठाकर एक मोटे कपड़े के टुकड़े के टुकड़े पर रखिए और इधर-उधर से कपड़े पर से ही मिट्टी को थाप-थाप कर पेड़ू पर रखने लायक बना लीजिए। मिट्टी कड़ी न रहे और बहुत गीली भी न हो। जिस जगह पर दर्द, जलन, सूजन या और कोई तकलीफ़ हो वहां पर इस गीली मिट्टी को इस तरह फैलाना चाहिए कि मिट्टी की तह आधी इंच से एक इंच तक मोटी हो और उससे वह जगह अच्छी तरह ढँक जाय। फिर उस पर एक सूती कपड़ा रखकर उसके चारों तरफ़ किसी गरम कपड़े का लपेट देना चाहिए। गर्मी में गरम कपड़े की ज़रूरत नहीं। ४०-४५ मिनट के बाद या जभी मिट्टी गरम हो जाय तो पट्टी को अच्छी तरह हटाकर उस जगह को गीले कपड़े से पोंछ देना चाहिए।

कब्ज़, पेट का दर्द, खांसी, बुख़ार और प्रायः सभी बीमारी की हालतों में पूरे पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी देने से बहुत फ़ायदा होता है। जब पेड़ू पर मिट्टी रखी जाय तो मिट्टी पर एक सूखा कपड़ा रखकर ऊपर से गरम कपड़ा रख देना चाहिए या शरीर पर कम्बल या रजाई डाल देना चाहिए। मामूली हालत में हर रोज़ सुबह-शाम एक एक पट्टी

से काम चल जाता है, लेकिन तेज बुखार जैसी हालतों में दिन में कई बार पट्टी बदली जा सकती है। पुरानी बीमारियों में कई दिनों तक सुबह शाम, यानी दिन में दो बार, यह पट्टी दी जाती है। खाने के तुरन्त बाद इस पट्टी का इस्तेमाल ठीक नहीं, कम से कम डेढ़-दो घंटे का अन्तर देना चाहिए।

सख्त कब्ज की हालत में पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी रखने के बाद एनीमा लेने से पेट अच्छी तरह साफ होता है, क्योंकि मिट्टी पुराने मल के खिसकाने में सहायक होती है। पुरानी बीमारियों में इस पट्टी के बाद कमर-नहान भी लेना अच्छा है, लेकिन अगर एनीमा और कमर-नहान दोनों लेना हो तो एनीमा के आध घंटे बाद कमर नहान लेना चाहिए।

अक्सर पुरानी बीमारियों में तकलीफ की जगह पर मिट्टी की पट्टी बांधने से सूजन आ जाती है और दर्द बढ़ जाता है। इससे घबराना न चाहिए क्योंकि इसका मतलब है कि मिट्टी ने विकार को ढीला कर दिया है, जो शरीर के लिए अच्छा ही है। ऐसी हालतों में तुरन्त ही या कुछ देर बाद तकलीफ की जगह भाप देना चाहिए। अच्छी तरह भाप देने से पसीने के रूप में विकार निकल जाता है। गठिया से जब जोड़ों में सूजन आ जाती है या किसी भी अंग में दर्द रहता है तो पहले मिट्टी की पट्टी और फिर भाप देने से बहुत फायदा होता है।

मिट्टी की पट्टी से सभी तरह के फोड़े या तो बैठ जाते हैं या पककर खुद-ब-खुद फूट जाते हैं। किसी भी फोड़े पर मिट्टी की पट्टी दिन रात में दो-तीन या अधिक बार बांधी जा सकती है। सख्त और तकलीफ देने वाले फोड़ों में भाप और मिट्टी की पट्टी दोनों का इस्तेमाल करना चाहिये। जिस जगह की खाल बहुत मोटी है वहां कभी-कभी चीरा लगाने की जरूरत हो सकती है पर चीरा के पहले और बाद भी मिट्टी के प्रयोग से लाभ होगा।

किसी तरह के जख्म पर मिट्टी की पट्टी बांधने से लाभ होता है। खुले जख्म पर मिट्टी देने से न डरिये। आजमा कर देख लीजिए।

पानी से आँत की सफाई

भोजन-प्रणाली और आँतें—

हमारा शरीर कई हिस्सों में बँटा है। इसका एक प्रधान हिस्सा भोजन प्रणाली (alimentary canal) है। यह प्रणाली एक लम्बी नाली की तरह है, जिसका फैलाव मुंह से लेकर पाखाने के रास्ते तक है। इसकी लम्बाई लगभग २७ फुट है। यह प्रणाली तीन हिस्सों में बँटी है। पहला हिस्सा मुंह से लेकर पेट की थैली तक दूसरा हिस्सा छोटी आंत (पेट के बाद से बड़ी आंत के शुरू तक) और तीसरा हिस्सा बड़ी आँत है। बड़ी आंत दाहिनी तरफ कमर की हड्डी के पास से शुरू होता है और ऊपर की ओर जाकर फिर यकृत (जिगर) से प्लीहा (तिल्ली) की ओर आती है। वहां से नीचे की ओर जाकर यह कमर की बाँई हड्डी के पास से पाखाने के रास्ते तक पहुँचती है। इसकी लम्बाई लगभग साढ़े पांच फुट है। अगले पृष्ठ में दिये चित्र को देखिए।

भोजन का पचना और पाखाना होना—

भोजन पहले-पहल मुंह से पेट में आता है। पेट में पाचन-क्रिया शुरू हो जाती है। पेट से भोजन छोटी आँतों में आता है। भोजन का पूरा पाचन छोटी आंत में ही होता है। छोटी आंत ही पचे खाद्य पदार्थ से रस खींच लेती है और यह रस खून के दौरान में भेज दिया जाता है। भोजन का बचा-खुचा अंश जो प्रायः सब रस के निकल जाने के बाद शरीर के किसी काम का नहीं है बड़ी आंत में आ जाता है। अगर कुछ रस बच रहा है तो बड़ी आंत उसे सोख लेती है। और तब उस बचे हुए अंश को बाहर निकाल देती है। यही अंश पाखाना है। यह शरीर के किसी काम का नहीं है और इसका बाहर निकल जाना ही शरीर के लिए हितकर है।
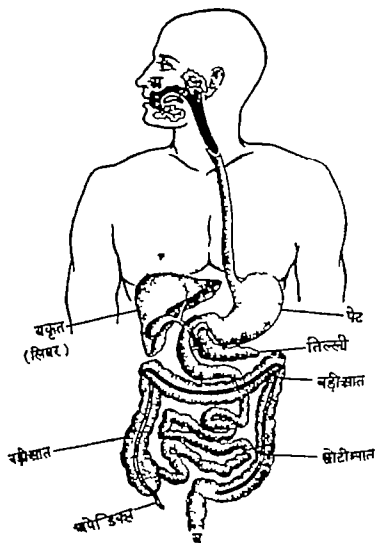
भोजन-प्रणाली

(अ) से (ब) तक भोजन-प्रणाली है। पेट बड़ी आंत और छोटी आंत इसी एक नाली के हिस्से हैं। इस सारी नाली का साफ रखना हमारा कर्तव्य है।

मलज या कोष्ठबद्धता और रोग—

यह स्वाभाविक नियम है कि जो कुछ भी खाया जाता है अपने उदर पर पचकर और शरीर को आवश्यक रस देकर मलरूप में शरीर से बाहर हो जाता है। अनेक कारणों से भोजन का बचा बचाया यह बेकार मल बड़ी आंत में नियमित समय से अधिक देर तक ठहरने लगता है। मल के बाहर निकलने में इसी देर को या उसके पूरा-पूरा न निकलने को कब्ज या कोष्ठबद्धता कहते हैं। अगर बड़ी आंत में यह बेकार पदार्थ ज्यादा देर ठहरा तो वहीं सड़ने लगता है और उसके सड़ने के कारण अनेक विषैले कीटाणु (कीड़े) उसमें पैदा होते हैं। इतना ही नहीं बड़ी आंत में बहुत सी छोटी छोटी गिल्टियां हैं, जो रस डालती हैं। यह गिल्टियां आंत के अन्दर सड़ते हुए मल से जहरीले पदार्थ डालकर खून के दौरान में डाल देती हैं। इससे सारा शरीर जहर से भर जाता है। इससे कैसी कैसी खराबियां हो सकती हैं, पाठक खुद ही समझ सकते हैं। अगर यह कहा जाय कि संसार में जितने भी रोग हैं वे प्रायः सभी इसी एक कारण—अपच और कोष्ठबद्धता—से पैदा होते हैं तो गलत न होगा। जब यह सच है कि ज्यादातर बीमारियों का एकमात्र कारण आंत के अन्दर का विकार है तो इन रोगों का सच्चा इलाज आंत की सफाई से ही शुरू हो सकता है। हमारी बड़ी आंत ठीक वैसी ही है जैसी कि शहर की बड़ी नाली। यदि नाली की सफाई रोज अच्छी तरह हो जाती है तो शहर में बीमारी नहीं फैलती, पर इस नाली में गन्दगी के जमे रहने से शहर में अनेक प्रकार के रोग फैल जाते हैं। पाठक अब समझ गये होंगे कि बड़ी आंत को साफ रखने की कितनी आवश्यकता है।

सफाई के ढंग—

आंत की सफाई स्वाभाविक रूप से मल निकलने से ही होती है, लेकिन जब कब्ज रहे तो यह सफाई दो प्रकार से हो सकती है—(१)

दवाओं के इस्तेमाल से, और (२) पाख़ाने के रास्ते से पानी ऊपर चढ़ा कर।

दवाओं का इस्तेमाल यानी कड़ा या हल्के जुलाब का प्रयोग ठीक नहीं है। विदेशी दवाइयां तो ख़ास कर नुक़सान करने वाली हैं। अगर कोई दवा ली जा सकती है तो वह अपनी देशी सनाय (सना) की पत्तियां, लेकिन उसे भी बार बार इस्तेमाल करना ठीक नहीं। दवा में ख़ुद कोई ताक़त नहीं जो पेट की सफ़ाई कर सके। वह तो शरीर के लिए विजातीय पदार्थ (बेकार चीज़) हो जाता है। शरीर इस विजातीय पदार्थ को अपनी सारी ताक़त से बाहर निकालने का यत्न करता है। इसी कोशिश में आंत से मल भी बाहर हो जाता है। यह दवाइयां अक्सर आंत में उत्तेजना और जलन भी पैदा करती हैं, जिनसे इनका असर होता है। पर बार बार की जलन या उत्तेजना से आंतें कमज़ोर पड़ जाती हैं और अपना मामूली काम नहीं कर सकतीं। जब वे अपना काम अच्छी तरह नहीं कर सकतीं तो पाठक समझ लें कि इसका फल क्या होगा। जिस कारण को दूर करने के लिए दवा दी गई, वह हटने के बदले बढ़ती ही गई। इसलिए दवाओं से पेट की सफ़ाई न करनी चाहिए।

अब आंत से मल निकालने का सिर्फ़ एक ही उपाय रह गया। वह है पाख़ाने के रास्ते से पानी चढ़ाना, अर्थात् शरीर रूपी शहर की बड़ी आंत-रूपी नाली को धो देना। इसी को एनीमा या डूस लेना कहते हैं। असल में यह अन्दरूनी नहान (आभ्यन्तर स्नान) है।

एनीमा का गुण और यंत्र—

एनीमा के यन्त्र से आंत में पानी चढ़ाकर आंत को धोना आंत की सफ़ाई का सब से अच्छा उपाय है। इसके दो तीन फ़ायदे हैं। (अ) बिना किसी प्रकार की उत्तेजना और जलन के आंत की सफ़ाई हो जाती है। (ब) पानी के इस्तेमाल से आंत की नाड़ी-शक्ति बढ़ती है, जिससे

उसकी काम करने की शक्ति भी बढ़ती है। यह प्राकृतिक चिकित्सक को अच्छी तरह मालूम है कि पानी के प्रयोग से शक्ति बढ़ती है और वे इसीलिए अपनी चिकित्सा प्रणाली में पानी के इस्तेमाल को ज्यादा बताते हैं।

एनीमा के यंत्र सवा रुपये से लेकर दो हजार रुपये तक में मिलते हैं, पर आम तौर से डेढ़-दो रुपये वाला यंत्र, जो दीवार से कील के
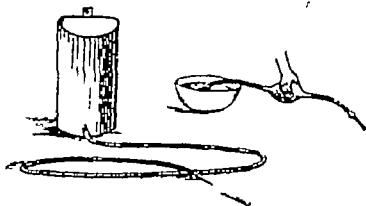
एनीमा के दो तरह के यंत्र

सहारे लटका दिया जाता है जिसमें रबड़ की एक नली लगी रहती है और जिसके अगले हिस्से को पाखाने के रास्ते में रख कर पानी आंत में चढ़ाया जाता है, काफी अच्छा है। एक दूसरा यंत्र ऐसा भी होता है जिसमें बर्तन नहीं होता है। यह रबर की एक नली भरी रहती है, जिसके बीच में एक पोली (खोखली) गेंद सी रहती है। इस नली के एक सिरे को पाखाने के रास्ते में रखते हैं और दूसरे सिरे को पानी के बर्तन में। गेंद को बार बार दबाने से पानी आंत में चढ़ता है। इस के दाम भी दो-ढाई रुपये हैं। पहला यंत्र ज्यादा अच्छा है।

एक ही यंत्र सभी तरह के लोगों के काम का हो सकता है। उसी यंत्र से छः महीने के बच्चे से लेकर १०० साल के बुड्ढे तक को एनीमा दिया जा सकता है।

पानी का अन्दाज़—

पानी का परिमाण अवस्था अलग अलग होगा। ६ महीने के बच्चे के पेट में दो छटांक से पाव भर तक पानी चढा सकते हैं। एक वर्ष से लेकर ६ वर्ष तक के बच्चे के पेट में पाव भर से लेकर आध सेर तक पानी चढाते हैं। ६ वर्ष से लेकर १२ वर्ष तक के बच्चे का आध सेर से लेकर १ सेर तक पानी देते हैं। उससे बड़े अर्थात् १२ से लेकर ज्यादा उम्र वालों के पेट में १ सेर से लेकर २ सेर तक पानी चढा सकते हैं। २५ से ज्यादा उम्र वालों के पेट में ढाई-तीन सेर तक पानी चढाया जा सकता है। पानी की मात्रा धीरे धीरे बढानी चाहिए, क्योंकि इसी तरह पानी को अन्दर रोकना भी सीखना चाहिए।

एनीमा के पानी में क्या मिलाया जाय—

साधारणतः कुछ नहीं। कुछ डाक्टर एनीमा के पानी में रेंडी का तेल (कैस्टर ऑयल), साबुन की झाग, ग्लीसरीन इत्यादि पदार्थ मिलाते हैं। उनका यह कहना है कि इन चीजों के मिलाने से आंत बहुत अच्छी तरह साफ हो जाती है। लेकिन इस पर विचार कर देखिए। सिर्फ साबुन मिलाने की ही बात का लीजिए। यह रोज़ का तजुर्बा है कि बदन में लगा हुआ साबुन आप ही आप नहीं छूटता। उसे कई बार पानी से धोने की जरूरत पड़ती है। यह आसानी से समझा जा सकता है कि आंत में लगा हुआ साबुन एक ही बार में क्योंकर साफ हो जायगा। फिर मालूम नहीं कि साबुन कौन कौन पदार्थों से बनाया गया है। दूसरे पदार्थ आंत में उत्तेजना भी पैदा करते हैं। इस उत्तेजना से धीरे धीरे आंत कमजोर हो जाती है। साबुन के अन्दर का तेजाब आंतों के चिकनापन को नष्ट करता है। यह खराब

है। पानी में नींबू का रस मिलाना लाभदायक होता है। इससे सफाई होती है, सड़ते हुए मल के कारण पैदा हुए कीड़े मरते हैं और खून में खारापन (यह आगे बताया जायगा) की मात्रा बढ़ती है। लेकिन अगर हर रोज़ एनीमा लेना हो, जैसा कि कभी कभी ज़रूरी होता है, तो २-३ दिन बीच देकर नींबू के रस का इस्तेमाल करना चाहिए। रस को साफ़ कपड़े के सहारे छान लेना चाहिए।

एनीमा का प्रयोग—

एनीमा के लिए जितना भी पानी तैयार करना है उसको ज़रा गरम कर लीजिए। बहुत हालत में शरीर के ताप के बराबर गर्मी होनी चाहिए ज़्यादा नहीं। तन्दुरुस्ती के दिनों में या गर्मियों में मामूली (ज़्यादा नहीं) ठंडा पानी ले सकते हैं। ज्वर में पानी मामूली गुनगुना हो। बहुत (लेकिन सहने लायक) गरम पानी का इस्तेमाल पेट के दर्द जैसी हालतों में किया जाता है। पानी को छान लेना चाहिए।

एनीमा के बर्तन को अच्छी तरह साफ कीजिए और रबर की नली इत्यादि को भी अच्छी तरह गरम पानी से साफ कर लीजिए। तैयार पानी को एनीमा के बर्तन में डाल दीजिए। बहुत अच्छा हो अगर कभी कभी एक या दो नींबू का रस निचोड़ कर एनीमा के पानी में कपड़े के सहारे छान लिया जाय। इसका असर आगे चलकर बहुत अच्छा होता है।

एनीमा के बर्तन को, जिस जगह या तख्त पर लेटकर एनीमा लेना है उससे तीन या चार फ़ुट ऊँचा, दीवार से (कील के सहारे) लटका दीजिए। अगर बेंच या तख्त पर लेटना हो तो उसके उस सिरे को जिस तरफ़ पैर हों और ऊँचे पर एनीमा का बर्तन लटकता हो आधा फ़ुट ऊँचा कर दीजिए। बेंच या तख्त के नीचे पैताने की तरफ़ दो-दो ईंट लगा सकते हैं। अब जिसको एनीमा देना हो उसको बेंच या तख्त पर चित लेटा दीजिए। इसमें भी ज़रूरत नहीं कि सिर कुछ नीचा

होगा और पैर एनीमा की ओर ऊँचा। पैरों को मोड़ रखना चाहिए। अब रबर की नली के अग्रभाग को खोल दीजिए, जिससे कुछ पानी के निकल जाने से अंदर की हवा निकल जाय। फिर उसको बन्द कर उसमें थोड़ा वेसलीन या घी मलकर पाखाने के रास्ते में लगभग डेढ़-दो इंच तक रख दीजिए और फिर अग्रभाग को खोलकर पानी को आंत में चढ़ने दीजिए। कभी-कभी तो पानी बड़ी आसानी से आंत में चढ़ जाता है, पर कभी कभी कुछ कठिनाई होती है। कभी जरा सा पानी चढ़ने के बाद ही पेट में दर्द शुरू होता है और ऐसा मालूम होता है कि अब पानी नहीं रोका जा सकता। इस हालत में थोड़ी देर के लिए पानी का चढ़ाना बन्द कीजिए। कुछ देर में पेट का दर्द शान्त हो जायगा। दर्द कम होने पर फिर पानी को आंत में चढ़ने दीजिए। पानी चढ़ते समय
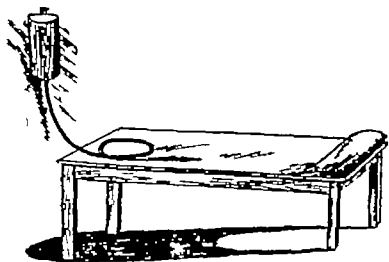
एनीमा की तैयारी

पेट को बाई से दाहनी ओर हल्के हल्के मलिए। पानी को आंत में कुछ देर तक (गरम पानी को ४५ मिनट, मामूली गुन-गुने पानी को १०

मिनट और ठंडे पानी को १५ मिनट) रोक रखना चाहिए। प्रवे की हल्की मालिश दाहिनी से बाईं ओर कीजिए। इसके बाद ट्टी जाना चाहिये। टट्टी जाने के लिए पास ही, कमजोर रोगियों के लिए कमरे में प्रबंध होना चाहिए। पहले पानी रोकना कठिन होता। पर अभ्यास से १२–१० मिनट तक पानी रोका जा सकता है। पानी रो रखने से मल फूल कर बाहर निकल आता है और एनीमा की आदत भी नहीं पड़ती। पानी चढ़ाने के बाद तुरन्त ही पाखाने जाने से बिल कुल मल नहीं निकलता और एनीमा की आदत पड़ जाने का डर रहता है, पर आदत तभी पड़ सकती है जब कि ८–१० महीने लगातार बहुत गरम पानी का एनीमा लिया जाय और पानी रोका न जाय। बताये तरीके से एनीमा लेने से पेट की अच्छी सफाई हो जायगी और आदत न पड़ेगी। अगर बेंच या तख्त न हो तो जमीन पर दरी, कम्बल या चटाई बिछाकर मरीज को उसी पर चित लिटा कर उसकी कमर के नीचे तकिया रख देते हैं, जिससे उसका सिर कुछ नीचा हो जाय।

एनीमा खुद ही लिया जा सकता है। अगर किसी कारण चित न लेटा जा सके तो दाहिना करवट लेटकर भी एनीमा ले सकते हैं। पर चित लेटना और सिर का कुछ नीचा करना (अगर कोई सिर की बीमारी नहीं है तो) ज्यादा अच्छा है।

एनीमा के प्रकार—

पानी की मात्रा और ताप के अनुसार एनीमा के लाभ होते हैं। गरम पानी मल को साफ करता है पर आंत को ढीला करता है। ठंडा पानी आंतों में ताकत लाता है पर बहुत ठंडा पानी कभी कभी मरोड़ पैदा करता है। एनीमा के कुछ प्रकार यों हैं :—

(१) ताकत बढ़ाने वाला एनीमा—मामूली (ज्यादा नहीं) ठंडा पानी, सिर्फ पाव-डेढ़ पाव के अन्दाज से, पेट में चढ़ा दीजिए और उसे कम से कम २० मिनट रोकिए और तब पाखाना जाइए। अगर बहुत

तक लगातार एनीमा का इस्तेमाल जारी रखना है तो इसी तरह एनीमा हर रोज लेना चाहिए। इससे आंतों को बल मिलता है और भोजन-क्रम ठीक रहा तो कुछ ही दिनों में कब्ज दूर हो जाता है, सुधर जाती है और एनीमा की जरूरत भी जाती रहती है। तरह एनीमा लेने के दिनों में हफ्ते में एक दो बार गरम पानी मात्रा में चढ़ाना चाहिए। उस भी ५ ७ मिनट रोकने की कोशिश चाहिए। इस बीच-बीच के गरम एनीमा से सफ़ाई हो जाया और ठंडे एनीमा से ताकत मिलती रहेगी।

(२) एक साथ ही गरम और ठंडा एनीमा—बहुत सूखे मल की में पहले सहने लायक काफ़ी गरम पानी, आध सेर, और उसके उतना ही ठंडा पानी लेना चाहिए। गरम पानी मल को उखाड़ता और ठंडा पानी आंतों को बल देता है। अगर कोई सिर की बीमारी पानी को गुनगुना ही रखना चाहिए। ऐसे एनीमा में भी पानी को ना बने रोकना चाहिए।

(३) पानी को रोक रखने वाला एनीमा—लगभग आध पाव ठंडा पानी पूरा एनीमा लेने के बाद चढ़ा लेना और उसको रोके रखना। बवासीर के इलाज में इस तरह काफ़ी ठंडे पानी का में खाने से पहले चढ़ा लेना बहुत लाभदायक होता है। इतना पानी एनीमा-पम्प के बदले ग्लीसरीन सिरिंज (glycerine inge) से अच्छी तरह चढ़ाया जा सकता है। यह पंप भी डाक्टरी की दुकानों में आठ-दस आने में मिलता है।

(४) शरीर में गर्मी लाने वाला एनीमा—अकसर बहुत कमज़ोर के हाथ पैर ठंडे होने लगते हैं और हालत बिगड़ती सी जान पड़ती अगर इस हालत में लगभग तीन पाव सहने लायक काफ़ी गरम का एनीमा दे दिया जाय तो शरीर में गर्मी फिर से आ जाती है

और हालत सुधरने लगती है। इसके साथ हाथ पैर आदि मलने और सीने पर गरम सेंक इत्यादि की भी जरूरत हो सकती है बातें आगे बताई जाँयगी। ऐसे रोगी के लिए बेड-पैन (bed p रहना चाहिए, जिससे कि पाखाने के लिए रोगी को चारपाई से उठना पड़े। बहुत कमजोर रोगी की हालत में बिस्तर पर मोमजामा आयल क्लाथ डालकर उस पर ही पाखाना हो जाने देना चाहिए पाखाने के बाद इस को हटाना और सावधानी के साथ रोगी के की सफाई जरूरी है।

नीमा के इस्तेमाल के बारे में कुछ ज़रूरी बातें—

(१) एनीमा वैसे हर रोज न लेना चाहिए, पर उपवास केवल फलों का रस पीकर या फल खाकर रहने के दिनों में या साधारण भोजन खाते हुए मात्रा कम की जाय तो हर रोज और जोरदार कब्ज रहे तब भी लेना चाहिए। लंबे उपवास में कुछ तक दोनों समय और फिर एक समय एनीमा लेना चाहिए।

(२) जिसकी आंत में बहुत दिनों के विकार सूखकर चिपक हैं, उसे पहिले या बीच में तीन-चार दिनों तक एनीमा लेने से मल निकलता। ऐसी हालत में एनीमा लेना बन्द न करना चाहिए।

(३) नये रोगों में उपवास के साथ एनीमा का इस्तेमाल है। एक ही दो दिन के उपवास और एनीमा के इस्तेमाल से सदी से ज्यादा रोग भाग रहेंगे। लंबा चलने वाले नये रोगों (बेहद पानीझरा या चेचक) में प्रत्येक हर रोज एक एनीमा गुनगुने पानी लेना चाहिए।

(४) पुराने रोगों में भी तीन-चार खास के फलाहार, शाक और बीच बीच के दो तीन दिन के उपवास के साथ साथ बराबर ए से ७५ फी सदी पुराने रोग आसानी से जाते रहेंगे। ऐसी में पहले ५-७ दिन गरम फिर १५ दिन ऐसा पानी जो न ठंडा

और न गरम या मामूली गुनगुना और फिर १५ दिन मामूली ठंडे एनीमा का प्रयोग होना चाहिये।

(५) जिस रोग में बहुत पतले दस्त आते हों और साथ ही कमजोरी भी हो उसमें एनीमा न देना चाहिये, पर पतले दस्त के शुरू होते ही गरम एनीमा जरूर देना चाहिये। उससे दस्तों का आना दूर हो जाता है।

(६) एनीमा लेने के बाद कुछ देर लेटकर आराम करना चाहिये।

(७) एनीमा लेने के बाद १५ मिनट तक कुछ खाना न चाहिये।

(८) एनीमा और कमर-नहान में मामूली तौर पर कम से कम आध घंटे का अन्तर होना चाहिए। एक घंटे का हो तो और अच्छा है।

(९) जब लगातार बहुत दिनों तक एनीमा लेना हो तो पहले थोड़ी मात्रा में (सेर भर) गरम पानी, फिर कुछ दिनों तक कुछ ज्यादा मात्रा में गुनगुना पानी चढ़ाना चाहिये, फिर कुछ दिनों तक आध सेर मामूली ठंडा पानी। गरम पानी को ३ से ५ मिनट तक रोकना चाहिये, गुनगुने या ऐसे पानी को जो न ठंडा हो न गरम १० मिनट और ठंडे पानी को १५-२० मिनट। पानी को कुछ देर रोकने ही से लाभ होता है।

(१०) कुछ दिन एनीमा लेकर फिर उसे छोड़ देने से एक दो दिन पाखाना नहीं आता। इससे घबराना न चाहिये। एक दिन के बाद एक बार फिर एनीमा लेकर छोड़ देना चाहिये।

(११) कमजोर रोगियों को पहले थोड़ा पानी चढ़ाना चाहिये। जैसे जैसे ताकत बढ़ती जाय पानी की मात्रा को भी बढ़ाते जाना चाहिये। जैसा कि पहले बताया गया है, कमजोरी की हालत में एनीमा के बाद पाखाने जाने के लिये पास ही इन्तजाम होना चाहिये। अगर टाइफाइड बुखार है या और कमजोरी की हालत है तो बेड-पैन (bed pan) काम में लाना चाहिये। एनीमा के बाद अगर कमजोरी मालूम हो तो थोड़ा

फल का रस मिलाने या एक छोटे चम्मच भर शहद मिलाने से कमर में आती रहती है।

(१२) पानी चढ़ जाने के बाद कुछ देर पेडू और पेट को हल्के हाथ से मलना चाहिये। पाखाने के लिये बैठने के समय जोर न करना चाहिये पर पेट को मलते जाना चाहिये। किसी-किसी का पेट दो बार जाने पर साफ होता है। पाखाने में काफ़ी देर तक बैठना चाहिए।

एनीमा के बारे में कुछ लोगों का भ्रम है कि इससे जन्म भर के लिये आदत पड़ जाती है। ऐसा सोचना बिल्कुल गलत है। लेखक ने कई रोगियों को लगातार ढाई-तीन महीने एनीमा दिया है। वे सब भले-चंगे हैं और एनीमा का इस्तेमाल बिल्कुल नहीं करते। स्वयं लेखक ने लगातार साल भर एनीमा का प्रयोग किया है लेकिन फिर भी वह एनीमा का आदी नहीं हुआ। एनीमा की आदत तभी पड़ती है जब कि काफ़ी गरम पानी बहुत मात्रा में लगातार बहुत दिनों तक पेट में चढ़ाया जाय और पानी में साबुन डाला जाय। ऐसा पानी जो न ठंडा हो न गरम किसी हालत में एनीमा का आदी नहीं बनाता। एनीमा से कमजोरी होती है, यह भी एक गलत धारणा है। हाँ बहुत कमज़ोर रोगी को शुरू में कम पानी देना चाहिये।

एनीमा कब्ज की दवा नहीं है। कब्ज तो हर रोज के ठीक भोजन, नियमित जीवन और उचित व्यायाम और आराम से दूर होता है लेकिन आंत में चिपके पुराने मल को दूर कर आंतों की मांसपेशी और नाड़ियों को बल देकर और कुछ हद तक प्रकृति की क्रिया को ठीक कर शरीर को फिर से ताजा करने वाली चीज एनीमा से बढ़ कर कोई नहीं है।

* * * *

एक बात यहां बता देना जरूरी है। किसी किसी रोगी की आंत में इतना सूखा मल जमा रहता है कि एनीमा की मदद से उसे निकालने

में बहुत देर लगती है। ऐसी हालत में गरम एनीमा देना चाहिये। र तीन पाव सेर भर गरम पानी के साथ पाव भर जैतुन(olive) या साफ़ नारियल का तेल मिला देना चाहिये। ऊपर बताई हुई मात्रा बड़े लोगों के लिये है। कम उम्र वालों के लिये पानी और तेल की मात्राएं कम की जा सकती हैं।

तीन-चार या ज्यादा दिनों के उपवास के अंत में सनाय (लगभग १ तोला) और मुनक्के (लगभग १५, २०) की चाय (सवा पाव पानी में खौला कर जब तीन छटांक बच जाय) सोते समय पी लेने से भी आंत की अच्छी सफ़ाई होती है। लेकिन इस प्रयोग का कमज़ोरी की हालत में करना ठीक नहीं है। लेखक ने ऐसे रोगियों के साथ, जो एनीमा का यंत्र नहीं खरीद सकते लेकिन जिन्हें लम्बा उपवास करना या बहुत दिनों तक फल पर रहना होता है, हर पांच या सात दिनों के बाद यह चाय पिला कर बहुत लाभ पहुंचाया है, पर जहां एनीमा का यंत्र है वहां इस प्रयोग को शायद सौ में २ १ रोगियों के ही साथ किया है।

शहरों में अंगरेजी दवा की दुकानों में सनाय की सूखी फलियां (senna pods) मिलती हैं। छोटों के लिए ३ ४ और बड़ों के लिए ७ से लेकर १० फलियों का तीन छटांक ठंडे पानी में दोपहर को भिगो दिया जाय और रात को सोते समय फलियों को अच्छी तरह मल-निचोड़ कर सब पानी को छान कर पी लिया जाय तो सबेरे बिना कमज़ोरी के पेट साफ़ हो जाता है। पानी को गरम करने की ज़रूरत नहीं।

रोगों का इलाज

रोगों का इलाज, पुराने रोगों का इलाज, और प्रचालक की तकलीफें

(जिन पाठकों ने पहले के खंड अच्छी तरह नहीं पढ़े हैं उन्हें सिर्फ इस खंड के पढ़ने से पूरा लाभ न होगा)

रोगों का इलाज

एक रोग, एक इलाज—

आशा है कि पाठकों को रोगों की 'चिकित्सा-विधि' (तरीक़ा-इलाज) के बारे में इस किताब के पिछले पन्नों से बहुत कुछ मालूम हो गया होगा। यह भी आशा है कि पाठकों ने समझ लिया होगा कि अगर सभी रोगों का कारण सच-मुच एक ही है—शरीर में बेकार पदार्थ का इकट्ठा होना—और इसलिए अगर जड़ में सब रोग एक ही हैं तो उन सब का इलाज भी एक ही ढंग का होगा। रोग को अच्छी तरह समझना चाहिए। (शुरू में जो 'रोग-वृक्ष' का चित्र है उसे देखिए।) कष्टों के भेद, रोगों के लक्षण वृक्ष की भिन्न भिन्न शाखाओं की तरह अलग अलग और दूसरे दूसरे हो सकते हैं, पर सब रोग एक ही जड़ और जड़ से निकल कर फैलते हैं। यदि उस जड़ को ही उखाड़ कर दूर कर दिया जाय तो अलग अलग फैलने वाले, अलग दीखने वाले और अलग नामों से पुकारे जाने वाले रोग और एक ही रोग के अनेक लक्षण आसानी से दूर हो जायँगे। उदाहरण के लिए, अगर किसी के बुखार है और उसी के साथ साथ खांसी और बदन में दर्द है तो हम इन तीनों शिकायतों को अलग अलग रोग न मान कर इन सब को एक ही रोग के लक्षण समझेंगे और कोशिश करेंगे कि वह जड़ ही दूर हो जाय, जिससे ये शाखें फैली हैं। हां, अगर किसी ख़ास लक्षण से ज्यादा तकलीफ़ है तो हम ऐसे उपाय भी ज़रूर करेंगे कि रोगी को आराम मिल जाय। यह तो हुई एक रोग के अनेक लक्षण की बात। इसी तरह भिन्न भिन्न रोगों को हम एक ही जड़ से—विकार से—निकले हुए अलग अलग लक्षण समझेंगे।

पांच ज़रूरी बातें—

चाहे कोई भी बीमारी हो, उसको दूर करने के लिये हम उसके नाम की कुछ भी परवा और ख्याल न कर इन बातों पर ध्यान देंगे—

[१] पेट और शरीर के अन्दर के विकार को निकालना, पेट की गर्मी को शान्त करना और पाचन-शक्ति को दुरुस्त करना। यह काम उपवास, पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी, एनीमा-प्रयोग, भोजन में उचित हेर फेर, उचित भोजन और कमर-नहान से हो जाता है।

पेट की गर्मी के दूर हो जाने और पाचन-शक्ति के ठीक हो जाने से खून ठीक हालत में आ जायगा और नाड़ी-संस्थान भी स्वस्थ हो जायगा, जिससे रोग भाग जायगा।

(२) नाड़ी-संस्थान का जगाना और स्वस्थ करना। इसका असर पाचन-शक्ति पर अच्छा पड़ता है और इसी से जीवन-शक्ति जग कर रोग को भगा देती है। यह काम पाचन-शक्ति के ठीक होने पर और विविध नहान और रीढ़ की गीली पट्टी से होता है।

(३) जलन, सूजन, दर्द जैसी ऊपरी तकलीफ़ों को कम करना। यह काम मिट्टी या कपड़े की गीली पट्टियों से या भाप-नहान या गरम और ठंडी सेंक से हो जाता है।

पुराने रोगों में दो और बातों पर ध्यान देना होता है। वे हैं—

(४) जीवन-शक्ति को जगाना, जिससे रोग की जीर्णता (पुराना पन) तीव्रता (नयापन) में बदल जाय और तीव्र लक्षण पैदा होकर दूर हो जाँय। यह काम ऊपर बताये उपायों के साथ साथ उचित कसरत, सांस की कसरत (स्वास-क्रिया) और धूप-नहान से होता है।

(५) दिल को बराबर ही खुश रखना और यह आशा करना कि हम धीरे-धीरे ज़रूर ही अच्छे हो जायेंगे। यह बहुत ज़रूरी है।

दोस्त और रिश्तेदारों का भी रोगी की मदद करनी चाहिए, जिसमें वह खुश रहे। इस आख़री बात पर जितना भी ज़ोर दिया जाय कम

जाना। अगर रोगी चिड़चिड़ा हो तो ऐसा न समझना चाहिए कि वह जान-बूझ कर शैतानी कर रहा है। वह बेचारा तो बेबस है।

अगर यह बातें समझ में आ जायेंगी तो चिकित्सक रोगों के नाम सुन कर किसी भी रोग का सही और अचूक इलाज कर लेगा। यह समझना जरूरी है कि हम रोग से नहीं लड़ते बल्कि शरीर में वह बातें पैदा करते हैं कि रोग वहां रहे ही नहीं।

चिकित्सा का क्रम—

अचूक चिकित्सा में भोजन का बहुत बड़ा स्थान है, इसलिए पहिले कुछ बातें समझा देना जरूरी है।

अगर कोई नया रोग है तो हम इन उपायों को काम में लायेंगे:—

(१) जब तक रोग न जाय तब तक पूरा उपवास। कमजोर को एक-दो दिन के पूरे उपवास के बाद या शुरू से ही फल का रस दिन में तीन-चार बार दिया जा सकता है। मीठे संतरे, मोसंबी, बिदाना या कंधारी अनार के रस या पानी में ५.६ घंटे भिगोई हुई किशमिश या मुनक्के का पानी काम में लाया जा सकता है। बहुत दिन चलने वाली बीमारी में दूध-फटा पानी (आग पर उबलते दूध में नींबू का रस डाल कर यह पानी मिलता है) फल के रसों के अलावा दो बार देना चाहिए।

जहां तक हो, उपवास करना चाहिए। हैजा जैसे रोग में कुछ न देना चाहिए।

(२) अगर बहुत मात्रा में बहुत बार पतले दस्त न आते हों तो एनीमा-प्रयोग—दिन में एक बार। नहीं तो कब्ज की हालत में सुबह शाम दो बार। तेज ज्वर में भी काफी अन्तर देकर दिन में दो बार।

(३) रोग दूर होने पर रसाहार, तब दो-तीन दिनों तक में तीन बार फलाहार और इसके बाद दो-तीन दिनों तक एक बार रोटी-सब्जी और एक या दो बार फल या फल-दूध या दूध। फिर तनदुरुस्ती के दिनों का भोजन, जो भोजन वाले अध्याय में बताया गया है।

(४) जरूरत के मुताबिक (अनुसार) पानी, मिट्टी का प्रयोग।

पुराने रोग में, जिसमें असली या बहुत कमजोरी नहीं है (असली कमजोरी उसे कहते हैं जो कि पांच छः महीने या इससे भी ज्यादा दिनों तक खाट पर पड़े रहने और कई डाक्टरों, हकीमों और वैद्यों के हाथ से गुजरने के बाद या क्षयी इत्यादि रोगों में होती है) तो नीचे दिया हुआ क्रम चलाना चाहिए :—

(१) पहले तीन दिनों का उपवास—भरसक पूरा या फलों के रस पर (दिन में सिर्फ दो या तीन बार इच्छा भर।)

असली कमजोरी में इस नं० १ को छोड़ कर नं० २ से शुरू करना चाहिए और जैसे ही अवस्था सुधरे एक-दो दिन का उपवास करना चाहिए।

उपवास के दिनों में सुबह-शाम एनीमा।

(२) उपवास के बाद पूरे पन्द्रह या और ज्यादा दिनों तक दिन में दो या तीन बार फलाहार। हल्के, मीठे और रसदार फल हों—केला नहीं। समय—बन सके तो गर्मियों में ९ बजे सुबह और ४ बजे शाम जाड़ों में ११ बजे सुबह और ५ बजे शाम। एक बार सिर्फ एक तरह का फल इच्छा भर। अगर तीन बार फल लेना हो तो ८ बजे सुबह, १ बजे दोपहर और ६ बजे शाम।

पहले हफ्ते में सुबह-शाम एनीमा। फिर अगर जरूरत न रहे तो सिर्फ एक बार एनीमा। जरूरत होने पर दोनों समय। एनीमा लेने से पहले सुबह और शाम को पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी, ३० ४० मिनट के लिए।

कभी-कभी इन फलाहार के दिनों में मुंह का स्वाद खराब हो जाता है या कुछ पतले दस्त आने लगते हैं या आंव गिरने लगती है या और कोई नया लक्षण उभड़ पड़ता है। अगर ऐसा हो तो समझना चाहिए कि विकार निकल रहा है, जो अच्छा है, और तुरन्त ही फलाहार से रसाहार पर एक दो दिन के लिए आ जाना चाहिए। हो सकता है

कि कुछ कमज़ोरी मालूम हो, पर दिल ज़रूर खुश रहेगा। कमज़ोरी से घबराना न चाहिए। जितना जल्द विकार निकलेगा उतना ही जल्द शरीर स्वस्थ होगा। विकार निकलते समय कुछ कमज़ोर हो जाना स्वाभाविक है।

अगर पेट के दर्द की शिकायत हो या ऐसी कोई गड़बड़ी हो, जिसमें फल ठीक न बैठता हो, तो पहले दो-तीन या और ज्यादा दिनों तक सब्ज़ी (बिना छिलके की) सादी पची भाजी पर रह कर फलों पर आ जाना चाहिए। फल तरकारी से अच्छे होते हैं।

(३) इसके बाद दस या पन्द्रह दिनों तक हर बार फल के साथ पाव-डेढ़ पाव कच्चा बढ़िया दूध। किसी तरह के अपच में दूध के बदले खाला मठा (गाय के दूध का) इस्तेमाल करना चाहिए। अगर ज़रूरत हो तो पेड़ पर मिट्टी और एनीमा एक बार या दोनों बार जारी रखना चाहिए। ज़रूरत न हो तो छोड़ देना चाहिए।

(४) इसके बाद तनदुरुस्ती के दिनों वाला भोजन, जैसा भोजन वाले अध्याय में बताया गया है लेकिन अन्न का भोजन कुछ दिनों तक एक ही बार करना चाहिए।

इसी समय से या फलाहार के दिनों के बीच से ही नहान शुरू करना चाहिए।

जो बहुत दिनों से बीमार है लेकिन चलता फिरता है और जिसने बरीली दवाइयाँ खाई हैं उसे शुरू शुरू में ही उपवास और फलाहार कराने से गड़बड़ी होती है। फलाहार भी दबे लक्षणों को उभारता है। उसे शुरू से ही ४५ मिनट का कमर-नहान या १० मिनटों का उपस्थ-स्नान पहले ८-१० दिनों तक दिन में एक बार, फिर दो बार देना चाहिए। भोजन में सिर्फ रोटी-भाजी दोनों समय और एक बार नाश्ते में एक तरह का फल। एनीमा का सहारा भी लेना चाहिए। अगर उसमें अच्छी ताकत नहीं है तो नहान के बदले कुछ दिनों तक सिर्फ पेड़ पर

मिट्टी और एनीमा ही ठीक होगा। कुछ हफ्तों के बाद पूरा उपवास और फलाहार कराया जा सकता है। उन दिनों नहान नहीं। फिर नियमित भोजन शुरू करते ही फिर नहान भी शुरू कराया जा सकता है। नहान का समय धीरे धीरे बढ़ाना चाहिए।

नोट—यह एक-डेढ़ महीने का कठिन संयम हाल के पुराने रोगों में काफ़ी हो सकता है, लेकिन वर्षों के पुराने रोगों में दो दो महीने पर एक-दो बार ऊपर के क्रम को दुहराना होगा। जो धैर्य और समझदारी से काम लेंगे वे साल भर के अन्दर पुराना से पुराना रोग दूर कर सकेंगे और शरीर को नया बना लेंगे, नहीं तो ज्यादा समय लगेगा।

जहाँ फल या तरकारी न मिले वहाँ तीन दिन के उपवास के बाद एक हफ्ते या दस दिनों तक बिना मक्खन का पतला मठा या पानी मिला अच्छा गाय का दूध दिन में दो-तीन बार लेना चाहिए। फिर तीन दिन का उपवास करके दस दिन तक सिर्फ़ पतले मठे पर या दूध पर रहना चाहिए। तब और दस दिनों तक दोनों समय सिर्फ़ रोटी और इसके बाद रोटी-भाजी पर आना चाहिए।

गर्मियों में ९ बजे सुबह और ४ बजे शाम और जाड़ों में ११ बजे सुबह और ५ बजे शाम के समय, अर्थात् सिर्फ़ दो बार, खाने के लिए बहुत ठीक है, लेकिन अगर काम पर जाना हो तो समय बदल सकते हैं। तीन बार—८ बजे सुबह, १ बजे दिन और ६ बजे शाम या ९ बजे सुबह १ १० बजे तीसरे पहर और ८ १० बजे रात—भोजन के लिए रख सकते हैं।

हर रोज़ का क्रम—

चिकित्सकों को दिन भर का काम-क्रम बनाना सीखना चाहिए, जैसे—

६ बजे सुबह—पाखाने जाना, मुँह धोना।

६ १० बजे सुबह—पेड़ू पर मिट्टी और एनीमा

९ बजे सुबह—साधारण स्नान
१० बजे दिन—फलाहार
३ १० बजे तीसरे पहर—पेड़ू पर मिट्टी और एनीमा
५ बजे शाम—फलाहार

या

६ बजे सुबह—पाखाने जाना, मुँह धोना, किशमिश का पानी पीना
६ १० बजे सुबह—एनीमा
७-१० बजे सुबह कमर-नहान
६ १० बजे सुबह—साधारण स्नान
१०-१० बजे दिन—भोजन
१ बजे दिन—पानी पीना
२ बजे तीसरे पहर—पेड़ू पर मिट्टी और एनीमा
४ बजे शाम—कमर-नहान या उपस्थ-स्नान
५ १० बजे शाम—भोजन

या

६ बजे सुबह—पानी पीकर पाखाने जाना, मुँह धोना
६ १० बजे सुबह—कमर-नहान और कसरत
८-१० बजे सुबह—साधारण स्नान
६ बजे सुबह—भोजन
११ बजे दिन—पानी पीना
३-१० बजे शाम—हल्का नाश्ता
५ बजे शाम—कोई एक नहान और टहलना
८ बजे रात—भोजन
९ १० बजे रात—पानी पीना
१० बजे रात—सो जाना

या

६ बजे सुबह पाखाने जाना, मुंह धोना, किशमिश का पानी पीना हल्की कसरत

८ बजे सुबह—धूप-नहान, साधारण स्नान और कमर-नहान

९-३० बजे सुबह—भोजन

११ ३० बजे दिन—पानी पीना

१ बजे दिन—रीढ़ पर पट्टी

४ बजे शाम—नाश्ता, नाश्ते के बाद किसी अंग विशेष पर भाप

५ ३० बजे शाम—कोई एक नहान और टहलना

७-३० बजे रात—भोजन

९ ३० बजे रात—पानी पीकर सो जाना

ये ऊपर के कई कार्यक्रम नमूने के लिए बताये गए हैं। चिकित्सक को चाहिए कि वह रोगी की शक्ति और आवश्यकता, ऋतु, रोग के लक्षण और रोगी की सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए इस किताब में दिए नियमों के अनुसार कार्यक्रम बनावे।

इस तरह मोटा-मोटा चिकित्सा-क्रम बताने के बाद कुछ रोगों के इलाज के बारे में अब कुछ कहा जायगा।

पुराना कब्ज या कोष्ठबद्धता

कब्ज किसे कहते हैं—

आंतों से मल के नहीं निकलने को कब्ज कहते हैं। इसी से प्रायः सभी रोग होते हैं। आंतों में सोखने वाली झिल्लियां होती हैं, जो मल से जहरीले रस खींचकर सारे शरीर में फैला देती हैं। इससे भयंकर रोग भी हो सकते हैं।

इलाज—

(१) पहले तीन दिन का उपवास या रसाहार, फिर ३-४ दिनों तक फलाहार या फल दूध या मठा। इसके बाद एक हफ्ते तक एक समय रोटी-भाजी और एक या दो समय फल। फिर दोनों समय इस किताब में बताये ढंग से उचित भोजन, जिसमें आधी मात्रा कच्ची सब्जी या फलों (सलाद) की जरूर हो।

उपवास या रसाहार और फलाहार के दिनों में हर रोज और बीच बीच में जब जरूरत हो तो एनीमा लेना चाहिए। चार छः गरम एनीमा के बाद धीरे धीरे मामूली ठंडे पानी पर आ जाना चाहिए।

(२) उपवास या रसाहार के बाद पहले दो हफ्ते तक सुबह-शाम कमर नहान, फिर एक समय कमर-नहान और दूसरे समय उपस्थ-स्नान।

(३) कसरत (आगे बताई जायगी) या अपनी शक्ति भर दो से छः मील तेजी से रोज टहलना। रीढ़ की हलकी मालिश।

(४) पाखाने के समय जोर न करना चाहिए लेकिन जोर से सोचना चाहिए कि पखाना आ रहा है।

(५) पाखाने के लिए दिन में दो समय बँधे होने चाहिए।

बहुत दिन के पुराने कब्ज में दो महीने के बाद फिर उपवास करके ऊपर बताये क्रम को दुहरा जाना चाहिए। कब्ज अच्छा होने के बाद भी उचित भोजन और कसरत को जारी रखना चाहिए, लेकिन नहानों को छोड़ सकते हैं।

कब्ज में नाड़ियां, खासकर पेट और आंतों की नाड़ियां, कमजोर रहती हैं। जब तक ये सचेत और मजबूत नहीं होतीं तब तक कब्ज नहीं जा सकता। जब उपवास और फलाहार से पेट को आराम मिलता है, एनीमा से पहले का इकट्ठा मल निकल जाता है और नहान और कसरत से नाड़ियां जग जाती हैं तभी कब्ज दूर हो सकता है। जिसके वास्ते

दोष है उसे भी कब्ज रहता है और जिसे कब्ज रहता है उसे कैंसर हो सकता है। जो सभी तरह स्वस्थ है उसे ही कब्ज नहीं रहता।

मामूली कब्ज में और कुछ न खाकर सिर्फ चोकरदार आटे की मोटी रोटी खूब चबाकर खाना और उसी पर कुछ दिन रहना बहुत लाभदायक होता है। पानी खाने के साथ या तुरन्त बाद न पीना चाहिए।

एक छोटे गिलास भर गरम पानी के साथ आधे या एक नींबू का रस निचोड़कर और उसमें ज़रा नमक मिलाकर दिन में दो बार पीने से भी कब्ज दूर हो जाता है। खाने के बाद एक चुटकी बहुत बारीक रेत (बालू) पानी के सहारे निगल जाने से भी पाखाना साफ़ आता है।

कौन कब्ज़ से बचा है—

याद रहे कि यही आदमी कब्ज से बचा हुआ समझा जा सकता है, जिसे पाखाने के लिए बैठते ही एक या दो बड़े और बँधे टुकड़े मल के आ जायँ, जिनमें बदबू न हो। बाकी सभी कब्ज के शिकार हैं।

सर्दी जुकाम

जब पाखाना, पेशाब, साँस और पसीने के साथ शरीर के विकार ठीक ठीक बाहर नहीं निकलते तब कभी कभी प्रकृति यह प्रबन्ध करती है कि ये विकार नाक और गले की झिल्लियों से निकाले जायँ। छींकें आती हैं, नाक से पानी बहता है और गले में खराश मालूम होती है। इसी को सर्दी जुकाम कहते हैं। कभी कभी बुखार भी होता है।

इलाज—

(१) दो या तीन दिनों का उपवास। गर्म पानी के साथ नींबू (या नारंगी) का रस दिन में तीन बार लेना चाहिए, जिस से बलगम और भी कट जाय। फिर दो दिनों तक फलाहार या सब्जी का भोजन। इसके बाद उचित भोजन।

(२) तीन-चार दिन तक हर रोज एनीमा ।

(३) आराम करना ।

(४) जरूरत हो तो, सुबह-शाम या एक ही समय पैरों का गरम नहान ।

जुकाम शुरू होते ही अगर आप नहान और उसके बाद कमर-नहान ले लिया जाय तो पहले ही दिन जुकाम जाता रहता है, लेकिन ऊपर बताया पूरा संयम कर लेना चाहिए ।

जुकाम को मत दबाओ—

जुकाम को दवाइयों से रोकना न चाहिए । बार बार जुकाम को दबाने से शरीर के अन्दर का विकार अन्दर ही रह जाता है, जिससे आगे चलकर गठिया या और कोई जीर्ण रोग हो जाता है ।

ज्वर या बुखार

बुखार क्यों होता है—

अनुचित रहन-सहन और खान-पान से शरीर के सभी हिस्सों में विकार जमा हो जाता है । उसी से शरीर में जोश भी उमड़ता रहता है । यह जोश विकार के टुकड़े टुकड़े कर देता है । फिर जोश के कारण इन टुकड़ों से रगड़ पैदा होती है, तभी शरीर की गर्मी बढ़ जाती है । इसी को बुखार कहते हैं ।

बुखार के भेद—

बुखार की बहुत सी किस्में हैं, पर चाहे जितनी भी किस्में हों, शुरू-शुरू में सभी बुखार एक हैं । आगे चलकर भी वे एक ही रहते हैं, पर लक्षण अलग अलग दीखते हैं । अगर शुरू में ही बुखार का ठीक इलाज किया जाय तो बहुत से बुखार ज्यादा से ज्यादा दो-तीन दिनों में चले जाते हैं, कुछ ही ऐसे हैं जो कई हफ्ते या महीनों चलते हैं । इसे अच्छी तरह

समझना चाहिए। बुखार पहले ही दिन टाइफ़ाइड या चेचक या दर्द तोड़ बुखार या कोई और बुखार नहीं हो जाता। शुरू से ही अगर प्राकृतिक उपचार काम में लाये जायँ तो सदा चलनेवाले बुखारों में भी बहुत आसानी होती है।

इलाज—

(१) सच्ची बात यह है कि मामूली तौर पर मजबूत रोगी को, जब तक बुखार छूट न जाय, उपवास कराना चाहिए। उपवास के समय गरम या ठंडे पानी के साथ नींबू का रस दे सकते हैं। कमजोर रोगियों को भी एक-दो दिन पूरा उपवास करा के और तब सन्तरे या अनार का रस या किशमिश भिगोया पानी थोड़ी मात्रा में तीन-तीन घंटे पर दे सकते हैं। बहुत लम्बा चलने वाला बुखार, जैसे टाइफ़ाइड में पाँच-सात दिन के बाद से दूध फाड़ कर उसका पानी दिन में दो बार और दो बार रस देना चाहिए। दूध गाय का हो और नींबू के रस से फाड़ा जाय, फट जाने पर निरा पानी ही देना चाहिए। बुखार छूटने पर पहले पानी मिलाया दूध, फिर फल-दूध और तब उचित भोजन। अगर उपवास या रसाहार ज्यादा दिन चला है तो बहुत धीरे धीरे भोजन का प्रकार और मात्रा बढ़ाई जाय। इसलिए रसाहार के बाद ही पहले दिन तरकारियों का सूप और पानी मिला दूध देना चाहिए—एक बार सूप और दो बार दूध। फिर धीरे धीरे निरा दूध शुरू करना चाहिए। इसके दस दिन बाद पकी हरी भाजी—इस तरह शरीर का अभ्यास बढ़ाते हुए रोटी या चावल इत्यादि पर आना चाहिए।

(२) अगर पहले दिन कुछ परेशानी न हो और बुखार १०२ या १०३ डिग्री तक ही रहे तो सिर्फ एक बार एनीमा दीजिए और एक बार सारे शरीर को भीगे कपड़े से पोंछिए। दूसरे दिन भी अगर परेशानी न हुई और बुखार ज्यादा न बढ़ा तो पहले दिन की ही तरह एनीमा दीजिए और भीगे कपड़े से शरीर पोंछिए। दो-तीन दिन ऐसा करने से

बुखार आते रहेंगे, लेकिन अगर पहले दिन से ही परेशानी है और बुखार भी तेज है तो एनीमा के दो-तीन घंटे बाद सारे शरीर की गीली पट्टी या कमर-नहान दीजिए। जल्दी जल्दी के कमर-नहान गर्मियों में १० मिनट और जाड़ों में ७ मिनट के लिए हों। इस तरह के तेज और परेशान करने वाले बुखार भी एनीमा और कमर-नहान से दो-तीन दिन में चले जायँगे, लेकिन बुखार के शुरू होते ही इलाज शुरू कर देना चाहिए। जैसे जैसे बुखार की तेजी कम होती जाय नहान भी देर से दिये जायँ। खतरनाक दीखने वाले बुखारों में सुबह-शाम दोनों बार एनीमा देना चाहिए। इतना ध्यान जरूर रहे कि रोगी की परेशानी न बढ़े। शुरू शुरू में कमजोरी नहीं होती। जो कमजोरी मालूम होती है वह बुखार का झोंका रहता है। फिर भी रोगी को जरूरत से ज्यादा परेशान न करना चाहिए।

जैसा कि ऊपर बताया गया है, बहुत से बुखारों में हर रोज सिर्फ एनीमा देना और एक बार बदन (सिर से लेकर पाँव तक) को ठंडे पानी में निचोड़े गीले कपड़े से साफ कर देना काफ़ी होगा। अगर कुछ और उपचार की जरूरत हो तो दिन भर में तीन या चार बार पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी रखना काफ़ी है। बात यह है कि बुखार को उतारने में जल्दबाजी न करनी चाहिए। अगर पानी के बहुत प्रयोग से बुखार जल्दी ही उतर गया तो सारा विकार बाहर निकलने न पाएगा और शरीर निर्मल न होगा। दूध का व्यवहार बिलकुल मना है, क्योंकि दूध तरल होता हुआ भी पूरा भोजन है। दूध या और कुछ पथ्य देना बुखार को मजबूत करना है।

(१) अगर बुखार के साथ कोई और तकलीफ हो तो तकलीफ़ की जगह पर मिट्टी की पट्टी या कपड़े की गीली पट्टी का इस्तेमाल करना चाहिए। जैसा कि पहले बताया गया है, पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी वैसे भी या एनीमा और नहान के पहले या नहान के बदले दी जा सकती है।

(४) अगर बुखार के बीच में, जब कि रोग का कुछ नाम न दिया गया है, रोगी मिले तो इलाज का एक क्रम ठीक कर लेना चाहिए। नमूने के लिए एक क्रम नीचे दिया जाता है।

६ बजे सुबह—पेड़ू पर मिट्टी और तब तुरन्त ही एनीमा या कमर-नहान।

७-३० बजे सुबह—रसाहार

१० ३० बजे सुबह—दूध फटा पानी या रसाहार

११ बजे सुबह—शरीर का गीले कपड़े से अच्छी तरह पोंछना

१२ ३० बजे दोपहर—कमर-नहान या पेट पर मिट्टी या कपड़े की गीली पट्टी

२ बजे तीसरे पहर—रसाहार

४ बजे शाम—पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी। बहुत कमजोरी और पतले दस्त आने की हालत में जैसा कि कभी कभी टाइफॉयड में होता है, एनीमा न देना चाहिए। लेकिन अगर कुछ दिनों के बाद फिर कब्ज हो जाय तो एनीमा जरूर देना चाहिए।

६ बजे शाम—रसाहार या फटे दूध का पानी।

(५) जब जब बुखार तेज हो पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी दीजिए। १०१ डिग्री से ज्यादा बुखार हो तो सर पर गीले कपड़े की पट्टी भी दीजिए। जैसे ही ये पट्टियां गरम हो जायें वैसे ही या तो इन्हें बदल देना चाहिए या उस समय के लिए बिलकुल अलग कर देना चाहिए।

(६) रोगी को आराम से लेटना चाहिए।

(७) हर रोज गीले कपड़े से रोगी का शरीर अच्छी तरह पोंछ देना चाहिए। उस समय कमरा बन्द रहे। बुखार छूटने के कुछ दिनों के बाद जब रोगी अनाज खाने लगे तो वह पूरा पूरा मामूली नहाना शुरू कर सकता है। बुखार अगर बहुत बढ़े तो कुछ और उपचार (जिससे रोगी परेशान होता है) न करके काफी ठंडे पानी में तर किए

प्रोफ़ेसर आर्नल्ड एहरेट—जर्मनी निवासी जिन्होंने अमरिका में प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार करते हुए बताया कि सिर्फ़ फलाहार ही ऐसा है जिसमें शरीर में विकार नहीं पैदा होता। इनके सिर के बाल गिर गए थे लेकिन दो वर्ष के लगातार फलाहार और बीच-बीच के उपवास से इन्होंने न केवल सिर के बाल ही फिर से उगाए बल्कि पूर्ण

कपड़े से शरीर को अच्छी तरह साफ करना (पोंछना) चाहिए और सिर को भी अच्छी तरह उस पर पानी डाल कर धोना चाहिए। हरिए नहीं, शरीर को भिगोने के बाद फौरन ही सूखे कपड़े से पोंछना चाहिए और फिर मोटा सूती कपड़ा ओढ़ा देना चाहिए। जब जब बुखार १०३ से ज्यादा बढ़ने लगे स्पंज कर देना चाहिए।

* * *

बहुत बार ऐसा हुआ है कि छठवें सातवें दिन बुखार का नाम मियादी या टाइफॉयड रख दिया गया। इसी समय रोगी की प्राकृतिक चिकित्सा शुरू कर दी गई। दो कमर-नहान के बाद टाइफॉयड काफूर हो गया। किसी किसी टाइफॉयड में ज्यादा दिन लगते हैं क्योंकि टाइफॉयड की अवधि होती है, पर इस चिकित्सा से किसी में भी वैसे उपद्रव नहीं होते जैसे कि टाइफॉयड में अक्सर होते हैं। बुखार अपने आप तक चल कर उतरने लगेगा।

१९३५ की गर्मियों में एक साहब अलमोड़ा पहाड़ के एक गांव में मुझे मिले। वह चार साल से मलेरिया (जाड़ा-बुखार) से परेशान थे। जब जब मलेरिया होता तो कुनैन खाकर उसे दबा देते। इंजेक्शन भी उन्होंने लिया था। फिर भी मलेरिया पीछा न छोड़ता था। उन्हें मैंने तीन दिनों का पूरा उपवास कराया और फिर उपवास के बाद एक हफ्ते तक सिर्फ किशमिश या मुनक्कों पर रखा। तीन-चार दिन सुबह शाम एनीमा से पेट साफ किया गया। मलेरिया ऐसा गया कि आज (२५ मई, सन् १९३९ ई०) तक नहीं लौटा है। इस रोगी को न तो कमर-नहान दिया गया और न मिट्टी की पट्टी। इन इलाजों के बारे में अच्छी बात यह है कि असल काम प्रकृति करती है—नहान इत्यादि से उसे सिर्फ मदद मिलती है।

किसी तरह के बुखार में ऊपर बताए ढंगों से काम ले सकते हैं। रोगी की हालत और शक्ति के अनुसार उपचारों को ठीक करना चाहिए। जल्दबाजी और विलम्ब दोनों ही खराब हैं।

मलेरिया (जाड़ा बुखार)—

यह बड़ा तंग करता है और अक्सर लोगों का ख्याल होता है कि प्राकृतिक उपचारों से मलेरिया नहीं जाता लेकिन ऐसा सोचना गलत है। मलेरिया में इन बातों पर ध्यान देना चाहिए :—

(१) जाड़ा लगने या बुखार बढ़ने के समय कोई भी उपचार काम नहीं करता। इसलिए जब बुखार उतार पर हो तब उपचार आरम्भ करना चाहिए। (२) मान लीजिए, बुखार १०५ दर्जे का हो गया और अब वहीं पर है। अब ठंडे पानी से (कमरा बन्द करके) शरीर को अच्छी तरह स्पंज कीजिए। कपड़े में पानी काफी हो और थोड़े-थोड़ी देर में पानी में डुबाया जाय। पहले रीढ़ और पीठ को २ मिनट हल्का हल्का रगड़ कर पोंछ दीजिए। फिर बारी-बारी से दोनों हाथ, दोनों टांग, पेट, फिर रीढ़ और तब दूसरे पानी में तौलिया भिगो कर चेहरा स्पंज करके पोंछ दीजिए। आखीर में सिर का एक किनारा कर के उसे आराम से रख कर उस पर १ १ मिनट पानी धीरे-धीरे गिराइए और तब सिर को पोंछ दीजिए। शरीर का हर हिस्सा बारी-बारी से अच्छी तरह भीग जाय और तब दूसरे कपड़े से पोंछ कर सुखा दिया जाय। शरीर या सिर को भिगाने से न डरिए लेकिन इसका ध्यान रहे कि भीगा कपड़ा शरीर पर या नीचे न रहे। अब शरीर को ढँक कर दरवाजे खोल दीजिए। इस तरह स्पंज करने से बुखार एक-दो डिग्री कम हो जायगा। अगर १०३ के नीचे बुखार न आ रहा हो तो एक घंटे के बाद फिर इसी तरह स्पंज कीजिए। साथ ही २ २ घंटे का या ज्यादा मात्रा देकर पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी रखिए। (३) बुखार ८—९७ तक उतर कर फिर चढ़ने लगता है। जब ९८ पर आवे तो गरम पानी में कमर नहान दीजिए। पानी सहने लायक काफी गरम हो। सिर में ठंडा कपड़ा अच्छी तरह लपेट दीजिए। रोगी शक्ति के अनुसार ७ से १५

नट तक पानी में बैठे। पेड़ू मलने की जरूरत नहीं। रोगी के टब से
ार निकालने पर शरीर पोंछ दीजिए। अगर पसीना आ गया हो तो
डे पानी में अच्छी तरह निचोड़े कपड़े से शरीर पोंछ कर रोगी को
ाराम से लिटा दीजिए और ऊपर से कम्बल डाल दीजिए। अगर फिर
सीना चले तो फिर ठंडे पानी में निचोड़े कपड़े से शरीर पोंछिए। ऐसा
ो-तीन बार करने के मलेरिया जरूर जायगा। अगर कमर
ान के बदले भाप-नहान और उसके बाद ही शरीर को स्पंज कर के
े पानी में कमर-नहान दिया जाय तो और अच्छा हो, पर ये सारे
चार बुखार के उतरते समय (चढ़ना शुरू होते भी नहीं) ही किए
ं। अगर बुखार ६७ तक गिरता हो तो ६८ पर ही गरम पानी में
र-नहान या भाप-नहान या कुछ न हो सके तो ठंडे पानी में मामूली
र नहान देना चाहिए। अगर सिर्फ ठंडे पानी में कमर-नहान दिया
य तो उस समय पैरों का गरम नहान भी साथ साथ दिया जाय।
४) एनीमा से हर रोज पेट साफ करना जरूरी है। (५) जब
मलेरिया बना रहे तब तक रसाहार ही हितकर है—दिन में ४-५
र। अगर बीमारी ज्यादा दिन चले तो २ बार दूध-फटा पानी और
या ३ बार फल का रस। ऐसे उपचारों से गया मलेरिया फिर
ीं आता।

किसी-किसी मलेरिया में बुखार उतर कर ६-७ घंटे या १२ घटे या
से ज्यादा देर तक बुखार बिलकुल नहीं रहता, फिर धीरे-धीरे बढ़ने
ता है। ऐसे मलेरिया में जब बुखार बिलकुल न रहे तो हर रोज
या दो बार ठंडे पानी में मामूली ढंग का कमर-नहान लेने से कुछ
दिनों में मलेरिया जाता रहता है, या किसी किसी मलेरिया में थोड़ा
ा बुखार बराबर बना रहता है या उतरते ही फिर बढ़ने लगता है।
ी मलेरिया में बुखार के उतार पर जब टेम्परेचर ६८ पर आ जाय
गरम पानी में कमर-नहान या भाप-नहान या धूप-नहान के उपचारों

को करना जरूरी होता है। होशियार चिकित्सक बीमारी के शुरू में समझ जाते हैं कि इसका रूप-रंग कैसा होगा और शुरू से ही वे उचि उपचार करने लग जाते हैं।

टायफ़ायड—

इससे लोग बहुत डरते हैं। पर इसकी तरह लंबा चलने वाला आसान बुखार शायद ही कोई हो। यह लम्बा जरूर जायगा पर उस रसाहार, दिन में पेड़ू पर ३ ४ बार मिट्टी की पट्टी, १०२ से ज्या बुखार होने पर स्पंज इत्यादि उपचारों से यह बिना किसी उपद्रव अपनी अवधि समाप्त कर चला जाता है।

बुखार है या नहीं, इसके जानने के लिए या तो नाड़ी-ज्ञान हो होना या टेम्परेचर नापने के लिए थर्मामीटर का होना जरूरी है।

चेचक

चेचक के बारे में याद रखना चाहिए कि पहले ही दिन से चेचक नहीं निकलती। तीन चार दिनों के बाद दाने निकलते हैं। पहले बुखार रहता है। जैसा कि पहले बताया गया है, बुखार होते ही उसमें प्राकृतिक चिकित्सा करने से या तो चेचक निकलती ही नहीं या अगर निकलती भी है तो कोई उपद्रव नहीं होता।

जब शक (सन्देह) हो कि यह चेचक का बुखार है (बुखार की तेजी, शरीर की जलन और रोगी की परेशानी से यह मालूम हो सकता है) तो और उपायों के साथ अगर बन सके तो सारे बदन पर दोनों पट्टी भी दीजिए। सुबह में एनीमा, दोपहर में गीली पट्टी और फिर तीसरे पहर भी पट्टी या कमर-स्नान—बस, दो-तीन दिन ऐसा करने से बुखार (और उसके अन्दर छिपी हुई चेचक) का खतरा बहुत कम हो जाता है।

कई चेचक के रोगियों को, जिनको दाने भी निकल चुके थे, मैंने हर रोज रसाहार के साथ-साथ सिर्फ एक एनीमा देकर अच्छा किया। एक चेचक का रोगी मुझे एक ऐसे पहाड़ी स्थान में मिला, जहां कोई फल न मिलता था। दूध भी भैंस का ही मिलता था। वह 'खाना-खाना' बहुत चिल्लाता था। इससे विवश होकर उसे एक हिस्सा दूध के साथ दो हिस्सा पानी मिला कर हर रोज देता और साथ ही एनीमा से पेट भी साफ़ कर देता था। रोग देखने में कठिन मालूम होता था, पर १५ दिनों के बाद दानों के दाग़ भी न रह गए।

चेचक में तभी ख़तरा होता है जब कि दाने अच्छी तरह नहीं निकलते। देर तक दी गई सारे शरीर पर गीली पट्टी से दाने खूब निकल जाते हैं, पर अगर कोई गड़बड़ी मालूम हो तो भाप नहान और उसके बाद ज़रा कर कमर-नहान देना चाहिए। एक भाप-नहान काफ़ी है, अगर ज़रूरत ही हो तो दूसर दिन एक और दिया जा सकता है। अगर पेड़ू पर दाने निकल आए हों तो कमर-नहान में पेड़ू न रगड़ कर पानी में या ही बैठना चाहिए। यह भी न बन सके तो पेड़ू पर कपड़े की गीली पट्टी रखी जाय।

चेचक के रोगी को खाना देने में बहुत होशियार रहना चाहिए। अक्सर लोग देवी-देवता समझ कर सभी कुछ खिला देते हैं। ऐसा करना बहुत बड़ी भूल है। मामूली हालतों में, जब कि बुख़ार उतर जाता है और दाने अच्छी तरह निकल आते हैं, सब कुछ खिलाने पर भी रोगी चंगा हो जाता है, पर बहुत बार धोखा भी उठाना पड़ता है। बे-ढंग खाने-पीने से मामूली चेचक बढ़कर घातक बन जाती है। खाने के लिए बुख़ार की हालत में भरसक कुछ नहीं, नहीं तो फलों का रस, और बुख़ार उतर जाने पर हलका फल देना चाहिए।

चेचक में रोगी का पेट साफ़ रखिए और दानों को दबने न दीजिए— बस, बेड़ा पार है।

हैजा

हैजा शुरू होते ही कमर-नहान दीजिए। दो तीन कमर-नाम के बाद से ही लक्षण सुधरने लगेगा। बहुत बार तो एक ही नहान में बीमारी वश में हो जायगी। लेकिन जब जब दस्त आए तब तब दर्द के अनुसार ५ या ७ या १० मिनट के लिए कमर-नहान दीजिए। यह न हो सके तो पेड़ पर मिट्टी रखिए। एक हैजा के रोगी को, जिसके दस्त आ चुके थे और ४ ५ घंटों से पेशाब बन्द था, बीस बीस मिनट पर मिट्टी की पट्टी बदलवा कर मैंने अच्छा किया। पहली पट्टी देते ही पेशाब उतर गया और हालत सुधर गई। दूसरे दिन मिट्टी नहीं मिली, तब मैं कपड़े की मोटी गीली पट्टी रखवाने लगा, शाम तक उसको बुखार हो आया। बुखार आने से समझना चाहिए कि खतरा गया। कुछ हालतों में बुखार नहीं भी आता।

हैजा में खाना एकदम बन्द कीजिए। प्यास लगने पर सिर्फ पानी या नीबू के रस के साथ पानी थोड़ी थोड़ी मात्रा में दीजिए। वैसे भी एक चम्मच पानी में एक चौथाई नींबू का रस बार बार मिलाना अच्छा है। दस्त-कै बिलकुल बन्द हो जाने के एक दिन बाद पानी मिला कर फलों के रस दिन में दो-तीन बार दीजिए। दूसरे दिन बिना पानी मिलाया रस। इस तरह चार पांच दिन के बाद पहले दालों का पानी और तब हल्के भोजन पर रोगी को लाइए।

कमर-नहान के सम्बन्ध में यह ख्याल रखना चाहिए कि अगर नहाते समय गरम पानी में दोनों पैर टखन तक डूबे रहें तो ज्यादा अच्छा होगा। पानी काफी गरम हो पर पांव न जलें। कमजोर रोगी के लिए यह जरूरी है।

प्लेग

अगर बुखार के शुरू में ही उचित चिकित्सा शुरू कर दी जाय तो प्लेग होगा ही नहीं। इसलिए प्लेग के मरीज का भी इलाज बुखार के रोग की तरह कीजिए। अगर गिल्टी निकल आई हो तो उस पर मिट्टी की पट्टी भी दिन में तीन से पांच बार तक दीजिए। एक-दो बार पट्टी देने के बाद उस हिस्से को भाप-नहान या उस पर गरम और ठंडी सेंक भी देनी चाहिए।

लू लगना

लू लगने में सारे बदन पर गीली पट्टी (२० मिनट के लिए) बहुत काम देती है। उसी दिन दो-तीन बार सारे बदन पर गीली पट्टी के साथ-साथ कमर-नहान भी दिया जाय तो रोगी दूसरे ही दिन भला चंगा हो जायगा। मान लीजिए, एक गीली पट्टी अभी उतरी। उसके एक घंटे बाद ही दूसरी पट्टी या नहान दो। हालत को देखो और जरूरत समझो। पट्टी के लिए दो गीले कपड़े हों और ऊपर से लपेटने के लिए मोटा गरम कपड़ा एक ही हो।

अगर कुछ न हो तो खाट पर लिटा कर रोगी को अच्छी तरह खूब ठंडे पानी से देर तक नहलाइए, तीन-चार घंटे के बाद, अगर जरूरत हो तो फिर नहलवाइए।

भोजन के लिए, जरूरत पड़ने पर, सिर्फ रसाहार।

खाँसी

नई खांसी ७ से १० दिन तक में जाती है। पुरानी खांसी में १ से ६ महीने लग सकते हैं।

नई खांसी में एक-दो दिन पूरा या रसाहार पर उपवास कर के दो तीन दिनों तक सिर्फ फलाहार या चार-पांच दिनों तक फलाहार करना

चाहिए और उपवास और फलाहार के दिनों में एनीमा लेना चाहिए फल न मिले तो सिर्फ़ तरकारी या सिर्फ रोटी।

पुरानी खांसी में पहले दस दिनों तक दोनों समय सिर्फ़ फल, फि तीन दिनों का पूरा या रसाहार पर उपवास, फिर एक सप्ताह तक सि फल, फिर एक सप्ताह तक एक समय रोटी भाजी और दो समय फल फि फिर दोनों समय रोटी-भाजी भोजन के लिए देना चाहिए। अगर जरू हो तो इस क्रम को महीना डेढ़ महीने के बाद दुहरा दीजिए। फलाहा और रसाहार के दिनों में एनीमा जरूरी है।

पुरानी खांसी में कमर-नहान या उपस्थस्नान से अच्छी मदद मिलत है। सभी पुरानी बीमारियों में पहले दो हफ्ते तक दोनों समय कमर नहान लेकर फिर एक समय कमर-नहान और दूसरे समय उपस्थस्नान लेना चाहिए। अगर दोनों न बन सकें तो किसी एक से काम निकल सकता है।

खांसी की हालत में, निमोनिया में भी, छाती के चारों तरफ गीली पट्टी देने से और गरम और ठंडी सेंक से बहुत आराम होता है। दिन में दो बार पट्टी और एक बार सेंक काफी है, पर अगर तीसरी या चौथी बार भी जरूरत हो तो दे सकते हैं। गीली पट्टी पर गरम कपड़ा अच्छी तरह रहे।

अगर गले में खराश हो तो गर्म पानी में जरा नमक डाल कर दिन में २-३ बार गरारा करना चाहिए। इस हालत में गर्दन में चारों तरफ से कपड़े की ठंडी पट्टी लपेट ऊपर से एक ऊनी कपड़ा लपेट कर घंटे भर रखना लाभदायक होता है। पट्टी इतनी गीली न हो कि पानी टपके। दिन में दो-तीन बार ऐसी पट्टी दी जा सकती है। रात में सोने से पहले भी पट्टी लपेट देना चाहिए। किसी समय जागने पर या सबेरे खोल सकते हैं।

दमा

दमे का इलाज पुरानी खांसी की ही तरह करना चाहिए। यह कुछ ज्यादा समय लेता है, पर जाता जरूर है। इसमें एनीमा से पेट की सफाई, हल्का खाना, जिससे वायु न हो, गहरी सांस की क्रिया और हल्की कसरत जरूरी है। दमे वाले को रात में रोटी के बदले मुनक्के दिये जायँ।

चमड़े और खून की बीमारी

चमड़े की बीमारियों में नमक छोड़ना जरूरी है, इसलिए जब तक बीमारी दूर न हो जाय फलाहार करके रहना अच्छा है। हां, अगर बिना नमक के सब्जी-भाजी खा सके, जिसमें बहुत थोड़ा घी हो और सिर्फ जीरा, तो कुछ हर्ज नहीं। मामूली और नई बीमारियों में रोटी भी ले सकते हैं।

पुरानी खुजली और एक्जिमा जैसी बीमारियों में फलाहार के साथ साथ बीच में उपवास करना जरूरी है। एक पचीस वर्ष के पुराने एक्जिमा रोग को लेखक ने चार महीने के फलाहार और बीच-बीच में तीन-तीन दिन के उपवास से बिल्कुल दूर कर दिया था। रोगी के सारे शरीर में चकत्ते और जख्म थे और वह सारे हिन्दुस्तान में घूम घूम कर अपना इलाज करा चुका था।

इस रोगी को फलाहार के साथ-साथ सारे शरीर पर गीली पट्टी एक हफ्ते तक रोज दी गई। हर रोज एनीमा भी दिया जाता था। इससे खाल का हाल कुछ सुधरा सा देख पड़ने लगा। फिर एक हफ्ते के बाद उसे सुबह-शाम कमर-नहान दिया जाता था। कुछ ही दिनों में बुखार उमड़ आया, जो एक हफ्ते तक रहा। बुखार में उपवास कराया गया और कमर-नहान जारी रहा। बुखार उतरते ही चमड़े के ऊपर की

तकलीफ पहले से कहीं ज्यादा बढ़गई, जिसका मतलब है कि अन्दर की छिपी खराबियां अच्छी तरह ऊपर प्रकट हो गई। अब कमर-नहान के अलावा दोपहर में उसे सारे शरीर की गीली पट्टी भी दी जाने लगी। भाप-नहान से अच्छा काम हो सकता था, लेकिन रोगी दूसरे शहर में था, और लेखक दूसरे में, और लेखक अपनी गैरहाज़िरी (अनुपस्थिति) में भाप-नहान दिलवाना नहीं चाहता था। पन्द्रह दिनों के बाद यह तक लीफ़ कम होने लगी। फिर तीसरे महीने के अन्त में जुकाम हो गया। जुकाम में रोगी को फिर उपवास कराया गया। जुकाम अच्छा होने के बाद से ही उसकी हालत अच्छी होने लगी। यह रोगी बहुत मांस खाता था, अब नहीं खाता, शरीर बिलकुल नया हो गया है।

एक दूसरे पुरानी खुजली के रोगी को लेखक ने सिर्फ रोटी पर रखा और हर रोज़ गंगा में नहलवाया। नहाते समय वह अपने बदन में मिट्टी भी रगड़ता था। पूछा जा सकता है कि उसे रोटी पर क्यों रखा गया। इसलिए कि फलों के लिए उसके पास पैसे न थे। बात यह है कि सिर्फ रोटी या और किसी एक चीज के पचाने में शरीर की ज्यादा ताकत नहीं लगानी पड़ती। बची हुई ताकत रोग को दूर करने में लग जाती है। प्रकृति तो खुद ही रोग को दूर करना चाहती है, पर शरीर की सभी शक्तियां अधिक भोजन के पचाने, विकारों से लड़ने और ऐसी ही ऐसी फ़जूल बातों में लगी रहती हैं।

बहुत दिन हुए, एक कोढ़ के रोगी को लेखक ने अपना इलाज आप ही करते देखा था। उन दिनों न तो लेखक और न रोगी ही प्राकृतिक चिकित्सा के बारे में कुछ जानता था। जीवन से निराश होकर वह रोगी थोड़े से चने लेकर एक पहाड़ी पर रहने चला गया। उसने सोचा था कि चनों के ख़तम हो जाने के बाद उपवास रखकर प्राण दे दूंगा। दो-तीन दिन में चने खतम हो गये। रोगी ने लगभग एक हफ़्ते तक उपवास किया। इससे वह मरा नहीं, पर उसे खुलकर भूख लगने लगी। बाद

में नीम के दरख्त थे। भूख के मारे उसने नीम के पत्तों को चबाना शुरू किया। नीम में खून साफ करने की ताकत है। एक-दो दिनों में ही उसकी जीने की लालसा लौट आई। साथ ही उसने सोचा कि चने और नीम के पत्ते ही खाकर रहूँ तो अच्छा है, उसने मकान से चने मँगवाये। इस तरह ४-५ महीने वह पहाड़ी पर रहा। वहाँ वह खुली हवा में रहता, झरने के साफ पानी में नहाता और चने खाकर अपने दिन बिताता। इस सब का असर हुआ। प्रकृति के नियम के अनुसार शरीर की शक्तियाँ जग गईं और रोग जड़-मूल से दूर हो गया। उस समय तो नहीं, पर इन दिनों लेखक ने उस घटना से यह सबक सीखा कि शरीर की शक्तियों का, बेकार चीजों के पचाने से बचाकर, जितना कम ह्रास किया जाय उतनी ही ये शक्तियाँ रोगों को दूर करने में समर्थ होती हैं।

मामूली फोड़े-फुन्सियों और जख्म पर दिन में दो तीन बार मिट्टी की पट्टी देने से ही वे एक दो दिन में जाती रहती हैं। बड़े फोड़ों में, जिनमें बुखार भी रहता है, उपवास या रसाहार के साथ-साथ कमर-नहान लेना और फोड़े पर मिट्टी और भाप देनी चाहिए।

उपदंश (गर्मी) और सुजाक का इलाज भी ऊपर बताये ढंग से करना चाहिये। समय लगेगा। इन दोनों बीमारियों में लम्बे उपवास की जरूरत पड़ती है। पहले महीने में तीन दिनों का, दूसरे में सात दिनों का, चौथे में दस दिनों का और छठे में पन्द्रह दिनों का उपवास करना चाहिए। बीच बीच का भोजन नियमित और बिना नमक का होना चाहिए। नहान भी नियमपूर्वक लिये जाय। बीच बीच में धूप या भाप-नहान से मदद मिलती है।

कुछ लोगों की राय में ये दोनों बीमारियाँ जड़ से नहीं जातीं। है कुछ ऐसा ही पर प्राकृतिक चिकित्सा इन्हें निर्मूल कर देती है। उपवास इसके लिए एकमात्र उपाय है।

(८) दिन भर का एक उचित कार्य-क्रम बना लेना चाहिए, जैसे रोग के शुरू होते ही दो-तीन दिन के उपवास के बाद—

५-१० सुबह—पेड़ू पर मिट्टी और उसके बाद एनीमा।

७ बजे सुबह—रसाहार।

८ बजे सुबह—तकलीफ की जगह पर मिट्टी की पट्टी और भाप-नहान और उसके बाद कमर-नहान या उपस्थ-स्नान।

११ बजे सुबह—फलाहार

१२-३० बजे दिन—धूप नहान (सप्ताह में १ या दो बार) और कमर-नहान।

५ बजे शाम—रसाहार या फलाहार

६ बजे शाम—पेड़ू पर मिट्टी और एनीमा या उपस्थ स्नान

७ ३० बजे रात—रसाहार या फलाहार

ऊपर का कार्यक्रम नमूने के लिए है। इसमें हेर-फेर किया जा सकता है। कुछ दिनों के बाद एक समय और कुछ और दिनों के बाद दोनों समय सिर्फ रोटी या रोटी भाजी दी जा सकती है।

गठिया हठी रोग है। पुराना गठिया, जिसमें जोड़ बढ़ गये हैं, दो से चार साल तक में अच्छा हो सकता है। यदि रोग बहुत ही पुराना हो तो एक-डेढ़ महीने के फलाहार के बाद रोगी दो महीने के लिए रोटी या रोटी-भाजी खाकर फिर फलाहार और बीच बीच में उपवास करे।

लेखक ने ५-६ साल के पुराने गठिया के एक रोगी को तीन महीने तक सिर्फ फलाहार पर रखकर और बीच-बीच में उपवास कराकर अच्छा किया। जल चिकित्सा के रूप में वह पहले कुछ दिनों तक ठंडे पानी से सर को धोकर, गर्दन से नीचे गरम पानी से नहाता था और फिर तुरन्त ही ठंडे पानी से नहा लेता था। नहाने के बाद वह शरीर को तौलिए पोंछता न था, बल्कि हथेली से बदन को रगड़कर पानी

सुखा देता था। उसका सारा शरीर जकड़ा हुआ था। एक दूसरे रोगी को लेखक ने सिर्फ चने की पत्तियों के कच्चे और पकाये साग पर दो महीने तक रख कर अच्छा किया। एक बुढ़िया, जो मरना चाहती थी, सिर्फ शरीफे खाकर अच्छी हो गई। इन दोनों रोगियों ने और कुछ उपचार न किये। फलों और भाजियों में खून की खटाई को दूर करने की ताकत है, और साथ ही हल्के भोजन के कारण शरीर की शक्तियां बचकर रोग का दूर करने में लग जाती हैं।

आँखों के रोग

आँखें उठने पर तीन से पांच दिन के लिए फलाहार के साथ साथ दिन में एक बार एनीमा और दो बार आँखों पर मिट्टी की गीली पट्टी बांधना और उसके बाद भाप देना काफी है। आँखें जल्दी ही साफ और अच्छी हो जायेंगी। आँखें उठने के लक्षण देखते ही अगर यह उपचार शुरू कर दिया जाय तो पहले ही दिन तकलीफ जाती रहती है। अगर आँखों में तकलीफ ज्यादा हो और कुछ दिन पहले से आँखें उठी हों तो दिन में एक या दो बार कमर-नहान भी देना चाहिए। मामूली रोटी-तरकारी भी खा सकते हैं, पर आँख के नये रोगों में नमक का इस्तेमाल छोड़ देना ज्यादा अच्छा है।

प्राकृतिक चिकित्सा से आँखों का कोई भी रोग दूर हो सकता है। आँखों की रोशनी का कमजोर होना, दूर की चीजें देख सकना लेकिन पास की नहीं, पास की चीजें देख सकना लेकिन दूर की नहीं, धुँधला दिखाई देना, मोतिया-बिन्द (बहुत पुराना नहीं) वगैर आँखों के सभी रोग प्रकृति का सहारा लेने से जाते रहते हैं। इसके लिए भोजन-सुधार के साथ साथ कमर नहान, उपस्थ-स्नान, रीढ़ की पट्टी और आंख पर और गर्दन के पीछे के हिस्से पर गीली मिट्टी की पट्टी से ऊपर बताये नियमों के अनुसार काम लेना चाहिए। इलाज शुरू करने से पहले तीन दिन का उपवास या

रसाहार और फिर बीच-बीच में एक-दो दिन का उपवास लाभदायक है। हर रोज के लिए कार्य-क्रम बना लेना चाहिए। पहले दो-तीन हफ्ते तक दोनों समय कमर नहान और एक किसी समय पेट और आंखों पर मिट्टी की पट्टी और फिर एनीमा लेना चाहिए। सोकर उठते ही और सोने से पहले आंखों पर ठंडा पानी झोंकना चाहिए। कुछ दिनों के बाद एक बार कमर-नहान और दूसरी बार उपस्थ-स्नान लेना चाहिए। यदि दोपहर में समय मिले तो उपस्थ-स्नान के बदले रीढ़ की गीली पट्टी शाम के साथ ली जा सकती है। बीच-बीच में पन्द्रह पन्द्रह दिनों के लिए आंखों पर मिट्टी की पट्टी भी देनी चाहिए। दो-तीन महीने के बाद आंखों को कुछ खास कसरत देनी चाहिए। आंखों की कमजोरी या पुरानी बीमारी अच्छी होने के लिए तीन से छः महीने या इससे कुछ ज्यादा समय भी लेती है, पर जाती जरूर है। लेखक और दूसरे दूसरे प्राकृतिक चिकित्सकों ने बहुतों का इस तरह बना दिया कि उन्होंने चश्मा लगाना छोड़ दिया।

आंखों की कसरत—

(१) सबेरे के निकलते हुए सूर्य की तरफ कुछ देर एकटक देखना।

(२) जब कभी आंखें हल्के हल्के मटमटाना। यह मटमटाना रदन के समय जरूरी है। आंखों के बंद होने के अन्तर एक दूसरे के बराबर हों।

(३) पुतलियों से बार-बार लेकिन धीरे धीरे ऊपर और नीचे देखना।

(४) पहले बहुत दूर की किसी चीज का एकटक थोड़ी देर तक देखिए और फिर बिना पलक झपकाए ही बहुत पास की किसी चीज को—अपने हाथ में लिए पेन्सिल की नोक का—देखने लग जाइए। इसे कई बार कीजिए।

(५) आंखों की पुतलियों को पहले एक तरफ से और फिर दूसरी तरफ से गोला घुमाइए।

आंखों की और भी कसरतें हैं, पर ऊपर दी हुई काफी हैं। इन कसरतों में बहुत जोर न लगाना चाहिए।

कसरतों के बाद किसी एक बड़े बरतन में जिसमें पूरा चेहरा आसानी से समा सके, ठंडा पानी भर कर चेहरे को डुबोना और डुबाए डुबाए आंखे खोलकर पानी के अन्दर ही देखना चाहिए। इस तरह १–२ सेकंड के लिए ही देखा जा सकता है, क्योंकि दम घुटने लगेगा। दो-तीन बार चेहरा डुबाने और पानी में देखने के बाद बन्द आंखों पर ४०–५० बार उसी पानी के छपके लगाने चाहिए। फिर एक बहुत मुलायम तौलिए से आंखों के चारों तरफ पोंछ पोंछकर हल्के हल्के रगड़ना चाहिए। इसके बाद 'पामिंग' करके इस क्रिया को समाप्त करना चाहिए। ऐसा करने से जल्दी लाभ होगा।

आंखों को आराम देना—

(१) आंखों को आराम देने के लिए उनको जब कभी हल्के हल्के मटमटाना (बन्द करना और खोलना) अच्छा है।

(२) बन्द आंखों को हाथों की हथेली से इस तरह ५–७ मिनट के लिए ढकना कि हथेली एक दूसरे पर तिरछे रहें पर पुतलियों को न दबाएं। इसे अँगरेजी में 'पामिंग' (palming) कहते हैं। पामिंग करते समय आराम से बैठना या लेटना चाहिए, खासकर गर्दन और सिर के हिस्सों में तनाव न रहे। उस समय कोई चिन्ता वाली बात न सोचना चाहिए। आंखें बन्द कर कल्पित काली बिन्दुओं को देखिए और सोचिए कि ये बिन्दुएँ काली होती जा रही हैं।

आंखों की कसरत से पहले, कसरतों के बीच-बीच में और कसरत के बाद 'पामिंग' जरूर करनी चाहिए। जब पढ़ते पढ़ते आंखें थक जायें तो उस समय भी पामिंग कर लेनी चाहिए।

चश्मे का अभ्यास, जितना जल्द हो सके, छोड़ने लग जाइए। पहले तकलीफ मालूम होगी, पर ऐसा करना जरूरी है। चश्मे का साथ छोड़ने से ही आँखें अपना काम ठीक ठीक करने लगेंगी। लेखक के एक ६० वर्ष के मित्र ने, जिन्होंने ४५ वर्ष चश्मा का व्यवहार किया था, अभी हाल में ही लगाना छोड़ दिया। उन्होंने अपने को इतना सबल और स्वस्थ बनाया कि चश्मे की जरूरत ही न रह गई। आँख भी तो शरीर का एक हिस्सा है। सारे शरीर को—खून और नाड़ी-जाल को—ठीक कीजिए, आँखों की मांस-पेशियों को मजबूत कीजिए और उन्हें उचित आराम दीजिए—वे जरूर ही ठीक हो जायंगी।

अपच

कब्ज के इलाज के बारे में पहले बताया जा चुका है। अपच का मतलब है खाना ठीक ठीक न पचना, भूख न लगना, पाखाना न होना या पतला होना, इत्यादि इत्यादि।

इसको दूर करने के लिए पहले उपवास, फिर हल्का भोजन—ऐसा और इतना भोजन कि उसे पेट आसानी से पचा सके—फिर बीच-बीच में उपवास, कमर-नहान और उपस्थ-स्नान, धूप नहान और अपनी ताकत भर दो से छ मील तक टहलना जरूरी है। पुराने अपच में १ महीने से २ साल तक का समय लग सकता है। शरीर नया हो जायगा।

अपच अकसर पेट के बड़े होने और नीचे लटकने से भी बना रहता है। इसके लिए उपवास और कसरत लाभदायक हैं। कसरतों में सर्वांगासन विशेष लाभदायक है। यह आसन आगे बताया जायगा।

आँव

जब तक आँव आती रहे तब तक सिर्फ रसाहार और सुबह शाम पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी, एनीमा और शक्ति के अनुसार एक या दोनों समय कमर-नहान, ऐंठन ज्यादा होने पर पेड़ू और पेट पर गरम या

गरम-ठंडी सेंक या कभी कभी मिट्टी की गरम पट्टी। आंव के बिलकुल निकल जाने पर पहले दो दिन पतला मठा (दिन में तीन बार), फिर उसकी बिना छिलके की पकी भाजी, और फिर साधारण भोजन पर आना चाहिए।

पुरानी आंव के जाने में समय लगता है। इस हालत में दोनों समय नियमित कमर-नहान और चावल-दही या रोटी-भाजी का सहारा लेना चाहिए। नाश्ते में रसदार फल।

नई आंव में पके बेल का गूदा या कच्चे बेल को आग में पका कर उसके गूदे के साथ दही खाने से लाभ होता है।

दर्द

पेट का दर्द—

पेड़ू पर मिट्टी की गरम पट्टी और उसके बाद सहने लायक काफ़ी गरम पानी का एनीमा। अगर ज़रूरत हो तो आध घंटे के बाद फिर पट्टी का दुहरा दीजिए। पुराना और बहुत दिनों तक चलने वाले दर्द में दो तीन बार पेड़ू पर मिट्टी की गरम या ठंडी पट्टी, एक बार एनीमा और एक या दो बार कमर-नहान भी लेना चाहिए। गरम और ठंडी सेंक भी आजमाइए।

जब तक दर्द रहे कुछ न खाना चाहिए। बहुत दिन तक चलने वाले दर्द में रसाहार या सूप-पान और पीछे मठा पीकर रहना अच्छा होता है। गरम या ठंडे पानी के साथ नींबू या सन्तरे का रस सभी हालतों में लाभ के साथ दिया जा सकता है।

सिर और कान के दर्द—

सिर-दर्द में पेड़ू पर (और गर्दन के पीछे के हिस्से पर) मिट्टी की पट्टी और एनीमा। सिर का दर्द अक्सर पेट की ख़राबी से ही होता है, इसलिए पेड़ू पर मिट्टी रखने के बाद एनीमा देना चाहिए। पुराने सिर दर्द में कई दिनों तक कमर-नहान और उपस्थ-स्नान या रीढ़ पर गीली पट्टी भी ज़रूरी है।

मोमन के लिए बहुत तेज दर्द में सिर्फ रसाहार, कम तेज दर्द में फलाहार या शाकाहार और हल्के दर्द में राजी माजी ले सकते हैं।

किसी भी दर्द में, चोट में और मोच में, दर्द के स्थान पर मिट्टी की पट्टी या गरम और ठंडी सेंक (यह सिर में नहीं) या दोनों कुछ अन्तर देकर तब तक जारी रखना चाहिए जब तक दर्द दूर न हो जाय। अगर गहरी चोट और तेज या पुराना दर्द है तो भोजन-सुधार पर भी ध्यान देना चाहिए। नींबू का रस किसी भी हालत में इस्तेमाल कर सकते हैं।

कान के दर्द में तिल्ली के तेल में नींबू का रस मिला कर और उसे जरा गरम कर थोड़ा थोड़ा कान में छोड़ना चाहिए। कान के ऊपर और जड़ में चारों तरफ मिट्टी की पट्टी भी बांध सकते हैं। कान पर भाप दी जा सकती है।

अपेन्डिसाइटिस

जहां पर छोटी आंत बड़ी आंत से मिलती है वहीं पर, पास में ही एक छोटी सी चीज रहती है, जिसे अंगरेजी में अपेन्डिक्स वर्मीफ़ोरम (appendix vermi forum) कहते हैं। उसकी जलन सूजन और उससे उसकी तकलीफ़ को 'अपेन्डिसाइटिस' कहते हैं। इसमें बड़ी परेशानी होती है, पेट की दाहिनी तरफ भयानक दर्द उठता है। विलायती डाक्टरों की राय में अपेन्डिक्स एक बेकार अंग है और नश्तर देकर इसे निकाल देना ही इसका सच्चा इलाज है। लेकिन प्राकृतिक चिकित्सकों की राय में यह एक जरूरी अंग है और यह बीमारी अपने दाप से होती है। इसके शुरू होते ही पूरा उपवास करना चाहिए। बीच बीच में सिर्फ गरम पानी पीना चाहिए। दर्द की जगह पर गरम सेंक या मिट्टी की गरम पट्टी, जब-जब दर्द बढ़े, देनी चाहिए। इसमें सादे गरम पानी का हल्का एनीमा, अगर बन सके तो सुबह शाम नहीं तो एक

समय देना चाहिए। तीसरे रोज तक एक पूरा एनीमा दिया जा सकता है। दर्द के समय गरम पानी में कमर-नहान की तरह बैठने से भी लाभ होता है। जब दर्द शान्त हो जाय तो तीन चार दिन रस या मठे पर रह कर तब रसदार फल खाना शुरू करना चाहिए। अन्न देर से शुरू करना चाहिए। अन्न शुरू करने पर नहान भी शुरू कर देना चाहिए।

नश्तर तभी जरूरी है जब कि बहुत दिनों की लापरवाही या गलत इलाज से अपेन्डिक्स में मवाद आ गया है। अगर शुरू-शुरू में ही ठीक इलाज हुआ तो एक हफ्ते में तकलीफ बिलकुल जाती रहती है, लेकिन—शरीर को ठीक करने के लिए महीने-डेढ़ महीने का संयम और नहान इत्यादि जरूरी हैं।

ज़ख्म

चार बातों पर ध्यान दीजिए—

(१) जख्म को साफ रखना। उसे हर रोज गरम पानी से, जिसमें चार-छः बूंद नीबू के रस (ज्यादा नहीं) पड़े हों, अच्छी तरह धो दीजिए।

(२) दिन में कई बार जख्म पर मिट्टी की पट्टी आध आध घंटे के लिए जरूर रखिए और पट्टी हटाने के बाद जख्म को ठंडे पानी से धो दीजिए। अगर जख्म पुराना और गंदा है तो मिट्टी की पट्टी के बाद उस पर भाप-नहान भी दीजिए।

(३) जख्म को बराबर छिपा कर न रखिए। नारियल के तेल में चार-छः बूंद नीबू का रस डाल कर ऊपर से मरहम की तरह जब-तब लगाइए। मक्खी न बैठेगी।

(४) पुराने जख्मों के इलाज में भोजन-सुधार भी करना होता है।

बड़े से बड़े जख्म का अगर साफ और ढँक कर रखा जाय, उस पर भाप दी जाय और रोजी दिन में दो बार नियमित कमर-नहान से या

वह अथम जल्द अच्छा हो जाता है। याद रहे कि त्रुटि-पूर्ण भोजन के कारण खून में खराबी न पैदा हो।

अगर कोई बड़ा फोड़ा निकल रहा हो तो फौरन ही भोजन-सुधार, एनीमा-प्रयोग और कमर-नहान इत्यादि का सहारा लेना चाहिए। फोड़ा या तो गायब हो जायगा या बहुत छोटा मुँह बन कर उस से मवाद निकल जायगा। जहाँ का चमड़ा सख्त है वहां चीरा लगवाने की जरूरत पड़ सकती है। चीरे के बाद ज़ख्म को और ज़ख्मों की तरह अच्छा कर लेना चाहिए।

दाँतों के रोग

दांत भी शरीर के अंग हैं। सारे शरीर की खराबी के कारण और उसी के साथ-साथ दाँतों की जड़ में खराबी पैदा हो जाने से दांतों के बहुत रोग होते हैं। दाँतों की खराबी का एक खास कारण है, मुलायम चीजों का खाना, जिससे दाँतों की कसरत नहीं हो पाती और दांतों की जड़ में काफी खून नहीं पहुँचता। इन रोगों में 'मसूड़ों से खून निकलना' और 'पायरिया' मशहूर हैं। विद्वान् डाक्टर तो दांतों को उखड़वा कर ही दम लेते हैं। लेकिन क्या दांतों के उखड़वा देने से शरीर के अन्दर की खराबी दूर हो जाती है?

गठिया के रोगी के दांत भी अक्सर खराब रहते हैं। उनसे कहा जाता है, 'दांतों से पीब इत्यादि जहरीले पदार्थ निकलते हैं, जो पेट में जाकर खून को खराब करते हैं—इसलिए दांत उखड़वा दो।' ऐसा कहने वाले यह नहीं सोचते कि दांतों में खराबी कैसे आई। प्राकृतिक चिकित्सा से दांतों की बीमारी और गठिया दोनों एक ही बार में खत्म हो जाते हैं। इसका कारण यही है कि सारा शरीर साफ-सुथरा हो जाता है और फिर उसमें किसी तरह की खराबी नहीं रह जाती।

दांतों की खराबी सारे शरीर की खराबी से होती है, पर उनके विशेष कारण यह भी हैं—ज्यादा मिठाई, खास कर चीनी खाना; गरम-

गरम चीजें खाना; गरम चीज़ खाने के बाद ठंडा पानी पी लेना; बर्फ़, आइस-क्रीम और ऐसी ही ठंडी चीजों का इस्तेमाल, बहुत मात्रा में पान और उसके साथ तम्बाकू खाना दांतों को हर रोज साफ़ न करना, बाजारू दवाइयों और मंजनों से दांत धोना इत्यादि।

दांतों को अच्छी हालत में रखने के लिए शरीर के अन्दर का खून अच्छा होना चाहिए और खून में 'कैलशियम' (calcium—चूना) और 'सिलिकोन' (silicon) नाम के दो पदार्थों का होना जरूरी है। इसीलिए जो अपने दांतों को अच्छा रखना या उनकी खराबियों को दूर करना चाहता है उसे चाहिए कि वह इस किताब में बताए ढंग से पहले फलाहार से अपना शरीर शुद्ध करे और तब अपने भोजन को ठीक करे। याद रखना चाहिए कि 'कैलशियम' गाजर, सभी तरह के साग, हरी मटर, मूली, नींबू, चुकन्दर सन्तरा, अंगूर इत्यादि में और 'सिलिकोन' बिना छने आटे की रोटी, खीरा, ककड़ी, बे-छटे चावलों के भात (जिससे मांड़ नहीं निकाला गया है), अंजीर, किशमिश और खजूर इत्यादि में पाया जाता है। अगर कोई पहले तीन दिन के उपवास या रसाहार और एनीमा प्रयोग के बाद १५ दिन सिर्फ़ फलाहार करे और फिर १ महीना तक एक वक्त रोटी-साग और दो वक्त सिर्फ़ फल और दूध लेकर रहे तो वह दांतों की बहुत सी बीमारियों को भगा सकता है। बहुत दिनों के पुराने पायरिया में कुछ महीने इसी तरह रहना पड़ेगा, लेकिन इसमें कुछ सन्देह नहीं कि वह अपने दांतों को फिर से अच्छा कर लेगा।

दुखते हुए मसूढ़ों और दांतों की हालत में मुंह और दांतों को हर रोज कुछ दिनों तक भाप नहान देना चाहिए। मसूढ़ों की उँगलियों से हल्की हल्की मालिश करनी चाहिए। साथ ही साथ अगर कमर नहान और उपस्थ स्नान लिए जायें तो दांतों के कठिन रोग भी जल्द ही दूर होंगे।

दांतों को साफ करने के लिए बबूल, नीम और आम इत्यादि की दातुन काम में लाना चाहिए। कुछ लोग दांतों की जड़ के कालापन को दूर करने के लिए उसे रेत रेत कर साफ कराते हैं। यह ठीक नहीं है, क्योंकि इससे दांत कमजोर पड़ जाते हैं।

दांत तभी उखड़वाए जाय जब कि उनकी जड़ बिलकुल ढीली पड़ गई हो और दांतों पर कालापन और पीलापन बुरी तरह छा गए हों।

टॉन्सिलाइटिस

गले की कौड़ियों की सूजन के लिए अंगरेजी में इतना बड़ा नाम है। इस बीमारी में खांसी भी रहती है। डाक्टर इसमें भी नश्तर का ही सहारा लेते हैं और उस हिस्से को काट कर इस भ्रम में पड़ जाते हैं कि रोग जाता रहा। वह बेचारा हिस्सा तो सिर्फ यह बताता था कि शरीर में विकार है, जिसका असर (प्रभाव) उस पर पड़ रहा है। भला उसके काट देने से शरीर का विकार क्योंकर दूर हो जायगा? देखा गया है कि जिनकी कौड़ियां इस तरह काट दी जाती हैं उन्हें जुकाम या कोई दूसरा रोग बना रहता है। इसलिए इस बीमारी का भी उपवास, फलाहार और भोजन-सुधार और दूसरे प्राकृतिक ढंगों के प्रयोग से दूर करना चाहिए। और उपायों के साथ-साथ कुछ दिनों तक हर रोज एनीमा का प्रयोग जरूरी है। कभी-कभी गर्दन और गले के भाप-स्नान से जल्द लाभ होता है। कौड़ियां तभी निकलवाई जायँ जब कि उनमें पीब पड़ गई हो, लेकिन ऐसी हालत में नश्तर के बाद भोजन-सुधार इत्यादि से शरीर को साफ-सुथरा कर लेना चाहिए। इस बीमारी के दूर होने में कुछ समय लगता है, घबराना न चाहिए।

बवासीर

भोजन प्रणाली (वह नाली जो एक सीध में लेकिन टेढ़ी-मेढ़ी होती हुई मुंह से लेकर पाखाने के रास्ते तक है) के अखीर के हिस्से में

कब्ज़ होने और रक्त-संचार में बाधा पड़ने से यह बीमारी होती है। पुराने कब्ज़ और पाख़ाने के समय ज़ोर लगाने से यह तकलीफ़ अक्सर हो जाती है। यह दुहराने की ज़रूरत नहीं कि कब्ज़ की जड़ में कई खराबियां रहती हैं। बवासीर की दो किस्में हैं—खूनी और बादी। बवासीर चाहे खूनी हो या बादी, इलाज एक ही है। इसके इलाज में इन बातों पर ध्यान देना चाहिए —

(१) तकलीफ़ शुरू होते ही उपवास और तब फलाहार पर रहना चाहिए।

(२) पुराने रोग में फलाहार की अवधि के बाद बहुत दिनों तक दिन में एक वक्त रोटी और हरी पकी भाजी खाना और दो बार फलाहार करना चाहिए। दाल खाना तब तक छोड़ देना चाहिए जब तक कि बीमारी बिल्कुल अच्छी न हो जाय। कोई भी कब्ज़ करने वाली चीज़ न खानी चाहिए।

(३) शुरू में लगातार एनीमा-प्रयोग करना चाहिए और जभी कब्ज़ हो एनीमा का सहारा लेना चाहिए। खूनी बवासीर में एनीमा का पानी ऐसा हो कि वह न ठंडा ही हो न गरम। गरम पानी से खून जायेगा। ठंडे पानी में बहुत थोड़ा गरम पानी मिला कर पानी तैयार कर लेना चाहिए। गर्मी में ठंडे पानी से काम लेना चाहिए।

(४) पेड़ू-नहान से बहुत लाभ होता है। सुबह-शाम पेड़ू-नहान लेना चाहिए।

(५) तकलीफ़ की जगह पर मिट्टी की पट्टी या भाप-नहान या कभी-कभी दोनों (पट्टी के बाद भाप-नहान) पहले हर रोज़ और आगे चल कर हर तीसरे-चौथे रोज़ लेना चाहिए।

(६) सोने के समय अगर पाख़ाने के रास्ते से आध पाव बहुत ठंडा पानी (गर्मी में बर्फ़ मिलाई जा सकती है) आंत में चढ़ा दिया जाय और वहीं रोक लिया जाय तो बहुत फ़ायदा होगा। इसके लिए

'ग्लिसरीन सिरिंज' (glycerine syringe) काम में लाना चाहिए। यह न हो तो एनीमा के यंत्र से भी काम लिया जा सकता है। यह क्रिया खूनी बवासीर के लिए जरूरी है और चिकित्सा के शुरू में लगातार दस पन्द्रह दिनों तक इसे जारी रखना चाहिए। बाद में भी ठंडा पानी चढ़ाया जा सकता है।

यह बीमारी जरा देर से जाती है। इसमें नश्तर से सच्चा लाभ नहीं होता क्योंकि अन्दर खराबी बने रहने से नश्तर के बाद फिर हो जाती है। लेखक ने एक ऐसे रोगी का अच्छा किया है, जिसने ५ बार नश्तर लिया था पर अच्छा न हो सका था।

यक्ष्मा

शुरू शुरू की (दूसरे दर्जे के शुरू तक) यक्ष्मा (तपेदिक, थाइसिस) प्राकृतिक चिकित्सा से निश्चय ही जाती है, लेकिन अगर रोगी की जीवन-शक्ति का ह्रास हो गया है या उसका फेफड़ा या शरीर का कोई जरूरी अंग इतना खराब हो गया है कि वह सुधर नहीं सकता तो ऐसा रोगी अच्छा नहीं हो सकता।

यक्ष्मा के रोगी की चिकित्सा में इन बातों पर पूरा ध्यान दीजिए—

(१) वह बराबर ही ऐसी खुली जगह में रहे, जहां उसे सोते जागते साफ हवा मिले। इसी से यक्ष्मा के रोगियों को नदी में नाव पर या ऊँचे पहाड़ी इलाके में रहना बताया जाता है। अगर यह न हो सके तो ऐसा प्रबन्ध (इन्तजाम) जरूर करना चाहिए कि रोगी अच्छी, साफ और खुली जगह में रहे। जाड़ों में भी रात के समय उसे रजाई या कम्बल से अच्छी तरह ढक कर ऐसी जगह में रखना चाहिए, जहां हवा बेरोक आती-जाती हो।

(२) *दिन में उसके सारे नंगे शरीर में जितनी ज्यादा देर तक हो सके साफ हवा और रोशनी (धूप नहीं) लगे। इस अभ्यास को पहले ५ मिनट से शुरू करके समय को धीरे धीरे बढ़ाना चाहिए।*

ताक़त होने पर धूप-नहान शुरू करना चाहिए।

हवा, रोशनी और धूप में ही यक्ष्मा रोग को भगाने की सच्ची शक्ति है।

(३) रोगी को काफ़ी आराम मिलना चाहिए।

(४) कमज़ोर रोगी से उपवास न कराना चाहिए। शक्ति के अनुसार एक बार गाय या बकरी का कच्चा दूध, दूसरी बार रोटी और एक भाजी, तीसरी बार एक फल और दूध और चौथी बार सब्ज़ी का रस और थोड़ा दूध हर रोज़ देना चाहिए। यह ख़याल रहे कि मात्रा इतनी ही हो जो पच जाय। अच्छा हो अगर रोगी तीन बार भोजन करे—एक बार, किशमिश और दूध, दूसरी बार, रोटी और भाजी तीसरी बार, सेब की तरह का फल या फिर किशमिश या दूध लेकिन अगर कमज़ोरी ज़्यादा है तो थोड़ा थोड़ा भोजन कई बार देना चाहिए।

रोग शुरू होते ही एक दिन उपवास, फिर २–३ दिनों तक रसाहार करके अगर १५ दिनों तक दिन में ४–५ बार दूध पीकर ही रोगी रहे और तब दो बार फल और दूध और एक बार रोटी-भाजी खाने लगे तो बहुत लाभ हो। दूध की मात्रा एक बार ३ छटांक से शुरू करके ५–६ छटांक तक हो सकती है। यक्ष्मा में रोगी का वज़न जल्दी जल्दी घटता है, इसलिए बाद में उपवास वर्जित है। आगे चलकर भोजन में अच्छे गाय के दूध का थोड़ा मक्खन (रोटी के साथ) मिलाना चाहिए। इस रोग में दूध, मक्खन, मठा से बहुत लाभ होता है। पर मात्रा इतनी ही रहे कि आसानी से पच जाय।

इसी तरह महीने, सवा महीने, डेढ़ महीने के बाद २ दिन का रसाहार करके अगर १५ दिन सिर्फ़ दूध पर रोगी रहे और फिर थोरे-थ रे दूध फल और एक बार रोटी भाजी के अलावा २–३ बार दूध पीकर रहे तो वह निश्चय अच्छा हो जायगा।

नमक छोड़ देना बहुत लाभदायक होता है। इस रोग में सबसे अच्छा बकरी का दूध होता है।

इस रोग के प्रारंभ में हर रोज तीसरे पहर या शाम को पेशा बुखार हो जाता है और तबियत गिरी गिरी रहती है। उसी समय से अचूक चिकित्सा के ढंगों से काम लेना चाहिए—१ दिन उपवास, २ दिन रसाहार, फिर १५ दिन सिर्फ दुग्धाहार, इसके बाद १५ दिन १ या २ बार फल-दूध, १ बार सिर्फ दूध और १ बार (दिन में) रोटी-भाजी, सवा महीने के बाद फिर इस क्रम को दुहराना चाहिए। इस तरह करते रहने से नया रोग ३–४ महीने में जरूर चला जाता है।

(५) हर रोज एक बार, नहीं तो एक दिन बीच देकर, एनीमा।

(६) बीच बीच में जब कभी छोटे चम्मच के आधे जितने रस में लहसुन के दो-चार बूँद डालकर रोगी को देना चाहिए।

(७) मोजन, धूप-नहान और कमर-नहान इत्यादि का एक अच्छा कार्यक्रम हर रोज के लिए बना लेना चाहिए, जैसे

६ बजे सुबह—मेहन-नहान। फिर गरम कपड़ा ओढ़कर लेटना या अगर शक्ति हो तो शक्ति भर टहलना।

७–१० बजे सुबह—एक पाव दूध और एक सतरे का नाश्ता।

८ बजे से १०–३० बजे तक हवा और रोशनी में लेटना।

१०–१० बजे सुबह—पूरा नहान या गीले कपड़े से बदन को अच्छी तरह पोंछ लेना।

११ बजे सुबह—फल-दूध या रोटी-भाजी खाना। कुछ दिनों के बाद थोड़ा गाय का मक्खन लिया जा सकता है।

१ बजे दोपहर—पानी पीना।

२ से ३ बजे तीसरे पहर—हवा और रोशनी में लेटना। अगर ठंढ मालूम हो तो एक पतली चादर ऊपर से डाल सकते हैं।

३ बजे—पेड़ पर मिट्टी।

४-१० बजे कोई मीठा फल और दूध या एसा मठा, जो खट्टा न हो।

६-१० या ७ बजे शाम—कमर-नहान और उसके बाद शक्ति-भर टहलना या गरम कपड़ा ओढ़कर लेटना।

८ बजे रात—मुनक्के या सेब और दूध या सिर्फ दूध।

रोगी की अवस्था के अनुसार ऊपर का नमूना देख कर एक कार्यक्रम बना लेना चाहिए। यक्ष्मा के शुरू में बहुत से रोगी इस अवस्था में रहते हैं कि वे टहल सकें। उनके लिए शक्ति भर टहलना और धीरे-धीरे टहलने की मात्रा को बढ़ाना बहुत हितकर होगा। रोगी को गर्मी से बचाना चाहिए। गर्मी में रोगी कमजोर हो जाते हैं। इसीलिए पहाड़ों पर ले जाना अच्छा होता है, पर दूसरी जगहों में भी गर्मी से बचने का उपाय हो सकता है।

कहने की जरूरत नहीं कि ऐसे अनेक रोगी, जिनकी हालत बिल्कुल खराब नहीं हुई थी, प्राकृतिक चिकित्सा से अच्छे हो गये हैं। समय जरूर लगता है, इसलिए धैर्य-पूर्वक चिकित्सा करनी चाहिए।

जिन रोगियों के कफ में मवाद या पतले दस्त आने लगते हैं उनका रोग कठिन समझना चाहिए। ऐसी बहुत हालतों में कोई चिकित्सा काम नहीं करती।

रक्त चाप का बढ़ना

इसे अंगरेजी में हाई-ब्लड प्रेशर (high blood pressure) कहते हैं। यह अमीरों की बीमारी है और ज्यादातर उन्हीं को होती है, जो चाय, कहवा, शराब, कबाब, अंडे, तम्बाकू, सिगरेट आदि बहुत मात्रा में इस्तेमाल करते हैं और सुस्ती काहिली की जिन्दगी बिताते हैं। खून ले जाने वाली नली में विकारों के इकट्ठा हो जाने से नली सकरी पड़ जाती है और खून के दौरान में रुकावट होती है। इसीलिए दिल

को ज्यादा काम करना पड़ता है, जिससे खून का दबाव बढ़ जाता है—सिर में चक्कर, दिल में घबराहट और कई तरह की परेशानियां होती हैं। फालिज भी हो सकता है।

इसके लिए पहले तीन दिन का उपवास, फिर ३–४ दिन या ज्यादा दिनों के लिए किसी किसी हालत में एक सप्ताह उपवास और १५–२० दिन रसाहार की जरूरत पड़ती है। रसाहार, फिर कुछ दिनों (लगभग दो हफ्ते) के लिए फलाहार, तब नियमित भोजन (दो बार फल और एक बार रोटी-भाजी) और फिर डेढ़-दो महीने के बाद फिर उपवास और उसके बाद नियमित भोजन करना चाहिए। कुछ दिनों के बाद कमर नहान और उपस्थ स्नान (या रीढ़ की गीली पट्टी) दोनों ही साथ शुरू किए जा सकते हैं। एनीमा का समय ठीक करके शुरू से ही एनीमा कुछ दिनों तक रोज लेना चाहिए। तकलीफ कम होने के बाद प्राकृतिक भोजन पर ही रहना चाहिए। इसमें धूप नहान या भाप-नहान वर्जित है। सिर का चक्कर, परेशानी, नींद न आना इत्यादि लक्षण पहले उपवास और फलाहार और फिर नहानों या रीढ़ की गीली पट्टी से जल्द चले जाते हैं। इसमें रोगी को आराम करना चाहिए और शान्त रहना चाहिए। धीरे धीरे टहलने का अभ्यास बढ़ाया जा सकता है।

घटा हुआ रक्त-चाप

जिस तरह रक्त-चाप के बढ़ने की बीमारी होती है उसी तरह रक्त-चाप के घटने या कमजोर पड़ने की भी बीमारी होती है। इस बीमारी में सिर खाली खाली मालूम होता है और सिर के दर्द और भारी रहने की अवस्था के कारण कमजोरी बनी रहती है। चलते समय पैर लड़खड़ाते से मालूम होते हैं, रोगी गिर भी सकता है। बढ़े रक्त-चाप से सिर भरा भरा रहता है और घटे रक्त-चाप में सिर खाली-खाली सा मालूम होता है। इस अवस्था को दूर करने के

लिए पहले एक दिन उपवास, दो दिन रसाहार, तब पांच-सात दिन सिर्फ फलाहार (दिन में तीन बार, एक समय एक तरह का फल), दोनों समय एनीमा, फिर तीन हफ्ते तक फलाहार और हर बार फल के साथ थोड़ा-थोड़ा दूध, बीच-बीच में छोटे चम्मच भर शहद (दिन में दो बार) और टहलने का क्रम बनाना चाहिए। तीन हफ्ते के बाद दो बार फल-दूध और एक बार रोटी भाजी और सुबह शाम कमर-नहान के बाद टहलने से बहुत लाभ होगा। काफी दिन तक चिकित्सा चलनी चाहिए।

दिमाग की खराबी

सभी दिमाग की खराबियों के लिए और मृगी इत्यादि के लिए भी वही इलाज करना चाहिए जो रक्त चाप के बढ़ने के सम्बन्ध में बताया गया है। उपस्थ-नहान शुरू से होना चाहिए।

फालिज, लकवा

शुरू में तीन से पांच दिन तक रोगी को उपवास और तब रसाहार पर रखकर या सात दिनों तक लगातार रस पर रखकर दिन में दो या एक बार एनीमा का प्रयोग करना चाहिए। फिर फलाहार और बीच बीच में एक-दो दिन के लिए रसाहार या उपवास। चार-पांच दिन सिर्फ फलों पर रखकर उसके बाद हर बार फल के साथ तीन-तीन छटांक दूध देना चाहिए। फिर एक बार रोटी-भाजी और दो बार फल-दूध। और सभी इलाज ऊपर दिए रक्त-चाप के इलाज की तरह होंगे। इसमें बहुत दिनों तक क्रम से इलाज करना चाहिए। मांस का शोरबा, अंडा इत्यादि बिल्कुल वर्जित है।

मैं एक ऐसे सज्जन को जानता हूँ, जिन्हें लगभग ६० की उम्र में बुरी तरह फालिज का शिकार होना पड़ा। तब से उन्होंने अन्न खाना

छोड़ दिया। सिर्फ़ फलाहार से ही वे स्वस्थ हो गये। दूसरा कोई भी इलाज नहीं किया।

बात यह है कि ज़्यादातर बीमारियाँ खाने-पीने की बदपरहेज़ी और इसी तरह कुदरत के दूसरे कानूनों को तोड़ने से होती हैं। जैसे ही आदमी अपने को सम्हालता है वैसे ही शरीर के अन्दर की प्राकृतिक शक्ति खराबी को निकालने और शरीर की मरम्मत करने में लग जाती है। इस बात को अच्छी तरह समझना चाहिए—शरीर के अन्दर ही वह ताकत है, जिससे अपने आपको वह ठीक कर ले सकता है। उसके सामने की अड़चनों को दूर कर देना चाहिए।

लकवा, फ़ालिज कई तरह के होते हैं। एक तो वह, जो रक्त-चाप के बढ़ने से होता है, दूसरा वह, जो घटे रक्त-चाप की हालत में होता है। बढ़े रक्त-चाप में जब इस रोग का दौरा होता है तो आदमी एक-ब-एक गिर जाता है और उसका कोई अंग या एक तरफ़ का सारा शरीर निर्जीव सा हो जाता है। घटे रक्त-चाप वाले रोग में एक-ब-एक दौरा नहीं होता, बल्कि धीरे धीरे कमज़ोरी बढ़ती है और एक एक करके अंग सुन्न होने लगते हैं। बढ़े रक्त-चाप वाले रोग में शुरू-शुरू में तो उपवास और रसाहार ज़रूरी है, घटे रक्त-चाप वाले में पहले फलाहार (७ से १० दिनों तक), फिर फल और दूध (१५ से २० दिनों तक), फिर नियमित भोजन (१५ दिनों तक) और तब इसके बाद रसाहार (३ से ५ दिनों तक) करना चाहिए। रसाहार के बाद फिर फलाहार और नियमित भोजन पर आना चाहिए। इस अवस्था में धीरे-धीरे टहलना और उसकी मात्रा और तेज़ी बढ़ाकर और टहलना बहुत लाभदायक होता है। मालिश दोनों ही हालत में लाभदायक है।

वीर्य-दोष

(१) शरीर में ताकत हो तो एक से तीन दिन का उपवास या रसाहार और दिन में दो बार एनीमा-प्रयोग।

(२) पन्द्रह दिन के लिए फलाहार और दिन में एक या दो बार एनीमा का प्रयोग।

(३) फिर पन्द्रह दिन के लिये फलों के साथ थोड़ा थोड़ा कच्चा दूध या मठा लेना। जरूरत होने पर एनीमा प्रयोग।

(४) फिर एक समय रोटी और एक-दो भाजी और दो समय फल और दूध। कुछ दिनों के बाद दोनों समय रोटी-भाजी और एक समय फल-दूध (सुबह में)।

(५) फल-दूध के भोजन के समय से ही एक महीने के लिए दोनों समय कमर-नहान और फिर एक महीना एक बार कमर-नहान और दूसरी बार उपस्थ-स्नान। कुछ दिनों के बाद दोनों समय उपस्थ-स्नान। अगर उपस्थ स्नान न बन सके तो सुबह में कमर-नहान और तीसरे पहर पेड़ू की गीली पट्टी लेनी चाहिए।

(६) हफ्ते में एक बार धूप-नहान और उसके बाद कमर-नहान।

(७) ताकत भर टहलना या कसरत। मात्रा धीरे-धीरे बढ़ाई जाय।

समय छः महीने से लेकर दो-ढाई वर्ष तक लग सकता है।

इस रोग में अक्सर लोग हतोत्साह रहते हैं। कुछ लोग और पुस्तकें भी इस रोग की भयानकता का बयान करके रोगी को पस्त-हिम्मत बनाये रहते हैं। यह ठीक नहीं। वीर्य-दोष खराब, बहुत खराब, जरूर है, लेकिन हतोत्साह होने का भी कोई कारण नहीं है। ब्रह्मचर्य के पालन के लिए पेट का बिलकुल साफ रहना बहुत जरूरी है, नहीं तो शरीर के अन्दर ही उत्तेजना होती है, जिससे ब्रह्मचर्य भंग के कई उपाय सूझते हैं। पेट साफ रखना, सत्संग, खुले स्थान में रहना और काफी कसरत करना जरूरी है।

गंजापन, चंदलापन

सिर के बालों के गिर जाने को गंजापन कहते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा से यह ऐब भी दूर हो जाता है। अमेरिका के प्रोफेसर आर्नोल्ड

एवरेट के सिर के बाल बिल्कुल गिर गए थे। दो वर्ष के लिए उपवास और बीच-बीच में उपवास से उनके बाल पहले की तरह उग आए, साथ ही शरीर पूरे तौर से स्वस्थ हो गया। नीचे लिखी बातों पर ध्यान दीजिये —

(१) नहानों से, खासकर कमर-नहान से, बहुत मदद मिलती है।

(२) सिर को जब कभी फुरसत मिले तो, उँगलियों की नोक से धीरे-धीरे रगड़ना चाहिये। यह रोग के शुरू में जरूरी है। नहाते वक्त ऐसा करने से बहुत लाभ होता है।

(३) नींबू को काटकर उसके आधे टुकड़े से नहाने के पहले सिर को मलना चाहिये।

(४) रात में सोते समय नारियल के तेल में नींबू का थोड़ा रस मिलाकर उससे सिर की हल्की रगड़ी, लेकिन कुछ देर तक, मालिश करनी या करानी चाहिये।

(५) भोजन-सुधार इत्यादि से सारे शरीर की तन्दुरुस्ती को बढ़ाइये, सिर के बाल उग आयेंगे।

(६) सर्वांगासन के अभ्यास से बहुत फायदा होता है। यह और कसरतों के साथ आगे बताया जायगा।

इसी तरह बालों का कुसमय ही सफेद होना भी रोका जा सकता है। अगर बाल की जड़ें नष्ट हो गई हैं तो गंजापन नहीं जा सकता। जिनका सिर बिल्कुल सफाट हो गया है उनके लिये आशा नहीं है।

बुढ़ापा, दुबलापन

दोनों असल में एक ही रोग के दो रूप हैं। शक्ति भर उपवास, फिर १५ दिन का फलाहार, बीच-बीच में उपवास, नियमित भोजन, कमर-नहान और उपस्थ-स्नान, कसरत इत्यादि उपचारों से काम लीजिये।

दुबला होने के लिये दूध, घी, मक्खन कुछ दिनों तक बिल्कुल छोड़ना चाहिये। आगे चलकर दूध के बदले मठे का व्यवहार करना चाहिये।

अगर उसमें नींबू निचोड़ लिया जाय तो और लाभ हो। दिन में एक बार एक गिलास गरम पानी में एक नींबू निचोड़कर पी लिया जाय तो और अच्छा हो।

मोटे होने के लिये पहले २ ३ दिन उपवास करके धीरे धीरे दूध की मात्रा बढ़ानी चाहिये।

अगर शरीर की अन्दरूनी सफाई करने के बाद समुचित भोजन किया जाय तो वजन बढ़ेगा और शरीर मांसल होगा। कुछ दिनों के नियमित भोजन के बाद रोटी के साथ थोड़ी-थोड़ी मात्रा में गाय का मक्खन या घी लेना चाहिये। पिंडखजूर या अंजीर के साथ मक्खन लेना भी सहायक होता है। मात्रा पर जरूर ध्यान देना चाहिए। किसी तरह भी अपच न हो।

दुबला और मोटा होने के लिये, दोनों ही बातों के लिए, कसरत जरूरी है। एक ही तरह की कसरतों से दोनों काम बनते हैं, लेकिन दुबला होने के लिये उसी कसरत को जल्दी-जल्दी और तेजी से दुहराना चाहिये और मोटा होने के लिये धीरे-धीरे। हर हालत में कसरत की मात्रा पर ध्यान देना चाहिये। मोटे लोगों के लिये पहले टहलना शुरू करना ही ठीक होगा। मुटाई कम करने में यह देखना चाहिये कि वजन बहुत जल्दी-जल्दी न घटे, नहीं तो दिल की कमजोरी बढ़ेगी।

दिल की धड़कन

यह बीमारी ज्यादातर दिल की खराबी या कमजोरी से नहीं बल्कि पेट की खराबी से होती है। पेट की वायु का असर दिल पर पड़ता है। अगर दिल की कमजोरी भी हो तो भी इलाज यही है। पहले फलाहार से

शुरू कीजिये। उपवास बहुत लाभदायक है लेकिन कमजोर दिलवालों को उपवास से घबराहट होती है। इसलिये कुछ दिन के फलाहार, पेडू-नहान, मिट्टी की पट्टी और एनीमा-प्रयोग के बाद एक-दो दिन रसाहार पर रहना ठीक होता है। इस तरह पन्द्रह बीस दिन फलों पर रहकर फल और मठा या दूध पर रहना चाहिये। फिर तन्दुरुस्ती के दिनों के भोजन और विविध नहान। दिल की बीमारियों में धूप या भाप-नहान वर्जित हैं।

नाड़ी-संस्थान की दुर्बलता

इसको अँगरेजी में न्यूरसथीनिया (neurasthenia) या नर्वस ब्रेक डाउन (nervous breakdown) कहते हैं। इसमें सारे शरीर में बहुत सुस्ती, दिमाग में सुस्ती, घबराहट, चिड़चिड़ापन, नींद का न आना या कम आना इत्यादि लक्षण प्रकट होते हैं। पेट की खराबी, काफी आराम न करना, दस-घस की जिन्दगी, ब्रह्मचर्य के अभाव इत्यादि से ऐसी दशा होती है। इसका इलाज वैसा ही करना चाहिये जैसा कि रक्त-चाप के बढ़ने पर लेकिन इसमें काफी दिनों तक शारीरिक और मानसिक आराम बहुत जरूरी है। रोगी के संबंधियों को चाहिये कि उसे आराम दें और किसी भी तरह चिढ़ने कुढ़ने का मौका न दें। इस रोग वाले के लिए जरूरी है कि वह प्रसन्न-चित्त और उत्साह-पूर्ण रहे। उसे स्वयं और घर वालों का भी इसके लिये कोशिश करनी चाहिये।

कोप-वृद्धि

कोप-वृद्धि या आन्त्र-वृद्धि एक ऐसा रोग है, जो कमजोरी के कारण होता है और शरीर को काहिल बनाये रहता है। यह रोग भी, अगर कई साल का पुराना न हुआ हो तो, प्राकृतिक उपचारों से जाता है। मिनि-

देखा है कि अक्सर उपवास और फलाहार के दिनों में ही मेरे मरीजों की श्रम-वृद्धि में बहुत कुछ कमी हो गई है। इसलिए इस राग की चिकित्सा पहले तीन दिनों के उपवास, १० दिनों के फलाहार और फिर फल और दूध के भोजन और साथ ही साथ एनीमा प्रयोग से शुरू करना चाहिये। फल और दूध खान के दिनों से कमर नहान इत्यादि और हर हफ्ते भाप-नहान लेना भी शुरू करना चाहिये।

बच्चों के रोग

बच्चों के रोगों के प्राय वही इलाज हैं जो बड़ों के लिये हैं। छोटे बच्चों के दूध पिलाने का समय बंधा होना चाहिये। डेढ़ साल स पहले उन्हें अन्न न देना चाहिये।

इस विषय पर 'बच्चों का पालन-पोषण' नामक खंड में, जो आगे है, बातें विस्तार-पूर्वक बताई गई हैं।

स्त्री रोग

इस संबंध की बातें एक अलग खंड में आगे बताई गई हैं।

* * * *

ऐसे बहुत से छोटे-मोटे रोग बच रहे हैं, जिनका इलाज यहाँ नहीं बताया गया है, लेकिन अगर पाठक ने पहले के पृष्ठों को अच्छी तरह पढ़ा है तो वे जरूर समझ सकेंगे कि किस रोग का इलाज किस तरह होना चाहिये। रोगी की शारीरिक अवस्था को अच्छी तरह समझ कर इस हिसाब से दिये उपायों को नियम के साथ लगाना चाहिये।

यह संभव नहीं कि सब तरह के रोगों का उपचार बताया जा सके। कभी-कभी बहुत से लक्षण एक ही साथ होते हैं। ऐसी हालत में चिकित्सक को समझदारी से काम करना होता है। एक बार मुझे एक सात साल का रोगी बच्चा मिला। उसे गर्दनतोड़ बुखार (meningitis)

था। लक्षणों में बेहोशी, वाणी का बन्द हो जाना, निमोनिया, पतले दस्तों का आना थे। पहले उसे दिन में २ बार पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी दी गई और १ बार सारे शरीर की गीली पट्टी दी गई। तीन चार दिन में उसके सभी लक्षणों में कमी हुई। फिर एनीमा दिया जाने लगा। दो-तीन दिनों के बाद एनीमा के यंत्र के सहारे उपस्थ-स्नान दिया जाने लगा। इस तरह धीरे धीरे सुविधा के अनुसार कई तरह के उपचार काम में लाये गये, बच्चा तीन हफ्ते में भला-चंगा हो गया।

चिकित्सा के यही नियम हैं। वे बताये जा चुके हैं। समझदारी से काम लेना चाहिये।

वर्नर मेकफ़डन

न्यूयार्क (अमरीका) निवासी शारीरिक योग्यता के सिद्धान्तों के उत्साही प्रचारक और संसार प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक

पुराने रोगों का इलाज

इसके पहले जो बीमारियों के इलाज बताये गये हैं उनमें जीर्ण (पुराने) रोगों के इलाज भी हैं। लेकिन वैसे रोगों पर खास रोशनी डालने के लिए यह अध्याय लिखा जा रहा है।

पुराना रोग किसे कहते हैं—

उम्मीद है कि पाठक अब तक यह समझने लगे हैं कि पुराना या जीर्ण रोग (chronic disease) किसे कहते हैं लेकिन उसके लक्षण फिर भी यहां दुहराये जाते हैं। जिस रोग में बहुत तेज तकलीफ नहीं रहती, जो बहुत दिनों तक, अक्सर मरने तक, चलता है और जिसके साथ आदमी न तो जल्दी मरता ही है और न जीते रहने का ही आनन्द पाता है, उसे पुराना या जीर्ण रोग कहते हैं। जब शरीर में काफी मात्रा में जीवन-शक्ति रहती है तब तो शरीर अपने अन्दर के विकारों को नये या तीव्र रोग (acute disease) के रूप में बाहर निकाल देता है। नये रोग कुछ दिन रह कर चले जाते हैं, और अगर उनकी उचित चिकित्सा हुई तो, वे शरीर को पहले से ज्यादा अच्छी हालत में छोड़ जाते हैं। लेकिन अगर नये रोग अनुचित दवा और भोजन या और गलत तरीकों से बार बार शरीर के अन्दर ही दबा दिये जाते हैं, और साथ ही जब शरीर में काफी जीवन शक्ति नहीं रहती, तो पुराने रोग खड़े हो जाते हैं। कोई भी रोग पुराना हो सकता है, पर मशहूर पुराने रोगों में दमा, बवासीर, पुराना गठिया, रक्त चाप का बढ़ना या घटना, मधुमेह, दिल और गुर्दे की बीमारी, एक्जिमा, फेफड़े के रोग इत्यादि की गिनती है। इनमें से बहुतों के इलाज का तरीका पिछले अध्याय में बताया गया है। जिन रोगों के नाम पिछले अध्याय में नहीं हैं उनका इलाज भी और रोगों की ही तरह किया जाता है।

क्या पुराने रोग भी अच्छे हो सकते हैं—

जरूर। जब तक शरीर के अन्दर इतनी जीवन-शक्ति है जिसे उचित ढंगों से जगाई जाने पर रोग के पुरानेपन को नयापन में बदल दे तब तक कोई भी रोग दूर किया जा सकता है। विद्वान् डाक्टर अक्सर इन बीमारियों को असाध्य (ला-इलाज) कह कर छोड़ देते हैं, पर प्राकृतिक चिकित्सा वाले इनको निर्मूल कर शरीर को फिर से नया बना देते हैं। शर्त यही है कि शरीर में जीवन शक्ति बच रही हो, जिसे जगाया और पुष्ट किया जा सके। बहुतों के अन्दर, जिन्हें असाध्य रोग के रोगी कहकर छोड़ दिया जाता है, काफी जीवन-शक्ति बची रहती है। अगर जीवन-शक्ति का बहुत ह्रास हो चुका है और शरीर का कोई जरूरी अंग पुर्जा बिल्कुल ही खराब हो गया है तो रोग दूर नहीं हो सकता। इसी से कहा जाता है कि उचित चिकित्सा से सभी रोग अच्छे हो सकते हैं पर सभी रोगी अच्छे नहीं हो सकते। जिनकी जीवन-शक्ति करीब करीब खत्म हो चुकी है वे अच्छे नहीं हो सकते। लेकिन ऐसे रोगियों को भी प्राकृतिक चिकित्सा से काफी आराम मिलता है। और उनके अन्तिम दिन कुछ सुख से बीतते हैं, लेकिन उनके मरने के लिए सारा दोष प्राकृतिक चिकित्सक के मत्थे मढ़ा जाता है! और, इस ऊपर वाली बात को—जीवन-शक्ति को जगा कर रोग को दूर करने को—अच्छी तरह समझना चाहिए। जीवन शक्ति ही वह शक्ति है, जो मनुष्य को जीवित और तन्दुरुस्त रखती है, जो शरीर की सफाई के लिये, उसके अन्दर के विकारों को निकालने की गरज से नये रोग पैदा करती है और फिर से शरीर को भला चंगा बना लेती है और जिसके कमजोर पड़ जाने से पुराने रोग शरीर में अपना घर बना लेते हैं। अगर इस जीवन-शक्ति को फिर से मजबूत किया जाय तो यह इन पुराने रोगों को भी बाहर निकाल देती है।

यहां पर एक समझने की बात यह है कि जीवन-शक्ति को फिर से बढ़ाना दो-चार दिन, या दो-चार हफ्तों, की क्रिया नहीं है। जब तक धीरे-धीरे सारी खराबियां नहीं निकल जातीं जीवन-शक्ति पहले की तरह नहीं हो पाती; साथ ही जब तक जीवन-शक्ति काफ़ी अच्छी नहीं हुई खराबियां निकल नहीं पातीं—इससे इस क्रिया में महीनों, कभी-कभी वर्ष साल, लग सकते हैं। अनुचित दवा के प्रयोग का प्रभाव भी शरीर में बना रहता है, उसके निकलने में भी समय लगता है।

जो रोगी अधैर्य के कारण हतोत्साह हो जाते हैं या खाने-पीने में असंयम करने लगते हैं वे या तो पूरा पूरा अच्छे नहीं होते या जरूरत से ज्यादा समय में अच्छे होते हैं।

जीर्ण रोगों को दूर करने के लिए दृढ़ता के साथ संयम पालन, प्रसन्न-चित्त और आशायुक्त बना रहना आवश्यक है।

लेखक का अनुभव है कि आशायुक्त रहने वाला कठिन रोग का रोगी शीघ्र अच्छा होता है लेकिन उससे कम कठिन रोग का रोगी अपने अधैर्य के कारण ज्यादा समय लेता है।

पुराने रोगों का इलाज—

पुराने रोगों के इलाज में जीवन-शक्ति को बढ़ाने पर ध्यान देना चाहिए। इसके लिए इतनी बातें जरूरी हैं :—

(१) उपवास फलाहार, सुधरा भोजन शक्ति के अनुसार फिर डेढ़-दो महीने बाद उपवास- फलाहार और भोजन-सुधार। इससे शरीर के अन्दर के विकार निकलेंगे और शरीर इस लायक होगा कि उसमें जीवन-शक्ति का पूरा संचार हो पावे। जरूरत से ज्यादा किये गये भोजन को पचाने में जीवन-शक्ति का ह्रास होता रहता है। भोजन-सुधार और बीच-बीच के उपवास से यह पचाने का काम हल्का हो जाता है, और बची हुई जीवन-शक्ति रोग के बाहर निकालने में लग जाती है; साथ ही खून अच्छा बनता है।

अगर रोगी बहुत ज्यादा कमजोर है तो उसे पहले उपवास न करा के फलाहार पर रखते हैं फिर फल और दूध या मठा। इसके बाद तीन हफ्ते या एक महीने तक सुधरा भोजन। तब १ २ दिनों का उपवास—इस तरह उसे धीरे-धीरे उपवास के लिए तैयार करते हैं।

उपवास या रसाहार या फलाहार के बाद अक्सर लोग छूट कर खाने लगते हैं। वे समझते हैं कि फिर उपवास करके ठीक कर लेंगे, लेकिन उपवास और असंयम से शरीर खींचा-तानी की हालत में रहता है और धीरे-धीरे कमजोर पड़ता जाता है। उपवास या फलाहार के बाद संयमित भोजन (पहले कुछ दिनों तक दो बार फल-दूध या फल-मठा और एक बार रोटी (या चावल)—भाजी और फिर एक बार फल और दूध या मठा और दो बार रोटी-भाजी। अगर पाचन-शक्ति बहुत कमजोर है तो एक बार फल और दूध या मठा और एक बार रोटी-भाजी) पर रहना आवश्यक है। बिल्कुल अच्छे और तगड़े हो जाने पर थोड़ी बहुत ढेलीं मिल सकती है, पर चिकित्सा के बीच में अ-संयम न करना चाहिए। ७-७ १० बजे सबेरे फल-दूध (पावभर या तीन छटांक), १ -१० बजे दोपहर सलाद, रोटी-भाजी और ५ १० बजे शाम रोटी-भाजी और १५—२० मुनक्के या ३—४ अंजीर या पिन-खजूर किसी के लिए भी काफी हैं। लेकिन भोजन के प्रकार और परिमाण का निश्चय व्यक्तिगत शक्ति और आवश्यकता पर निर्भर है। आवश्यकता इस बात की है कि काफी मात्रा हो पर किसी तरह भी अपच न हो। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

(३) नियमपूर्वक एनीमा का प्रयोग। कम से कम तीन हफ्ते या एक महीना शुरू में लगातार। पहले हफ्ते में सेर भर गरम पानी, दूसरे हफ्ते में डेढ़ सेर न गरम न ठंडा और अंत में आध सेर मामूली ठंडा। उम्र और शक्ति के अनुसार पानी की मात्रा हो।

(४) कसरत या टहलना और सांस की क्रियाएँ। इनसे जीवन-शक्ति बढ़ेगी और भोजन के पचने में और पेट के साफ रहने में मदद मिलेगी। इससे खून अच्छा हो जायगा और रोग को शरीर के बाहर निकाल सकेगा। लेकिन कसरत तभी करनी चाहिये, जब कि शरीर में ताकत हो। कसरत की मात्रा भी धीरे धीरे बढ़ानी चाहिए। पहले दोनों समय टहलने से शुरू करना चाहिए, फिर एक समय कसरत और दूसरे समय टहलना। टहलना भी शक्ति के अनुसार हो।

(५) धूप-नहान, जिससे भी जीवन-शक्ति बढ़ेगी और साथ ही शरीर के विकार दूर होंगे। इसे भी बहुत कमजोरी की हालत में या दिल की कमजोरी या बढ़े रक्त-चाप में न लेना चाहिए। शक्ति बढ़ने पर इसे आरम किया जा सकता है। सप्ताह में एकबार साधारण तौर पर काफी होगा।

(६) मिट्टी और पानी का इस्तेमाल। इससे भी बड़ी मदद होगी।

(७) आराम। यह बहुत जरूरी है। आराम और बे-फिक्र होकर सोने के समय में ही जीवन-शक्ति अपने भंडार से उतर कर दिमाग में इकट्ठा होती और शरीर में फैलती है। शरीर को बिल्कुल शिथिल करना सीखिए।

(८) विचार और भावों का अच्छा होना। रोगी को खुश रहना चाहिए और उसे इस बात की पूरी आशा रहनी चाहिए कि वह जरूर ही अच्छा हो जायगा। पुराने रोग के रोगी अक्सर चिड़चिड़े हो जाते हैं, हताश रहते हैं, गुस्सा करते हैं ही ऐसी और ऐसी बातों से अपनी नाड़ी की अवस्था को और भी खराब करते हैं। उन्हें अपने ऊपर काबू रखना सीखना चाहिए और उनके सम्बन्धी और दोस्तों को भी चाहिए कि जहां तक बन सके उन्हें खुश रखें, सहानुभूति का व्यवहार करें और उम्मीद बधावें कि वे अच्छे हो जायगे।

ऊपर की सभी बातों को बताते हुए लेखक का पूर्ण विश्वास है कि सैकड़ा नब्बे पुराने रोग में रोगी अगर सिर्फ़ (१) फलाहार और नियमित आहार करे (२) अपनी शक्ति भर कसरत और (३) जरूरत भर आराम करे और (४) खुश रहे तो वह अपने रोग को भगा सकता है। लेखक ने बहुत से ऐसे आदमी देखे हैं, और खुद भी कुछ की चिकित्सा की है, जो सिर्फ़ (फलाहार पर रह कर या साग-भाजी खा कर) अच्छे हो गये हैं। इसका कारण यही है, जैसा कि बार बार दुहराया गया है, कि शरीर के अन्दर ही वह शक्ति है, जिससे वह अपने आपको अच्छा कर ले सकता है। शुद्ध भोजन से शुद्ध खून बनेगा और शुद्ध खून से नाड़ियाँ अच्छी होंगी और शरीर के सब हिस्सों को जरूरी खुराक मिलेगी—बस, इतने से ही तनदुरुस्ती का मसला हल हो जाता है। तो क्या पानी का इस्तेमाल और दूसरी-दूसरी बातें जो इस किताब में बताई गई हैं, जरूरी नहीं हैं? हैं, उनसे मदद मिलती है और साल भर का काम नौ महीने में ही पूरा हो सकता है, कभी कभी पानी का इस्तेमाल और और क्रियाएं बिलकुल जरूरी भी होती हैं, लेकिन ऐसा न समझना चाहिए कि अगर टब नहीं है तो इलाज हो ही नहीं सकता।

पुराने रोगों को दूर करने में कुछ समय लगता है—

कुछ लोग ऐसे होते हैं कि अगर प्राकृतिक चिकित्सा के शुरू दिन उन्हें फ़ायदा न मालूम हो तो वह हताश हो जाते हैं और कहते हैं कि इलाज करने का यह तरीक़ा भी ठीक नहीं है। इन लोगों में बहुत से तो ऐसे होते हैं जो पहले और सब तरीकों को आजमाने के बाद, सब से हैरान होकर, प्राकृतिक चिकित्सा की तरफ़ झुकते हैं। अगर वे शुरू से ही प्राकृतिक चिकित्सा करने लग जाते तो उन्हें यह हैरानी न उठानी पड़ती। जैसा कि इस अध्याय के आरम्भ में कहा गया है, यह समझने की बात है कि रोगों का दूर करना कोई 'छू मन्तर' की बात नहीं है, और यह भी कि जितने साल का पुराना रोग है कम से कम उतने महीने

हो देना ही चाहिए। बहुत से पुराने रोग इससे कम समय में ही अच्छे हो जाते हैं, लेकिन कुछ हठी रोग और ऐसे रोग, जिनमें पहले जहरीली दवाओं का इस्तेमाल किया गया है, दो तीन साल तक का अर्सा (अवधि) ले सकते हैं। समय चाहे जितना भी लग जाय, लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि अगर शरीर में जीवन शक्ति है—बहुतों के यह शक्ति रहती है—और अगर चिकित्सा भी उचित है तो रोग जरूर जाता रहेगा। समय इसलिए लगता है कि बहुत से पुराने रोगों में शरीर के अंग अंग और कण-कोष—खून, रग, रेशे, सभी—विकार-युक्त हो जाते हैं और इन सब का साफ करने में समय लगेगा ही। इसके अलावा अगर जहरीली दवाओं का इस्तेमाल हुआ है तो रोग के साथ साथ दवा के जहर को निकालने का काम भी प्राकृतिक चिकित्सा के मत्थे पड़ जाता है। लेकिन जैसे ही शरीर साफ होकर अपनी असली हालत में आ जाता है वैसे ही रोग निर्मूल हो जाता है और शरीर एकबार फिर से नया हो जाता है। प्राकृतिक चिकित्सा से पुराने रोग का अच्छा करना मानो अपनी काया पलट करनी है। अक्सर लोग कहते हैं कि इस विधि से रोग के जाने में देर लगती है। मेरा कहना है कि देर या सबेर, जीर्ण रोग तो इसी विधि से जायगा। अगर कोई सरल और साथ ही अचूक विधि हो तो सब से पहले मैं ही उसे अपनाऊँगा।

कुछ लोग दो ढाई महीने प्राकृतिक चिकित्सा करके यथाप्त लाभ न देख कर ऊब जाते हैं और फिर दवा की शरण लेते हैं और कल्प ग लाना शुरू करते हैं। यह बताने की जरूरत नहीं कि ऐसा करना गलत है। ऐसा तो वही करे, जिसने निश्चय कर लिया है कि अब अच्छे न होंगे। अगर दवा ऐसी है, जो जहरीली न होती हुई रोगों के लक्षण को नहीं दबाती और भोजन भी वैसा ही है वैसा कि होना चाहिए तब तो प्राकृतिक चिकित्सा से चला सिलसिला न टूटेगा और लाभ भी होगा, लेकिन अगर दवा लक्षणों को दबाने वाली और भोजन अनुचित ढंग का है तो और

खराबी हो जायगी। इन सब बातों को साथ समझ कर प्राकृतिक चिकित्सा शुरू करनी चाहिए।

चिकित्सा के लिए एक कार्य-क्रम बना लेना चाहिए—

पुराने रोगों में इस पुस्तक में बताये गये सभी उपायों का काम में लाना पड़ता है, पर सभी उपायों को एक साथ नहीं लगाते। जल्दबाजी करने से कोई लाभ नहीं होता बल्कि नई कठिनाइयां खड़ी हो जाती हैं। इन कठिनाइयों का जिक्र आगे किया जायगा। यहां इतना ही कहा जाता है कि किसी भी पुराने रोग के इलाज में अच्छी तरह समझ बूझ कर इलाज के लिए एक कार्य क्रम बना लेना चाहिए।

कुछ प्राकृतिक चिकित्सक शुरू से ही मामूली भोजन-सुधार के साथ साथ कमर नहान या उपस्थ स्नान या दोनों शुरू करा देते हैं। इससे लाभ जरूर होता है, लेकिन इससे भी अच्छा तरीका है कि अगर रोगी कमजोर नहीं है तो शुरू में ही उसे तीन का उपवास करा दिया जाय या तीन दिन उसे रसाहार पर रखा जाय। इन दिनों उसे सुबह और शाम दोनों समय और चौथे दिन भी सुबह में एनीमा दिया जाय और इसके बाद चौथे दिन से लेकर दस-पन्द्रह दिनों तक उसे फलाहार या सादी पकी भाजी पर रखा जाय। अगर ऐसा न हो सके या रोग बहुत पुराना नहीं है तो उपवास के बाद तो एक समय के भोजन में आधा हिस्सा ताजे फल या कच्चे सलाद का रहे और आधे हिस्से में रोटी और एक पकी भाजी। दूसरे समय अगर रोगी फल ही खाय तो अच्छी बात है। अगर रोगी ने जहरीली दवा नहीं खाई है तो तीन दिन के उपवास या रसाहार के बाद जब रोगी फलाहार शुरू करे तो उसे पहले कुछ दिनों तक सुबह में पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी और एनीमा, तीसरे पहर पेड़ू पर मट्टी की पट्टी और उसके बाद कमर नहान और रात में फिर पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी लेनी चाहिए। मिट्टी की पट्टी लगातार पन्द्रह-बीस दिनों तक ली जा सकती है। फिर सात आठ दिनों का

अन्दर देकर उसे जारी कर सकते हैं। हो सकता है कि इन दिनों मुंह का स्वाद खराब हो जाय। जब शरीर अपने अन्दर के विकारों को निकालने पर तुल जाता है तो और लक्षणों के साथ मुंह का स्वाद भी खराब हो जाता है। जब तक मुंह का स्वाद खराब रहे तब तक दोनों समय कमर-नहान ही देना चाहिए। जब मुंह का स्वाद ठीक हो जाय तो, या अगर मुंह का स्वाद खराब नहीं हुआ हो तो, एक-डेढ़ महीना तक दोनों समय कमर-नहान देकर, एक समय कमर नहान और दूसरे समय उपस्थ-स्नान या रीढ़ की गीली पट्टी देने लग जाना चाहिए। बहुत से पुराने रोग तीन-चार महीने में ही चले जाते हैं, लेकिन बहुत से ज्यादा समय भी लेते हैं। ऐसे रोगों के इलाज में धीरज रखना चाहिए। नहानों को एक डेढ़ महीने के बाद आठ-दस दिनों के लिए छोड़ देना चाहिए, लेकिन इन दिनों भी भोजन और कसरत के नियम का पालन करना चाहिए।

फालिज, लकवा, यक्ष्मा, दिल के रोग, रक्त-चाप का बढ़ना, बहुत कमजोरी और दिमागी रोगों को छोड़कर और सब रोगों में इलाज के शुरू से ही कुछ देर नंगे बदन धूप में बैठने या लेटने के बाद या टहलने के बाद सारे बदन का नहला देना चाहिए। अगर धूप तेज है तो सिर को ढँक लेना चाहिए। मान लीजिए कि रोगी अगर ७ बजे सुबह को कमर स्नान लेता है तो नौ बजे कुछ देर (समय धीरे-धीरे बढ़ाया जाय) धूप में रहकर वह तुरन्त ही नहाले। बताया गया है कि धूप-नहान के बाद फिर से नहाकर कम नहान भी लेना चाहिए। अगर रोगी सुबह शाम दोनों समय कमर-नहान या उपस्थ-स्नान ले रहा है तो धूप में रहने के बाद फिर तीसरी बार कमर-नहान लेने की कोई खास जरूरत नहीं है। लेकिन अगर धूप के बाद कमर-नहान रोगी पसंद करता है तो कमर-नहान बहुत सबेरे न लेकर वह धूप के बाद नौ, साढ़े नौ बजे ले सकता है। शाम का नहान पहले की तरह जारी रहेगा।

पुरानी हो जायगी। इन सब बातों को सोच समझ कर प्रकृति चिकित्सा शुरू करनी चाहिए।

चिकित्सा के लिए एक कार्य-क्रम बना लेना चाहिए—

पुराने रोगों में इस पुस्तक में बताये गये सभी उपायों को काम में लाना पड़ता है, पर सभी उपायों का एक साथ नहीं लगाते। जल्दबाजी करने से कोई लाभ नहीं होता बल्कि नई कठिनाइयां खड़ी हो जाती हैं। इन कठिनाइयों का जिक्र आगे किया जायगा। यहां इतना ही कहा जाता है कि किसी भी पुराने रोग के इलाज में अच्छी तरह समझ बूझ कर हर रोज के लिए एक कार्य क्रम बना लेना चाहिए।

कुछ प्राकृतिक चिकित्सक शुरू से ही मामूली भोजन-सुधार के साथ साथ कमर नहान या उपस्थ स्नान या दोनों शुरू करा देते हैं। इससे लाभ जरूर होता है, लेकिन इससे भी अच्छा तरीका है कि अगर रोगी कमजोर नहीं है तो शुरू में ही उसे तीन का उपवास करा दिया जाय या तीन दिन उसे रसाहार पर रखा जाय। इन दिनों उसे सुबह और शाम दोनों समय और चौथे दिन भी सुबह में एनीमा दिया जाय और इसके बाद चौथे दिन से लेकर दस-पन्द्रह दिनों तक उसे फलाहार या सादी पकी भाजी पर रखा जाय। अगर ऐसा न हो सके या रोग बहुत पुराना नहीं है तो उपवास के बाद तो एक समय के भोजन में आधा हिस्सा ताजे फल या कच्चे सलाद का रहे और आधे हिस्से में रोटी और एक पकी भाजी। दूसरे समय अगर रोगी फल ही खाय तो अच्छी बात है। अगर रोगी ने जहरीली दवा नहीं खाई है तो तीन दिन के उपवास या रसाहार के बाद जब रोगी फलाहार शुरू करे तो उसे पहले कुछ दिनों तक सुबह में पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी और एनीमा, तीसरे पहर पेड़ू पर मट्टी की पट्टी और उसके बाद कमर नहान और रात में फिर पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी लेनी चाहिए। मिट्टी की पट्टी लगातार पन्द्रह-बीस दिनों तक ली जा सकती है। फिर सात आठ दिनों का

अन्दर देकर उसे जारी कर सकते हैं। हो सकता है कि इन दिनों मुंह का स्वाद खराब हो जाय। जब शरीर अपने अन्दर के विकारों को निकालने पर तुल जाता है तो और लक्षणों के साथ मुंह का स्वाद भी खराब हो जाता है। जब तक मुंह का स्वाद खराब रहे तब तक दोनों समय कमर-नहान ही देना चाहिए। जब मुंह का स्वाद ठीक हो जाय तो, या अगर मुंह का स्वाद खराब नहीं हुआ हो तो, एक-डेढ़ महीना तक दोनों समय कमर-नहान देकर, एक समय कमर नहान और दूसरे समय उपस्थ-स्नान या पेड़ू की गीली पट्टी देने लग जाना चाहिए। बहुत से पुराने रोग तीन-चार महीने में ही चले जाते हैं, लेकिन बहुत से ज्यादा समय भी लेते हैं। ऐसे रोगों के इलाज में धीरज रखना चाहिए। नहानों को एक डेढ़ महीने के बाद आठ-दस दिनों के लिए छोड़ देना चाहिए, लेकिन इन दिनों भी भोजन और कसरत के नियम का पालन करना चाहिए।

फालिज, लकवा, यक्ष्मा, दिल के रोग, रक्त-चाप का बढ़ना, बहुत कमजोरी और दिमागी रोगों को छोड़कर और सब रोगों में इलाज के शुरू से ही कुछ देर नंगे बदन धूप में बैठने या लेटने के बाद या टहलने के बाद सारे बदन का नहाना देना चाहिए। अगर धूप तेज है तो सिर को ढँक लेना चाहिए। मान लीजिए कि रोगी अगर ७ बजे सुबह को कमर-स्नान लेता है तो नौ बजे कुछ देर (समय धीरे-धीरे बढ़ाया जाय) धूप में रहकर वह तुरन्त ही नहाये। बताया गया है कि धूप-नहान के बाद सिर से नहाकर कम नहान भी लेना चाहिए। अगर रोगी सुबह शाम दोनों समय कमर-नहान या उपस्थ-स्नान ले रहा है तो धूप में रहने के बाद फिर तीसरी बार कमर-नहान लेने की कोई खास जरूरत नहीं है। लेकिन अगर धूप के बाद कमर-नहान रोगी पसंद करता है तो कमर-नहान बहुत सबेरे न लेकर वह धूप के बाद नौ, साढ़े नौ बजे ले सकता है। शाम का नहान पहले की तरह जारी रहेगा।

नहानों के बारे में यह ख्याल रखना चाहिए कि सुबह का नहान, जितना सबेरे हो सके ले लिया जाय। कुछ हालतों में ज़रा देर से ही नहान लेने में सुविधा होती है। इन हालतों में नहान लेने के बाद भरसक कुछ न खाया जाय और अगर कुछ खाया भी जाय तो बहुत हल्की चीज़। फल का रस पीकर ही अगर रोगी रह जाय और फिर सवेरे दस ग्यारह बजे के लगभग (नहान के एक-डेढ़ घंटे बाद) वह भोजन करे तो भी अच्छा है। नहाने के जो नियम पहले बताये गये हैं उनका पालन अच्छी तरह करना चाहिए और यह भी देखना चाहिए कि नहान इत्यादि का एक ही निश्चित समय हर रोज़ के लिए रहे।

इलाज के तरीकों को समय समय पर ज़रूरत देखकर बदलते जाना चाहिए। मान लीजिए कि इलाज के दिनों में ही कब्ज़ हो गया। ऐसी हालत में दोनों समय के नहानों में एक नहान को बन्द कर देना या इनके अलावा एनीमा का प्रयोग शुरू करना चाहिए। जब कब्ज़ चला जाय तो एनीमा बन्द करके फिर से नहान को जारी करना चाहिए। अगर बीच में बुखार या और कोई तेज़ रोग हो जाय तो भोजन बन्द कर उपवास करना या रसाहार पर रहना चाहिए। अगर चमड़े पर फुन्सियां निकल आयें या पित्ती उछल जाय तो एक या दोनों नहान के बदले सारे शरीर की गीली पट्टी या भाप-नहान से काम लेना चाहिए। अगर सिर में परेशानी सी रहने लगे तो दोनों समय उपस्थ-स्नान या पीठ पर गीली पट्टी का प्रयोग करना चाहिए। अब कभी भोजन में भी हेर फेर करने की ज़रूरत पड़ती है। अगर इलाज के बीच पतले दस्त आने लगें तो रोगी को सिर्फ़ रसाहार पर रहना चाहिए। फिर एक-दो दिन मठा पिलाना चाहिए। इसी तरह समझदार और चतुर चिकित्सक अवसर देखकर इलाज के भिन्न-भिन्न ढंगों से फायदा उठाते हैं।

पिछले अध्याय में नमूने के तौर कुछ कार्य-क्रम बताये गये हैं। हर बीमारी के इलाज के लिए एक उचित कार्य-क्रम बनाना चाहिए।

-क्रम के संबन्ध में एक बात बताना जरूरी है। कुछ लोग बड़ी
चल तबियत के होते हैं। एक तो वे खिच-खिच में रहते हैं और
वे हर रोज नया क्रम बनाना चाहते हैं। इससे काम नहीं चल
ा। चाहिए यह कि अच्छी तरह सोच-विचार कर एक क्रम एक-
महीने के लिए बना लिया जाय और उसका स्थिरता से पालन
ा जाय। उसके बारे में हर रोज सोचने की जरूरत नहीं; उसके बार
भी सोचा जाय जब कि उस क्रम का समय समाप्त होने से पहले हा
में कोई नई बात हो जाय। अगर कोई उभाड़ हा या ऐसी ही कोई
हो जाय तब तो क्रम में रद्दोबदल करना जरूरी है, नहीं तो उसक
के समाप्त होने पर ही या उससे एक दो दिन पहले आगे का क्रम
चत किया जाय। खिच-खिच बहुत खराब बात है। 'यह चीज़
न खायं', 'अच्छा, जरा आलू खालें तो कोई हानि न होगी' जैसा
-बुन में रहना ठीक नहीं। सोच समझ कर ही कुछ निश्चय करना
ए। और दृढ़ता-पूर्वक उसका पालन भी करना चाहिए। फिर न ता
नी बीमारी के बारे में सोचना चाहिए और न क्रम के बारे में।

कुछ रोगों के दूर होने में बहुत ज्यादा समय लगता है। उनमें चार
महीने नहान इत्यादि का क्रम विधि के साथ पालन करके नह न
र को दो-ढाई महीने के लिए छोड़ देना चाहिए। लेकिन इन दानों
न पर ध्यान अवश्य देना चाहिए। दूध घी का व्यवहार बहुत हालतों
ल सकता है। पर खून में खटाई बढ़ाने वाली कोई चीज न ली
। खटाई रहित पौष्टिक भोजन से शरीर में बल मालूम होगा और
म भी बना रहेगा। फिर दो-ढाई महीने के बाद ४-५ दिनों फलों
हने और सुबह शाम एनीमा लेने के बाद नहान इत्यादि शुरू कर
चाहिए। इस दूसरी बार के नहान इत्यादि से विशेष लाभ होने
ता है।

भोजन का क्रम—

पुराने रोगों में भोजन पर बहुत ध्यान देना पड़ता है। पहली बात तो यह है कि जब तक रोग दूर न हो फलाहार या संयमित आहार ही करना चाहिए। जहाँ फल न मिले या फल खाते खाते जी ऊब जाय तो कच्चे और सादी पकी भाजी से काम चलाना चाहिए। जब दूध शुरू किया जाय तो कच्चा ही दूध लिया जाय। अगर दूध अच्छा न मिले तो दूध न लिया जाय। अगर पतले दस्त आते हों या यकृत का विकार हो तो दूध के बदले बिना मक्खन का पतला मठा लेना चाहिए। दूध या मठा अकेला या फलों के साथ पीना चाहिए—रोटी या चावल के साथ नहीं। आगे चल कर रोटी खाने के ठीक ३० मिनट बाद पाव भर दूध या मठा पी सकते हैं।

जिन्हें दिन में कोई काम-काज न करना हो उनके लिए भोजन का क्रम इस तरह होना चाहिए —

सुबह ८ बजे के लगभग—एक तरह का फल। तीन-चार हफ्ते के के बाद, जब रोग सम्हाल में आ जाय तब, इसके साथ एक पाव दूध या मठा (चीनी, गुड़ कुछ नहीं)।

लगभग एक बजे दूसरे पहर—कच्ची भाजी का सलाद (या फल) और एक मोटी रोटी (अगर कोई कठिन चर्म या रक्त रोग नहीं है तो थोड़ा नमक भी)। सलाद या फल की मात्रा इतनी हो कि उसके साथ एक रोटी के खा लेने से पेट भर जाय। इतना कभी न खाना चाहिए कि पेट कस-मकस हो जाय। मोटी रोटी पतली के बनिस्बत अच्छी है। मोटी रोटी को चबा चबा कर खाने से कब्ज यों ही जाता रहता है। दो-तीन हफ्ते बाद रोटी के साथ थोड़ी सादी पकी भाजी और कुछ थोड़े हफ्तों के बाद थोड़ा मक्खन या अच्छा घी भी लिया जा सकता है। थोड़ा सा शहद शुरू से ही लिया जा सकता है।

लगभग साढ़े सात बजे शाम—एक या दो पकी हरी भाजी (हरी या कन्द-भाजी नहीं) और आठ-दस दाने मुनक्के या तीन-चार अंजीर या पिन-खजूर। भाजी बनाने में बहुत थोड़ा घी और शुरू में सिर्फ जीरा का इस्तेमाल करना चाहिए। जब रोग बहुत कुछ दूर हो जाय तो हल्दी धनिया का इस्तेमाल कर सकते हैं। हरी भाजी, जैसे पालक इत्यादि, बहुत अच्छी हैं, लेकिन कुछ लोगों को उनसे वायु होती है। वायु से बचना चाहिए। उपवास और फलाहार के दिनों में और कुछ समय तक उसके बाद भी अन्दर की दबी वायु प्रकट होकर तकलीफ देती है, इसलिए इन दिनों कोई ऐसी ऊपरी बात न करनी चाहिए कि वायु और बढ़े। जो अन्दर से उभरी हुई वायु है वह कुछ दिनों में स्वय ही निकल जाती है।

शाम को सिर्फ भाजी और मुनक्के इत्यादि खाना बताया गया है। इसके बहुत कुछ समझ जान पर शाम को दलिया (और फिर कुछ दिनों के बाद रोटी), एक भाजी और मुनक्के या अंजीर या अगूर खा सकते हैं।

ऊपर बताये तीन समय के भोजनों के पहले और बीच-बीच में और और उपायों का प्रयोग होशियारी से करना चाहिए।

अगर रोगी को स्कूल-कालेज या दफ्तर जाना होता है तो सुबह सिर्फ भिगाये किशमिश का पानी, ६ बजे सलाद और रोटी-भाजी, लगभग १ १० बजे शाम को सवेरे की तरह कोई रसदार फल और रात में पहले सिर्फ फल या भाजी और कुछ दिनों के बाद रोटी, भाजी, मुनक्के खाना चाहिये। याद रहे कि जब आदमी कोई दिमागी काम करने लगता है तो सारी जीवन-शक्ति खिचकर दिमाग में चली जाती है और भोजन पचाने के लिए बहुत कम रह जाती है। इसलिए अगर अन्न जैसे कठिन पदार्थ के खाने के तुरन्त बाद दिमागी काम शुरू किया जायगा तो खाया हुआ पदार्थ ठीक तरह न पचेगा। इन दिनों को

अपच और कब्ज की शिकायत तमाम फैली है। उसका एक कारण यह भी है कि भर पेट खाने के बाद लोग दिमागी काम करने लगते हैं। यह अच्छा है कि अन्न जैसा भारी पदार्थ दिन में ही खाया जाय, लेकिन अगर दिमागी काम करना है तो अन्न खाने के कम से कम एक घंटे बाद दिमागी काम शुरू किया जाय।

ऊपर जो खाने का क्रम बताया गया है वह नमूने के लिए है।

इलाज में कमज़ोरी—

शुरू से ही तगड़ा बनने की फिक्र न होनी चाहिए। पुराने रोगों में यह जरूरी है कि शरीर के हर हिस्से से विकार निकाला जाय और बाहरी और अन्दरूनी सफाई की जाय। विकार निकलने के समय दुबला होना स्वाभाविक और जरूरी है। उन दिनों सिर्फ इतना ही चाहिए कि शरीर के साधारण तौर पर चलने के लिए कुछ भोजन उसे मिलता जाय। जब रोग दूर हो जायगा तो शरीर किसी भी अच्छे भोजन पर तगड़ा और मोटा हो जायगा। रोग को दूर करना रोगी और उसके संबन्धियों की पहली चिन्ता होनी चाहिए। इसीलिए जरूरी है कि भोजन बहुत हल्का हो। इससे पेट के पचाने का काम हल्का रहेगा और पचाने से बची हुई जीवन-शक्ति विकारों को निकालने और रोगों को दूर करने में लग जायगी। ऊपर जो रोटी-भाजी का एक साथ खाना बताया गया है यह दूसरे दर्जे का पथ्य है। अच्छा हो अगर एक वक्त सिर्फ रोटी या सिर्फ भाजी खाई जाय। अगर ऐसा बराबर न बन सके तो कम से कम चिकित्सा के शुरू में जरूर करना चाहिए।

अक्सर रोगी बहुत घबराते हैं और बिगड़ी आदत के कारण तरह तरह की चीजें मांगते हैं। तरह, तरह की चीज, और अधिक मात्रा में, खाने से बीमारी हुई थी पर वे बेचारे इस अनियमित भोजन और रोग के बीच कोई सम्बन्ध नहीं समझते। उन्हें सहानुभूति के साथ समझाना होगा।

इसे न भूलिए कि भोजन के साथ पानी न पीना चाहिए। दो-ढाई घंटे का अन्तर जरूरी है। फिर यह भी कि नींबू बहुत अच्छा फल है और उसके रस का प्रयोग प्रायः सभी हालत में किया जा सकता है। उसे पानी में मिलाकर दिन में एक दो बार पीने से खून क्षारमय और साफ होता है, ठंडे पानी के साथ पीने से पतले दस्तों में फायदा होता है और गरम पानी के साथ पीने से कब्ज दूर होता है। नींबू का रस दाल में छोड़कर और फिर उस दाल को रोटी या चावल के साथ न खाना चाहिए। रोटी या चावल में श्वेतसार है, जो क्षार से पचता है। नींबू का रस क्षार के इस गुण को नष्ट कर देता है। लोग नींबू का इस्तेमाल ऐसे ही ज्यादातर करते हैं, पर यह गलत तरीका है। हां, दूध या मठा पीने के तुरन्त पहले या बाद थोड़े से पानी के साथ नींबू का रस पी लेना या आधा या एक नींबू या सन्तरा चूस लेना बहुत हितकर है।

दबे रोगों का उभाड़—

प्राकृतिक-चिकित्सा में अक्सर दबे और छिपे रोगों का उभाड़ होता है जिसका मतलब यह है कि अगर पुरानी खांसी का इलाज हो रहा है तो कभी-कभी बुखार भी हो आता है और कुछ दिनों तक चलता है या अगर पुराने अपच का इलाज होता है तो फोड़े फुन्सियां निकल पड़ती हैं। नहीं जानने वाले इन उभाड़ों से डरते हैं, लेकिन जानने वाले रोगी को बधाई देते हैं, क्योंकि इन उभाड़ों के कारण खून के अन्दर गहरा छिपा हुआ विकार निकल जाता है। इन्हीं दबे हुए विकारों के कारण तो पुराने रोग हो जाते हैं, और इन्हीं विकारों के दूर होने पर पुराने रोग का अच्छा होना निर्भर है।

पूछा जा सकता है कि उभाड़ क्यों होता है। जवाब यह है कि प्राकृतिक जीवन के कारण खून साफ होने लगता है और धीरे-धीरे जीवन शक्ति बढ़ने लगती है। बढ़ी हुई जीवन-शक्ति छिपे विकारों को

बाहर ला लाकर दूर करती है और अन्त में शरीर को बिलकुल स्वच्छ सुथरा और निरोग बना देती है।

फिर पूछा जा सकता है कि क्या उभारों में खतरा भी है। खतरा तभी है जब कि रोगी बहुत ज्यादा कमजोर है और इलाज करने वाले ने शुरू-शुरू में ही पानी इत्यादि के बहुत और बे-ढंगे इस्तेमाल से छिपे रोगों को इस तरह उभाड़ दिया कि रोगी के लिए उसका सहना और चिकित्सक के लिए उसका सम्हालना मुश्किल है। या तभी होता है जब रोगी वर्षों से बीमार होने के कारण बहुत ज्यादा कमजोर हो गया है। सिर्फ एक इस हालत को छोड़कर और किसी हालत में जरा भी खतरा नहीं है। अगर विकार अन्दर दबे हैं तो उभाड़ होना ही चाहिए और ज्यों ज्यों उभाड़ होता जाय त्यों-त्यों समझना चाहिए कि रोगी तनदुरुस्ती तरफ बढ़ता जा रहा है। अगर रोगी बहुत कमजोर है तो भोजन सुधार और एनीमा से शुरू कर उसकी हालत धीरे धीरे सुधारनी चाहिए। दो-तीन महीने भी इस प्रारंभिक क्रिया में लग जायें तो हर्ज नहीं। इसके बाद कुछ और करना चाहिए।

क्या नये रोगों में उभाड़ नहीं होता? नया रोग तो खुद ही प्रकृति की तरफ से एक उभाड़ है। उसमें और उभाड़ क्या होगा। हां, अगर प्रांत्रों या खून में विकार छिपे और दबे हैं और अगर इसी हालत में कोई नया लक्षण प्रकट हो जाय, जैसा कि बच्चों और लड़कों के अक्सर होता है, और इस लक्षण के प्राकृतिक चिकित्सा से दूर होने के बाद कुछ और दिनों तक अगर प्राकृतिक चिकित्सा इस मतलब से जारी रखी जाय कि शरीर और भी साफ सुथरा हो जायगा तो पुराने दबे विकार उभड़ पड़ते हैं। एक बार लेखक अपने एक छोटे बच्चे का इलाज नई खांसी को दूर करने के लिए कर रहा था। खांसी अच्छी हुई, पर पतले दस्त आने लगे। पतले दस्तों के लिए इलाज किया गया। जब दस्त रुके तो बुखार हो आया। जब बुखार अच्छा हो गया तो बच्चा भला चंगा और

कुछ ही दिनों में तगड़ा हो गया। लोग ऐसी हालत में घबरायेंगे और कहेंगे कि यह अजीब इलाज है, पर जाननेवाले खुश होंगे और कहेंगे कि शरीर के अन्दर छिपे हुए विकारों का निकलना ही अच्छा है।

लेखक को उभाड़ के और भी बहुत से दिलचस्प अनुभव हैं। एक दमा के रोगी की चिकित्सा करते समय उसे टायफायड बुखार हो गया, जो हफ्तों चला। एक गठिया के रोगी का दर्द दूर हुआ, पर बवासीर की तकलीफ़ उभड़ आई, जो पन्द्रह दिन रह कर चली गई। एक बुखार के रोगी को एक्ज़िमा हो गया, जो एक हफ्ते में ही अच्छा हो गया। एक मेम साहब को बताया गया कि उन्हें आँतों की टी० बी० है। जब लेखक उनका इलाज करने लगा तो बुखार हो आया, जो पूरे तीस दिन रहा। बुखार अच्छा होने के एक हफ्ते बाद उन्हें जुकाम हो गया। इन उभाड़ों के बाद रोगियों के रोग जड़ से दूर हो गये और अब वे सब के सब तनदुरुस्त हैं। पहले वे घबराते ज़रूर थे, पर समझाने पर सच्ची बात समझ गये।

उभाड़ में क्या करना चाहिए? उसे एक नया रोग समझकर उसका इलाज करना चाहिए। अगर जुकाम या बुखार या कोई तेज़ तकलीफ़ है तो भोजन छोड़कर उपवास करना चाहिए या फलों का रस पीकर रहना चाहिए। अगर बुखार ज्यादा दिन चले तो एक दो दिन उपवास करके दिन में तीन-चार बार फलों के रस पीकर रहना चाहिए। ऊपर जिन मेम साहबा का ज़िक्र आया है उन्हें मैंने १० दिनों तक फल के रस पर ही रखा। उनके दोस्त और रिश्तेदार मुझे भला-बुरा कहते रहे पर मेम साहबा डट रहीं। अगर बुखार बहुत दिन चले तो तीन हफ्ते के बाद दिन में एक दो बार बहुत पतला मठा या पानी मिलाकर दूध भी दे सकते हैं। अगर जुकाम या बुखार को छोड़कर कोई ऐसा लक्षण प्रकट हो जाय जिसमें तकलीफ़ ज्यादा हो, तो उस हालत में भी उपवास करना या रस पीकर रहना चाहिए। अगर तकलीफ़ न हो तो भी एक दिन का

उपवास अच्छा होता है। अगर फोड़े फुन्सी निकल आवें तो फलों के दिन फलाहार करके रह जाना चाहिए।

भोजन को छोड़ने या कम करने के अलावा दिन में एक या दो बार एनीमा भी तब तक लेना चाहिए जब तक कि उभाड़ बिल्कुल शान्त न हो। साथ ही कमर-स्नान या उपस्थ-स्नान इत्यादि का प्रयोग भी शुरू करना या जारी रखना चाहिए। ज्यादातर उभाड़ मामूली ही होते हैं और हफ्ते भर के अन्दर ही अपना अपना काम पूरा करके निकल जाते हैं। ऊपर जो उभाड़ की हालतें मैंने बताई हैं वे उन रोगियों की हैं, जिनके रोग बहुत पुराने थे और जिन्होंने जहरीली दवायें खा खा कर रोगों को खून के अन्दर गहरा छिपा रखा है। कुछ वैद्य उभाड़ होते ही घबराकर इलाज बदल देते हैं और विकारों को कुछ दिनों के लिए फिर से दबाकर सन्तुष्ट हो जाते हैं। कहने की जरूरत नहीं कि ऐसा न करना चाहिए।

जो चिकित्सक पुराने रोगों का इलाज रोगी की अवस्था देख कर तीन दिन के उपवास और फिर फलाहार से शुरू करते हैं और इन दिनों एनीमा से पेट भी साफ करते रहते हैं उन्हें बहुत मामूली उभाड़ों का सामना करना पड़ता है।

उभाड़ों से डरना न चाहिए। उभाड़ होना जरूरी है, उसी में शरीर की भलाई है, पर इतना ख्याल जरूर रखना चाहिए कि अपने उतावलेपन से उभाड़ न आने पावें। अगर अपनी ही गलती से उभाड़ आ जायँ और रोगी अगर मामूली (बहुत नहीं) तौर से कमजोर है तो भी कोई हर्ज नहीं। कुछ दिनों के अनुभव के बाद चिकित्सक खुद ही इन लहरों को बाहर निकालना सीख जाता है और जरूरत के मुताबिक (अनुसार) विकारों को निकाल निकाल कर दूर कर देता है।

उभाड़ का समय—

अनुभवी चिकित्सकों का कहना है कि अगर उभाड़ आने को होता है तो १-७ वें दिन या ६-७ वें हफ्ते या महीना या समय के किसी ६-७ वें विभाग में आता है। तीस साल के पुराने अपच रोग के एक रोगी का उभाड़ मैंने ७ वें महीने में आते देखा। उसकी तबीयत धीरे-धीरे अच्छी हो रही थी, पर छठे महीने के शुरू से ही गड़बड़ी शुरू हुई और सातवें महीने में पतले दस्त आने लगे। रोगी ने खुद ही सब बातों को समझ लिया था, इसलिए घबराया नहीं। दस्त बन्द होने के बाद उसकी तबीयत और अच्छी हो गई, लेकिन इक्कीसवें दिन फिर गड़बड़ी शुरू हुई। इस उभाड़ के शान्त होने पर रोगी की तबीयत और ज्यादा अच्छी हो गई।

एक दिलचस्प बात यह भी है कि उभाड़ उसी क्रम (सिलसिले) से आते हैं, जिस क्रम में रोग दबाये गये हैं। एक दूसरी मेम साहबा का इलाज मैं गठिया दूर करने के लिए कर रहा था। उन्हें पहले फोड़े निकले, फिर पतले दस्त आने लगे और अन्त में कानों में दर्द हो गया। पूछने से मालूम हुआ कि बचपन में मेम साहबा के कानों में दर्द हुआ था। इस बार का दर्द बिल्कुल वैसा ही, लेकिन तेजी में पहले से कम था। कुछ साल के बाद उन्हें पतले दस्त आने लगे थे और उसके कुछ साल के बाद उन्हें खारिश भी हुई थी। जब उनके सभी तरह के दबे विकार निकल गये तो मेम साहबा बिलकुल तनदुरुस्त हो गई।

चिकित्सक और रोगियों से लेखक की प्रार्थना है कि वे उभाड़ों से न घबरायें। पुराने रोगों में दिन में कई बार और बहुत देर तक नहान लेने से या पानी के और इस्तेमालों से उभाड़ जल्द आता है। बस, इसी को बचाना चाहिए। अगर पानी का इस्तेमाल शरीर का थोड़ा-थोड़ा सहारा लेकर किया जाय तो उभाड़ अपने ठीक समय पर और बहुत हल्का आयगा। नये रोगों में इसका डर नहीं है, क्योंकि वे तो खुद ही उभाड़ हैं।

उन रोगों में जब जब जरूरत पड़े रोगी की हालत देखकर पानी का इस्तेमाल कीजिए।

चिकित्सक को इशारा—

पुराने रोगों के इलाज में यह तय करना चाहिए कि रोगी को पहले उपवास कराया जाय या फलाहार, या रोटी-भाजी दी जाय। एनीमा हर हालत में शुरू कराया जा सकता है। अगर रोगी बहुत ज्यादा कमजोर है तो उपवास से डरना न चाहिए। अगर रोगी कुछ कमजोर है तो फलाहार से शुरू करा के आगे उपवास के लिए तैयारी करनी चाहिए। अगर वह बहुत ज्यादा कमजोर है तो पहले एक समय सिर्फ रोटी या रोटी भाजी और दूसरे समय फल चलना चाहिए। फिर फलाहार और रसाहार, अन्त में उपवास। उपवास के बाद रसाहार, फलाहार अन्नाहार।

रोगी और रिश्तेदारों की परेशानी—

पुराने रोगों के इलाज में अक्सर रोगी कुछ दिनों तक दुबले हो जाते हैं और भीतर से अच्छा मालूम करते हुए भी कमजोर दीखते हैं इससे रोगियों को और उनके रिश्तेदारों को घबराहट होती है। वे डरते हैं कि कहीं रोगी इतना कमजोर न हो जाय कि फिर उसका सम्हलना कठिन हो जाय। दूसरे दूसरे लोग भी बहुत डरपाते हैं। लेकिन यह घबराहट और डर बे-बुनियाद है। शुरू-शुरू में दुबला होना जरूरी है। जब रग-रेशा, मांसपेशी और कोषों से, और साथ ही आंतों से, मल और विकार निकाले जा रहे हैं, तो रोगी का दुबला होना स्वाभाविक है। लेकिन दुबला दीखते हुए भी रोगी का चित्त प्रसन्न रहता है, और जब विकार फिर दूर हो जाते हैं मूल साफ हो जाता है, और अंत में रोगी जब साधारण अच्छे भोजन पर आ जाता है तो वह बात की बात में पहले से कहीं ज्यादा तगड़ा और हट्टा-कट्टा हो जाता है।

भावना—

पुराने रोगों से छुटकारा पाना एक साधना है। जिसे पुराने रोग होते हैं उसका सिर्फ शरीर ही नहीं बल्कि विचार और भाव भी त्रुटिपूर्ण रहते हैं। उसकी इच्छा-शक्ति कमज़ोर हो जाती है और उसका सारा नैतिक बल जाता रहता है। इसलिए वही मनुष्य पुराने रोग को दूर कर सकता है, जो शरीर के धर्म और हालत को समझे, खाद्य-अखाद्य पर ध्यान दे, और तनदुरुस्ती के सभी नियमों का अच्छी तरह पालन करे। इस काम में चिकित्सक और रिश्तेमन्दों को बहुत होशियारी और सहानुभूति से चलना चाहिए और धीरे धीरे रोगी के नैतिक बल को बढ़ाना चाहिए। जब रोगी स्वयं समझदार होकर अपनी चिकित्सा अपने हाथ में ले लेता है तभी वह सच्चे तौर पर तनदुरुस्त हो सकता है। जो आदमी अपने पुराने रोग को बिलकुल भगा देता है वह सिर्फ शरीर की ही तनदुरुस्ती नहीं बल्कि दिलदिमाग की तन्दुरुस्ती भी हासिल करता है। वह एक ऊँचे दर्जे का और बिल्कुल नया आदमी हो जाता है। इसी से दवा पी पीकर किसी का भी पुराना रोग नहीं जाता और दवा पीने और पिलाने वालों की सूची में असाध्य रोगों की गिनती दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। याद रखिए कि अगर कोई तनदुरुस्त रहना चाहता है तो उसे प्राकृतिक जीवन बिताना चाहिए, लेकिन अगर कोई पुराने रोग को भगाकर फिर से तनदुरुस्त बनना चाहता है तो उसे योगी बनना पड़ेगा।

सौ में निन्यानबे जीर्ण रोग सादे भोजन के साथ साथ कमर-नहान और उपस्थ-नहान और आवश्यकतानुसार धूप या भाप-नहान से निस्सन्देह चले जायँगे। लगकर इलाज करना चाहिए।

अचानक की तकलीफें

अचानक की तकलीफों और बीमारियों के इलाज के बारे में कुछ बताना जरूरी है। इन तकलीफों का अंगरेजी में (accidents) (दुर्घटनाएं) कहते हैं और उनकी शुरू की चिकित्सा को फरट एड (firstaid) कहते हैं। चतुर चिकित्सक मिट्टी पानी के इस्तेमाल से सभी तकलीफों की प्राथमिक सहायता (पहली इमदाद, (firstand) अच्छी तरह कर सकते हैं, लेकिन फिर भी कुछ इशारे यहां दिये जाते हैं।

फालिज—

फालिज (पक्षाघात) का आना अचानक होता है, यद्यपि उसके असली कारण बहुत पहले से अपना असर फैलाते हैं। फालिज के शुरू होते ही रोगी के सिर और कंधों को कुछ ऊंचा रखते हुए उसे चित लिटा देना चाहिए। फिर पेड़ू पर एक मिट्टी की ठंडी पट्टी रखकर और गर्दन के चारों तरफ कपड़े की एक काफी मोटी गीली पट्टी रखकर रोगी के शरीर और हाथ पैरों को हल्के हल्के पर तेजी के साथ कुछ मिनटों तक ऊपर से नीचे रगड़ना चाहिए। पट्टी से कपड़े और बिस्तर न भीगें। इसलिए गर्दन की पट्टी के चारों तरफ कोई हल्का सूखा ऊनी कपड़ा लपेटना चाहिए। सर्दी में रोगी के शरीर को कंबल या रजाई से भी ढंकना चाहिए। इन तरकीबों से खून सिर से नीचे की तरफ खिंच आता है। पट्टियों को ३०-४० मिनट तक रखना चाहिए और जरूरत होने पर आधे घंटे के बाद फिर दुहराना चाहिए या उन्हें लगातार दो-ढाई घंटे रहने देना चाहिए। इस हालत में उसे पानी से तर करते रहना जरूरी है। पट्टी के बाद अगर रोगी की हालत कुछ अच्छी हो तो सहने लायक काफी गरम पानी का एक-हल्का एनीमा बहुत लाभदायक होगा। कभी रोगी की हालत सुधरे एनीमा दे देना चाहिए।

अगर रोगी को कहीं से लाना हो तो स्ट्रेचर या डोली पर ले जाना चाहिए, किसी गाड़ी पर नहीं।

पूरे इलाज के लिए उपवास से शुरू करना चाहिए।

बनावटी सांस—

दम घुटने पर, जैसा कि पानी में डूबने, फांसी लटकने या कभी कभी बेहोशी के समय होता है, बनावटी सांस देनी चाहिए। इसकी दो तीन तरकीबें हैं।

(१) रोगी के ऊपरी कपड़ों को जल्दी लेकिन सहूलियत से हटाकर उसे पेट के बल लिटा दो। एक छोटा हल्का गद्दा या तकिया उसके सिर के नीचे रखो, जिससे उसकी नाक और मुंह जरा ऊपर उठे रहें। फिर रोगी के पैरों के पास घुटने टेक कर बैठो और अपने दोनों खुले हाथों को कमर के ठीक ऊपर पीठ दोनों तरफ रखो और इसी हालत में हल्के झुके पर मजबूती के साथ पीठ पर के उस हिस्से को दबाओ। दबाते समय दबाने वाले का शरीर झुकेगा, उसी झुकने से दबाव होना चाहिए। हाथों से जोर न लगाना चाहिए। सयानों में एक एक दबाव चार चार सेकंड के लिए हो और बच्चों में तीन-तीन सेकंड के लिए। कुछ देर तक बारी-बारी इसी तरह दबाना और दबाव को ढीला करना चाहिए।

(२) रोगी को पीठ के बल लिटाओ। कमर के ऊपर पीठ के निचले हिस्से के नीचे एक छोटा गद्दा रखो, जिससे सिर सीने से नीचा हो जाय। फिर टांगों के आर-पार घुटने टेक कर बैठते हुए दोनों तरफ सीने पर (स्तनों के नीचे) दोनों हाथों को खोलकर रखो और १, २, ३, ४, गिनो। १, २ गिनते समय सीने को हल्का लेकिन मजबूती से दबाओ और ३, ४ गिनते समय दबाव को ढीला करो। ऐसा तब तक करो जब सांस वापस न आ जाय। सांस वापस आते समय सीने में हल्की घर्राहट सी होती है। सीना दबाते समय हाथों में कलाई के पास से हल्का कंपन देना चाहिए।

(१) रोगी को नं० २ की हालत में इस तरह लिटाओ कि सीना जरा उठा रहे। तब झुक कर रोगी के हाथ को कलाई के पास पकड़ लो बाजुओं को ऊपर और पीछे की तरफ ले जाओ और तब उसी तरह पूरे खुले बाजुओं को वापस लाकर शरीर के बगल के पास से कोहनियों को मोड़ते हुए सिर्फ बाजुओं के अगले हिस्से को सीने पर मलो। इस तरह सयानों में फी मिनट १५ बार और बच्चों में २० बार तब तक करना चाहिए जब तक सांस वापस न आ जाय।

पानी में डूबने के मौके पर जब दम घुटता है तो नं० १ वाली तरकीब को काम में लाना ज्यादा अच्छा है। उससे पानी बाहर निकल आता है। पानी को बाहर निकालने के लिए दूसरी तरकीब है पेट के बल लेटे हुए रोगी के पेट और पेड़ू पर हाथ रखना और उसे हल्का-हल्का दबाना, फिर उसी तरह पेट और पेड़ू को दबाए हुए रोगी को बीच-बीच में थोड़ा ऊपर उठाना और उसके ऊपरी अंग को नीचे की तरफ कुछ झुकाना।

जहरीले चीजों की डंक—

बिच्छू, बर्रे के डँसने पर एक बार या बार बार की मिट्टी की ठंडी पट्टी से ही काम निकल जाता है। भाप देने से तो जादू का सा असर होता है।

सांप के काटने पर काटने की जगह पर—ऐसा चीरा देकर उँगलियों से दबा दबाकर खून जितना हो सके निकाल देना चाहिए। अगर हो सके तो मुँह से भी चूस चूस कर खून फेंक देना चाहिए। चूसने वाले के मुंह में कोई जख्म न हो और चूस कर खून फेंकने के बाद खूब कुल्ला करके मुंह को अच्छी तरह साफ करना चाहिए। जख्म को नींबू के रस से (अगर मिले तो, नहीं तो पानी से) अच्छी तरह धो कर उस पर मिट्टी की पट्टी चढ़ा देनी चाहिए। साथ ही पेड़ू पर भी मिट्टी की पट्टी देनी चाहिए। अच्छा हो अगर काम पर मिट्टी चढ़ाने के बाद ही

पहिले एनीमा से पेट साफ कर तब पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी दी जाय। बल्ब को धोने और उसपर मिट्टी चढ़ाने के साथ-साथ उसके कुछ ऊपर एक मजबूत कपड़े के टुकड़े से अच्छी तरह कस कर बांध देना चाहिए। फिर उसके एक-डेढ़ फुट ऊपर भी बांधना चाहिए। यह दोनों बन्धन पन्द्रह मिनट से ज्यादा देर तक न बंधे रहें। यह सब काम जल्द होने चाहिए। साथ ही उधर भाप-नहान के लिए पानी गरम हो। पानी तैयार होते ही रोगी भाप-नहान और उसके बाद मामूली नहान और कमर-नहान देने चाहिए। उसके बाद रोगी को गरम कपड़ों से ढक कर लिटा दीजिए, लेकिन सोने न दीजिए। एक डेढ़ घंटे बाद, अगर जरूरत हो तो, भाप-नहान और कमर-नहान दिये जा सकते हैं। रोगी को सोने न देना चाहिए। अगर दो बार कमर-नहान के बाद भी शक रहे तो रोगी के सारे शरीर को, चेहरा और गर्दन छोड़कर, जमीन में गाड़ दीजिए। सारे शरीर के चारों तरफ अच्छी तरह गीली मिट्टी रहे। इस हालत में रोगी सो न जाय, इसका ख्याल रहे। एक डेढ़ घंटे के बाद रोगी को नहला कर लिटा दीजिए।

रोगी को तब तक कुछ भी खाने को न देना चाहिए, जब तक कि जहर का अन्देशा बिलकुल दूर न हो जाय। फिर रसाहार पर एक-दो दिन रखकर फल देना चाहिए। एनीमा का प्रयोग भी चलना चाहिए। शराब, चाय इत्यादि भूलकर भी न देना चाहिए।

कुत्ते का काटना—

अक्सर इसका असर कुछ दिनों बाद होता है। काटने के बाद से ही शरीर को उपवास, रसाहार, फलाहार, सुधरा भोजन, बीच-बीच में भाप-नहान और शुरू से ही कमर-नहान से शुद्ध कीजिए।

बुखार में बर्राना—

इसे अंगरेजी में डिलीरियम (delirium) कहते हैं। १०५ डिग्री या इससे ज्यादा बुखार होने पर कोई कोई रोगी कभी या तो बर्राता

है या बेहोशी की हालत में हो जाता है। दोनों हालतों में पेट पर मिट्टी की पट्टी और गर्दन के चारों तरफ गीले कपड़े की पट्टी देनी चाहिए। सिर पर भी कपड़े की गीली पट्टी दी जा सकती है। अगर गर्दन के चारों तरफ पट्टी दी जाय तो गरम कपड़े से लपेट देना चाहिए। पट्टी गरम होते ही बदली जानी चाहिए। बुखार कुछ भी कम होते ही पट्टी हटा देनी या बिल्कुल बन्द कर देनी चाहिए। अगर बुखार कम भी न हो लेकिन हालत कुछ सुधर जाय तो पट्टी रुक रुक कर देनी चाहिए। बर्फ का इस्तेमाल वर्जित है।

चोट से खुरचना, किसी अंग का कटना—

कपड़े की गीली पट्टी से काम लो। खुरचने पर दिन भर में तीन चार पट्टी काफ़ी है। दूसरे दिन सिर्फ़ दो या तीन।

कट जाने पर अगर खून ज्यादा निकलता हो तो जरा मोटा गद्दा अच्छी तरह उसे पानी में भिगो कर कटे स्थान पर रखकर दूसरी पट्टी से उसे अच्छी तरह बांध देना चाहिए। और जब तक खून बन्द न हो इस गद्दे को यहीं और तर रखना चाहिए। खून बन्द हो जाने पर दिन भर में एक दो गीली पट्टी की और जरूरत पड़ेगी। मामूली कटने पर मामूली गीली पट्टी से काम निकल जायगा।

जलना—

अगर कपड़े में आग लग जाय तो भागना न चाहिए। जमीन में लोट लोट कर आग को बुझा देना चाहिए। ऊपर से अगर कोई मोटा और भारी कपड़ा (मोटा कम्बल, दरी) डाल दिया जाय तो आग जल्द बुझ जाती है।

अगर शरीर भी जल गया है तो कपड़ा उतारते समय होशियारी से काम लेना चाहिए। काट काट कर कपड़े को हटाओ। अगर कपड़ा चिपक गया है तो चारों तरफ से कैंची से काट दो और चिपके कपड़े को हटाने की कोशिश न करो।

जले हुए स्थान पर सोडा बाइकारबोनेट (bi carbonate of soda) और तिल या जैतून के तेल का लेप या सिर्फ नारियल का तेल या मिट्टी की पट्टी लगाने से लाभ होता है। बुरी तरह जल जाने पर जले हुए अंग को सहने लायक काफी गरम पानी में देर तक डुबा कर रखने से लाभ होता है। जलने से जहां पर लाल उभड़ गई है और जख्म हो गया है वहां अंडे की सफेदी का गाढ़ा-गाढ़ा लेप करके ढक देना चाहिए। यह जख्म को अच्छा करके ही छोड़ेगा।

गले में किसी चीज का अटकना—

चेहरे को जरा नीचा करते हुए रोगी को बैठा दो। फिर कन्धों के बीच (गर्दन के नीचे ही) हल्के घूंसे लगाओ। मुंह में उंगलियों को डालकर कोई होशियार आदमी अटकी हुई चीज को निकाल सकता है। अगर रोगी बच्चा है तो उसके नथनों को दबा कर बन्द करने से वह मुंह खोल देगा और तब उंगलियों से अटकी चीज निकाली जा सकती है।

कान में किसी चीज़ का पड़ जाना—

अगर कीड़ा है तो कान में तेल डालने से वह मर जायगा और तब वह निकाला जा सकता है। किसी चीज को निकालने के लिए कान के बाहरी हिस्से को खींच कर पीछे की तरफ ले जाना चाहिए। तब कान के अन्दर की चीज के निकालने में सहूलियत होती है। बहुत सी चीजें पिचकारी देने से निकल जाती हैं। कुछ को कान साफ करने वालों से निकलवाना पड़ता है।

बेहोशी—

पहले यह ठीक कर लो कि रोगी जीता है। जीते रहने की हालत में नाक के पास शीशे का टुकड़ा रखने से उस पर भाप सी जमती है।

फिर यह जानने की कोशिश करो कि रोगी ने जहर तो नहीं खाया है (...

पर या रोशनी से चौंकती तिरमिराती हैं तो दिमागी खराबी नहीं है। पुतलियों का ना बराबर सिकुड़ा रहना दिमाग की खराबी बताता है। पुतलियों का सिकुड़ कर सुई की नोंक की तरह बन जाना अफीम के खाया जाना बताता है। रुक-रुक कर धीरे-धीरे सांस का आना-जाना सख्त सदमा या एकाएक कमजोरी की हालत में होता है। नाक बजना या सांस की खराहट और कमजोर नब्ज फालिज जैसी हालत और दिमागी खराबी में रहती है। बहुत गरम बदन और बहुत तेज नब्ज बारदार बुखार या लू लगने की हालत में होती है। इन बातों को अच्छी तरह समझना और जानना चाहिए।

रोगी के कपड़े ढीले कर दो। मामूली बेहोशी में रोगी को आराम हालत में लिटाना चाहिए। अगर उसका चेहरा पीला है तो उस सिर कुछ नीचा कर दो। लेकिन अगर चेहरा तमतमाया है तो सिर कुछ ऊँचा कर दो। उसके शरीर और चेहरे में हवा लगने दो। और धीरे हवा करो। पेड़ू पर जल्दी से मिट्टी की गीली पट्टी रखो, सीने पर कपड़े की गीली पट्टी दो और चेहरा और गर्दन पर हल्के पानी का छींटा दो, रीढ़ को भी तौलिया भिगो कर रगड़ दो। साथ ही पैर-हाथ को हल्के-हल्के दबाओ और पानी का प्रयोग करते समय रोगी को मोटे कपड़े या कम्बल से ढक कर गरम रखो। अगर सांस धीमी, कमजोर और रुक-रुक कर आती हो तो थोड़ी देर बनावटी सांस दो। होश होने और हालत सुधरने पर गुनगुने पानी का एनीमा दो।

बेहोशी की हालत में पानी या कुछ भी पीने को न दो। उससे गला घुटने का डर रहता है। होश हो जाने पर थोड़ा-थोड़ा पानी या फल का रस, थोड़ी-थोड़ी मात्रा में चूसने को दिया जा सकता है। नशीली चीज किसी भी हालत में न दो।

मिर्गी की मूर्छा—

जब मूर्छा हो तो उसे हो लेने दो, रोकने या दबाने की कोशिश करना हानिकर है। रोगी को जितने आराम से हो सके रखो, सिर को कुछ ऊँचा कर दो। रोगी को हवा लगने दो। नीचे के कपड़े को हल्के हल्के खींच कर कुछ ग्राग करो, जिससे हवा आ सके और दम न घुटे। फिर यह भी देखो की दाँतों से जीभ न कटे। इसके लिए रूमाल या किसी साफ़ कपड़े के टुकड़े को दाँतों के बीच दिया जा सकता है। बँधी मुट्ठियों को खोलने की चिन्ता या कोशिश बेकार है। रीढ़ का गीले कपड़े से हल्के-हल्के रगड़ना चाहिए।

मिर्गी के रोगियों को धीरज के साथ अपना इलाज कई महीनों तक करना चाहिए। उपवास, रसाहार, फलाहार, फिर सुधरा भोजन, लगातार कुछ हफ्तों तक एनीमा-प्रयोग और तीन-तीन महीने पर या पहले इसी क्रम को दुहरा देना बहुत लाभदायक होता है। नहान, खास कर उदरय-नहान, मिट्टी का प्रयोग, रीढ़ की मालिश और रीढ़ की गीली गद्दी से काम लेना चाहिए।

मिर्गी के रोगियों को शान्त और संयम का जीवन बिताना चाहिए। समझदारी से इलाज करने पर साल भर में सैकड़े पीछे ९५ रोगी बिल्कुल चंगे हो सकते हैं।

हड्डी का टूटना—

इसके लिए हड्डी बैठाना जानना चाहिए। किसी अच्छे जानकार से काम लेना चाहिए, नहीं तो खींच-खाँच में गड़बड़ी होगी। जब तक जानकार न मिले रोगी और उसके जख्मी अंग को आराम से रखना चाहिए और अगर खून बहता हो तो कपड़े की गीली गद्दियों से खून बंद करने की कोशिश करनी चाहिए। दर्द रहने पर गरम और ठंडी सेंक हल्के-हल्के देनी चाहिए।

मुँह से खून का आना—

यह जानना चाहिए कि खून कहाँ से आ रहा है। अगर खून कुछ नीलापन लिये है या गंदा लाल है और उसमें कुछ भोजन का अंश है तो समझना चाहिए कि खून पेट के अन्दर से पुराने फोड़े (कैन्सर, cancer) के कारण आ रहा है। अगर खून चमकीला लाल है और उसमें भोजन का अंश भी है तो भी समझना चाहिए कि पेट के अन्दर से आ रहा है लेकिन मामूली जख्म के कारण है। दोनों हालतों में रोगी को आराम से लिटाकर थोड़ी देर पर नीबू का रस मिला ठंडा चम्मच (कुछ) पानी पीने को देना चाहिए। साथ ही पेडू पर मिट्टी की गीली पट्टी रखना चाहिए। जरूरत रहने पर मिट्टी की पट्टी आध-आध घंटे के बाद कई बार दी जा सकती है।

अगर खून चमकीला लाल है और उसमें फेन भी है लेकिन भोजन का अंश नहीं है तो उसे फेफड़ों से आता हुआ समझना चाहिए। घबराने की बात नहीं, क्योंकि कभी कभी दमा के रोगियों को आराम के उभाड़ के समय भी ऐसा होता है। चाहे जब हो, रोगी को आराम से लिटाकर, पेडू पर गीली मिट्टी और सीने पर गीले कपड़े की पट्टी देनी चाहिए। उपवास जरूरी है। उपवास के बाद कुछ दिनों तक रसाहार और दुग्धाहार चलना चाहिए।

अगर नाक से खून आता हो तो सिर के नीचे बिना तकिया दिये लेटना चाहिए। नीबू के रस मिले ठंडे पानी का नाक से जब तब सिड़कना चाहिए। भौंहों के बीच (नाक के ठीक ऊपर) और गर्दन के पीछे कपड़े की गीली पट्टी से लाभ होता है।

अगर नीबू न मिल सके तो सिर्फ ठंडे पानी का इस्तेमाल करना चाहिए। खून रोकने के लिए नीबू का रस एक बहुत अच्छी चीज है।

गरमी से बहुत कमज़ोरी—

इसमें भी बेहोशी सी होती है, शरीर ठंडा हो जाता है, नब्ज बहुत कमज़ोर लेकिन तेज हो जाती है।

रोगी को ठंडी जगह में रक्खो। कपड़ा भिगोकर सारे शरीर को हल्के-हल्के लेकिन तेज़ी से रगड़ो। सिर को अच्छी तरह ठंडे पानी से धोओ, साथ ही गरम पानी नींबू के रस के साथ पीने को दो, जिससे शरीर में गरमी आ जाय। अगर कमज़ोरी-बहुत ज्यादा है और पैर ठंडे पड़ गये हों तो सहने लायक काफी गरम पानी में कम्बल अच्छी तरह निचोड़ कर टांगों में लपेट दो और ऊपर से दो चार कम्बल और डाल दो। थोड़ी-थोड़ी देर पर नींबू के रस के साथ गरम पानी पीने को दो।

हिचकी—

हिचकी पेट की खराबी से होती है। मामूली हिचकी में धीरे-धीरे पानी चूसना चाहिए। गहरी सांस लेने से भी हिचकी बंद होती है। कभी-कभी जोरदार हिचकी में उपवास की भी ज़रूरत पड़ती है। मरने के समय की हिचकी बुरी होती है, पर उसका कोई इलाज नहीं।

लू लगना—

इसके लक्षण हैं एकाएक तबियत का खराब होना, परेशानी और कुछ बेहोशी, तेज बुखार, नब्ज कमज़ोर और कभी कभी नब्ज का बहुत कमज़ोर हो जाना।

रोगी का कपड़ा हटाकर उसके सिर और सारे शरीर को अच्छी तरह ठंडे पानी से धोकर पोंछ देना चाहिए। तुरन्त ही मिट्टी की गीली पट्टी पेडू पर देना चाहिए। अगर फिर भी ज़रूरत हो तो आध घंटे के बाद रोगी को अच्छी तरह नहलाना चाहिए। ज्यादा परेशानी में सारे शरीर की गीली पट्टी बिना कम्बल लपेटे देनी चाहिए और ऊपर से पानी डालना चाहिए, लेकिन अगर कमज़ोरी बहुत ज्यादा है तो नहाना कम या गीली

पट्टी देकर कम्बल से अच्छी तरह ढँक देना चाहिए। मौका देखकर और होशियारी से काम करना चाहिए।

मोच—

मोच में कपड़े की गीली पट्टी से फायदा होता है। इसे थोड़ी-थोड़ी देर का अन्तर देकर कई बार देना चाहिए। एक तरीका आराम पहुँचाने का और है। पहले काफी गरम पानी में उस हिस्से को डुबोकर रखना या ऊपर से गरम पानी गिराना और फिर ठंडे पानी में डुबोना या ठंडे पानी को ऊपर से गिराना। दिन में दो-तीन बार करना चाहिए। अक्सर मोच खाये अंग को बैठाने की जरूरत पड़ती है। इसके लिए कोई जानकार चाहिए।

दाँतों का दर्द—

गरम पानी में जरा नमक मिलाकर दिन में दो-तीन बार कुल्ला करना चाहिए। आम और महुए की छाल को पानी में उबालकर उस पानी से कुल्ला करने से भी लाभ होता है, लेकिन अगर दर्द के साथ मसूढ़ों में गर्मी और जलन भी है तो मुँह में मामूली ठंडा पानी लेकर उसे कुछ देर तक रखना चाहिए। जब पानी गरम हो जाय तो उसे फेंक कर फिर से ठंडा पानी मुँह में लेना चाहिए।

यह दर्द भी पेट की खराबी से होता है। इसलिए नियमित भोजन और एनीमा का सहारा लेना चाहिए।

भाप से बहुत लाभ होता है। भाप चेहरे पर लगे। बीच-बीच में मुँह खोलकर अंदर भी लगने देना चाहिए।

सदमा—

अक्सर चोटों के मौकों पर चोट तो कम रहती है, लेकिन सदमे से हालत खराब हो जाती है। ऊँचे से गिरने पर, किसी अंग के बुरी तरह कट जाने पर बहुत खून निकलने पर, जल जाने पर या वैसे भी किसी

बीमारी में सदमे का अन्देशा रहता है। लेखक ने एक ऐसे आदमी को एक बार देखा, जो दरख्त से गिर गया था। वैसे उसकी भीतरी हालत अच्छी थी, पर सदमे से उसका बाहरी हाल बहुत बुरा था। लेखक ने कहा कि यह आदमी बहुत बहादुर है। अगर कोई दूसरा आदमी दरख्त से गिरा होता तो उसका बदन चकनाचूर हो गया होता। यह सुनकर वह आदमी सम्हल गया और लगा बोलने। इस घटना से ज़ाहिर (स्पष्ट) होता है कि सदमे में हिम्मत दिलाने वाली हमदर्दी (सहानुभूति) की बात रोगी से कहनी चाहिए। साथ ही नींबू का रस मिले गरम पानी या अगर और कोई खराबी न हो तो गरम दूध पीने को देना चाहिए और रोगी को गरम कपड़ों से अच्छी तरह ढँकना चाहिए। जिस तकलीफ से सदमा हुआ है उसे भी दूर करना चाहिए।

ज़हर खाना—

ज़हर खाने पर ज़रा नमक मिले गरम पानी को (काफी मात्रा में) पिला कर अच्छी तरह कै करानी चाहिए। पानी पीने के बाद हलक में उँगली डाल कर या चिड़िया के मुलायम पर से हलक गुदगुदाने से कै हो जाती है। इस तरह थोड़ी-थोड़ी देर के बाद बार बार कै करानी चाहिए। नमक मिला कर सहने लायक पानी का एनीमा भी एक-दो बार देना चाहिए। अगर रोगी कमज़ोर नहीं हुआ है तो भाप-नहान और कमर-नहान से बहुत लाभ होगा। एक-दो बार कै और एनीमा से पेट साफ हो जाने के बाद दूध या शक्कर मिला पानी पीने को देना चाहिए।

अक्सर लोग तेज़ाब पी जाते हैं। उससे होठों में दाग हो जाता है। इसे देख लेना चाहिए और ऐसी हालत में कै नहीं करानी चाहिए। रोगी को दूध या थोड़ा गरम पानी में अंडे की सफेदी अच्छी तरह मिला कर पीने को देना चाहिए। साथ ही थोड़े दूध का एनीमा इस तरह देना चाहिए कि वह पेट में ही रह जाय।

अगर बेहोशी है और सांस घुटी है तो चेहरे और गर्दन को भीगे कपड़े से पोंछना चाहिए और बनावटी सांस देनी चाहिए।

ज़हर खाने की हालत में तब तक उपवास और एनीमा-प्रयोग की ज़रूरत है, जब तक कि शरीर से ज़हर बिलकुल निकल न जाय। नीबू का रस पानी के साथ मिला कर बीच-बीच में दिया जा सकता है।

आख़िरी हिदायतें—

(१) ऊपर जो कुछ बताया गया है वह अचानक की तकलीफ़ की हालतों में प्राथमिक सहायता या पहली इमदाद की तरह बताया गया है। कुछ तकलीफ़ों में पहले से कोई रोग चलता रहता है या कुछ तकलीफ़ें आने वाले रोगों की सूचना दे रही हैं। ऐसी तकलीफ़ों का इलाज जब तक ज़रूरी हो नियम-पूर्वक चलना चाहिए।

(२) प्राथमिक सहायक को होशियारी से काम करना चाहिए। उसे यह ध्यान में रखना चाहिए कि रोगी की तकलीफ़ कम हो जाय और आने वाले ख़तरे का अन्देशा दूर हो जाय।

(३) जब कोई बात अच्छी तरह समझ में न आवे या कभी कोई गड़बड़ी मालूम हो तो पेड़ू पर और तकलीफ़ के स्थान पर मिट्टी की पट्टी का प्रयोग न भूलो।

(४) प्राकृतिक चिकित्सा में किसी भी तरह ज़हर का प्रयोग—अन्दर पीने के या ज़ख़्म पर लगाने के रूप में—मना है। इस चिकित्सा में टिंक्चर आयडीन के बदले नीबू का रस या पानी मिला नीबू का रस या सिर्फ़ पानी या मिट्टी की पट्टी ज़्यादा लाभ के साथ काम में लाई जाती है।

(५) अगर कुछ जानी-समझी जड़ी-बूटी, जो ज़हरीली नहीं है, काम में लाई जाय तो हर्ज नहीं।

—

कसरत और आराम

कसरत और आराम

यह दोनों भी अचूक चिकित्सा के ढंग हैं, लेकिन इनकी गिनती चिकित्सा विधियों में इसलिए नहीं है कि यह तो हर रोज की जिन्दगी के भी जरूरी हिस्से हैं। फिर भी नये रोगों में 'आराम' की जरूरत रहती है और पुराने रोगों में 'कसरत' और 'आराम' दोनों की जरूरत होती है।

कसरत

कसरत की जरूरत—

सच पूछिए तो अलग से कसरत करना जरूरी न होता, अगर हम लोगों के रहने और काम करने के ढंग नहीं बिगड़ते। जो लोग सुबह उठकर मील दो मील बाहर मैदान जाकर पाखाने के लिए बैठते हैं और फिर मील दो मील वापस आते हैं और आते जाते खुली हवा में सांस लेते हैं उन्हें कसरत की क्या जरूरत ? जो किसान खेतों में दिन भर हाड़ तोड़ मेहनत करते हैं उन्हें कसरत की क्या जरूरत ? जो नहाने के लिए बन्द कमरे के अन्दर नहीं घुसते बल्कि नदी या तालाब में जाकर घंटे आध घंटे अच्छी तरह तैर कर नहाते हैं या खुद कुंआ से पानी निकाल कर नहाते हैं उन्हें कसरत की क्या जरूरत ? जो औरतें अपने घर के काम-काज खुद ही करती हैं, चक्की पीसती, धान कूटती और ऐसे ही सब काम करती हैं, उन्हें कसरत की क्या जरूरत ? लेकिन कसरत की जरूरत उन्हें जरूर है, जिनके काम नौकर या और कोई दूसरा कर देता है, जिनका रोजगार उन्हें बहुत देर तक बैठे रहने के लिए विवश करता है, जो देश और संसार के ऊँचे-ऊँचे कामों के करने में इतना व्यस्त रहते हैं कि अपने आप दैनिक जीवन के कामों को खुद नहीं कर सकते और जो निरी सभ्यता और फैशन के कारण अपने कामों के लिए दूस-

पुर्जों का या दूसरों का मुँह ताका करते हैं। ऐसों के लिए कसरत नहीं करना अपने शरीर में बीमारी इकट्ठा करना, अपनी योग्यता को ग्रसना और अपने जीने के दिनों को कम करना है। हिन्दुस्तानी और यूरप अमेरिका के लोगों में यही अन्तर है। सच्ची बात यह है कि एक औसत दर्जे का हिन्दुस्तानी ज्यादा अच्छी तरह रहता है, ज्यादा प्राकृतिक जीवन बिताता है अपेक्षा (बनिस्बत) एक यूरोपियन या अमेरिकन के, लेकिन यूरोपियन या अमेरिकन इस बात में बढ़ा-चढ़ा है कि वह नियमित कसरत करता है या कोई खेल खेलता है या बहुत दूर पैदल चलता है। आज तक मैंने एक भी ऐसा अंगरेज न देखा, जो हर रोज किसी न किसी तरह की कसरत न करता हो। क्या लड़के, क्या अधेड़, क्या बुड्ढे, क्या औरत, क्या मर्द, सभी दिन के किसी न किसी समय अपनी ताकत भर कोई कसरत जरूर कर लेते हैं तभी तो वे चाय, सफेद डबल रोटी, मांस, शराब और ऐसी ही बहुत हानिकारक चीजों का इस्तेमाल करते हुए भी बहुत दिनों तक जीते और हट्टे-कट्टे बने रहते हैं। अपने हिन्दुस्तानी भाइयों को इन विदेशियों से सबक सीखना चाहिए।

कसरत के फायदे—

(१) कसरत से शरीर के विकार पसीना के रूप में बाहर निकल जाते हैं।

(२) कसरत से शरीर का रक्त-संचार (खून का दौरान) तेज होता है और जिन जिन अंगों की कसरत होती है, उन्हें एक तरह का रक्त-स्नान मिल जाता है, जो उनके लिए बहुत अच्छा है।

(३) कसरत से अंग मजबूत और सुडौल होते हैं।

(४) कसरत से शरीर में लचीलापन और फुर्ती आती है, जिससे जवानी बनी रहती है। रीढ़ का लचीली बना रहना बहुत जरूरी है।

(५) खास खास कसरतों से खास खास रोग दूर किये जा सकते हैं जैसे कब्ज को दूर करने के लिए पेट और पेड़ू की कसरत। पाचन-शक्ति को पेट और पेड़ू की कसरतों से बहुत सहायता मिलती है।

(६) कसरत करते समय, ज्यादा मात्रा (अंदाज) में हवा और उसके साथ आक्सीजन नाक के रास्ते शरीर में लिया जा सकता है, जिसका फायदा पहले बताया जा चुका है।

(७) कसरत से शरीर की सुन्दरता बढ़ती और बनी रहती है।

(८) कसरत अनेक खराबियों को दूर करती है।

एक ही कसरत सब के लिए नहीं है—

इसे समझाने की जरूरत नहीं, क्योंकि यह मामूली बात है कि जो कसरत लड़कों के लिए ठीक है वह जवान के लिए नहीं, और जो जवान के लिए ठीक है वह अधेड़ और बुड्ढों के लिए नहीं, और इसी तरह जो बुड्ढों या जवानों के लिए ठीक है वह लड़कों के लिए ठीक नहीं है।

बच्चों और छोटे लड़कों के लिए बिना दौड़-धूप के और कोई कसरत उपयुक्त नहीं है। बड़े लड़कों के लिए कसरतें ठीक हैं, और ज्यों ज्यों वे बड़े होते जायँ त्यों त्यों उनकी कसरतों को भी सख्त (कठिन) और ज्यादा देर तक चलने वाली होनी चाहिए। जवानों के लिए दंड-बैठक, जिमनास्टिक इत्यादि सभी उपयुक्त हैं। फिर ज्यों ज्यों उम्र ढलती जाय त्यों त्यों कसरत की मात्रा को कम करना चाहिए और टहलने की मात्रा का बढ़ाना चाहिए। साथ ही बगीचे में काम करना घूम-घूम कर खेत-खलिहान देखना, बाजार करना, अंगरेजी खेल गाल्फ खेलना (अगर हो सके) इत्यादि चलने-फिरने वाले कामों को जारी रखना और बढ़ाना चाहिए। बुढ़ापे में सिर्फ टहलना बन सकता है, लेकिन जो शुरू से कसरत करते आये हैं उनकी कसरतें बुढ़ापे में भी, कुछ कम मात्रा में, जारी रह सकती हैं।

पुराने रोग से पीड़ितों के लिए, जब उपवास और फलाहार के बाद उन्हें मामूली काफ़ी ताकत हो जाय तो अपनी शक्ति भर कसरत करना जरूरी है। उससे उनके रोग जल्द जायेंगे। नये रोगों में तो प्रकृति आराम करने को विवश करती है, इसीलिए उस हालत में कसरत वर्जित है। साधारण तनदुरुस्ती में रोज कसरत करनी चाहिए। जो ऐसा नहीं करते वे अपने शरीर को बहुत दिनों तक अच्छी हालत में नहीं रख सकते।

बदन की मालिश—

बहुत से पुराने रोगों के रोगी इस हालत में रहते हैं कि वे हल्की से हल्की कसरत भी नहीं कर सकते और न वे टहल ही सकते हैं। कभी-कभी गठिया के रोगियों की यही हालत होती है। ऐसों के लिए बदन की, खास कर तकलीफ वाले अंग की, मालिश जरूरी है। मालिश में उतनी ही ताकत लगानी चाहिए जितनी कि रोगी आसानी से सह सके। मालिश करते समय रीढ़ और जोड़ों पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इन जगहों पर दोनों ओर से हल्की हल्की मालिश करते हुए हड्डी और जोड़ की तरफ हाथ ले जाना चाहिए। मालिश जरा दूर तक हो, जिससे खून में अच्छी और काफ़ी हरकत हो जाय।

अपने देश में बहुत से होशियार मालिश करने वाले हैं, जो इस हुनर को अच्छी तरह जानते हैं। मालिश में सारे शरीर को धीरे-धीरे कूटना ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर की तरफ रगड़ना, सारे बदन को पूरी हथेली से नीचे-ऊपर की तरफ थोड़ा थोड़ा मलना, तकलीफ की जगह को बहुत हल्के-हल्के उँगलियों की पुटकियों से दबाना इत्यादि बातें सम्मिलित हैं, ध्यान रहे कि रोगी को मालिश करते समय (तकलीफ नहीं बल्कि) आराम और ताज़गी मालूम हो और साथ ही सारे बदन में खून की रफ्तार (चाल) बढ़ जाय।

मालिश करते समय सरसों के तेल का इस्तेमाल करना बहुत अच्छा है, लेकिन अगर कोई खाल की बीमारी है तो तिल या नारियल का तेल इस्तेमाल करना चाहिए। सब से अच्छी मालिश धूप में होता है। रोगी जितनी कड़ी धूप सह सके उतनी कड़ी (ज्यादा नहीं) धूप में उसके बदन की मालिश करनी चाहिए अगर धूप ज्यादा कड़ी है तो सिर को अच्छी तरह ढंक देना चाहिए। उन हालतों में धूप में नहीं बैठना चाहिए जिनमें धूप-नहान मना है। मालिश के बाद नहा लेना या गीले कपड़े से बदन पोंछ देना भी जरूरी है। साबुन का भरसक इस्तेमाल न करना चाहिए। बहुत से साबुनों में ऐसी चीजें रहती हैं जिनका खाल पर बुरा असर पड़ता है। सिर में सरसों का नहीं, तिल का तेल देना चाहिए।

टहलना—

मालिश के बाद टहलने का नम्बर आता है। जिन्हें ताकत है लेकिन इतनी नहीं कि कसरत करें उनके लिए टहलना जरूरी है। जिन्हें काफी ताकत है उन्हें कसरत करना और टहलना दोनों ही चाहिए। सच पूछिए तो टहलना सब से अच्छी कसरत है। इससे कसरत के सभी फायदे हासिल हो जाते हैं और कसरत की जो एक खराबी है—दिल पर बहुत ज्यादा जोर का पड़ना—वह नहीं होती। कसरत का पूरा फायदा टहलने से मिल जाता है, अगर तेजी के साथ बहुत दूर तक टहला जाय।

देखिए, टहलने से किस तरह फायदा पहुँचता है। कसरत से एक फायदा है खून के दौरान को तेज करना और शरीर के सभी अंगों में खून पहुँचाना। यह काम टहलने से अच्छी तरह हो जाता है क्योंकि मामूली तेजी से भी टहलने से दिल की धड़कन बढ़ जाती है, जो नाड़ी की धमकन से मालूम होती है। एक मिनट में एक साधारण तनदुरुस्त आदमी की नब्ज ७२ बार चलती है। अगर वह मामूली तेजी से चले

या एक मिनट में नब्ज ८२ बार चलने लगती है। इसका मतलब है कि दिल की धड़कन या नब्ज की गति (चाल) एक मिनट में १० बार बढ़ गई। पाठकों को यह जानना चाहिए कि दिल की धड़कन का मतलब है दिल से खून का फेंका जाना। यही खून सारे शरीर में जाता है। एक धड़कन में दिल लगभग तीन छटांक खून चालू करता है। इस हिसाब से मामूली तेजी से टहलते समय जो १० धड़कन और बढ़ जाती है उससे ३० छटांक ज्यादा खून शरीर में जाता है। अगर कोई आदमी एक घंटा टहले तो इसका मतलब है कि उसके शरीर का रक्त-संचार ३० × ३० = १८०० छटांक ज्यादा खून के कारण तेज हो जाता है। यह एक बहुत बड़ा लाभ है। कसरत से थोड़ी ही देर में यह लाभ हो सकता है, लेकिन कसरत करते समय इस काम में दिल पर ज्यादा भार पड़ता है। टहलते समय भी यह जोर पड़ता है लेकिन उतना नहीं। फिर टहलते समय नाकों के रास्ते ज्यादा हवा फेफड़ों में पहुँचती है, जिससे ज्यादा मात्रा में ऑक्सीजन खून के अन्दर जाकर खून को शुद्ध करता है। इस तरह दो काम—खून का साफ होना और उसका तेजी से शरीर भर में दौड़ना—एक ही साथ होते हैं।

ऊपर बताये फायदे के अलावा तेजी से टहलने में शरीर से काफी पसीना भी निकलता है, जिसका मतलब है कि शरीर का विकार निकल गया। साथ ही खुले मैदान में घूमते समय जो प्राकृतिक सुन्दरता देखने को मिलती है उसका असर दिल-दिमाग पर बहुत अच्छा पड़ता है।

कुछ लोग कहते हैं कि टहलने में मांसपेशियों (muscles) की कसरत नहीं होती। ऐसा समझना भूल है। टहलते समय सिर से लेकर पांव तक की २०० मांसपेशियों की हल्की-हल्की स्वाभाविक कसरत हो जाती है।

टहलने से पूरा फायदा उठाने के लिए नीचे लिखी बातों पर ध्यान दीजिए—

(१) टहलना हर रोज नियमित रूप से जारी रहे।

(२) ऐसी खुली जगह में टहलना चाहिए, जहां साफ हवा मिल
।

(३) टहलने का फासला (दूरी) धीरे धीरे बढ़ाना चाहिए, एक-
क बहुत थकान न हो। एक साधारण तनदुरुस्ती वाले को कम से
४-५ मील हर-रोज टहलना चाहिए।

(४) टहलते समय हल्के और आराम देने वाले कपड़े हों।
...र्दों के लिए कमीज और निकर (हाफ पैन्ट) आदर्श कपड़े हैं।
...र्दों में भी बहुत भारी लबादा पहनने की जरूरत नहीं, क्योंकि तेजी
टहलते समय तो बदन में गरमी आ ही जाती है। जूते भी ऐसे हों
चलने में कठिनाई न हो। अगर जमीन पथरीली या बहुत कड़ी नहीं
तो नंगे पाँव चलने में ज्यादा फायदा है। पृथ्वी से पैरों के जरिए
...ीर को बहुत फायदे की चीजें मिलती हैं।

(५) काफी तेजी से टहलना चाहिए, जिससे शरीर में हरकत हो।

(६) टहलते समय बदन बिल्कुल सीधा और कुछ आगे को
...का हुआ रहे। घुटने बहुत न मुड़ें, चेहरा सामने रहे लेकिन तना
...ा न हो। हाथ जहां तक हो सके, बिना मुड़े हुए आगे-पीछे जायें।

(७) नाक से गहरी सांस लेनी चाहिए।

(८) टहलते समय चिन्ताओं को दूर रखिए। ऐसा न हो कि
... समय अपनी सारी समस्याओं और कठिनाइयों को हल करने में
... जाइए।

(९) अगर अकेले टहलने में तबियत ऊबती हो तो अपने मन
एक साथी ढूंढ़िए और उसको अपने संग ले जाइए। ऐसा न हो कि
... गपोड़-मंडल के सदस्य बन कर आप टहलने जायें।
... थोड़े ही अभ्यास से अकेले टहलने की आदत पड़ जाती है और
... में आनन्द आने लगता है।

(१०) टहलने के बाद, अगर पसीना निकला हो तो, बन्द कमरे में सारे बदन को गीले कपड़े से पोंछ दीजिए। अगर बदन में अच्छी ताक़त है और गरमी के दिन हों तो बन्द कमरे में नहा लीजिए।

लेखक ने कितने ही रोगियों को भोजन-सुधार के साथ-साथ टहला-टहलाकर भला-चंगा किया है।

कसरत—

जैसा कि ऊपर बताया गया है, जिस आदमी के साधारण बल है उसे टहलने के साथ साथ कसरत भी करनी चाहिए। कसरतें कई तरह की हैं पर सभी कसरतें सब के लिए ठीक नहीं हैं। इसलिए अपनी शक्ति के लायक़ कसरतों को ही करना चाहिए। आजकल हठयोग की भी बहुत सी कसरतें चली हैं। उन्हें आसन कहते हैं। आसनों से बड़ा लाभ होता है, ख़ासकर अगर वे प्राकृतिक जीवन के अंग बनाए जाएं तो, लेकिन बिना किसी अच्छे जानकार की सलाह लिए आसन न शुरू करना चाहिए। इन दिनों आसन सिखाने वाले बहुतेरे हो गए हैं पर इनमें से बहुत से उस विषय को अच्छी तरह नहीं जानते।

जो कसरतें यहां बताई जा रही हैं वे सीधी-सादी हैं। इन्हें हर कोई कर सकता है। इन कसरतों के सहारे कोई पहलवान नहीं बन सकता, पर वह तनदुरुस्त ज़रूर रहेगा। शरीर के अन्दर के कल-पुर्ज़ों को इन कसरतों से बहुत मदद मिलेगी और वे अपना अपना काम अच्छी तरह कर सकेंगे।

कसरतों से फ़ायदा उठाने के लिए ज़रूरी है कि वे हर रोज़ और बंधे समय पर ही की जायँ। किसी किसी को हर रोज़ एक ही तरह की कसरतों में तबियत नहीं लगती या उनके लिए फ़ुरसत नहीं मिलती। ऐसों को एक रोज़ अपनी शक्ति भर तेज़ी से टहलना और दूसरे दिन कसरतें करनी चाहिए। इससे भी बहुत फ़ायदा होगा, लेकिन इसमें नागा न हो।

कसरतों के सम्बन्ध में नीचे दी हुई बातों पर ध्यान दीजिए:—

(१) खाने के बाद ही कसरत न करनी चाहिए। कम से कम ढाई-तीन घंटे का अन्तर देना ज़रूरी है। खाने के बाद हल्के हल्के टहलना बहुत लाभदायक है।

(२) सुबह या शाम में से कोई भी समय कसरत के लिए अच्छा है। जो टहलता है और कसरत भी करता है उसे सुबह में कसरत करनी चाहिए और शाम को टहलना, लेकिन अगर सुबह को ही टहला जाय और शाम को कसरत की जाय तो भी कोई हर्ज नहीं।

(३) कसरत के बाद ही खाना या पानी पीना न चाहिए। कम से कम आध घंटे का अन्तर दीजिए।

(४) कसरत, जहाँ तक हो सके, खुले मैदान या खुले कमरे में और बिना कपड़ा पहने या बहुत हल्का और ढीला कपड़ा पहन कर करनी चाहिए।

(५) हर दो तरह की कसरतों के बीच में तीन-चार बार गहरी साँस लेनी चाहिए।

(६) कसरत करते समय अगर पसीना निकल आया हो तो कसरत ख़तम करने के बाद बन्द कमरे में गीले कपड़े से, बदन को अच्छी तरह पोंछ लेना या अगर ताक़त हो तो नहा लेना चाहिए। अगर कसरत करने वाला कमज़ोर है तो उसे बदन को गीले कपड़े से सिर्फ़ पोंछ कर कपड़ा पहन लेना चाहिए।

(७) कसरत की मात्रा धीरे-धीरे बढ़ाई जाय, पहले ही से थकान न हो जाया करे।

(८) अगर सिर में चक्कर रहता हो या ऐसी ही कोई और तक-लीफ़ हो तो कसरत करने के बदले टहलना ही अच्छा है।

अब कुछ आसान, लेकिन बहुत फ़ायदेमन्द, कसरतें बताई जाती हैं।
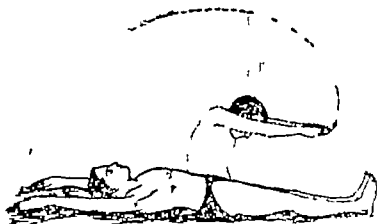
(१) पीठ के बल लेटकर सिर के अगल-बगल में फैले हुए हाथ को धीरे-धीरे सिर के ऊपर से लाकर अंगूठों को छूना और फिर वापस ले जाना। पहले-पहले एक या दो बार काफी है। धीरे-धीरे संख्या बढ़ाइए। घुटने न मुड़ें और हाथों के ऊपर आते समय पैर न उठें।

कुछ दिनों के बाद कोशिश कीजिए कि सिर हाथों के साथ उठे और आगे झुके।

(२) कोशिश कीजिए कि इसी ऊपर वाली कसरत में सिर घुटनों को छू ले। हाथ कोहनी के पास झुककर जमीन छुएंगे (तस्वीर ठीक
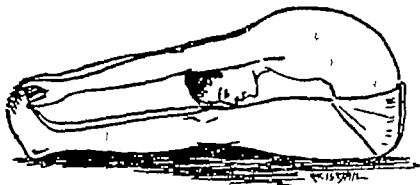
] बन सकी।) समय लगेगा, लेकिन जब ऐसा होने लगेगा तो यही सत पश्चिम तान आसन हो जायगी।

इन दोनों से पेट, हाथ, सीना और रीढ़ की मांसपेशियां ठीक और मजबूत होती हैं, कब्ज दूर होता है, मुटापा घटता है। लेकिन इसका ह मतलब नहीं कि दुबले लोग इसे न करें।

(३) सीधे खड़े होकर हाथों को सिर के अगल बगल ऊपर से नीचे लाना और अँगूठा छूना और फिर ऊपर ले जाना।

कोशिश कीजिए कि सिर हाथों के साथ नीचे आवे।

फिर कोशिश कीजिए कि सिर घुटनों को छू ले।

फिर अँगूठों को छूने के बदले हथेलियों को जमीन पर रखने की कोशिश कीजिए। घुटने किसी भी हालत में न मुड़ें। इस कसरत को ८ बार से ही शुरू करना चाहिए।

इससे सिर से पैर तक की मांसपेशियां पुष्ट होती हैं।

ऊपर की तीनों कसरतों से पेट और पेड़ू के अन्दर के कल-पुर्जे ठीक रहते हैं और रीढ़ भी, जिसके अन्दर नाड़ी का मुख्य तार है, ठीक रहती है।

(४) पीठ के बल लेट कर तने पैरों का एक साथ धीरे-धीरे ऊपर ले जाना और फिर नीचे वापस लाना। एक या दो बार से शुरू कीजिए।
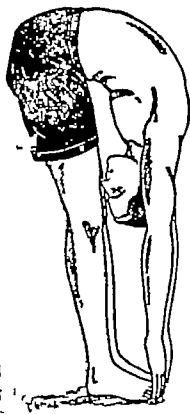
इसको सख्त बनाने के लिए हाथों को नीचे धड़ के पास आराम से रख कर पैरों को बहुत धीरे-धीरे ऊपर ले जाते हुए १०, १० और १० डिग्री के कोणों (angles) पर एक-एक या दो-दो सेकंड के लिए रोकिए और फिर वापस लाते समय उन्हीं कोणों पर रोक-रोक कर लाते जाइए। घुटने तने और सीधे रहें।

इस कसरत से पेड़ू, रीढ़ का निचला हिस्सा और टांगों की मजबूती होती है। इससे कब्ज दूर होता है।
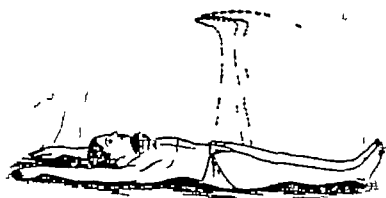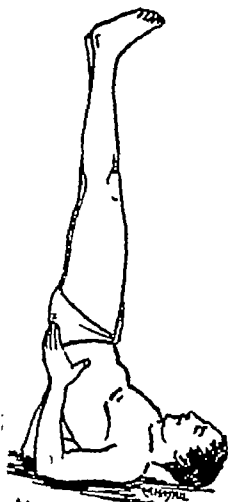
(५) इसी ऊपर वाली कसरत में अगर पैरों को ऊपर ९० डिग्री के कोण पर ले जाने के बाद ही उन्हें इस तरह और भी ऊपर उठाया जाय कि कमर से नीचे का हिस्सा भी आगे तस्वीर में दिखाए गए की तरह पूरी सीध में हो जाय, सिर्फ सिर और कंधे ज़मीन पर रहें, हाथों की हथेलियों से कमर के पास टेक लगाई जाय और ठुड्डी (ठोड़ी) सीने के बीच के ऊपरी गड्ढे को छू ले तो यही कसरत सर्वांगासन हो जाती है। सारी धड़ एक सीध में हो जाय। सीना, पेट, कमर, टाँगें बिलकुल एक लाइन में सीधी रहें। (तस्वीर में कुछ त्रुटि रह गई है।)

पैरों को ऊपर ले जाने या वापस लाने के समय झटका न दीजिए। धीरे-धीरे ऊपर से पीछे ले जाइए और फिर नीचे लाइए। नीचे आते समय टाँगें धड़ से ज़मीन पर आ जाती हैं, ऐसा न होना चाहिए। पैरों को सिर की तरफ आगे झुकाते हुए धीरे-धीरे नीचे लाना चाहिए। पहले पहल पैरों को आध मिनट तक ही रखिए, फिर बहुत धीरे-धीरे समय बढ़ाकर ४ से १० मिनट तक उसी हालत में रख सकते हैं।

सर्वांगासन के बहुत फायदे हैं। इससे नाड़ी बल (nerve strength) मिलता है, भूख तेज होती है, कब्ज दूर होता है और लगातार करते रहने से शरीर नया हो सकता है। लेकिन पहले दिन से ही इसे ना करने लगिए।

(४) बारह इंच के फासले पर दोनों पैरों को रखते हुए सीधे खड़े हो जाइए और दोनों हाथों को कंधों के बराबर अपने सामने लाइए। अब उनको जितना भी बन सके दाहिनी ओर ले जाइए और सामने वापस लाइए। कोहनी न मुड़ें। आखिरी बार एक झटके के साथ दाहिनी ओर जरा और ज्यादा ले जाने की कोशिश कीजिए। पैर अपनी जगह पर रहें। इसी तरह फिर सीधे आकर हाथों को बाईं ओर ले जाइए और आखिरी बार झटके के साथ जरा और ज्यादा ऊपर ले जाने की कोशिश कीजिए। पहले चार बार से शुरू कर के पन्द्रह बार तक कर सकते हैं।
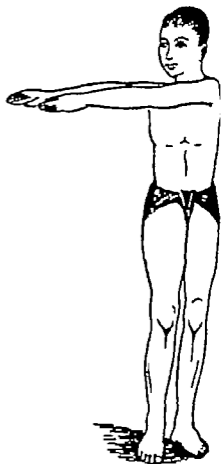
इससे ऊपरी रीढ़ के अगल-बगल, कन्धों और ऊपरी बांह की मांसपेशियां मजबूत होंगी।

(७) एड़ियों को मिलाते हुए सीधे खड़े
ो जाइए। दोनों हाथों को कंधों के बराबर
गल-बगल में कंधों की ही सीध में रखिए।
ब बायें हाथ को नीचे बायें घुटने तक
ाइए और दाहिने हाथ को ऊपर ले जाइए।
र सीधे खड़े हो और हाथों को कंधों की
ध में लाकर दाहिने हाथ को नीचे दाहिने
टने तक लाइए और बायें हाथ को ऊपर
जाइए। इस कसरत को तीन बार से
रू कर के पन्द्रह बार तक कर सकते हैं।

इससे कमर के आस-पास की मांसपेशियों
र हाथ पर जोर पड़ेगा। साथ ही रीढ़ भी
नेगी और मजबूत होगी।

(८) हाथों को ऊपर फैलाते हुए सीधे
ड़े हो जाइए। सामने झुकिए और फिर
थों को ऊपर-ऊपर गोलाकार में ले जाकर
को जहाँ तक बन सके पीछे झुकाइए।
र वापस ले आइए। पहले पहल दो बार
ही शुरू कीजिए।
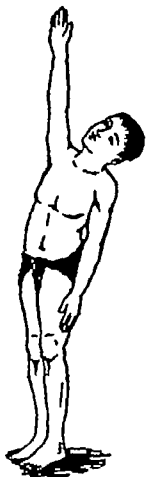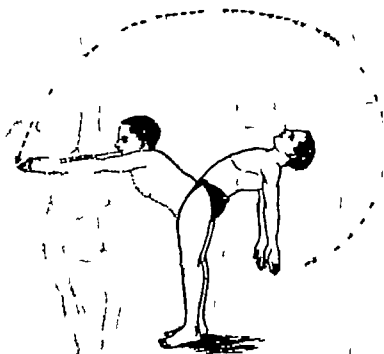
इससे रीढ़, सीना, कमर और पेट की मांसपेशियां मजबूत होती।

इतनी कसरतों से शरीर के अन्दर के कल पुर्जे ठीक रहेंगे और शरीर भी सुडौल रहेगा। लेकिन अगर तीन कसरतें और भी कर ली जांय तो अच्छा है। ये नीचे दी जाती हैं —

(१) आराम से सीधे खड़े हो जाइए। पहले दाहिने हाथ की मुट्ठी बांध कर उसको सख्त करते जाइए और साथ ही कोहनी को मोड़ते हुए मुट्ठी को बहुत धीरे-धीरे कंधे की तरफ लाइए। फिर मुट्ठी को सख्त करते जाइए और वापस ले जाकर हाथ को बिल्कुल सीधा कर लीजिए। शुरू शुरू में एक-दो बार दाहिने हाथ से इस तरह कर फिर उतनी ही बार बायें हाथ की मुट्ठी बांध कर बहुत धीरे धीरे बायें कंधे को छूइए। इसमें जैसे जैसे हाथ ऊपर जाय या नीचे आवे वैसे ही वैसे मुट्ठी को सख्त और उससे भी ज्यादा सख्त करने की कोशिश कीजिए और हाथ को बहुत धीरे-धीरे ऊपर या नीचे लाइए। हाथ ऊपर ले

हुए ऊपर या नीचे आयेंगे। पहले एक या दो बार से शुरू कर के बारह बार तक ले जाना चाहिए। इस कसरत से हाथ मज़बूत होंगे और बांह की मांसपेशियां बनेंगी। भीतर से ताक़त बढ़ेगी।

(१०) इसी तरह एक और कसरत से पैरों को भी मजबूत किया जा सकता है, लेकिन उम्मेद की जाती है कि कसरत के साथ-साथ टहलना भी जारी रहेगा और टहलने से पैर मजबूत होंगे ही। फिर भी अगर इच्छा हो तो पैरों की कसरत इस तरह कीजिए। खड़े होकर आराम से हाथों को कमर पर रखिए। फिर बायें पैर पर खड़े होकर दाहिने पैर को सीधा सामने ले जाइए और सामने से वापस लाकर जहां तक जा सके पीछे ले जाइए। ६-७ बार इस तरह कर के, दाहिने पैर पर खड़े हो जाइए और बायें पैर को उतनी ही बार आगे-पीछे ले जाइए। धीरे-धीरे कसरतों की संख्या बढ़ाइए।

(११) गर्दन की कसरत भी जरूरी है, क्योंकि गर्दन से होकर बहुत सी जरूरी नाड़ियां सिर से आती और वापस जाती हैं।

तस्वीर में बताए गए की तरह सिर को (अ) ऊपर नीचे और (ब) दायें बायें ले जाइए। शुरू-शुरू में दस-दस बार, या इससे भी कम, रखने काफी हैं फिर धीरे-धीरे बढ़ा कर चालीस-चालीस बार तक हर एक को कर सकते हैं।

कब्ज दूर करने की खास कसरतें—

अगर बारबार कब्ज की शिकायत रहती हो तो आंख खुलते ही तीन छटांक पानी धीरे धीरे पीकर बिस्तर पर लेटे-लेटे ये कसरतें कीजिए।

सच्चा आराम सोने के ही समय मिलता है। उसी समय शरीर का खिंचाव बिल्कुल ढीला हो जाता है और दिन भर के काम से टूटे-फूटे कल पुर्जों की मरम्मत होती है। सोने के समय में ही जीवन-शक्ति अपने दैवी भंडार से उतर कर शरीर में प्रवेश करती है। लेकिन हम लोग सोना नहीं जानते। हममें से बहुत से सोते नहीं, गाफिल और बेहोश होकर पड़े रहते हैं। सोने की हालत में भी हम लोग खिंचे और तने रहते हैं। हम लोगों में कुछ ऐसी अस्वाभाविकता आ गई है कि हमारे बहुत से अंग ऐंठे और कड़े रहते हैं, जिससे पूरा-पूरा आराम नहीं मिल पाता। ज़रा बच्चों का सोना देखिए। उनके अंग अंग ढीले होकर 'सोआ-पोआ' से हो जाते हैं और उनके बदन की छाप बिस्तर पर पड़ जाती है। हम लोगों को भी इसी तरह सोना चाहिए, और अगर हम उसे भूल गये हैं तो फिर से सीखना चाहिए।

सोने के सम्बन्ध में कुछ बातों को याद रखना चाहिए।

(१) खाने के तुरन्त बाद ही सोना ठीक नहीं। कम से कम दो घंटे का अन्तर देना ज़रूरी है।

(२) सोने से पहले पेशाब कर लेना, थोड़ा पानी पी लेना और चेहरा अच्छी तरह धो लेना चाहिए।

(३) बिस्तर न बहुत कड़ा हो और न बहुत मुलायम।

(४) खाट तनी हो। अगर तख्त (चौकी) हो तो अच्छा तख्त पर रीढ़ अच्छी हालत में रहती है।

(५) बिस्तर साफ़ हो और बदन पर धोती या बनियान के अलावा या तो कुछ कपड़े न हों, या अगर हों तो बहुत ढीले और साफ़ हों।

(६) जाड़ों में रजाई और कम्बल साफ़ हों। मुँह ढका न हो।

(७) बाईं करवट लेटकर सोना चाहिए। बाईं करवट लेटकर दाहिनी टांग को बाईं टांग के पार आगे को रखिए और बायें को दाहिने दाहिने कन्धे पर रखिए, फिर आराम से बदन को ढीला करके सोइए।

स्टेनली लीफ

इन दिनों इंगलैंड के एक प्रमुख प्राकृतिक चिकित्सक

सारी रात बाईं करवट न सोना चाहिए, क्योंकि उससे पेट के अन्दर की थैली और दिल, जो दोनों बाईं तरफ रहते हैं, दबे रहते हैं। चित हो सोना ही न चाहिए।

(८) सोते समय किसी तरह की चिन्ता मन में न रहे। परमात्मा का ध्यान करते हुए या किसी अच्छे विषय को सोचते हुए सो जाइए।

(९) छः से आठ घंटे सोना जरूरी है, लेकिन किसी-किसी को इससे कम समय में ही पूरा आराम मिल जाता है।

(१०) जितना सबेरे हो सके सो जाइए और जितना सबेरे हो सके उठ जाइए और पाखाना जाने, मुंह-हाथ धोने, कसरत करने और नहाने इत्यादि के काम में लग जाइए। १२ बजे रात के पहले एक घंटे की नींद १२ बजे के बाद दो घंटे की नींद के बराबर है।

सिंचे-तने न रहिए—

सिर्फ सोने में ही नहीं, हम लोग और बातों में भी बेकार खिंचे तने रहते हैं। लिखते समय हम लोग हाथों से जरूरत से ज्यादा जोर लगाते हैं और सिर्फ हाथों को ही नहीं तनते—मुंह, नाक भी बनाये और खींचे रहते हैं और दूसरे अंगों को भी टेढ़ा-मेढ़ा किये रहते हैं। कुर्सी पर बैठते समय हम लोग इस तरह बैठते हैं मानों कुर्सी को जोर से पकड़े हुये हों। कहने की जरूरत नहीं कि ये सभी हरकतें खराब और हानिकर (नुकसानदेह) हैं, क्योंकि इनमें बेकार ताकत खर्च होती है। इसी तरह बैठ कर पैरों को हिलाते रहना सिर को बेकार इधर से उधर करना इत्यादि खराब हरकतें हैं। काम के समय जितना जोर जरूरी हो लगाइये, लेकिन जब काम न हो तो बेकार ताकत और उसके साथ जीवन शक्ति का ह्रास न कीजिये।

इस बीसवीं सदी में हम लोग बराबर ही—चलते-फिरते, खाते-पीते उठते-बैठते, लिखते पढ़ते बोलते-सुनते, सोते-जागते, बराबर ही—तनाव की हालत में रहते हैं। कहीं जाना होता है या रेलगाड़ी पर चढ़ना

होता है या और कोई काम करना होता है तो दो घंटे पहले से ही इस तनाव की हालत में हो जाते हैं। इस हालत में यह जरूरी है कि शरीर को जब कभी ढीला करके आराम दे दिया जाय। चालीस साल की उम्र पार करने के बाद यह आराम जरूरी हो जाता है।

पूरे आराम के लिए शरीर को शिथिल करना जानना चाहिए और इसके लिए अभ्यास की आवश्यकता है। अभ्यास यह है।

दिन में कसरत करने या टहलने या भोजन से पहले और रात में सोने से पहले भी आराम से पीठ के बल तख्त या खीखपाटी पर लेट जाइए। तकिया न हो, अगर हो तो बहुत ऊँचा नहीं। फिर तलवे से लेकर चोटी तक अंग अंग को ढीला कर दीजिए और आँखों को बन्द करके शान्त हो जाइए। नियम यह है कि जिस अंग का सोचिएगा वही ढीला हो जायगा। इसलिए पैर की उँगलियों से शुरू कीजिए और सोचिए कि वे ढीले हो गये। पहले बायें पैर की उँगलियां, फिर तलवा, फिर ऐंडी, फिर टखना, फिर निचली टांग, फिर घुटना, फिर जांघ, फिर कमर। इसी तरह दाहिने पैर के बारे में भी सोचिए। फिर कमर और पेड़ू के बारे में सोचिए। मानिए कि वे ढीले और शिथिल हो रहे हैं। वे वैसे ही होते जायँगे। अब सांस भी गहरी हो जायगी। अब एक-एक करके दोनों हाथों के विविध भागों को सोचिए। वे ढीले हो जायेंगे। इनके बाद पेट, सीना, पीठ, रीढ़ और कंधों को सोचिए। पीठ और रीढ़ को बिल्कुल शिथिल और ढीला कर देना चाहिए। अब गर्दन चेहरा और सिर को सोचिए और उन्हें ढीला कर देना चाहिए। मुंह में जीभ ढीली रहे। इस अभ्यास से ज्यादा से ज्यादा १४ मिनट लगेंगे। इससे अपूर्व शान्ति का अनुभव होगा। (कुछ दिनों के बाद लेटते ही सारा शरीर शिथिल और ढीला हो जाया करेगा) इस सुख और शान्ति की अवस्था में २४ मिनट रहिए। फिर एक टांग को दूसरी टांग पर (टखनों के पास) चढ़ा दीजिए और दोनों हाथों को पेट के गड्ढे के

मीच (जहाँ पसली की हड्डियाँ अलग होती हैं) उँगलियों में फँसाकर बांध लीजिए। ऐसा करने से शरीर से बाहर निकलने वाली विद्युत् (बिजली की) शक्ति शरीर के अन्दर ही रह जायगी। टांगों को एक-दूसरे पर चढ़ाये रहने और और हाथों को जोड़े रहने के समय टांग और हाथ तनने न पावें। उस समय भी सारा शरीर शिथिल रहे, इसका ध्यान रखना चाहिए। इस अवस्था में भी ५ मिनट रहकर शान्ति और शक्ति का संचय कीजिए। इसके बाद उसी हालत में सिर से लेकर पैर की उँगलियों तक एक के बाद दूसरे अंग का सोचिए। सोचिए कि वे शिथिल हैं और उनमें रक्त-संचार अच्छी तरह हो रहा है। इस बार तो बाहरी अंग और भीतर अवयव (दिमाग, सुषुम्ना, दांतों की जड़, फेफड़े, दिल, आमाशय, आँतें, यकृत, प्लीहा, मूत्राशय) दोनों ही के बारे में सोचिये। इस अन्तिम अभ्यास में भी पहले ३-४ मिनट लगेंगे, और पांच-सात दिनों के अभ्यास में तीनों क्रियाएँ ठीक-ठीक होने लगेंगी। शुरू-शुरू में पूरे अभ्यास में १५ मिनट लग सकते हैं। लेकिन एक ही महीने में आश्चर्य-जनक लाभ होगा। पहले-पहल पहली ही क्रिया में नींद आ जाती है, पर कोशिश करके तीनों क्रियाओं को पूरा करके ही सोना चाहिये। इस अभ्यास के लिये सबसे अच्छा समय है दोपहर में भोजन के और रात में सोने से पहले, लेकिन किसी भी समय इसे कर सकते हैं। यह अभ्यास चित लेटकर किया जाता है, पर अगर सोने से पहले किया जाय तो इसे समाप्त कर बाईं करवट हो जाना चाहिये। करवट बदलने पर भी शरीर शिथिल ही रहे।

यह अभ्यास जीर्ण रोग वालों के लिये बहुत आवश्यक है। जो स्वयं नहीं सोच सकते वे सिर्फ लेट जाँय और दूसरा व्यक्ति अंगों का नाम लेता जाय और कहे कि 'यह अंग शिथिल हो रहा है, तुम शान्ति-पूर्वक आराम कर रहे हो, तुम अच्छी तरह गहरी सांस ले रहे हो, इत्यादि।'

आराम पर पूरा ध्यान देना चाहिये, तभी कसरत और मेहनत कर सकोगी। साथही यह भी सच है कि जो कसरत और मेहनत करता है उसे काफ़ी आराम भी चाहिये।

मन को ठीक रखना

मन को ठीक रखना

आदमी शरीर नहीं है—

मालूम नहीं कि कितने आदमी इस बात को समझते होंगे कि वे अपना शरीर ही नहीं हैं। मगर हम किसी को देखते हैं तो समझते हैं कि उसका ऊपरी शरीर, जिसे हम देख सकते हैं, वही आदमी है। लेकिन सच्ची बात यह है कि शरीर आदमी की सिर्फ ऊपरी, बाहरी, पोशाक है। आदमी तो परमात्मा का अंश 'जीवात्मा' है, वह 'चेतन, अ-मल, सहज सुख-राशी' है, और उसके काम के लिये एक ही पोशाक नहीं, सिर्फ मिट्टी पानी, आग, हवा और आकाश तत्व का बना हुआ यह स्थूल शरीर ही नहीं, बल्कि और भी पोशाक, और भी शरीर हैं, जिन्हें हम इन आंखों से नहीं देख सकते। इन पोशाकों—शरीर'—में दो शरीर ऐसे हैं, जो आदमी के बड़े काम के हैं। इनमें से एक भाव का शरीर है और दूसरा विचार का। भाव प्रेम, घृणा (नफरत), ईर्ष्या (डाह) क्रोध (गुस्सा) इत्यादि को कहते हैं। विचार वह है जिसके सहारे हम सोचते हैं, अच्छी या बुरी बातों के लिये उपाय रचते हैं और गहरी से गहरी (लेकिन सांसारिक ही) ज्ञान और विज्ञान की बातों का पता लगाते हैं। ('परा' ज्ञान, ब्रह्म-ज्ञान, के लिये तो बुद्धि ही अलग होती है, जो समय और सुपात्र में स्वयं ही जाग्रत होती है।) भाव विचार से अलग है। भाव किसी चीज के लिये इच्छा पैदा करता है। और विचार उस चीज के पाने की तरकीब (उपाय) ढूंढ निकालता है। भाव के कारण दूसरों की मदद करने की इच्छा होती है और तब विचार के सहारे धर्मशाला, अनाथालय, विद्यालय इत्यादि बनते हैं। फिर भाव के ही कारण दूसरों की सम्पत्ति छीन लेने की इच्छा होती है और तब उसकी पूर्ति के लिये विचार के सहारे मामूली लड़ाई से लेकर घर से पार युद्ध शुरू होते हैं

जिनमें लाखों करोड़ों मानें जाती हैं। इस तरह इस संसार में रहते और काम करने के लिये असल आदमी—जीवात्मा—के पास मामूली तौर से तीन शरीर हैं—(१) स्थूल (भू-लौकिक) शरीर, (२) भाव (भुवर्लौकिक) शरीर और (३) विचार (स्वर्ग लौकिक) शरीर। इसके अलावा और पाशाकें—शरीर—भी हैं, पर उनसे यहां मतलब नहीं।

आदमी मालिक है और यह तीनों शरीर उसके नौकर हैं। अगर नौकर मालिक के हुक्म में रहें तब ठीक है, लेकिन अगर मालिक ही नौकरों के हुक्म और बहकाने में रहे तो बड़ी गड़बड़ी पैदा हो। हम में से बहुत से इन नौकरों के बहकाने में रहते हैं और इसी से दुख भोगते हैं। इसकी एक मोटी मिसाल यह है कि हम अपनी इच्छाओं को करने के लिए सभी तरह की चीज़ें खा बैठते हैं और बहुत तरह प्रकृति के नियमों को तोड़ते हैं, जिसका नतीजा यह होता है कि तरह-तरह की बीमारियों के, तरह-तरह की आधि व्याधि और यातनाओं के, शिकार बनते हैं। इस लिए इन नौकरों को वश में रखना चाहिए।

इन तीनों शरीरों के बारे में बहुत सी जानने की बातें हैं पर यहां सिर्फ़ इतना ही जानना ज़रूरी है कि भाव प्रेरित करता है, विचार उपाय बताता है और इन दोनों के फेर में पड़कर स्थूल शरीर अनुचित काम करता है, जिससे बिचारा सच्चा मालिक—जीवात्मा, आदमी—बंधन में पड़ जाता है। अगर आदमी अपने को जाने और याद रखे कि मैं जीवात्मा हूँ और इन तीनों का मालिक हूँ तो यह धोखे में नहीं पड़ सकता। अब जो बात यहां बताई जायेंगी उनमें तीनों शरीर के अलग अलग नाम न लिये जाकर सिर्फ़ शरीर, जिसका मतलब स्थूल शरीर है, और मन जिसका आशय भाव और विचार दोनों से होगा, कहे जायेंगे।

रोग का सच्चा कारण—

इस किताब में बताया गया है कि रोग का कारण विकार है, लेकिन अगर सच पूछिए तो रोग का सच्चा कारण शरीर का विकार नहीं मन का विकार है। मन के विकार से ही ऐसी ऐसी बातें होती हैं कि शरीर में विकार आ जाता है। इसलिए अगर कोई बीमारी से छुटकारा पाकर तन्दुरुस्त होना चाहता है तो उसे अपने मन को ठीक करना चाहिए।

सच्चा चिकित्सक—

इस किताब में यह भी बताया गया है कि रोग को, खासकर पुराने रोगों (chronic diseases) को, दूर करने के लिए सिर्फ़ रोग के लक्षण या रोग की जगह का ही इलाज नहीं बल्कि सारे शरीर का इलाज करना चाहिए। अब बताया जाता है कि रोग को दूर करने के लिए सिर्फ़ शरीर का ही नहीं बल्कि शरीर और मन दोनों का इलाज करना चाहिए। सच्चा चिकित्सक वही है, जो सिर्फ़ लक्षणों को नहीं, सिर्फ़ खास-खास अंगों को नहीं, सिर्फ़ सारे शरीर को ही नहीं, बल्कि शरीर और मन, दोनों को देख कर अर्थात् पूरे मनुष्य को जानकर, अपनी चिकित्सा-विधि तय करता है। पुराने रोगों में, जिनमें रोगी सभी तरह कमज़ोर पड़ जाता है इसकी खास ज़रूरत पड़ती है।

शरीर और मन—

शरीर का मन से गहरा सम्बन्ध है। शरीर मन की ही प्रेरणा में रहता है। मन के विकारों का असर उसी समय शरीर पर पड़ता है। जानने वाले बताते हैं कि 'डर' का असर खून के दौरान (रक्त संचार) पर वैसा ही पड़ता है, जैसा कि पानी पर बहुत ज़्यादा ठंड का। जिस तरह बहुत ठंड से पानी जम जाता है और शरीर के अन्दर उसका आना-जाना ठीक-ठीक नहीं होता। इसी तरह क्रोध से शरीर में ऐसी गर्मी (दाह) पैदा होती है कि शरीर उससे अन्दर ही अन्दर जल-भुनस

सा जाता है। क्रोध के कारण दिल की धड़कन बन्द हो सकती है और आदमी मर भी सकता है। बात यह है कि मन और शरीर एक ही ढांचे के दो हिस्से हैं और दोनों का असर एक दूसरे पर पड़ता है। ज्यादातर पहले मन के ही असर से शरीर में खराबी आती है और फिर शरीर की खराबी से मन की खराबी पैदा होती है और फिर मन की खराबी से शरीर खराब होता है। इस तरह यह अटूट चक्कर भी बना रहता है। एक जानने वाले ने बताया है कि मन की खराबी के कारण नीचे लिखी बीमारियां होती हैं —

(१) दिल की बीमारियाँ

(२) सांस की बीमारियां

(३) हाज़मे (पाचन) से सम्बन्ध रखने वाली बीमारियां।

कुछ मन के विकार—

मन के विकारों की सूची देने की जरूरत नहीं। काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद, मात्सर्य के अन्दर सभी तरह के विकार आ जाते हैं और हम लोग इनको अच्छी तरह जानते भी हैं। डर और क्रोध के बारे में ऊपर बताया जा चुका है कि उनसे कैसी खराबी होती है। यहां पर सिर्फ़ दो-चार तरह के विकारों का और ज़िक्र किया जायगा।

एक विकार है अपने आप पर तरस खाना—अपनी हालत को बहुत ही गया-बीता समझना। ऐसा समझना कि हम बहुत सताये गये हैं, दुखी हैं, या खराब हैं। यह विकार मन का क्षयी रोग, (यक्ष्मा— Phthisis) है, और इसका शरीर पर बुरा असर पड़ता है।

बराबर चिन्ता करते रहना दूसरा विकार है। चिन्ता का मतलब किसी उपाय को सोच निकालना नहीं है। चिन्ता का मतलब यों ही उधेड़-बुन में पड़े रहना और बिना किसी निश्चय (पक्की बात) पर पहुँचे हुए दिमाग़ खखोरना है। यह मन का घुन है। चिन्ता करने वाले का मन खोखला सा बना रहता है।

मन का सब से खराब विकार है अपनी निश्चित (तय की हुई) बात पर अमल न करना—जैसे, मैंने ठीक किया कि मैं हर रोज कसरत करूँगा पर मैं कसरत नहीं करता। अपने सिद्धान्तों को अपने जीवन का अंग नहीं बनाना मानसिक अपच (mental dyspepsia) या ज्ञान का अजीर्ण है। जो आदमी अपनी तय की हुई बात पर अमल नहीं करता उसे शारीरिक अपच भी जरूर रहेगा।

इसी तरह सभी विकारों के बारे में कुछ न कुछ कहा जा सकता है और सब का बुरा प्रभाव शरीर पर पड़ता है। जो प्रगतिशील नहीं है वह गठिया रोग का शिकार हो सकता है। जो दूसरों की बहुत बुराई सोचता है उसे खून की बीमारियाँ हो सकती हैं, इत्यादि इत्यादि। देखा गया है कि जो कब्ज से ग्रस्त है वह दूसरों का बकाया भी जल्दी नहीं चुकाता और जो बेढंगे तौर से रुपये-पैसे फेंकता है वह महाशय भंग करने में नहीं हिचकता, सचमुच मन और शरीर का बहुत घना संबंध है।

मन को कैसे ठीक किया जाय—

ठीक उसी तरह जिस तरह शरीर को ठीक किया जाता है। अचूक चिकित्सा की विधि के अनुसार हम रोगों को दूर करने के लिए रोगों से नहीं लड़ते बल्कि शरीर को शुद्ध और सबल करते हैं, जिससे रोग खुद ही अलग हो जाता है। मन को ठीक करने के लिए भी हमें विकारों से लड़ना न चाहिए, बल्कि अपनी असलियत और बड़प्पन को याद करना और याद रखना चाहिए, जिससे मन स्वयं ही काबू में रहने लगे। जब हम यह भूल जाते हैं कि हम जीवात्मा हैं, महान हैं, और शरीर और मन न होते हुए दोनों मालिक हैं, तभी मनकी बदमाशी से शरीर बिगड़ता है। (असल में मन बड़ा नौकर है और शरीर छोटा। छोटा बड़े के बहकावे में रहता है।) अगर अपनी सचाई और यह कि 'हम कौन हैं' बराबर याद रहे तो शरीर और मन दोनों ही हुक्म मानने वाले नौकर की तरह अपना-अपना काम करेंगे। लेकिन यह याद

बच्चों का पालन पोषण*

माँ बाप का कर्तव्य; पैदाइश के बाद बच्चे की देख-रेख; बढ़ते-बच्चों का भोजन, हवा, शरीर की सफ़ाई और कपड़े, बच्चों के लिए कसरत, ख़ास रोगों की चिकित्सा —

---

*यह खंड लेखक की पुत्री श्रीमती सुभद्रा भटनागर के लेखों के आधार पर तैयार किया गया है।

माँ-बाप का कर्तव्य

बच्चों की तनदुरुस्ती बनाना या बिगाड़ना माता-पिता के ही हाथ में है। माता-पिता यदि चाहें तो बच्चे को निरोग और तगड़ा बना सकते हैं या उसके जन्म भर रोगी और कमजोर बने रहने का भी उपाय कर सकते हैं।

यह सच है कि कोई माता पिता नहीं चाहता कि उसका बच्चा किसी तरह का कष्ट भोगे या निर्जीव सा होकर संसार में रहे, लेकिन न चाहते हुए भी वे अपने ही हाथों सिर्फ अज्ञान के कारण अपने बच्चों को कमजोर और निकम्मा बना देते हैं। गर्भाधान से पहले माता-पिता की मानसिक और शारीरिक अवस्था कैसी थी और जब बच्चा गर्भ में था तब माँ किस तरह रहती, खाती-पीती थी, यह तो एक अलग महत्वपूर्ण विषय है, लेकिन जन्म के बाद भी बच्चे के लालन-पालन में ऐसी ही बहुत सी ऐसी बातें होती हैं, जो उसके लिए अच्छी नहीं हैं और जिनसे बच्चे की तनदुरुस्ती हर रोज खराब होती जाती है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि माता-पिता के अज्ञान का फल बिचारा बच्चा जन्म भर भोगता है।

आजकल के अँगरेजी खयाल वाले और रुपये पैसे वाले लोग अपने बच्चों के लिए बहुत खर्च करते हैं और अपनी समझ से उसके पालन पोषण का बहुत अच्छा प्रबन्ध करते हैं। लेकिन वे बहुत तरह की अप्राकृतिक खाने या पीने की चीजें अंगरेजी दुकानों से खरीद लाते हैं। साथ ही कोई न कोई दवा, जिसे वे बच्चे के लिये हितकर और पुष्टिकारक समझते हैं, पिलाया करते हैं। उसके दूध पिलाने का समय भी अपनी समझ में बहुत अच्छा निश्चित कर लेते हैं—दिन में घंटे घंटे या दो-दो घंटे और रात में भी तीन-तीन या चार-चार घंटे पर। इसके अलावा

कुछ घरों में किसी न किसी तरह की शराब भी सदा मौजूद रहती है। बच्चे का जरा जरा सी सर्दी-जुकाम हुआ कि उसे चम्मच भर बरान्डा पिला ही जाती है। इससे काम नहीं चला तो फौरन ही परिवार के डाक्टर (family boctor) बुलवाये जाते हैं। शीशी भर के दवा आती है और उस बिचारे नन्हे बच्चे को उसका मुंह दबा कर भर भर चम्मच कड़वा कड़वा हलाहल विष पिलाया जाता है। यह सब बातें वे लोग साधारण लोगों के बच्चों से अपने बच्चे को अधिक स्वस्थ बनाने के ख्याल से करते हैं। लेकिन यह बातें उस बच्चे के लिए बिल्कुल उल्टा परिणाम वाली होती हैं। इस तरह अगर साधारण लोग रुपये पैसे की कमी और अपने अज्ञान के कारण बच्चों के पालन-पोषण में गलतियाँ करते हैं तो बड़े लोग अपने बच्चों को जरा अधिक स्वस्थ और सुन्दर बनाने की कोशिश में ही भूलें करते हैं। यही कारण है कि इन दिनों सैकड़े पीछे पांच बच्चे भी मुश्किल से ऐसे देखने में आते हैं, जिनके शरीर में किसी प्रकार का रोग न हो और जो पूर्ण रूप से स्वस्थ हों। जिन छोटे-छोटे बच्चों का चेहरा खिले फूलों की तरह सुन्दर दीखना चाहिए वे अपने ही माता-पिता के अज्ञान के कारण मुरझाया हुआ और श्री-हीन चेहरा लिये फिरते हैं।

प्रत्येक माता-पिता को याद रखना चाहिए कि मनुष्य के स्वस्थ या अस्वस्थ जीवन की नींव बचपन में ही पड़ जाती है। इसलिये जैसा वे अपने बच्चे को छुटपन में बना देंगे अपने भविष्य जीवन में भी वह वैसा ही रहेगा। अगर बचपन में बच्चा रोगी रहा तो बड़े होने पर उसकी तनदुरुस्ती का सुधरना कठिन होगा, और अगर वह बचपन से ही स्वस्थ रहा तो आगे चलकर उसका स्वास्थ्य और भी बन जायगा और रोग होने की सम्भावना बहुत ही कम रहेगी, क्योंकि एक तो उसका शरीर ही स्वस्थ बन जायगा, दूसरे खान-पान तथा रहन-सहन की उसकी ऐसी आदतें रहेंगी कि फिर वह गलत तरीके पर आयगा ही नहीं।

बच्चों के पालन-पोषण में ख़ास कर दो बहुत ही भारी भूलें की जाती हैं, जिनसे कि उनका सारा जीवन ही नष्ट हो जाता है। पहली भूल उनके खिलाने-पिलाने में और दूसरी उनकी बीमारियों के इलाज में होती है। ग़लत तरीके से खिला-पिलाकर बच्चे के अन्दर रोग पैदा करना माता का ही काम है और उस रोग को हटाने की कोशिश में आज कल के प्रचलित भ्रम-पूर्ण इलाजों द्वारा बच्चे के जीवन को और भी दुखमय बनाना पिता या माता या दोनों का काम रहता है। बच्चों के पालने में सब से अधिक उनके खाने-पीने पर ध्यान देना चाहिए। सभी प्रकार के रोगों से बचाव का उपाय केवल खान-पान का ठीक रखना ही है। अगर इस बात पर ध्यान दिया जाय तो बच्चों को कभी रोग होवे ही नहीं, और यदि बच्चे किसी कारण थोड़ा अस्वस्थ हो भी जायें—जैसे सर्दी-ज़ुकाम हो जाय या फोड़े फुन्सी निकल आयें—तो उसे औषधियों से अलग ही रखना चाहिए, क्योंकि जैसा बताया जा चुका है, औषधियाँ ख़ास कर जो ज़हरों से बनी होती हैं, रोग को दूर नहीं करतीं बल्कि उसे बच्चे के छोटे से कोमल शरीर के एक कोने में दबाकर छोड़ देती हैं। यह दबा हुआ रोग आगे चलकर किसी न किसी रूप में फिर उभड़ पड़ता है। यह बड़े ही आश्चर्य की बात है कि प्राकृतिक जीवन और चिकित्सा विधि के रहते हुए भी लोग उससे लाभ नहीं उठाते। अक्सर ऐसा देखने में आता है कि लोग सालों से प्राकृतिक चिकित्सा के विषय में सुनते आते हैं, उसके गुणों को भी समय समय पर देखते हैं, लेकिन फिर भी उस पर विश्वास नहीं करते। जब रोगी बच्चा या जो कोई भी बीमार होकर किसी दवा से अच्छा नहीं होता, जब रोग असाध्य सा होता जाता है और रोगी की जीवन-शक्ति प्रायः नष्ट हो जाती है तब लोग प्राकृतिक चिकित्सा की शरण में आते हैं। नतीजा यह होता है कि जिसकी जीवन-शक्ति नष्ट हो चुकी है वह तो अपने कष्टमय शरीर से छुटकारा पा जाता है, लेकिन जिसमें कुछ दम है वह अच्छा हो जाता है, बहुत समय के बाद।

इस खंड में यही बतलाने की चेष्टा की जायगी कि बच्चों के खिलाने पिलाने का हिसाब किस प्रकार रक्खा जाय कि वे निरोग रहें। साथ ही साथ यह भी बताया जायगा कि बच्चे की साधारण (common) अस्वस्थता को प्राकृतिक जीवन द्वारा किस तरह निर्मूल किया जा सकता है।

पैदाइश के बाद बच्चे की देख रेख

जन्म से ही बच्चे के साथ माता-पिता अन्याय करना शुरू करते हैं। सबसे बड़ा अन्याय उसके साथ उसको जल्द जल्द दूध पिलाकर ही किया जाता है। लोगों में यह एक गलत विश्वास प्रचलित है कि छोटा बच्चा एक बार में बहुत थोड़ा दूध पीता है, इसलिए उसे जल्द भूख लग जाती है और जल्द जल्द दूध देने की आवश्यकता रहती है। इस तरह बच्चे को पुष्ट बनाने का एक मात्र उपाय जल्द जल्द दूध पिलाना ही समझा जाता है। पचने का ख्याल किना किये ही एक-एक घंटे, या बहुत हुआ तो दो-दो घंटे, के बाद दूध पिलाने का समय निश्चित कर लिया जाता है और उसी के अनुसार बच्चे की भूख की बिना परवाह किये ही दूध पिलाया जाता है। यह एक बड़ी भारी ग़लती है, जो प्रायः सभी घरों में होती है। इस प्रकार दूध पी-पी कर बच्चे का पेट खराब हो जाता है और उसकी नींद में भी बाधा पड़ती है। महीने डेढ़ महीने तक के बच्चे की स्वाभाविक नींद २४ घंटे में २० २१ घंटे होनी चाहिए। वह दूध पीने के लिए घंटे घंटे या दो-दो घंटे के बाद स्वयं जाग नहीं सकता लेकिन निश्चित समय पर दूध पिलाना आवश्यक समझ कर उसे गहरी नींद से जगाया जाता है और आवश्यकता नहीं होते हुए भी उसके पेट मे दूध भर दिया जाता है।

यह ध्यान देने की बात है कि बच्चा चाहे छोटा हो या बड़ा, अपनी आवश्यकता भर पी लेता है और फिर दूध के पचने के लिए कम से कम दो-ढाई घंटे का समय जरूरी है। इसके अलावा पेट को कुछ देर तक आराम देने की भी आवश्यकता होती है। इसलिये तीन-साढ़े-तीन घंटे से पहले दूध कभी देना ही न चाहिए। अच्छा हो अगर चार-चार घंटे पर दूध दिया जाय। इसकी आदत शुरू से ही डालनी चाहिए।

अगर उसके दूध पिलाने का समय तीन-तीन घंटे पर निश्चित कर लिया जायगा और उसकी आदत डाली जायगी तो बच्चा स्वयं ही समय पर जग जाया करेगा, क्योंकि उसी समय उसे सच्ची भूख लगेगी। ज्यों-ज्यों बच्चा बड़ा होता जाय उसके दूध पिलाने का समय भी बढ़ाते जाना चाहिए और छः महीने के बाद चार चार घंटे का अन्तर जरूर कर देना चाहिए। ऐसे बच्चे का भोजन अच्छी तरह पचने के लिए और उसकी सच्ची भूख लगने के लिए कम से कम चार घंटे का समय देना बहुत ही आवश्यक है। वह भी अगर बच्चा बिल्कुल स्वस्थ हुआ तो, पर अगर बच्चे का स्वास्थ्य जरा भी खराब है तो उसके दूध पिलाने का समय चार घंटे से भी अधिक देर के बाद रखना चाहिए। निश्चित समय के बीच में बच्चे को पानी के सिवा और कुछ नहीं देना चाहिए।

अक्सर ऐसा देखा जाता है कि जहां बच्चा जरा सा रोया कि उसे दूध दे दिया जाता है। इसका कारण यह है कि एक तो माताएँ समझ नहीं पातीं कि बच्चा क्यों रो रहा है। वे समझती हैं कि भूख से ही रो रहा है। दूसरे यदि बच्चे के रोने का कारण मालूम हो भी जाय तो उसके चुप कराने का सब से आसान उपाय दूध पिलाना ही समझा जाता है। बच्चे की भी ऐसी आदत पड़ जाती है कि चाहे किसी भी कारण से वह रोता हो लेकिन बिना दूध पिये वह चुप नहीं होता।

दूसरी बात यह है कि बच्चों को रात में दूध कभी न देना चाहिए। यदि दिन में उचित ढंग से दूध पिलाया जाय तो रात में पिलाने की आवश्यकता न पड़ेगी। उसे आदत लगानी चाहिए कि रात में मां के सोने से पहले (ज्यादा से ज्यादा १० बजे तक) दूध पी ले और फिर सुबह तक सोता रहे। इसमें मां और बच्चा दोनों ही के लिए अच्छाई है। मां को भी रात भर सोना मिलेगा और बच्चा भी जरूरत से ज्यादा दूध न पी सकेगा। इसके लिए अच्छा है कि बच्चे को प्रारम्भ से ही अलग सुलाया जाय। अलग सुलाने से एक और

मालूम होगा कि बच्चा खूब हाथ पैर फैलाकर सो सकेगा और मां के शरीर के विकारों से भी दूर रहेगा। रात में यदि बच्चे की नींद खुल जाती है और वह रोता है तो लोग समझते हैं कि उसे भूख लगी है। लेकिन यह गलत ख्याल है। बच्चा अगर रात में रोता या हाथ पैर छटपटाता है तो भूख से नहीं, हाजमे की खराबी से। ऐसी हालत में ऊपर से दूध दे देना उसकी दशा को और खराब करना है, यद्यपि ऐसा करने से बच्चा थोड़ी देर के लिए शान्त हो जाता है।

बच्चों को निरोग रहने के लिए उन्हें अपनी स्वाभाविक भूख की पहचान होना बहुत ही आवश्यक है। प्रारम्भ से ही जल्द जल्द या अधिक मात्रा में खिलाने का नतीजा यह होता है कि उन्हें सच्ची भूख की पहचान ही नहीं होती, बल्कि यह कहना चाहिए कि उन्हें सच्ची भूख कभी लगती ही नहीं। केवल अपनी आदत के अनुसार या खाने-पीने की चीजें देखने के ही कारण वे खाना मांगते हैं। लेकिन अगर जन्म-काल से ही उनके खाने-पीने का तरीका ठीक रखा जाय तो बिना सच्ची भूख के वे कभी भी खाने की इच्छा प्रकट न करेंगे। ऐसी अवस्था में बच्चे की इच्छानुसार ही उसे भोजन देने की आदत डालना सबसे हितकर होगा।

इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि बच्चों को कितनी मात्रा में दूध दिया जाय। मात्रा निश्चित करना कठिन है, क्योंकि सभी बच्चों का स्वास्थ्य एक समान नहीं होता, इसलिए सभी की आवश्यकता भी एक समान नहीं होती। यहां पर इतना ही कहा जा सकता है कि कमजोर तथा चुप चाप पड़े रहने वाले बच्चे की अपेक्षा उस बच्चे को अधिक मात्रा में दूध देना चाहिए जो पूर्ण रूप से स्वस्थ और जो खूब हाथ-पैर पटकता है।

बच्चों का प्राकृतिक भोजन—

छोटे बच्चों का प्राकृतिक भोजन मां का दूध है। प्रकृति देवी का [illegible] बच्चों के लिए इस बढ़िया भोजन की समता दूसरा कोई भी

प्रेमन नहीं कर सकता। प्रत्येक बच्चे के शरीर के पुष्ट बनाने के लिए जिन जिन चीजों की आवश्यकता है वे सभी उसका मां के दूध से ही मिलती हैं। प्रत्येक मां को इस योग्य होना चाहिए कि वह स्वयं ही अपने बच्चे को तब तक दूध पिला सके जब तक कि बच्चा फल के रस इत्यादि ऊपर की चीजें खाने-पीने के लायक न हो जाय।

बच्चे के जन्म के बाद लोग उसे दो एक दिन तक, जब तक कि मां का दूध नहीं आता, किसी दूसरी स्त्री का या गाय-बकरी का दूध पिलाते हैं। ऐसा करना अनुचित है। प्रकृति ने किसी मतलब से ही ऐसा प्रबन्ध किया है कि बच्चे के जन्म के दो-तीन दिनों के बाद मां का दूध आता है। जन्म के बाद बच्चे को तुरन्त ही भूख नहीं लगती। उसका पेट काफ़ी गन्दा रहता है और उसके साफ़ होने में कम से कम दो-तीन दिन लगते हैं। इस बीच में बच्चे को पानी के सिवा कुछ भी न देना चाहिए। यदि आवश्यकता ही जान पड़े तो जरा सा शहद चटाया जा सकता है। बच्चे के पेट में पहले-पहल माता का दूध पड़ना चाहिए, क्योंकि माता का प्रथम दूध बच्चे के लिए जुलाब का काम देता है, जिससे उसके पेट के साफ़ होने में बहुत सहायता मिलती है। लेकिन यह बातें तभी सम्भव हैं जब कि मां स्वयं बिलकुल स्वस्थ है। अस्वस्थ मां का दूध बच्चे को पुष्ट बनाने के बदले उसको अधिक हानि ही पहुँचाता है। ऐसी हालत में मां के दूध की अपेक्षा बाहर का दूध देना ही अच्छा है। इन दिनों बेचारे अबोध बच्चों के सारे कष्टों का ८० फ़ी सदी कारण है मां के दूध का विकार।

अब यह देखना है कि बच्चे को किस अन्दाज से दूध देना उचित होगा, जिसमें बच्चे के पेट में अधिक न हो जाय। इसके लिए भी प्रकृति ने प्रबन्ध किया है। जन्म से ही बच्चे को अपने पेट का अन्दाज रहता है। वह पेट भर जाने के बाद जरा भी अधिक पीना नहीं चाहता। लेकिन अगर माता की गलती से बच्चा आवश्यकता से जरा भी अधिक

दूध पी जाता है तो उसे वह तुरन्त ही फेंक देता है। जब बच्चा दो-चार दिन लगातार दूध फेंकता है तो लोग चिन्तित हो जाते हैं और समझते हैं कि नज़र लग गई या किसी की नज़र लग गई या इसी प्रकार के कुछ और कारणों से ऐसा हो रहा है। यह बात उनके ध्यान में नहीं आती कि उसको आवश्यकता से अधिक दूध पिलाया गया है और उसी को वह फेंक रहा है। यह बात अवश्य है कि बीमार होने पर भी बच्चा दूध फेंकता है लेकिन उसकी भी पहचान है। बीमार बच्चे की उल्टी में बदबू रहती है, लेकिन बच्चा जब अधिक पीया हुआ दूध फेंकता है तो उसमें किसी प्रकार की बू नहीं होती और उल्टी होते हुए भी बच्चे का स्वास्थ्य अच्छा ही मालूम पड़ता है। यह प्रकृति का ही प्रबन्ध है कि बिना किसी तकलीफ़ के या बिना किसी प्रकार के बुरा असर पड़े अधिक पीया हुआ दूध बच्चा अपने आप बाहर निकाल देता है। इस हालत में चिन्तित होने की बिल्कुल आवश्यकता नहीं और न किसी प्रकार की दवा की आवश्यकता है। इसका इलाज है केवल दूध पिलाने के समय की मात्रा कम कर देना, अर्थात् जितनी देर तक पहले दूध पिलाया जाता था, उससे थोड़ा कम समय तक पिलाना, जिससे एक बार में बच्चा कम दूध पी सके। इस बात का अंदाज़ बच्चे की मां को ही अच्छी तरह हो सकता है।

मां के दूध को विकार-रहित बनाना—

मां के दूध का अच्छा या खराब होना उसकी शारीरिक अवस्था पर ही निर्भर है, और चूंकि शारीरिक अवस्था खान-पान के ऊपर ही निर्भर है, माता के भोजन की ओर ध्यान देना बहुत ही आवश्यक है। भोजन सम्बन्धी विषय पर दूसरे अध्याय में काफ़ी विचार किया गया है। यहां पर केवल इतना ही कहा जाता है कि भय, क्रोध जैसे वेगवान मनोभावों (strong emotions) का भी असर दूध पर पड़ता है, इसलिए ऐसे मनोविकारों से मां को बचना चाहिए। अगर इत्तिफ़ाक से ऐसा ही जाय

तो उस समय बच्चे को दूध न पिलाना चाहिए। ऐसे मौकों पर दूध में एक प्रकार का ज़हर फैल जाता है, जो बच्चे के लिए बहुत ही हानिकारक है। ऐसे समय पर बहुत ही अच्छा हो यदि वह ज़हरीला दूध पम्प से या किसी तरह निचोड़ कर निकाल दिया जाय और उस समय के लिए बच्चे को ऊपर का ही दूध पिलाया जाय।

यह बात बहुत ही आवश्यक है कि दूध पिलाने वाली मां को सदा ही प्रसन्न-चित्त रहना चाहिए। माता की मानसिक दशा का प्रभाव बच्चे के केवल स्वास्थ्य पर ही नहीं स्वभाव पर भी पड़ता है। यहां तक कि बड़े-बड़े वैज्ञानिकों का कहना है कि बच्चों को दूध पिलाने के लिए अगर किसी गाय को ठीक करना हो तो उसके स्वास्थ्य के साथ ही साथ स्वभाव की भी जांच कर लेनी चाहिए। जो गाय मारने वाली या मुश्किल से दूध देने वाली हो उसका दूध बच्चे के लिए हानिकारक है। अतः सीधी तथा शान्त स्वभाव की गाय को ही बच्चों के दूध के लिए ठीक करना चाहिए।

माता अगर अपने भोजन में फलों और कच्ची सब्जियों को, छिलकेदार दाल को और चोकरदार आटे का स्थान दे और मसाला, खटाई और पकवान-मिठाइयों से बचे तो उसका दूध बहुत अच्छा रहेगा। माता को अपने बच्चे के हित के लिए नियमित भोजन करना चाहिए। उसे हफ्ते में एनीमा लेना चाहिए।

कम से कम नौ महीने तक बच्चे को माँ के दूध पर ही रखना चाहिए। उसके बाद गाय या बकरी का दूध और फलों का रस देना चाहिए और मां का दूध कम कर देना चाहिए। इस प्रकार धीरे धीरे मां का दूध छुड़ा देना चाहिए।

बच्चों के लिए ऊपरी भोजन—

अधिकतर पढ़े-लिखे तथा सभ्य लोगों में ही यह देखा जाता है कि इस माताएं अपने बच्चे को बिल्कुल ही दूध नहीं पिला सकतीं। गँवार

या देहाती लोगों में और जानवरों में यह बात बिल्कुल ही नहीं पाई जाती। इससे पता चलता है कि मनुष्य ज्यों ज्यों सभ्यता की ओर बढ़ता जा रहा है वह प्रकृति से उतना ही दूर होता जा रहा है। खैर, इस विषय को यहीं पर छोड़ कर हमें यह देखना है कि अगर किसी कारण वश मां का दूध न मिल सके तो बच्चे को क्या भोजन देना चाहिए। मां के दूध से सबसे अधिक मिलता जुलता बकरी का दूध है और उसके बाद गाय का दूध। लेकिन बकरी के दूध का मिलना आसान और कठिन भी है, इसलिए हम गाय के दूध पर ही विचार करेंगे। जो बच्चा कुछ कमजोर है और गाय का दूध हजम नहीं कर सकता है उसके लिए तो बकरी के दूध का प्रबन्ध करना ही पड़ेगा, लेकिन जो बच्चा पचा सकता है उसे गाय का ही दूध देना चाहिए।

गाय का दूध किस प्रकार बच्चे को देना चाहिए—

बाजारू दूध भूल के कभी न देना चाहिए। अपने घर की गाय हो तो कहना ही क्या है, पर अगर घर की गाय न हो तो किसी ग्वाले को ठीक कर लेना चाहिए, जो स्वस्थ तथा धूप और हवा में घूम-घूम कर घास चरने वाली गाय का दूध सामने दुह जाया करे। दूध साफ जगह में, अपने घर के साफ बर्तन में, ग्वाले का हाथ धुलवाकर, खूब सफाई से दुहवाना चाहिए। गाय का थन भी हर तीसरे चौथे दिन गुनगुने पानी से धुलवा देना आवश्यक है।

बच्चे को तुरन्त का दुहा हुआ ताजा ही दूध पिलाना चाहिए। गरम करने से दूध के बहुत से गुण नष्ट हो जाते हैं। साधारणतः लोगों का ख्याल है कि कच्चे दूध में कीड़े (जर्म्स—germs) रहते हैं, जिनको मारने के लिए दूध को गरम करना आवश्यक है। लेकिन ताजा और सफाई से दुहे हुए दूध में वैसे कीड़े रहते ही नहीं। जो कुछ रहते भी हैं वे प्राकृतिक होते हैं और उनका रहना ही आवश्यक है। इसके अलावा गरम करने से दूध की जीवन-शक्ति (vitamin) नष्ट हो जाती है, दूध

भारी हो जाता है और पचने में कठिनाई होती है। उबाला हुआ दूध छोटे बच्चे को कभी न देना चाहिए। सुबह-शाम तो ताजा दूध आसानी से मिल ही सकता है, दोपहर में देने के लिए भी दूध उबाल कर न रखना चाहिए। यदि उसी वक्त दूध को एक बोतल में भर कर बोतल को ठंडे पानी से भरे बर्तन में रख दिया जायगा तो दूध ज्यों का त्यों ताजा बना रहेगा। बोतल को हर रोज अच्छी तरह गरम पानी से साफ कर लेना चाहिए। अगर दूध गरम करना ही हो तो सिर्फ गरम कर लेना चाहिए। उसमें उबाल न आवे।

मां के दूध से गाय के दूध में तिगुना अधिक प्रोटीन (Protein—मांसवर्द्धक पदार्थ) रहता है, इस कारण बच्चे उसको पचा नहीं सकते। उसका भारीपन दूर करने के लिए और उसको मां के दूध के समान बनाने के लिए उसमें पानी मिलाना आवश्यक है। पानी का अन्दाज बच्चे की अवस्था और उसके स्वास्थ्य के अनुसार ही होना चाहिए। साधारणतः आरम्भ में एक हिस्सा दूध और दो हिस्सा पानी, फिर धीरे धीरे पानी की मात्रा कम करते जाना चाहिए और दूध की मात्रा को बढ़ाते जाना चाहिए। एक वर्ष के बच्चों के लिए पानी मिलाने की आवश्यकता बिल्कुल नहीं रह जाती। दूध में मिलाने के लिये उबाला हुआ पानी (जो छानकर ठंडा कर लिया गया हो) ही इस्तेमाल करना चाहिए। बच्चों को दूध में चीनी मिलाकर कभी न देना चाहिए। यदि आवश्यकता ही पड़े तो थोड़ा सा शहद या दूध का सत्व (sugar of milk, जो अंगरेजी दवाखानों में मिलता है) दूध में मिला सकते हैं।

अक्सर ऐसा देखा जाता है कि छोटे बच्चों को जब गाय का दूध दिया जाने लगता है तो उनके पेट में कुछ न कुछ गड़बड़ी हो जाती है। यह कोई चिन्ता की बात नहीं है। गाय का दूध चाहे यह किसी तरह भी हल्का किया जाय, बच्चे का प्राकृतिक भोजन नहीं हो सकता, इसलिए उसके पचाने का अभ्यास होने में समय लगता ही है। यह भी

न हो कि बच्चे को बहुत दिनों तक अपच की शिकायत रहे और अपच को प्राकृतिक समझ कर ध्यान न दिया जाय। लेकिन जल्दी भी नहीं करनी चाहिए। कुछ दिन देखकर तब या तो पानी की मात्रा कुछ और अधिक या कम करके देखना चाहिए या अगर इससे भी लाभ न हो तो गाय का दूध छुड़ाकर बकरी का दूध देना चाहिए।

बच्चों के भोजन में दूध के अलावा फलों के रस—

हमारे हिन्दुस्तानी घरों में ५-६ महीने के बच्चे का अन्नप्राशन कर दिया जाता है, और उसके बाद से थोड़ा थोड़ा अन्न खिलाना शुरू करते हैं। यह बहुत ही बुरा है। नौ महीने से कम के बच्चों को दूध और फल के रस के सिवा और कुछ भी न देना चाहिए। इस उम्र के बच्चे न तो कुछ चबा ही सकते हैं और न उनका पेट ही इस योग्य होता है कि वे अन्न पचा सकें। इस कारण इस समय का अन्न उनके लिए जहर के समान होता है। इससे उनकी तनदुरुस्ती खराब होने लगती है। हाँ, नौ-दस महीने के बाद बच्चे को सेब, नासपाती जैसे सख्त फलों का टुकड़ा हाथ में दे सकते हैं, लेकिन वह भी खाने के लिए नहीं, सिर्फ चबाना सीखने के लिए। बिना अच्छी तरह चबाये ऐसे फलों के टुकड़े निगले नहीं जा सकते। बच्चा उसे खा नहीं सकेगा। केवल चुभलाता रहेगा और साथ ही साथ चबाना भी सीखेगा। जब बच्चे के दाँत निकलने लगते हैं तो ऐसा करना जरूरी होता है, क्योंकि सख्त चीजों के चबाने से दाँत की जगहों में एक तरह की कसरत होती है।

फलों के रस में सबसे अच्छा मीठे संतरे का रस है, लेकिन अंगूर और अनार के रस भी बच्चों को दिए जा सकते हैं। इन फलों के रस से बच्चों को कोई हानि न होगी। पके हुए लाल टमाटर का रस भी बच्चों के लिए लाभदायक होगा।

बच्चों को खाने-पीने के लिए कभी मजबूर मत करो—

हमने कई ऐसी अजीब औरतों को देखा है, जो अपने बच्चों को उनकी इच्छा के विरुद्ध उन्हें जबरदस्ती दूध दिया करती हैं और इस तरह उन पर अत्याचार करके अपना अनोखा प्रेम दर्शाती हैं।

हरेक माता को याद रखना चाहिए कि बच्चों को खिलाने पिलाने के लिए वह कभी जोर न दे। यदि बच्चे ने भोजन के लिए अनिच्छा प्रकट की तो यह न समझना चाहिए कि दूध में मिठास कम है या इसी तरह के और कारणों से बच्चे को दूध अच्छा नहीं लग रहा है। असल बात यह है कि उसे उस समय जरूरत न रहने के कारण दूध अच्छा नहीं लग रहा है। वह नासमझ बच्चा अनिच्छा प्रकट करता है, क्योंकि अभी वह प्रकृति से दूर नहीं हुआ है। इसलिए बच्चे की अनिच्छा इस बात का साफ सबूत है कि उसके शरीर को भोजन की आवश्यकता नहीं। जानवरों में भी हम यह बात पाते हैं कि अगर वे जरा भी बीमार होते हैं तो खाना-पीना बिल्कुल बंद कर देते हैं और जब तक अच्छे नहीं हो जाते कुछ भी नहीं खाते। अगर बच्चा दिन भर भोजन न करे तो भी चिन्ता की कोई बात नहीं। ऐसी हालत में पानी के सिवा कुछ भी न देना चाहिए, जब तक कि वह खुद खाने-पीने की इच्छा प्रकट न करे। लेकिन ऐसी अनिच्छा एक-दो दिनों से अधिक नहीं चलनी चाहिए। यदि दो दिनों के बाद भी भूख न लगे तो समझना चाहिए कि उसका पेट कुछ ज्यादा खराब है और उसका उचित इलाज करना चाहिए।

फलों का रस—

तीन महीने के बाद से किसी एक मीठे फल का रस बहुत थोड़ी-थोड़ी मात्रा में—छोटे चम्मच से एक चम्मच या शुरू में आधा ही

चम्मच दूध पिलाने के तुरन्त बाद दिया जा सकता है। संतरे का रस पाचन के लिए अच्छा है और अनार का रस ताकत के लिए। धीरे-धीरे रस की मात्रा बढ़ानी चाहिए।

बढ़ते बच्चों का भोजन

एक साल से १८ महिने तक के बच्चों का भोजन—

बहुत से घरों में जब बच्चा करीब वर्ष भर का हो जाता है और किसी किसी घरों में अन्नप्राशन के बाद से ही उसे रोटी, पूरी, चावल, दाल इत्यादि बड़े लोगों के खाने की सभी चीजें दी जाने लगती हैं। लोग समझते हैं कि बच्चा इन चीजों के खाने लायक हो गया और यदि अभी से न खायेगा तो उसका पेट कमजोर रह जायगा और बड़े होकर भी इन चीजों को न पचा सकेगा। लेकिन इस अवस्था के बच्चों को इस प्रकार का भोजन देना सच्ची बात न जानने की निशानी है, और यह बच्चों को केवल उसी समय खराबी नहीं पहुँचाता बल्कि बड़ी अवस्था में खराब स्वास्थ्य के मुख्य कारणों में से एक हो जाता है। दांत निकलते समय बीमार होना, आंख उठना और इसी तरह की दूसरी बीमारियां, जो अक्सर सभी बच्चों को हुआ करती हैं, उनके लिए स्वाभाविक समझी जाती हैं। लेकिन सचमुच यह बीमारियां एक तो बच्चे के जन्म से ही कमजोर रहने के कारण और दूसरे उसी उम्र में अनाज खिलाने से होती हैं। उस बच्चे को, जिसे उचित ढंग से खिलाया पिलाया जाता है, इन आवश्यक कहलाने वाली बीमारियों में से एक भी छू तक नहीं सकती। अगर किसी बच्चे को कोई रोग हो जाय तो उसे स्वाभाविक नहीं बल्कि उसके मां बाप की गलतियों का फल समझना चाहिए। बच्चे को स्वस्थ और सुखी रखना मां बाप के हाथों में है, और यह तभी हो सकता है जब कि उसके खान-पीने पर उचित ध्यान दिया जाय।

इसलिए एक वर्ष तक के बच्चे का प्राकृतिक भोजन सिर्फ दूध और फलों के रस ही हैं। एक वर्ष तक के बच्चों के खिलाने का क्रम इस प्रकार रखा जा सकता है :—

सुबह, ६–१० बजे के करीब—दूध

सुबह, १०-१० बजे—दूध और अनार का रस

दिन, २–१० बजे–दूध और संतरे का रस

शाम, ६–१० बजे—दूध

रात, १०–१० बजे—दूध

एक वर्ष के बाद सिर्फ इतना बढ़ा सकते हैं कि फल के रस की जगह फल, तरकारियों के सूप और कभी कभी बिना मिर्च-मसाले की पकी हुई हरी तरकारियां (लौकी, तरोई इत्यादि) भी दे सकते हैं। सवा साल तक अन्न किसी भी हालत में न देना चाहिए। ऐसे बच्चों के दांत तो निकल आते हैं, लेकिन फिर भी चबाना अच्छी तरह नहीं आता। जो कुछ भी उन्हें दिया जायगा सिर्फ टुकड़े-टुकड़े करके पेट में रख लेंगे, जो उनके लिए बहुत ही हानिकारक होगा। अक्सर लोग इस उम्र के बच्चों को हलवा, खीर, जलेबी, मोतीचूर के लड्डू, रसगुल्ले जैसी कुछ मुलायम कुछ कड़ी चीज या दूध में रोटी-भात आदि मल कर दे देते हैं। ये चीजें तो बड़ों के लिए हानिकारक हैं, बच्चों का तो कहना ही क्या। इसलिए इन चीजों से उन्हें अलग ही रखना चाहिए। ऊपर लिखे अनुसार बच्चों का भोजन दिन में चार बार और रात में एक बार से अधिक न होना चाहिए। बीच बीच में अगर बच्चा प्यासा मालूम पड़े या खाने-पीने की इच्छा प्रकट करे तो केवल पानी ही देना चाहिए।

डेढ़ वर्ष के बाद बच्चों का भोजन —

डेढ़ वर्ष के बाद बच्चों को रोटी और बिना मसाले की तरकारी भी देनी चाहिए। दो वर्ष के बच्चे को इस प्रकार भोजन दे सकते हैं :—

७-१० बजे सबेरे—फल और दूध।

१०-१० बजे रोटी यदि हो सके तो थोड़ा मक्खन और तरकारी, जिसमें मिर्च मसाले बिल्कुल न हों। तरकारियां अधिकतर हरी देनी चाहिए, जैसे लौकी, तरोई, नेनुआ, भिन्डी इत्यादि। आलू, अरवी, कद्दू (घीया) जैसी चीजें कम देनी चाहिए। आलू कोई खास हानि कारक नहीं है, लेकिन रोटी या चावल के साथ हानिकारक हो सकता है। रोटी, चावल, और आलू तीनों में एक ही पदार्थ (श्वेतसार) का आधिक्य है। इसकी ज्यादती से खून में खटाई बढ़ती है। इस भोजन के साथ थोड़ी सी कच्ची सब्जी (सलाद) भी जरूर हो। टमाटर, पतली मूली, गाजर, मूली की पत्ती, करमकल्ले की पत्ती, लेटिस की पत्ती, धनिया की पत्ती पुदीने की पत्ती खीरा, ककड़ी चुकन्दर इत्यादि में से दो तीन चीजें मिलाकर या एक ही देनी चाहिए।

तीसरे पहर ३-१० बजे के करीब—फल या दूध या दोनों।

७-१० बजे शाम को—केवल तरकारी और कुछ मुनक्के या अंजीर या फल और दूध। कुछ बच्चे मीठा अधिक पसन्द करते हैं और कुछ कुछ नमकीन। उनकी इच्छानुसार ही फल के रस, दूध या त कारी का सूप देना चाहिए।

तीन से पाँच वर्ष के बच्चों का भोजन—

तीन वर्ष के बाद बच्चों को दोनों समय रोटी दे सकते हैं। फिर भी यह ध्यान रहे कि शाम को हल्के भोजन की ही आवश्यकता रहती है, इसलिए उस समय के भोजन में फल, और सब्जियों की ही प्रधानता रहनी चाहिए, या कुछ फल अवश्य हों और यदि इच्छा हो तो एक-आध रोटी देनी चाहिए। इस उम्र के बच्चों के खिलाने का क्रम इस प्रकार रख सकते हैं—

सवेरे ७-८ के बीच में कुछ हल्का नाश्ता। नाश्ते में फल और दूध या मेवा और दूध या गरमी का मौसम हो तो मट्ठा देना चाहिए।

११ बजे दिन में—सलाद, रोटी, दाल, तरकारी, दही इत्यादि।

तीसरे पहर—कुछ फल, दूध (गर्मियों में मट्ठा, फलों के रस के शरबत, ठंढाई इत्यादि)।

रात में फल-दूध या रोटी, सादी तरकारी और कुछ मुनक्का या खजूर या अंजीर। फल दूध ही ज्यादा अच्छा होगा।

बच्चों के भोजन में फलों को प्रधानता दी गई है, इसलिए पूछा जा सकता है कि कौन से फल बच्चों के खाने योग्य हैं। फलों में नारंगी, संतरा, सेब, नाशपाती, आम, अमरूद, अंगूर, केला, पपीता, खीरा, ककड़ी, खरबूजा, तरबूज आदि मौसम के सभी प्रकार के फल तन्दुरुस्त लड़के को दे सकते हैं। कोई भी फल खराबी नहीं करता। खराबी केवल तभी करता है, जब भरे हुए पेट पर या सड़ा-गला कच्चा खाया जाय। हाँ, बीमारी की हालत में फल भी नहीं देते। सिर्फ रसदार फलों के रस देते हैं।

बढ़ते हुए बच्चे के लिए अच्छी तरह का पका कला (खास कर हरी छाल का) बहुत अच्छा है। दिन के भोजन में एक रोटी या थोड़ा चावल कम कर एक केला देना चाहिए या तीसरे पहर केला दे देना चाहिए।

बच्चों को मिठाई, पकवान आदि से दूर रखना चाहिए। अक्सर माताएँ ऐसा करती हैं कि मठरी, लड्डू शकरपारे आदि बहुत तरह के पकवान बना के इसलिए रखती हैं कि जिस समय बच्चे की इच्छा हो खा ले। यह हुई साधारण घरों की बात। बड़े घरों में तो घर की बनी हुई ये चीजें भी पसन्द नहीं की जातीं, उन्हें तो रसगुल्ले, बर्फी, चमचम आदि बाजार की चीजें सफेद डबल रोटी, केक जैसी होटल की चीजें ही अच्छी लगती हैं। लेकिन यह जितना अच्छी लगती हैं उतनी ही हान-

खराब भी हैं। उनके बनाने में मैदा, चीनी और खराब घी जो इस्तेमाल किये जाते हैं वे और भी खराब हैं। इसके अलावे चार-पांच साल की ही उम्र की अवस्था में बच्चों और खोंचे वालों में दोस्ती का समय होता है। बच्चों को प्यार के कारण पैसे दो पैसे रोज दिये ही जाते हैं। बच्चे पैसा पाते ही दरवाजे की ओर खोंचे वाले की खोज में दौड़ते हैं और पैसे देकर उससे मिठाई, चाट और दही-बड़े के रूप में अपने लिए रोग मोल लेते हैं। ये चीजें, अगर वे घर की बनी और अच्छी हों, सब कभी खाई जा सकती हैं, लेकिन लड़कपन ही से ध्यान रखना चाहिए कि बच्चों को इन सब चीजों की आदत न पड़े। हां, यदि घर की बनी हुई अच्छी चीजें हैं और तनदुरुस्ती अच्छी है तो कभी-कभी थोड़ी मात्रा में दे सकते हैं, लेकिन नाश्ते के समय नहीं, खाने के ही समय।

बच्चों को भोजन चबाकर खाने की आदत लगाना भी बहुत ही आवश्यक है। कहा जा सकता है कि सभी चबा के खाते हैं, कोई राक्षस थोड़े ही है जो बिना चबाये निगल जायगा। लेकिन सचमुच हम लोग खाना चबाते नहीं। हम चबाना ही नहीं जानते। लड़कपन से आदत ही ऐसी पड़ी रहती है कि चबाने की आवश्यकता नहीं समझते और ग्रास को दो-तीन बार चबाकर, बहुत हुआ तो टुकड़े टुकड़े करके, निगल जाते हैं। इससे ज्यादा देर तक चबाते रहने का धीरज नहीं होता, लेकिन इस तरह खाया हुआ भोजन महीन या बारीक नहीं होता। इसका नतीजा यह होता है कि जो काम दांत का है वह पेट को ही करना पड़ता है, पर उस तरह कर ही नहीं सकता। इससे मेदा कमजोर होने लगता है। अन्त में एक दिन ऐसा आता है कि पचाने की शक्ति बहुत ही कम हो जाती है। इसलिए पाचन शक्ति को ठीक रखने के लिए भोजन को खूब चबा कर खाना बहुत ही आवश्यक है। प्रारम्भ से ही, जब से बच्चे को फल और अन्न जैसे सख्त चीजें दी जाने लगती हैं, उसे चबा कर खाना भी सिखाना चाहिए। उसे आदत लगानी चाहिए कि रोटी सूखी हो

चबाए, दाल या दूध में भिगो कर नहीं, जैसा कि अक्सर किया जाता है। इस तरह दाल या दूध में मसलकर देने से बच्चे को चबाने का मौका नहीं मिलता। भोजन खूब चबाकर खाने से एक यह लाभ भी होता है कि जरूरत से ज्यादा नहीं खाया जाता।

बच्चों से भोजन करने के लिए कभी आग्रह न करो। वह खुद ही अपने वक्त पर खाने की इच्छा प्रकट करेगा। यदि एक वक्त बच्चे ने भोजन की ओर जरा भी अनिच्छा प्रकट की तो दुबारा उससे खाने को न पूछना चाहिए। यदि दूसरे वक्त भी उसने अनिच्छा दिखाई तो भी चुप लगा जाना चाहिए। उसे भोजन की ओर ध्यान ही न दिलाना चाहिए, जब तक कि उसे खूब भूख न लग जावे और वह खुद ही खाना न मांगे। इस तरह की आदत पड़ जाने पर बच्चे को अपनी सच्ची भूख की पहचान हो जायगी और भूख न रहने पर वह अच्छी से अच्छी चीज भी न खायेगा। अक्सर ऐसा भी देखा जाता है कि मां अपने अन्दाज से बच्चे को खाना देती है और उसे सारा खाना खिला देना चाहती है। यदि बच्चे का पेट भर जाता है और बची हुई चीज खाने से वह इन्कार भी कर देता है तो भी अन्न खराब होने के डर से मां उसे फुसला कर खिला देने की कोशिश करती है। यह बहुत ही बुरा है। इस तरह से बच्चा भूख से अधिक खा जाता है, जो कि हाजमे के लिए बहुत ही खराब है। धीरे धीरे उसकी आदत पड़ जाती है और वह रोज ही भूख से ज्यादा खाने लगता है। छोटे बच्चों के बुखार, खांसी, जुकाम, अनपच, दस्त का आना आदि सभी बीमारियों का कारण भूख से अधिक खाया हुआ भोजन ही होता है। इसलिए बच्चे को कभी भी इच्छा से अधिक खाने के लिए आग्रह न करना चाहिए। ज्यों ही उसने भोजन की ओर से अरुचि दिखलाई कि उसे खिलाना बन्द कर देना चाहिए और फिर एक ग्रास भी न देना चाहिए। उसके स्वास्थ्य के लिए इससे बढ़कर और क्या हितकर हो सकता है कि उसे स्वयं अपनी

सभी भूख को पहचान और पेट का अन्दाज हो जाय। जिस बच्चे में ऐसी आदत पड़ जाती है उसे फिर बीमार होने का मौका ही कम मिलेगा।

बच्चों को खाते समय पानी न देना चाहिए। इसकी भी शुरू से ही आदत डालनी चाहिए, नहीं तो फिर बाद में बच्चे मानते नहीं। इससे एक तो बच्चे खाई चीज को मन लगाकर नहीं चबाते, दूसरे पचाने के रस कमजोर पड़ जाते हैं। कम से कम दो घंटे बाद पानी देना चाहिए। यदि बच्चे का खाना ऊपर लिखे अनुसार सादा और बिना मिर्च-मसाले का रहेगा तो बच्चा स्वयं पानी न माँगेगा।

बच्चों के सामने माता पिता को अपना उदाहरण रखना आवश्यक है—

भोजन-संबंधी ऊपर लिखी हुई आदतों को बच्चों में डालने के लिए यह आवश्यक है कि माता-पिता स्वयं भी उन बातों को करें और उन्हीं नियमों का पालन करें। उपदेश से उदाहरण लाख गुना अच्छा है। जिस समय से बच्चा कुछ कुछ समझने लायक होता है तभी से वह अपने से बड़ों की सभी बातों की नकल करने की कोशिश करता है। उसके सामने भला या बुरा जैसा भी उदाहरण रहेगा उसी की नकल वह करेगा और धीरे-धीरे वैसा ही बन जायगा। यदि घर के अन्य लोग दिन भर कुछ न कुछ खाते पीते रहें और बच्चे को सिखलायें कि तुम तीन या चार बार से अधिक मत खाओ तो बच्चा कभी न सीखेगा। यदि वे खुद ही मिर्च-मसालेदार चटपटी चीजें खायेंगे और बच्चे को सादे भोजन का उपदेश देंगे तो उनका उपदेश व्यर्थ ही जायगा। सम्भव है कि बच्चा अपने पिता के सामने चुप लगा जाय, पर बाद में वह रो-धो कर हठ-झगड़ कर, चुरा-छिपा कर उन चीजों को अवश्य ही खायगा। धीरे-धीरे उसे भी उन चीजों का स्वाद लग जायगा, फिर बड़े होने पर

उसकी आदत जल्द नहीं सुधरेगी। यदि वे स्वयं काम की जल्दी में जल्दी जल्दी भोजन कर के उठ जायँगे और बच्चे से कहेंगे कि खूब चबाते रहो तो भला उसे क्या गरज पड़ी है कि वह चबाता रहे। वह तो उनसे भी जल्दी खाकर उठ जायगा। इसी प्रकार यदि स्वयं भोजन के समय पानी पियेंगे और बच्चे से दो घंटे बाद पीने को कहेंगे तो भला बच्चा क्यों मानने लगा। वह रोवेगा, चिल्लावेगा और अन्त में पानी पीकर रहेगा। इसी तरह और भी सभी बातें हैं, जिन्हें खुद न करके यदि केवल बच्चों को सिखलाया जायगा तो उसके ऊपर कुछ भी असर न पड़ेगा। इसलिए जिन नियमों पर बच्चे को चलाना है उन पर अगर माता-पिता और घर के अन्य लोग भी चलेंगे तो बच्चा अपने आप ही सीख जायगा।

चीनी और मैदे की खराबियाँ—

खाने-पीने के सिलसिले में यह भी कह देना आवश्यक है कि कौन-कौन चीजें बिलकुल छोड़ देने योग्य हैं। वैसे तो नित्य प्रति बहुत सी ऐसी चीजें हम खाते हैं और बच्चों को खिलाते हैं, जिनसे पैसे और तनदुरुस्ती दोनों की बरबादी होती है, लेकिन उनमें मुख्य हैं चीनी और मैदा, और साथ ही घी या तेल के बने पकवान। अगर ये उत्सव त्योहारों में कभी-कभी खाये जायें तो भी बहुत हर्ज न हो, पर रोज खाना अपनी आयु कम करना और रोग मोल लेना है।

चीनी इन दिनों बहुत ढंगों से इस्तेमाल की जा रही है। चाय में, दूध में, शरबत में, पकवान में, मिठाई में, खीर में—न मालूम कितनी तरह लोग चीनी खाते हैं। विशेष कर बच्चों को मीठा बहुत ही प्रिय होता है, इसलिए वे उसे खाते भी अधिक हैं। लेकिन यह उनके लिए बहुत नुकसान की चीज़ है। इससे बच्चों के कई रोग हो जाते हैं, जिनमें सारे शरीर का दुबला और कमजोर होना मुख्य है। स फेद चीनी हड्डी के अन्दर के चूने (calcium) की दुश्मन है। बचपन में चीनी खाने

से सभी कमजोर पड़ जाती है, जिससे बच्चों के शारीरिक विकास पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। बच्चों को अपने शरीर में गरमी और फुर्ती लाने के लिए जितनी चीनी की आवश्यकता होती है उतनी उन्हें मीठे फल (केला, मुनक्का, छुहारा इत्यादि) और दूध से मिल जाती है। यदि ये चीजें उन्हें उचित रीति से और पर्याप्त मात्रा में दी जायँ तो फिर ऊपर से चीनी की आवश्यकता न रहे। लेकिन यदि देना ही पड़े तो गुड़ या भूरी शक्कर इस्तेमाल कर सकते हैं। शुद्ध शहद, अगर मिल सके तो बहुत ही अच्छा हो।

इसी प्रकार मैदा भी हमारे देश में बहुत खाया जाता है। प्रति दिन नाश्ते तथा खाने में मैदा किसी न किसी रूप में इस्तेमाल किया जाता है। मिठाइयां, पकवान डबल रोटी, सभी चीजें मैदे की बनाई जाती हैं। मिठाई और पकवान को तो लोग भारी चीज समझ कर कुछ कम भी कर देते हैं, पर डबल रोटी को बहुत हल्का समझते हैं और बहुत मात्रा में इस्तेमाल करते हैं। बच्चे भी उसे दूध में भिगो कर या यों ही खाना बहुत पसन्द करते हैं। लेकिन मैदे की बनी होने के कारण यह बहुत बुरी है। इसलिए डबल रोटी स्वास्थ्य नाशक है। मैदे का किसी भी रूप में इस्तेमाल न करना चाहिए। एक तो गेहूँ के असली तत्व, जो ऊपर के हिस्से में होते हैं, इसमें नहीं रह जाते, दूसरे यह इतना महीन और चिकना होता है कि आंतों में चिपक जाता है। सदा मोटा आटा ही इस्तेमाल करना चाहिए और यदि हाथ का पिसा हो तो और अच्छा है।

हवा, शरीर की सफाई, कपड़े

बच्चों के खान-पान के बारे में कहा गया। अब हमें उनकी और बातों की ओर विचार करना है।

बच्चों को ताजी हवा की आवश्यकता—

बच्चों का शारीरिक विकास उचित खान-पान के साथ साथ ताजी खुली हवा पर भी निर्भर है। यदि हम केवल उनके भोजन की ओर ध्यान देंगे और उनके लिए ताजी खुली हवा का प्रबन्ध न करेंगे तो उनकी वही दशा होगी जो एक ऐसे पौधे की, जिसे पानी मिट्टी देकर एक कमरे में बन्द कर दिया जाय, होती है।

हमारे हिन्दुस्तानी घरों में ऐसे घर कम हैं, जो खूब हवादार हों। दीवारें बहुत ऊँची-ऊँची होती हैं, आँगन बहुत ही छोटा होता है, कमरे छोटे-छोटे या बहुत बड़े बड़े बेडौल होते हैं, जिनमें खिड़कियाँ भी ढंग की नहीं बनी होतीं। ऐसे मकानों में रहने वालों का स्वास्थ्य कभी ठीक नहीं रहता। विशेष कर बच्चों पर इसका बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है। बड़े बच्चे तो घर के आस-पास निकल कर खेल-कूद भी लेते हैं, जिससे उन्हें कुछ खुली हवा मिल जाती है, लेकिन छोटे बच्चे, जिन्हें सब से ज्यादा खुली और शुद्ध हवा की जरूरत रहती है, वैसे ही बन्द कमरों में पड़े रहते हैं, यदि कोई कमरा ऐसा हुआ भी, जिसमें ताजी बहुत हवा आती हो, तो बच्चे उसमें ठंढ लगने के डर से नहीं रखे जाते। गर्मियों में चाहे रख भी लें पर जाड़ों में बन्द कमरा ही चुना जाता है और उसी में बच्चों को रखा जाता है। नतीजा यह होता है कि वे पीले सुस्त और रोगी हो जाते हैं।

स्वर्गीय राय बहादुर डाक्टर लक्ष्मीनारायण चौधरी
रिटायर्ड ([illegible]) सिविल सर्जन जबलपुर। यह अपने
देश के एक प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक हुए हैं

इसलिए यह आवश्यक है कि बच्चों के लिए ऐसा कमरा चुना जाय, जिसमें दरवाजे और खिड़कियां काफी हों और जिसमें खूब हवा आती हो। इसके अलावा बच्चों को प्रतिदिन शाम-सुबह घर से बाहर, बस्ती से अलग, किसी मैदान या बाग़-बगीचे की ओर घूमने भेजना बहुत ही आवश्यक है। जाड़ों में लोग बच्चों को इसलिए बाहर भेजते हुए डरते हैं कि कहीं सर्दी-जुकाम न हो जाय, पर यह केवल भ्रम है। सर्दी-जुकाम हवा लगने से नहीं पेट की खराबी से होता है। हवा लगने से तो सर्दी जुकाम अच्छा हो जाता है। जाड़ों में भी अच्छी तरह कपड़े पहना कर गाड़ी में बिठा कर बच्चों को सुबह-शाम दोनों वक्त घंटे दो घंटे के लिए घूमने भेजना चाहिए। घर में भी, जहां तक हो सके, बच्चे को कमरे से बाहर खुली जगह में ही रखना चाहिए। जो बच्चा नियमित रूप से ताजी स्वच्छ हवा में घूमने जाता है और घर में भी हवादार जगहों में सुलाया-लिटाया जाता है वह खिला हुआ, तनदुरुस्त और फुर्तीला रहता है।

बच्चों के पेट और शरीर की सफाई—

अक्सर छोटे बच्चे दो-दो तीन-तीन दिन पर पाखाना किया करते हैं और इसको माताएँ अच्छा समझती हैं। अगर बच्चा इससे जल्द टट्टी करता है तो वे समझती हैं कि उसका पेट खराब हो गया और उसे बन्द करने की कोशिश करती हैं। लेकिन सचमुच पेट खराब होने का लक्षण रोज रोज टट्टी होना नहीं बल्कि तीन चार दिन के बाद होना है। बच्चों को दिन में दो बार अवश्य ही टट्टी करनी चाहिए। इसके लिए भी उन्हें शुरू से आदत डालनी चाहिए, जिससे कि वे प्रायः नियत समय पर टट्टी करें। ऐसा करने से नित्य नियमित रूप से उनका पेट साफ हो जाया करेगा और कपड़े भी खराब न होंगे। जो बच्चा तीन चार दिन पर टट्टी करता है उसकी मां को आराम तो अवश्य रहता है,

और पहले बच्चे के लिए भी कोई ख़राबी नहीं मालूम पड़ती, लेकिन स्वास्थ्य पर इसका प्रभाव बुरा पड़ता है। इसलिए यदि कभी ऐसा हो कि बच्चा दो तीन दिन पर टट्टी करता हो तो उसका इलाज करना चाहिए।

बच्चे के शरीर की सफ़ाई पर भी ध्यान देना आवश्यक है। अक्सर ऐसा देखा जाता है कि माताएं बच्चों को पानी से अलग ही रखती हैं। वे समझती हैं कि नहलाने से ठंढ लग जायगी। जाड़ों में तो कभी नहीं जाती ही नहीं। गर्मियों में नहलाती भी है तो दिन में एक बार, जब धूप खूब तेज हो जाती है, और वह भी गरम पानी से। ऊपर से तेल चुपड़े रहती हैं। ये बातें तनदुरुस्ती के लिए तो ख़राब हैं ही, बच्चों के शरीर से बू आया करती है और शरीर गंदा दीखता है। बच्चों को नहलाने में कभी नागा न करना चाहिए। गर्मियों में शाम-सबेरे दो बार ठंढे पानी से और जाड़ों में भी कम से कम एक बार मामूली गुनगुने (गर्म नहीं) पानी से अवश्य नहलाना चाहिए। खूब अच्छी तरह नहलाने से बच्चे की तबीयत हल्की रहेगी और उसे अच्छी नींद भी आवेगी। इसके अलावा देखने में वह साफ़-सुथरा और भला लगेगा, जिससे सभी को प्यारा मालूम होगा। बच्चों को मालिश की आवश्यकता रहती है ज़रूर, पर नहलाने के पहले ही कर देना चाहिए। बहुत घरों में माताएँ बच्चों के चेहरे पर पाउडर आदि मल देती हैं, जिससे कि चमड़ा चिकना और साफ़ रहे, लेकिन इससे लाभ के बदले हानि ही होती है। आगे चल कर चमड़े पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है और दाने आदि निकल आते हैं। पाउडर बिलकुल बेकार है। यदि बच्चे का स्वास्थ्य अच्छा है, वह नहला-धुला कर साफ़-सुथरा रखा जाता है तो उसका चेहरा यों ही चमकता हुआ, मुलायम और सुन्दर रहेगा।

बच्चों के कपड़े—

बच्चों के कपड़ों के सम्बन्ध में सब से पहले इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उनके कपड़े ढीले-ढाले हों, जिससे रक्त-संचार (खून के दौरान) में बाधा न पहुँचे। उनके लिए चिकना और मुलायम कपड़ा बनवाना चाहिए। बच्चों को बहुत से कपड़े नहीं पहनाने चाहिए। गर्मी के मौसम में पतला सूती और जाड़ों में सूती के ऊपर से एक अच्छा ऊनी—बस। इससे अधिक कपड़े पहनाने की आदत न डालनी चाहिए। उनके कपड़े खूब साफ होने चाहिए। छोटे बच्चों को मोजे न पहनानी चाहिए। उनके जूते भी बहुत कसे न हों। ऊनी कपड़ा फलालेन ठीक चमड़े पर न हो। पहले सूती कपड़ा पहना कर तब ऊनी चीजों को पहनाना चाहिए। जाड़ों में करीब करीब सभी घरों में बच्चों को हवा से बचाने के लिए कनटोप पहनाते हैं यह बहुत ही हानिकर है। बच्चों के कान किसी भी हालत में बंद नहीं करने चाहिए। इससे सिर्फ तनदुरुस्ती ही खराब नहीं होती, दिमाग भी खराब होता है। हवा ही लगने का डर हो तो कान नहीं बल्कि छोटी और गले को ढँक कर रखना चाहिए। अगर कनटोप ही पहनना हो तो ढीला और सूती और वह भी जब वे मैदान में हों।

कोई कोई बच्चे लार टपकाया करते हैं, जिससे उनका पहना हुआ कपड़ा गीला हो जाता है और सूखने के बाद कड़ा हो कर बहुत बुरा मालूम होता है। इसके लिए पतली सी गद्दी सीकर उनके गले में पहनाना चाहिए और उसके गीला हो जाने पर उसे बदल देना चाहिए। साथ ही उपाय करना चाहिए कि लार टपकना बंद हो। छोटे बच्चे की कमर में एक हल्का रूमाल हमेशा बांधे रखना चाहिए, नहीं तो टट्टी करके वे कपड़े और अपना हाथ-पैर खराब कर लेते हैं। उनके लिए पैजामा रखना भी आवश्यक है। पायजामा नहीं रहने से जब वे

पेशाब करते हैं तो वह बिस्तर में सूख जाता है और फिर बिस्तर से बदबू आया करती है। गोद में लेते समय भी मोमजामा या कपड़ा रखना चाहिए, जिससे यदि बच्चा गोद में ही पेशाब कर दे तो अपना कपड़ा बचा रहे। बच्चों के सूती कपड़े रोज धुलने चाहिएं। बच्चों के ओढ़ने बिछाने के कपड़ों को रोज धूप दिखाना चाहिए।

सोना और आराम—

बच्चों को गोद में बहुत नहीं लिये रहना चाहिए। उन्हें केवल नहलाने धुलाने और दूध आदि पिलाने के समय ही उठाना चाहिए, या कभी-कभी खेलाने के लिए। गोद में अधिक रखने से बच्चे की आदत बिगड़ जाती है, और फिर वह चारपाई पर लेटना पसन्द नहीं करता। इससे उसकी तनदुरुस्ती में हानि पहुँचती है। चारपाई पर लेटे रह कर वह खूब हाथ पैर फैला कर खेल सकता है, इधर उधर उलट सकता है, लेकिन गोद में यह सब नहीं कर सकता। इसके अलावे इस आदत से वह अपनी मां को भी बहुत दुख देता है। मां कभी स्वतन्त्र नहीं रह पाती इसलिए बच्चे को जन्मकाल से ही चारपाई पर लेटे रहने की आदत लगानी चाहिए। लाड़-प्यार में अपने सिर कठिनाई न मोल लेनी चाहिए।

बच्चों की माताएँ अपने पास ही सुलाया करती हैं। अपने देश में बहुत कम घर ऐसे देखने में आते हैं, जहां छुटपने से बच्चे अलग सुलाये जाते हों। जन्म से लेकर कम से कम चार-पांच वर्ष तक या और ज्यादा दिनों तक बच्चा मां या बाप के पास ही सोता है। लेकिन कई बातों का ख्याल करते हुए यह आवश्यक है कि बच्चे अलग सुलाये जायें। आरम्भ से ही उनके लिए चारपाई अलग रखनी चाहिए। इससे एक तो बच्चा खूब फैल कर आराम से सो सकेगा; दूसरे, रात में दूध पीने की आदत नहीं लगेगी, तीसरे, वह मां के शरीर के विकारों से दूर रहेगा, और साथ ही साथ मां को भी निश्चिन्त होकर रात भर सोने को मिलेगा।

बच्चों का बिस्तर खूब गद्देदार और मुलायम होना चाहिए। चारपाई खूब तनी हुई रहनी चाहिए, उसमें ज़रा भी झोल न हो। ओढ़ने के कपड़े ऋतु के अनुसार होने चाहिए, पर बहुत गरम कपड़ों की ज़रूरत नहीं डालनी चाहिए। गर्मियों में कपड़े ओढ़ने की बिल्कुल ज़रूरत नहीं। मक्खी और मच्छरों से बचाने के लिए जाली से ढँक रखना चाहिए या मसहरी लगा देनी चाहिए। बिस्तर, ओढ़ने के कपड़े और मसहरी आदि खूब साफ़ हों और हर रोज़ धूप में रखा जाय। जाड़े और वर्षा के दिनों में रोज़ बिस्तर आदि को सुखाना ज़रूरी है, पर गर्मियों में भी हर दूसरे तीसरे दिन सुखा लेना चाहिए।

बच्चों के सोने की जगह खूब साफ़-सुथरी हो। यदि कमरे में बच्चा सोता है तो कमरे में सामान बहुत कम हो, कोने, छत और दीवारों में जाला-मकड़ा न हो, कोई खाने-पीने की चीज़ या दूध आदि के बर्तन न हों, नहीं तो मक्खियाँ भिनकेंगी। कमरे के दरवाज़े और खिड़कियाँ खुली हों, लेकिन इस बात का ध्यान रहे कि बहुत तेज़ रोशनी या बहुत झोंके की हवा न आती हो। जाड़ों में भी दरवाज़े और खिड़कियाँ खोल कर बच्चों को सुलाना चाहिए। यदि बरामदे में सुलाये जायँ तो बहुत ही अच्छा हो। खुली हवा में सुलाने या रखने से ठंढ कभी नहीं लगती, जैसा कि लोगों का भ्रम है। गर्मियों में रात के समय बिल्कुल खुले में सुलाना चाहिए।

इस बात का ध्यान रखना भी आवश्यक है कि बच्चे चाहे वे छोटे हों या बड़े, उन्हें सोने से पहले रुलाना न चाहिए, खुशी की हालत में उन्हें चारपाई पर भेजना चाहिए। जिस दिन बच्चा सोने के पहले रो लेता है उस दिन उसका बुरा असर रात भर रहता है, अच्छी गहरी नींद नहीं आती और वह सोते में सिसकियाँ भरा करता है। इसका असर उसके स्वास्थ्य पर बुरा पड़ता है। यदि रात में बच्चा छटपटाये या दांत बजावे तो समझना चाहिए कि उसका हाज़मा ठीक नहीं। बच्चों के लिए गहरी नींद बहुत ज़रूरी है, क्योंकि नींद में ही उनका शरीर

पुष्ट होता है। सुलाने के पहले यदि बच्चों का शरीर भीगे हुए तौलिए से पोंछ दिया जाय तो बहुत ही अच्छा हो। तौलिया भिगोने का पानी ऋतु के अनुसार होना चाहिए—गर्मी में ठंडा और जाड़ों में गुनगुना (बहुत थोड़ा गरम)।

बच्चा कितना सोए—

अब हमें देखना है कि किस उम्र के बच्चे को कितना सोना चाहिए। उनके सोने का हिसाब इस प्रकार हो—

एक महीने तक के बच्चे के लिए	२१ २२ घंटे
छः „ „ „ „	१८ „
एक वर्ष „ „ „	१५ „
दो „ „ „ „	१४ „
तीन „ „ „ „	१३ „

इसके बाद ६ ७ वर्ष की उम्र तक के बच्चों का काम १० ११ घंटे सोने से ही चल सकता है।

———

बच्चों के लिए कसरत

छोटे बच्चों की कसरत —

जैसा पहले बताया गया है, कसरत जीवन के लिए जरूरी है। कसरत से बदन में हरकत होती है, खून तेजी से दौड़ता है और शरीर के अंगों से विकार पसीना के रूप निकलता है। लेकिन छोटे बच्चों के लिए कोई खास कसरत की जरूरत नहीं होती। बहुत छोटे बच्चे अपने हाथ-पैर फेंक और उछाल कर, इधर उधर उलट पलट कर, स्वाभाविक कसरत कर लेते हैं। जब वे कुछ बड़े होते हैं तो उठने और खड़े होने की कोशिश में गिरते-पड़ते हुए काफी कसरत कर लेते हैं।

जब बच्चा चलने लगे तो उसे उँगली पकड़ा कर थोड़ी दूर तक टहलाना चाहिए। जैसे-जैसे उसके शरीर में ताकत बढ़े वैसे टहलाने की दूरी को बढ़ाना चाहिए। चलना सीखने के पहले भी बच्चे को छोटी गाड़ी (पेराम्बुलेटर–Perambulator) में बैठा कर हवा-खोरी के लिए बाहर ले जाना चाहिए या भेजना चाहिए। यह जरूरी नहीं है कि यह गाड़ी कीमती ही हो। साधारण हैसियत के लोग या देहात के रहने वाले लकड़ी की सस्ती गाड़ी बनवा सकते हैं। गोद में बच्चे को दबाकर ले जाना ठीक नहीं है।

मालिश

बच्चों के लिए तेल की मालिश भी एक जरूरी चीज है। मालिश से कसरत के बहुत से फ़ायदे हासिल हो जाते हैं। अगर यह कहा जाय कि मालिश लाचारों की, बच्चों, कमजोरों और बुड्ढों की, कसरत है तो गलत न होगा।

देहातों या पुराने ढंग के लोगों के यहां बच्चों की मालिश दिन में तीन-तीन बार होती है। ऐसा करना अच्छा है। पर मालिश के बाद ही

बच्चे को या तो अच्छी तरह नहला देना चाहिए या उसका शरीर भीगे कपड़े से अच्छी तरह पोंछ देना चाहिए। साधारणतः सुबह शाम मालिश करना काफी होगा। गर्मी के दिनों में ठंडे पानी का और जाड़ों में या कमजोर बच्चों के लिए गुनगुने (गरम नहीं) पानी का इस्तेमाल करना चाहिए।

मालिश की तरकीब यहां बताने की आवश्यकता नहीं। सभी घरों में औरतें इसे अच्छी तरह जानती हैं। यहां इतना ही कहना काफी है कि सिर के लिए तिल या नारियल का तेल और बदन के लिए सरसों का (कड़ुवा) तेल काम में लाना चाहिए, और यह भी कि मालिश करते समय सारे शरीर, सभी जोड़ों और रीढ़ की अच्छी तरह, धीरे धीरे लेकिन देर तक, मालिश करनी चाहिए। जाड़ों में सुबह और तीसरे पहर की धूप में मालिश करने से शरीर और भी अच्छा तैयार होता है। जब बच्चा साल भर का हो जाय तो दिन में एक बार की मालिश काफी होगी।

बड़े बच्चों की कसरत—

बड़े बच्चों की कसरत के लिए कुछ कहने की आवश्यकता नहीं। वे अनायास ही दौड़ते और उछलते हैं, जिससे उनकी पूरी कसरत हो जाती है। माता-पिता को चाहिए कि वे बच्चों के दौड़ने, उछलने और खेलने पर अकारण ही नाराज न हुआ करें।

बाल रोगों की चिकित्सा

रोग हो ही क्यों—

असल प्रश्न यही है कि रोग हो क्यों ? जैसा कि पहले बताया गया है, रोग प्रकृति के नियमों का तोड़ने से, माता पिता के अज्ञान के कारण होता है। अगर बच्चे जन्म से ही नियम के अनुसार रखे और खिलाये पिलाये जायें तो उन्हें रोग जल्दी न हो। रोग होना स्वाभाविक नहीं है। यह शरीर इसलिए नहीं बनाया गया है कि इस में तरह तरह के रोग समय-समय पर उभड़ते रहें। अगर यह मामूली सी बात समझ में आ जायगी तो माता-पिता अपने बच्चों की ठीक-ठीक देख भाल करेंगे और उनके बढ़ने में सच्चे सहायक साबित होंगे।

लेखक का अपना अनुभव भी है। पहले उसके परिवार में हर दूसरे तीसरे महीने बच्चे बीमार होते थे, पर जब से भोजन और रहने के नियमों पर साधारण ध्यान दिया जाने लगा है, जल्दी बीमारी नहीं होती।

रोग को दबाना बुरा है—

अव्वल तो रोग हो ही नहीं, लेकिन, जैसा कि पहले बताया गया है, अगर हो जाय तो उसको जहरीली दवाएं दे देकर और समय के पहले पथ्य देकर दबाना बुरा है। इसे बार-बार दुहराने में हिचक नहीं मालूम होती कि रोग के रूप में प्रकृति शरीर के अन्दर के विकारों को निकालने का असाधारण प्रबंध करती है। इस प्रबंध में दवा या बे-जरूरी पथ्य देकर अड़चन न डालनी चाहिए। इन अड़चनों से—दवाओं से—अक्सर ऊपरी लाभ मालूम होता है, लेकिन सचमुच वह लाभ नहीं है। विकार अन्दर ही दबे रहते हैं और कुछ ही दिनों में फिर प्रकृति उनको

बाहर निकालने की कोशिश करती है, जिससे फिर रोग होता है। बार-बार इन विकारों को दबाने से शरीर के अन्दर बहुत गड़बड़ी होती है और आगे चल कर आँखों की खराबी, दाँतों की खराबी, दमा, बवासीर, गठिया, एक्ज़िमा, फालिज इत्यादि जीर्ण रोग शरीर को घर दबाते हैं।

किसी भी रोग में प्राकृतिक उपचारों से बहुत काम होता है। रोग के लक्षण मन्द दूर होते हैं, विकार शरीर के बाहर निकल जाते हैं और फिर शरीर नया और तरो-ताजा हो जाता है।

बच्चों का प्रायः वही इलाज है जो बड़ों का है। ख़याल इतना रखना चाहिए कि बच्चे की सहन शक्ति भर सभी बातें हों। बच्चों के कुछ ख़ास रोग हैं, जिनका इलाज यहाँ लिखा जायगा। और रोगों में वही सिलसिला चलाना चाहिए, जो बड़ों के लिए लिखा गया है। पहले के खंडों को पढ़िए।

पहले माता का इलाज —

दूध पीने वाले बच्चों की चिकित्सा के संबंध में यह ख़याल रखना चाहिए कि अगर बच्चे के इलाज के साथ-साथ दूध पिलाने वाली का इलाज भी होना चाहिए, नहीं तो उधर बच्चे के शरीर से विकार निकाला जायगा और इधर फिर पिये हुए दूध के साथ हर रोज नया विकार बच्चे के शरीर में प्रवेश करेगा। दूध पिलाने वाली को अगर बुखार आता हो या कोई संक्रामक रोग हो तो कुछ दिन माता का दूध छुड़ा कर किसी दूसरी स्वस्थ स्त्री या गाय-बकरी का दूध पिलवाने का प्रबन्ध करना चाहिए। साथ ही स्त्री का मुनासिब इलाज इस किताब में पहले बताये ढंग से करना चाहिए। अगर दूध पिलाने वाली के ऐसी कोई बीमारी न हो, सिर्फ साधारण कब्ज या पेट की गड़बड़ी या खून की साधारण गर्मी हो तो उसको अपना इलाज खान-पान में हेर फेर करके कर लेना चाहिए। ऐसी स्त्रियों के लिए नीचे दिया हुआ ढंग ठीक होगा—

(१) पहले तीन रोज सुबह, दोपहर, शाम—फलाहार। एक बार एक तरह का फल इच्छा भर खाना चाहिए। ऊपर से हर भोजन के साथ पावभर दूध या मठा (शुद्ध शहद या नमक के साथ) पिया जा सकता है। कुछ न हो तो किशमिश का प्रयोग किया जा सकता है। केले को छोड़कर सभी ताजे मीठे फल खाये जा सकते हैं। सुबह में पखाना और मुंह-हाथ धोने से छुट्टी पाकर पेड़ू पर गीली मिट्टी की पट्टी, १० मिनट के लिए, और उसके बाद सेर भर गुनगुने पानी का एनीमा लेकर पेट साफ करना चाहिए। फिर तीसरे पहर पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी रखनी चाहिए। भोजन और मिट्टी की पट्टी और एनीमा में कम से कम एक घंटे का अंतर रहना चाहिए।

(२) इन तीन दिनों के बाद एक हफ्ते के लिए सुबह में फल और दूध या मठा, दोपहर में रोटी या चावल और सादी साग सब्जी की भाजी और रात में छिलकेदार साबुत मूंग या मसूर की गाढ़ी दाल, जरा सा घी और एक दो तरह की वैसी ही भाजी खानी चाहिए। मसूर की साबुत दाल से दूध अच्छी मात्रा में और अच्छा बनता है। छिलके-दार दाल से डरने की जरूरत नहीं। इन दिनों रोटी-दाल भरसक एक साथ न खाई जाय।

एक समय मिट्टी की पट्टी और एनीमा पहले की तरह जारी रहेंगे।

(३) इस हफ्ते के बाद मिट्टी की पट्टी और एनीमा बंद कर देना चाहिए। भोजन की विधि वही रहे, लेकिन अगर इच्छा हो तो दोपहर में रोटी या चावल, थोड़ी-सी साबुत मूंग या मसूर की दाल और भाजी और रात में सिर्फ रोटी भाजी और मुनक्के या अंजीर लेना चाहिए। सुबह का फल-दूध या सिर्फ फल या सिर्फ दूध या मठा जारी रहे। आगे चल कर दिन के भोजन में दही भी लिया जा सकता है।

इस उपचार से दूध पिलाने वाली का शरीर (अगर कोई सख्त बीमारी नहीं है तो) एक-डेढ़ हफ्ते में ही भला-चंगा हो जायगा और उसके दूध से बच्चे को कोई खराबी न होगी।

याद रहे कि जब तक बच्चा दूध पीता है माँ को बहुत संयम से रहना चाहिए। *मिर्च, खटाई, पकवान, पापड़ और चटपटी चीजों का* खाना बिल्कुल वर्जित है।

बच्चों के कुछ खास रोगों के इलाज

जैसा ऊपर कहा गया है, बच्चों के कुछ खास रोग होते हैं। उनका इलाज यहां बताया जाता है। अगर इनके अलावा और भी कोई रोग हो जाय तो आशा है कि जिन पाठकों ने इस किताब को अच्छी तरह पढ़ा है वे उसका भी उचित इलाज उपवास, रसाहार, फलाहार, मिट्टी इत्यादि के प्रयोग और एनीमा-प्रयोग से अच्छी तरह कर लेंगे। जैसा कि बार बार कहा जा चुका है, सभी रोग जड़-मूल में एक हैं, और इसलिए उनके इलाज का तरीका भी एक ही है। मामूली हेर फेर से किसी भी रोग का इलाज किया जा सकता है।

सूखा रोग

यह रोग छोटे बच्चों में बहुत प्रचलित है। इसे मिठवा भी कहते हैं। इसमें बच्चा सूखा-साखा, कमजोर, दुबला, पीला और मिजाज का चिड़चिड़ा हो जाता है। इसमें पहले हड्डियां कमजोर रहती हैं, पर आगे चलकर शरीर के सभी अंग कमजोर पड़ जाते हैं। रीढ़ की हड्डी भी कुछ सी जाती है और टांग टेढ़ी-मेढ़ी हो जाती हैं। कभी कभी बुखार रहता है और रसीले फटे दस्त भी आते हैं। बहुत बच्चों की जान इस बीमारी से जाती है।

इसके कई तरह के इलाज भी निकले हैं। बच्चों की पीठें दागी जाती हैं और झाड़-फूंक भी होती है। किसी-किसी में अगर ऊपरी लाभ होता भी है तो बच्चा सदा के लिए कमजोर रह जाता है।

इस रोग का अचूक इलाज नीचे दिए उपायों से किया जा सकता है –

(१) अच्छे दूध का इन्तज़ाम। बकरी का दूध बहुत गुणकारी होगा।

(२) दूध के साथ-साथ अनार या सन्तरे का थोड़ा सा रस देना। अगर बच्चा बड़ा है तो फल के टुकड़े भी दिए जा सकते हैं। कम कभी शहद के साथ नींबू का रस भी चटाना चाहिए।

(३) हर रोज़ पेड़ू पर एक समय या दोनों समय मिट्टी की हल्की पट्टी रखनी चाहिए। अगर कब्ज़ रहे तो एनीमा प्रयोग।

(४) हर रोज़ हल्की धूप में बच्चे की मालिश की जाय। धूप से विटामीन 'डी' मिलता है, जो सूखा रोग का दूर करता है। ऋतु के अनुसार बच्चे को धूप में रखना चाहिए। गरमी में सवेरे ही धूप में रखना अच्छा होगा। सिर को बचाना चाहिए।

(५) कुछ घंटे बच्चे के नंगे शरीर में हवा और रोशनी हर रोज़ लगने दी जाय।

(६) अगर बन सके तो बच्चे को १४ मिनट या ज्यादा देर के लिए कुछ दिनों तक हर रोज़ कमर-नहान देना चाहिए।

पसली चलना

अच्छे दूध का इन्तज़ाम, फलों के रस का प्रयोग, पेट और पसली की गरम सेंक और अगर कब्ज़ रहे तो एनीमा—बस इन्हीं बातों से यह तकलीफ़ जाती रहती है। तकलीफ़ कम हो जाने पर कई दिन तक पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी का प्रयोग करना चाहिए। पट्टी पर सूती कपड़ा रखकर पेट को ऊनी कपड़े से लपेटना चाहिए।

हाथ पैरों का खिंचना

इस बीमारी में बच्चों के हाथ-पैर सिकुड़ते हैं और कभी-कभी बेहोशी सी भी हो जाती है। यह बीमारी भी अक्सर घातक होती है, लेकिन शुरू से ही ठीक उपायों के किये जाने पर ज़रूर चली जाती है।

यह हाजमे की खराबी से ही होती है। दूध या फलों के रस का अच्छा प्रबंध रहना चाहिए। लेकिन अगर बीमारी का दौर जोरदार या बार-बार हो तो बच्चे को सहने लायक (बहुत नहीं, लेकिन काफ़ी) गरम पानी में ५ से १० मिनट तक बैठाना चाहिए। गर्दन के नीचे का सारा शरीर पानी में रहे। पानी कितना गरम हो, इसे अच्छी तरह देख लो। दौरे के समय फल का रस भी न देना चाहिए। सिर्फ़ गुनगुना पानी दिया जा सकता है। एनीमा से पेट जरूर साफ़ करते रहना चाहिए। बीमारी के शुरू होते ही अगर बच्चे को एक-डेढ़ दिन सिर्फ़ गरम पानी पर रखा जाय, कुछ दिनों तक हर रोज गरम पानी में बैठाया जाय और एनीमा से पेट साफ़ कर दिया जाय तो यह बीमारी जाती रहती है।

गर्दन में सूजन

इसे अंगरेजी में 'मम्प्स' (mumps) कहते हैं। इसमें कौड़ियों की त्रिभुजाकार सूजन गर्दन में दोनों ओर होती है। सूजी हुई कौड़ी की ऊपरी नोक कान के सामने रहती है, दूसरी नोक गले की तरफ़ और तीसरी कान के पीछे। कभी-कभी बुखार भी रहता है। मुँह में लार कम हो जाती है और खुश्की (सूखापन) मालूम होती है।

रोगी को कम से कम दो दिन सिर्फ़ फल (हो सके तो सन्तरे) के रस पर रखना चाहिए और हर रोज एक या दो बार एनीमा देना चाहिए। जहाँ सूजन है वहाँ दिन में तीन-चार गरम और ठंडी सेंक देनी चाहिए—दो-तीन लगातार गरम और तब एक ठंडी। इस तरह एक बार की सेंक होगी। जब सूजन बिल्कुल जाती रहे और अच्छा भोजन नियम सके तो एक-दो दिन सिर्फ़ फल पर रखकर नियमित भोजन शुरू कराना चाहिए

कुकुर खाँसी

यह एक बार देर तक चलने वाली और परेशान करने वाली खाँसी है। अंगरेजी में इसका नाम 'हूपिंग कफ़' (Whooping cough) है।

पहले रसाहार और एनीमा प्रयोग, फिर फलाहार और तब नियमित आहार और साथ-साथ दिन में दो-तीन बार या जब खांसी उठे गर्दन और सीने के चारों तरफ गीली पट्टियों (गरम कपड़े से ढँकी) से इस रोग का इलाज करना चाहिए। दूध तब तक न दिया जाय जब तक कि नियमित भोजन न शुरू हो।

डिप्थीरिया (DIPTHERIA)

यह एक भयानक रोग है, जिस से गलत इलाज के कारण बहुत से बच्चों की जानें जाती हैं। इस में बुखार और गले में खराश रहती है बीमारी जल्द बढ़ती है, और गले की कोड़ियों पर टॉन्सिल (tonsil) की तरह सूजन आजाती है, । साथ ही इन कोड़ियों पर एक भूरी या बादामी रंग की झिल्ली, जिसके बाहरी किनारे पर सुर्खी रहती है, फैल जाती है। यह झिल्ली बढ़ कर अक्सर गले के नीचे और ऊपर तालू की तरफ या नाक में आजाती है। इसमें कमजोरी से बच्चों की जान निकल जाती है। इसके आराम होने में ४५ दिन से लेकर तीन हफ्ते तक लग सकते हैं।

इसका इलाज भी और बीमारियों के इलाज की तरह है, लेकिन इस में कुछ विशेष सावधान होना पड़ता है। जब तक बुखार रहे तब तक उपवास जरूरी है। अगर सन्तरा या ऐसे ही किसी फल का रस दिया जाय तो दिन में सिर्फ दो तीन बार और थोड़ी मात्रा में। दूध बुखार की हालत में हरगिज न दिया जाय। उपवास या रसाहार के दिनों में दिन में दो बार हल्का एनीमा देना चाहिए। साथ ही दिन में एक बार सारे शरीर पर गीली पट्टी और तीन-तीन घंटे पर गर्दन पर गीली पट्टी भी देनी चाहिए। इस बीमारी में मुंह में लार के साथ विषैले पदार्थ निकलते हैं, जिनके घोटने से खराबी होती है, इसलिए रोगी को भरसक चित लेटने न देना चाहिए। वह दाहिनी या बाँई करवट लेटे और उसके मुंह में दांतों के आस-पास थोड़ी साफ रुई इस तरह रखनी चाहिए कि लार

(२) बीमारियों में ग़लत इलाज—ज़हरीली दवाओं के इस्तेमाल से बीमारियों का अन्दर दबाया जाना, जिसका असर स्त्रियों के मासिक धर्म पर पड़ता है। फिर मासिक धर्म की बीमारियों के दिनों में भी दोष पूर्ण चिकित्सा, जिसका असर और भी बुरा होता है। गर्भाशय में नश्तर या किसी प्रकार भी छुरी और खरोंचनेवाले यंत्रों का इस्तेमाल।

सच पूछिये तो स्त्री-रोगों के भी यही कारण हैं, जो और रोगों के हैं। अगर भोजन ठीक रहे, अगर काफ़ी कसरत की जाय, अगर काफ़ी साफ़ हवा फेफड़े में जाय और शरीर में लगे, अगर आराम के लिये काफ़ी समय मिले, अगर ठीक पोशाक (बहुत कसी नहीं) पहनी जाये और अगर मन के भाव और विचार ठीक रहें तो स्त्री-रोग कदापि न हों।

हम जानते हैं कि हमारी औरतों की हालत कितनी गिरी हुई है, जिसका ख़ास कारण है कि हम मर्दों की मूर्खता, स्वार्थपरता अथवा अन्याय। हम न तो उन्हें पढ़ाते हैं और न संसार देखने और बात समझने का मौक़ा देते हैं। हम ख़ुद बाहर का काम करते हुये सुख-चैन के दिन बिताते हैं पर उनसे बुरी तरह घर के सभी काम-धन्धे करवाते हैं और उन्हें काफ़ी आराम करने नहीं देते। हम मोह से मिला हुआ झूठा प्रेम दिखाते हैं पर उनकी सच्ची परवाह नहीं करते। इन दिनों बातें कुछ बदली ज़रूर हैं फिर भी बहुत कुछ सुधार की गुंजाइश है। स्त्री-जाति का ऊँचा उठाकर देश, जाति का सच्चा कल्याण करने के लिये हमें बहुत कुछ करना होगा, और बिना उन्हें ऊँचा उठाये हम न तो निजी पारिवारिक सुख मिलेगा और न आनेवाली पुश्तें ही ठीक हो सकेंगी।

तीन बातें—

स्त्री-रोगों को समझने के लिये तीन बातों का समझना ज़रूरी है।

(१) औरतों की जननेन्द्रिय और उसके कल पुर्जे बहुत नाज़ुक हैं। उनके साथ अनुचित छेड़-छाड़ या नश्तर के औज़ारों का व्यवहार बहुत हानिकारक है।

(२) यह कल-पुर्जे सारे शरीर के अंग, ज़रूरी हिस्से हैं, और अपने पास के चारों तरफ़ के कल-पुर्जों से बहुत सरोकार रखते हैं। अगर उन कल-पुर्जों में गड़बड़ी होती है तो उसका बुरा असर जननेन्द्रिय के कल पुर्जों पर पड़ता है। उदाहरण के लिये यह कल-पुर्जे ख़ास कर गर्भाशय बड़ी आंत के नीचे और छोटी आंतों के सामने (आगे को) पड़ते हैं। अगर आंतों में वायु या गैस है या अगर कब्ज़ के कारण आंतों में मल भरा है तो ऐसी आंतों का दबाव गर्भाशय पर बराबर पड़ता है। इस दबाव से गर्भाशय कभी नीचे की ओर और कभी आगे की ओर झुकता है और इस तरह कुछ के समय के बाद अपनी जगह से टल जाता है। इससे गर्भाशय का अपने स्थान से टल जाना और दूसरे बहुत से रोग होते हैं, पर उन रोगों को दूर करने के लिये इस सभ्यता और विज्ञान (साइन्स) के ज़माने में विदेशी दवाओं और छुरी का प्रयोग किया जाता है, जो और भी बुरा होता है।

(३) मासिक धर्म से स्त्रियों के शरीर का बहुत सा अन्दरूनी विकार हर महीने निकल जाता है। स्त्रियों के लिये यह एक बड़े फ़ायदे की बात है, लेकिन खेद यह है कि शायद सैकड़े पीछे ६० औरतों को ठीक ठीक मासिक धर्म नहीं होता।

जब हम इन बातों को अच्छी तरह समझेंगे और जब जननेन्द्रिय और उसके कल-पुर्जों को सारे शरीर का एक अंग, उससे अलग नहीं, समझेंगे, तभी हम अपनी औरतों को स्त्री-रोगों से बचाने में समर्थ हो सकेंगे।

पहले दी हुई बातों को समझना—

स्त्री-रोगों की चिकित्सा करने के लिये यह जरूरी है कि इस किताब में दी हुई पहले की सारी बातें अच्छी तरह समझी जायें, क्योंकि, जैसा कि बार-बार कहा गया है, अचूक-चिकित्सा-विधि से रोगों को जड़-मूल से दूर करने के लिये सारे शरीर को शुद्ध, पुष्ट और परिष्कृत करना होता है, और ऐसा कर सकने के लिए उपवास, रसाहार, फलाहार, ठीक-ठीक श्वास-क्रिया, मिट्टी, पानी और धूप के प्रयोग, कसरत और आराम से काम लेना होता है। इसलिये पाठक या पाठिकायें इनसे संबंध रखने वाले नियमों को अच्छी तरह समझें, और तब वे खुद ही स्त्री-रोगों की उचित चिकित्सा कर सकेंगी। फिर भी स्त्री-रोगों की चिकित्सा के बारे में कुछ बताया जा रहा है।

मासिक धर्म

जैसा कि बताया जा चुका है, मासिक धर्म से स्त्रियों के शरीर के विकार हर महीने निकल जाया करते हैं। गर्भावस्था को छोड़कर इसका हर महीने ठीक-ठीक हो जाना बहुत जरूरी है। 'ठीक-ठीक' होने का मतलब है कि मासिक धर्म हर २८वें दिन शुरू हो जाय, उस समय कोई खास तकलीफ—कमर या पेट में दर्द या कोई और रोग—न हो, खून का रंग साधारण चमकीला लाल हो, उसकी मात्रा न बहुत कम न ज्यादा हो और ३ ४ रात रहकर वह बंद हो जाय। गलत रहन सहन और गलत आहार-विहार के कारण अक्सर ऐसा नहीं होता और तब और बहुत सी बीमारियां शरीर को घर दबाती हैं। इसलिये जीवन-सम्बन्धी सभी बातों पर उचित ध्यान रखते हुये मासिक धर्म में कुछ भी गड़बड़ी न होने देना हर स्त्री और उसके पुरुष अभिभावक का कर्तव्य है।

मासिक धर्म के समय कोई काम-काज भरसक न करना चाहिये। आराम करना या हल्के कामों में लगे रहना इस अवस्था में लाभदायक होता है। इसमें खाना भी हल्का और सात्विक खाना चाहिये—एक समय साधारण रोटी या चावल और दूसरे समय फल और दूध। हाँ, अगर उन्हीं दिनों कोई नई तकलीफ खड़ी हो जाय तो फलों के रस या सिर्फ दूध पीकर ही रहना चाहिये। कब्ज दूर करने के लिए सहने लायक गरम पानी का एनीमा लिया जा सकता है। मासिक धर्म के दिनों में न नहाना चाहिये न ठंडे जल का प्रयोग करना चाहिये। स्वस्थावस्था में गुनगुने पानी से बन्द कमरे में बदन पोंछा जा सकता है।

स्त्रियों के बहुत से रोग मासिक धर्म से ही सम्बन्ध रखते हैं। उनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जाता है :—

मासिक धर्म का बन्द हो जाना—

इसे अंगरेजी में 'अमेनोरिया' (amenorrhoea) कहते हैं। गर्भावस्था में लगभग साल भर के लिए और फिर ४० ४५ की उम्र में बराबर के लिये मासिक धर्म का बन्द हो जाना स्वाभाविक है। लेकिन इन अवस्थाओं को छोड़कर अगर मासिक धर्म रुक जाय तो उसे रोग समझना चाहिये। इसके रुकने के इन नीचे दिये कारणों को दूर करना चाहिये :—

(१) शरीर की कमजोरी और खून की कमी।

(२) बहुत चिन्ता, शोक, डर और इस तरह के दिल को चिन्तित और उद्विग्न करने वाले भाव।

(३) गर्भाशय की बनावट की खराबी और उसका अपनी जगह से हट जाना। इसका विवरण आगे मिलेगा।

(४) बहुत कसी पोशाक और साड़ी का पहनना, खासकर जिससे कमर और उसके आस-पास के अंग कसे रहते हों।

इन बातों को दूर करने से ही यह रोग दूर हो जायगा। इलाज के लिये इन बातों पर ध्यान देना चाहिये :—

(१) अगर रोगी बहुत कमजोर न हो तो तीन दिन रसाहार और एक या दोनों समय एनीमा प्रयोग। अगर रोगी कमजोर है तो नं (२) से शुरू करो।

(२) फिर सात दिन फलाहार। दिन में तीन बार। इन दिनों भी एक समय एनीमा।

(३) इसके बाद सात (अगर फलाहार से शुरू किया है तो दस) दिन तक फल के साथ-साथ थोड़ा दूध या मठा भी पीना चाहिए। इन दिनों एनीमा की जरूरत न होनी चाहिए, पर अगर हो तो लिया जाय।

(४) फिर नियमित भोजन, जैसा कि इस किताब में पहले बताया गया है।

(५) शक्ति भर टहलना या कसरत या दोनों, और सुबह शाम गहरी सांस का लेना।

(६) सुबह का साधारण नहाना।

(७) फल और दूध शुरू करने के बाद सबेरे उपस्थ-स्नान और तीसरे पहर या रात में सहने लायक गरम पानी में कमर-नहान लिया जाय। इस नहान के लिये टब में ठंडे पानी के बदले काफी गरम पानी भरना चाहिये। पानी जितना ज्यादा गरम रहेगा लाभदायक होगा लेकिन इतना न हो कि बदन जल जाय। टब में पैरों को बाहर निकाल कर कमर-नहान की तरह बैठना चाहिए, पेड़ू मलने की जरूरत नहीं। बैठने का समय ५-७ मिनट से १५ तक शक्ति के अनुसार हो। पानी बराबर गरम रहे। इसके लिए थोड़ी-थोड़ी देर के बाद टब में से १ १ लोटे पानी निकाल कर उतना ही गरम पानी डालते रहना होगा। टब से निकलने के बाद शरीर को अच्छी तरह पहले मामूली गीले (ठंडे पानी में भिगोये हुए) और तब सूखे तौलिए से पोंछ लेना चाहिए। अगर रात में सोने के पहले यह नहान लिया जाय तो और अच्छा हो, लेकिन भोजन और नहान में कम से कम दो घंटे का अंतर जरूर हो।

(८) सब कभी धूप-नहान और पन्द्रह दिन में एक बार भाप नहान। इन नहानों के नियमों को अच्छी तरह समझ लीजिये।

नोट—(१) अगर मासिक धर्म शुरू हो जाय तो सभी नहान बन्द कर देना चाहिये। कब्ज को दूर करने के लिए एनीमा ले सकते हैं। मासिक धर्म की अवधि के बाद फिर उपस्थ-नहान लेने लग जाना चाहिए।

(९) अगर जरूरत हो तो दो-ढाई महीने बाद एक बार फिर ५-७ दिन के लिये सिर्फ फलाहार करके नियमित भोजन पर आ जाना चाहिये।

कष्ट के साथ मासिक

अँगरेजी में इसका नाम 'डिसमिनारिया' (dysmenorrhoea) है। इस रोग में मासिक धर्म के पहले के या उन्हीं दिनों या बाद में या कुछ पहले से कुछ बाद तक, कमर और जांघ में हलका या कष्टदायक दर्द रहता है।

अगर मासिक धर्म के २१ दिन पहले दर्द शुरू हो तो समझना चाहिए कि नाड़ी-संस्थान की कुछ गड़बड़ी है या डिम्ब संबंधी खराबी है।

अगर मासिक शुरू होने के ठीक पहले दर्द शुरू होता हो तो उसका कारण योनि द्वार का तंग होना या उसके अन्दर की कुछ रुकावट है। पहली हालत में अक्सर वैवाहिक जीवन बिताने के कुछ दिन बाद तकलीफ जाती रहती है, लेकिन अगर रुकावट है तो अनुभवी चिकित्सक से सलाह लेने की जरूरत पड़ती है।

अगर खून निकलने की अवस्था में ही या बाद भी दर्द हो तो उसका कारण योनि-द्वार की सूजन और ज्वरावस्था है।

अगर मासिक शुरू होने के पहले से बाद तक दर्द रहे तो समझना चाहिए कि नाड़ियों की गड़बड़ी के साथ-साथ योनि द्वार की सूजन भी या

जितने भी कारण ऊपर बताये गये हैं सभी थोड़ी-बहुत मात्रा में मौजूद हैं।

इस कष्ट को दूर करने के लिए पहले तो ऊपर वाले बताये उपायों से (जो मासिक धर्म के लिए बताये गये हैं) शरीर को तनदुरुस्त बनाने पर ध्यान देना चाहिए। उपवास, रसाहार, फलाहार, नियमित भोजन, कसरत इत्यादि से जब शरीर अच्छी हालत में हो जायगा तो तकलीफ़ का कारण बहुत कुछ दूर हो जायगा। इसमें गरम और ठंडे बैठक-नहान से बहुत लाभ होता है। अगर दर्द मासिक धर्म से पहले शुरू हुआ हो तो इस नहान के अलावा (अतिरिक्त) दर्द वाले स्थान पर दिन-रात में दो-तीन बार गरम और ठंडी सेंक भी देनी चाहिए। एक बार में दो गरम एक ठंडी, फिर दो गरम, एक ठंडी, यानी कुल छः सेंक काफ़ी होगी। खून बंद होने के बाद भी अगर दर्द रहे तो ऐसा ही करना चाहिए, लेकिन खून निकलने के दिनों में दर्द को शान्त करने के लिए बैठक-नहान न लेकर सिर्फ़ इन सेंकों से ही काम लेना चाहिए। पेड़ू में दर्द रहने से मिट्टी की गरम पट्टी भी आराम पहुँचाती है। नियमित इलाज कई महीनों तक जारी रखना होगा।

एक तरकीब यह भी अच्छी है कि मासिक शुरू होने के पांच सात दिन पहले तीन दिन रसाहार और दो-तीन दिन फलाहार पर बिताये जायें।

इस रोग में सारे शरीर के या स्थानीय (मुकामी) धूप या भाप नहान से भी बहुत लाभ होता है। स्थानीय धूप-नहान के लिए दर्द वाले स्थान को केले के पत्ते से ढँक लेना चाहिए।

इन सभी बातों के लिए एक कार्यक्रम बना लेना जरूरी है।

बहुत खून का आना

मासिक धर्म के समय बहुत ज्यादा खून का शरीर से निकलना अंगरेजी में 'मेनोरेजिया' (menorrhagia) कहा जाता है। अपने शरीर की अवस्था के अनुसार किसी किसी के ज्यादा खून आता ही है,

लेकिन अगर उससे कमजोरी बढ़े या और कोई गड़बड़ी हो तो उसे रोग समझना चाहिए और उसका उचित इलाज करना चाहिए। खेद है कि इस रोग का इलाज जो इन दिनों प्रचलित है वह उचित नहीं है। उसमें सिर्फ खून के अधिक बहाव को रोकने की कोशिश की जाती है। यह समझने की बात है कि अपने अन्दर अधिक विकार रहने के कारण शरीर उस विकार को दूर करने के लिए ज्यादा खून निकालता है। इसलिए इलाज खून की मात्रा को कम करने या रोकने के लिए नहीं बल्कि शरीर को शुद्ध और स्वस्थ करने के लिए होना चाहिए।

इस रोग के ठीक इलाज की विधि वही है जो 'मासिक धर्म के बन्द होने' की अवस्था के लिए बताई गई है। इसमें भी उसी तरह उपवास, रसाहार, भोजन-सुधार और ताकत के सहारे शरीर के खून को शुद्ध और उसके सब अंगों को तामरहित और मजबूत किया जाता है। सिर्फ गरम पानी के प्रयोग के बदले ठंडे पानी से ही इसमें काम लेना ठीक होता है। पाठक और पाठिकाओं को याद रखना चाहिए कि गरम पानी फैलाता है जकड़ी (कड़ापन) को दूर करता है। ठंडा पानी सिकोड़ता है, पहले ठंड पैदा कर फिर गरमी लाता है इसलिए जब खून के बन्द होने, रुकने या कम होने की अवस्था हो तो गरम पानी का प्रयोग करना चाहिए। साथ ही यह भी याद रखना चाहिए कि गरम पानी दर्द को भी दूर करता है, लेकिन गरम के बाद ठंडे पानी का भी प्रयोग जरूरी है, क्योंकि लगातार गरम पानी के प्रयोग से कमजोरी बढ़ती है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए इस रोग में उपस्थ-स्नान या ठंडे बैठक-नहान से काम लेना चाहिए। हां, अगर बीच बीच में कुछ दर्द या और कोई तकलीफ हो तो जैसा उचित हो वैसा करना चाहिए। इलाज कुछ महीनों तक एक निश्चित कार्यक्रम के अनुसार करना चाहिए

अनियमित मासिक

अक्सर ऐसा होता है कि कभी एक महीने पर, कभी पन्द्रह दिन पर

ही और कभी दो-ढाई महीने के बाद मासिक धर्म होता है। बताने की जरूरत नहीं कि इस गड़बड़ी को ठीक करने के लिए भी वही उपाय काम में लाने होंगे —रसाहार, फलाहार, भोजन-सुधार, एनीमा प्रयोग, कसरत, आराम और अवस्था देखकर गरम या ठंडे पानी का इस्तेमाल।

गर्भाशय का अपनी जगह से टल जाना

इसके नीचे दिये कारण हो सकते हैं —

(१) आंतोंमें वायु विकार और कब्ज,जो पहले बताया जा चुका है।

(२) सारे शरीर की कमजोरी।

(३) कसी पोशाक।

(४) अक्सर नीचे की तरफ झुकना। (किसी किसी काम-धन्धे में बराबर झुक कर काम करने की जरूरत होती है।)

(५) कसरत के अभाव से पेड़ू की मांसपेशियों की कमजोरी।

(६) कमजोरी में बहुत कसरत।

(७) बच्चा जनने के समय दाई की असावधानी और उस के बाद गलत रहन-सहन।

(८) स्त्री-रोगों में गलत इलाज।

इस रोग में कमजोरी और बहुत तरह की गड़बड़ी होती है। खेद है कि गर्भाशय को अपनी जगह पर लाने के लिए अक्सर नश्तर से काम लिया जाता है, जिससे आगे चलकर और भी गड़बड़ी बढ़ जाती है।

इस रोग के इलाज के लिए पहले उन्हीं साधारण नियमों से काम लेना चाहिये जो ऊपर बताये गये हैं। एक अच्छे कार्यक्रम के अनुसार (पहले कुछ दिन फलाहार और एनीमा से पेट साफ करके) भोजन-सुधार के साथ-साथ नियमित ठंडे बैठक-नहान से काम लेना चाहिए। कभी कभी गरम और ठंडे बैठक नहान, दोनों, लिया जा सकता है। साथ ही कसरत भी बहुत जरूरी है। स्त्रियों के लिए कसरतें आगे बताई जायेंगी।

मर्दों के लिए जो कसरतें लेट या बैठकर करने की बताई गई हैं वे सब इसके लिए लाभदायक हैं। कसरत पहले अन्दाज से शुरू करके धीरे-धीरे बढ़ानी चाहिए।

अक्सर गर्भाशय नीचे की ओर झुका होता है और कभी कभी अन्दर का भाग बाहर निकल कर लटक भी जाता है। ऐसी हालतों में लेटकर या बैठकर की जाने की वाली कसरतों को ऐसे तख्त या पटरी पर करना चाहिये, जिसका पैताना कुछ ऊँचा उठा हो, जिससे सिर ज्यादा निचाई पर हो जाय। इस तरह करने से पेट की पेशियाँ मजबूत होंगी ही, साथ ही गर्भाशय धीरे-धीरे अपने ठीक स्थान पर आकर अटल हो जायगा। एक बात और है। जिसे यह रोग हो उसे कुछ महीनों तक ज्यादा चलना फिरना न चाहिये। चलने-फिरने में गर्भाशय का झुकाव नीचे की तरफ होता है जिससे रोग बढ़ेगा। साथ ही दिन में अक्सर लेटे रहना या टाँगें फैलाकर बैठना, कभी-कभी टाँगों को सिर की सतह से जरा ऊँचा करके भी लेटना या बैठना चाहिए। इन दिनों बोझ उठाने या कोई भी मेहनत क काम न करना चाहिये। बड़े-बड़े शहरों के बाजार में एक तरह की पेटी मिलती है, जिसे अंग्रेजी में 'ट्रस' (Truss) कहते हैं। ट्रस को चिकित्सा के दिनों में, जब तक पेड़ू की मांसपेशियाँ मजबूत न हो जाय, लगाना लाभदायक होता है।

अक्सर गर्भाशय टलकर पीछे या सामने झुका होता है। इन सब बातों के समझने के लिये अनुभव चाहिये या किसी अनुभवी डाक्टर की जाँच से ये बातें जानी जा सकती हैं।

जब गर्भाशय पीछे झुका होता है तो कठिन कब्ज, पेट और पाखाने के रास्ते में भारीपन, पीठ में दर्द इत्यादि लक्षण होते हैं। मासिक के समय ये लक्षण और कष्टकर (तकलीफ देने वाले) हो जाते हैं और खून का बहाव भी बहुत कष्टकर और ज्यादा मात्रा में होता है। ऐसी हालत में चिकित्सा के दिनों में और उपायों के साथ-साथ दिन में कभी कभी पेट के बल लेटना (जितनी देर तक आराम से लेटा जा सके)

लाभ पहुँचाता है। ध्यान रहे कि खाने के तुरत बाद इस तरह न बैठना चाहिए।

जब गर्भाशय आगे को झुका होता है तो उस समय के खास लक्षण हैं बहुत पेशाब करने की इच्छा लेकिन पेशाब अच्छी तरह न कर सकना, कष्टकर मासिक और कभी-कभी बंध्यापन (गर्भ का न रहना)। इस हालत के इलाज में पीठ के बल अधिक लेटना चाहिए और कमरों का सिर जरा नीचे कर के उसी तरह करना चाहिए जिस तरह कि पहले बताया गया है।

बताने की जरूरत नहीं कि रोगों के जड़-मूल से जाने और तनदुरुस्ती बिल्कुल अच्छी होने में समय लगेगा।

गर्भाशय में जलन

गर्भाशय में जलन या ज्वरावस्था (जब कि दर्द और सूजन रहती है) के कई कारण हो सकते हैं—(१) शारीरिक कमजोरी के साथ-साथ वात-गठिया या टी० बी० की शिकायत, (२) बच्चा जनने के बाद गर्भाशय में जहरीले जख्म का हो जाना, (३) ठंड लगने या भय इत्यादि के आवेग से, (४) अनियमित विवाहित जीवन से, इत्यादि।

इलाज के लिए उन्हीं साधारण उपायों (अगर ज्यादा तकलीफ़ रहे तो उपवास या रसाहार से ही शुरू करो) के साथ-साथ पानी का उचित प्रयोग करना चाहिए। सहने लायक काफ़ी गरम पानी का एनीमा और गरम और ठंढा बैठक-नहान लाभदायक होते हैं। अगर रोगी की शक्ति अच्छी नहीं है तो गरम और ठंडे बैठक-नहान के बदले पेड़ू पर मिट्टी या कपड़े की काफ़ी मोटी ठंढी पट्टी ही देनी चाहिए। इस पट्टी को काफ़ी मोटे गरम (ऊनी) कपड़े से अच्छी तरह लपेट देना चाहिए। आशा है कि पाठक या पठिकाएँ पट्टी इत्यादि देने के नियमों को भूली न होंगी।

ऐसी ऐसी हालतों में एक तरह का घर्षण बैठक-नहान बहुत लाभ दायक होता है। उसका तरीक़ा यों है। ठंडे पानी से भरे एक टब में

तिपाई रखनी चाहिए। पानी तिपाई तक टकाता रहे। उस तिपाई पर रोगी कपड़े उतारकर और पैरों को टब के दोनों ओर बाहर रखते हुए बैठ जाती (जाता, क्योंकि मर्दों को भी विशेष हालतों में यह स्नान दिया जा सकता है) है, और या तो खुद या कोई दूसरा व्यक्ति (दास दासी या कोई संबंधी) उसी के साथ हाथों से पेट, पेड़ू, पीठ और छाती पर पानी उछाल उछाल कर उन हिस्सों को रगड़ रगड़ कर धोता है। इस स्नान को जल्दी ही, ज्यादा से ज्यादा ५ मिनट के समय में, खतम करना चाहिए और यह देखना चाहिए कि रगड़ से तकलीफ न हो। बन्द कमरे में और अगर सर्दी हो तो जलते कोयलों की अंगीठी रखकर यह स्नान लेना चाहिए। साथ ही रोगी की शक्ति भी देख लेनी चाहिए। किसी भी जीर्ण रोग में, जब कि रोगी की हालत सुधरती आ रही है और शरीर में ताकत बढ़ रही है यह स्नान स्त्री या पुरुष रोगी को लाभ के साथ दिया जा सकता है।

* * * *

नोट—इन सब ऊपर दिये हुए रोगों में रीढ़ के अगल-बगल की ओर पेड़ू और कूल्हे की नियमित मालिश बहुत लाभदायक होती है। पेड़ू और कूल्हे की मालिश अनुभवी चमाइन या धाइयां कर सकती हैं।

गर्भाशय में फोड़े इत्यादि

अक्सर गर्भाशय में छोटी-छोटी गाली की तरह गुमड़ियां और कभी कभी फोड़े हो जाते हैं। इनको दूर करने के लिए गर्भाशय के भीतरी हिस्से को छुरी से खुरचने या फाहों में नश्तर देने के उपाय काम में लाये जाते हैं। ये रोग भीतरी विकार से होते हैं और सिर्फ खुरचने या नश्तर देने से जड़ से नहीं जाते। इनसे सच्चा लाभ नहीं होता। सच्चा लाभ क्या (इन बातों से शुरू-शुरू में कुछ लाभ सा मालूम होता है) पर पीछे बेहद खराबियां होती हैं। ये रोग तभी जा सकते हैं जब कि शरीर के विकार दूर कर दिये जायें और शरीर तनदुरुस्त हो जाय। इस मामूली

गर्भावस्था

मामूली बातें—

गर्भावस्था में स्त्रियों को कई तरह की तकलीफें भुगतनी पड़ती हैं। बहुत से गलत विचार भी प्रचलित हैं, जिनसे उनकी निज की और आने वाले बच्चे की भी तकलीफें बढ़ जाती हैं। इनमें से एक गलत विचार है—जो चाहो वही खाओ और दो (खुद अपने और बच्चे) के लिये खाओ। यह मामूली समझने की बात है कि अगर स्त्री का स्वास्थ्य अच्छा रहेगा, अगर उसके शरीर में शुद्ध खून रहेगा, तो उसका अच्छा असर (प्रभाव) बच्चा के बनते हुये शरीर पर भी पड़ेगा। इसलिए गर्भावस्था में भोजन और रहन-सहन पर बहुत ध्यान देना चाहिए। इस विषय में भी देहाती स्त्रियों से, जो मामूली भोजन खाती हैं और खुले में काम-काज करती हैं, और जानवरों से, जो बिल्कुल प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते हैं, शिक्षा लेनी चाहिए। उन्हें न तो गर्भावस्था में ज्यादा तकलीफ होती है और न बच्चा जनने के समय या बाद में, साथ ही उनका बच्चा भी पुष्ट होता है। गर्भावस्था के संबंध में एक दूसरा गलत विचार यह है कि गर्भवती स्त्री को किसी तरह का भी काम-काज या मिहनत न करनी चाहिये। यह ठीक है कि बहुत मेहनत या कसरत इस अवस्था में हानिकर हो सकती है, लेकिन अपनी शक्ति भर काम धंधे में लगा रहना और कसरत करना जरूरी है।

अकसर लोग समझते हैं कि जन्म के समय बच्चा जितना बड़ा और वजनी (भारी) हो उतना ही वह तनदुरुस्त और अच्छा है। लेकिन ऐसा समझना भूल है। बड़ा और वजनी बच्चा जन्म से ही अपने शरीर में बहुत सा विकार (अपनी माता के शरीर से) लेकर पैदा होता है और आगे चलकर बराबर रोगी बना रहता है। साथ ही उसके जन्म के समय माता को भी कष्ट होता है।

कुछ ज़रूरी बातें—

गर्भावस्था के लिए कुछ ज़रूरी बातें नीचे दी जाती हैं। अगर इन पर ध्यान दिया जायगा तो माता और बच्चे दोनों की भलाई होगी।

(१) तनदुरुस्त पुरुष और स्त्री के ही बच्चे तनदुरुस्त हो सकते हैं। इसलिए ज़रूरी है कि वैवाहिक जीवन शुरू करने के पहले दोनों ही अपनी तनदुरुस्ती को ठीक कर लें और आगे भी उस पर ख्याल रखें।

(२) गर्भावस्था में भोजन पर विशेष ध्यान देना चाहिए। सबसे अच्छा भोजन-क्रम होगा—सुबह ७–८ बजे मौसम के ताजे फल और कच्चा दूध, दोपहर में लगभग १२ बजे कच्ची सब्जियों का सलाद, रोटी या चावल, थोड़ी सी साबुत मूंग की दाल, घी और एक साधारण पकी भाजी—मुंह मीठा करने के लिए कुछ मुनक्के या कभी-कभी घर की अच्छी बनी मिठाई। रात में सबेरे रोटी-भाजी और चार छः अंजीर। और कुछ नहीं। मतलब यह है कि गर्भावस्था में भोजन के बारे में बहुत सावधान होना चाहिए।

इन दिनों (और बराबर ही) सफेद चीनी से बचना चाहिए। उससे बच्चा के बनते हुए शरीर पर बहुत बुरा असर पड़ता है और सूखा रोग (सिठवा) होने का डर रहता है।

अच्छी तनदुरुस्त गाय का ताजा कच्चा दूध इस अवस्था में मां और बच्चे दोनों के लिए लाभदायक है। अगर सातवें महीने के बाद सुबह नाश्ते और रात के खाने दोनों ही में फल और ताजे कच्चे दूध का इस्तेमाल किया जाय तो बहुत अच्छा होगा। इस हालत में तीसरे पहर कुछ रसदार फल और लेना चाहिए।

(३) गर्भावस्था में कब्ज से बचना चाहिए। अगर भोजन ठीक है तो कब्ज न होगा। अगर कभी हो भी जाय तो मामूली गुनगुने (गरम नहीं) पानी के हल्के एनीमा से पेट साफ कर लेना चाहिए, लेकिन जल्दी जल्दी एनीमा न लेना चाहिए।

गर्भ गिराना और (२) कुछ और कारणों से गर्भ आप ही आप गिर जाना।

जानबूझकर गर्भ गिराना पश्चिम के देशों में बहुत प्रचलित और अब अपने देश में भी धीरे-धीरे प्रचलित हो रहा है। इस राक्षसी काम के कई कारण हो सकते हैं, जिनमें दो-तीन खास (मुख्य) हैं— एक परिवार को बहुत बढ़ने देने से रोकने की इच्छा, दूसरे, संतान की जिम्मेदारी को अपने कन्धों पर बिलकुल ही न उठाने की इच्छा, और तीसरे, विवाह-बंधन से न बँधे पुरुष और स्त्री के अनुचित संसर्ग के फल को प्रकट न होने देने की इच्छा। इसके चाहे जो भी कारण हों, मैं यह साफ-साफ कहूँगा कि जान बूझकर गर्भ गिराना मनुष्य और प्रकृति (या यों कहिए कि मनुष्य और ईश्वर) दोनों के विरुद्ध (खिलाफ) और इसलिए महापाप है।

जो समय के पहले खुद ही गर्भपात होता है उसके भी कई कारण हो सकते हैं —

(१) मुख्य कारण है स्त्री पुरुष की कमजोरी।

(२) कमजोरी की हालत में स्त्री का बहुत कसरत या मेहनत का काम करना।

(३) गर्भ के दिनों में बहुत खाना और गरम-गरम चीजों का खाना।

(४) अपच से पतले दस्तों का आना, जोरदार जुलाब लेना।

(५) फूल्स।

(६) चिंता, शोक इत्यादि।

सच पूछिए तो कमजोरी ही इसका मुख्य कारण है।

गर्भपात का समय—

गर्भपात या तो वैवाहिक जीवन के बाद ही शुरू शुरू में या उम्र ढलने पर, जब कि मासिक के बिलकुल बंद हो जाने का समय नजदीक आता है होता है। फिर गर्भ धारण करने के शुरू में हो—दूसरे या

तीसरे महीने में—या सातवें महीने में गर्भ गिरने की ज्यादा आशंका रहती है।

किसी-किसी के गर्भ गिरने की आदत सी हो जाती है। अक्सर सुनने में आता है कि अमुक स्त्री का गर्भ तीन या पाँच बार गिरा, जिससे उसे बच्चा होता ही नहीं।

गर्भपात रोकने का उपाय—

जिन स्त्रियों के गर्भ अक्सर गिर जाता है उन्हें चाहिये कि एक बार गर्भ गिरने के बाद वे अपनी तनदुरुस्ती को पहिले ठीक कर लें, और साथ ही उनके पतिदेव भी अपनी तन्दुरुस्ती को ठीक करें, और तब वे दोनों वैवाहिक जीवन शुरू करें। यह मालूम होते ही कि गर्भ रह गया है स्त्री को बहुत सावधानी के साथ रहना चाहिये। भोजन-सुधार के साथ-साथ उपस्थ-स्नान या ठंडे बैठक-नहान से जरूर लाभ होगा।

गर्भपात के समय—

गर्भपात होने के पहले थकावट, भारीपन और सुस्ती मालूम होती है। कभी-कभी मूर्च्छा या बेहोशी सी भी हो सकती है। पेड़ू भारी-भारी सा मालूम होता है। पीठ, कमर और कमर के नीचे के हिस्सों में दर्द बना रहता है और फिर खून जारी हो जाता है। अगर खून जोर से और ज्यादा मात्रा में निकलता रहे और दर्द भी बढ़ता जाय तो गर्भपात का रुकना असंभव (ना-मुमकिन) ही है। लेकिन यह मालूम होते ही कि गर्भपात होने वाला है अगर ठीक-ठीक उपाय किये जायें तो वह रुक सकता है। उपाय ये हैं —

(१) स्त्री को एक हवादार कमरे में आराम से लेटना चाहिए। आराम करना जरूरी है। बिस्तर मुलायम और खाट में झोल न हो सख्त (चौकी) पर एक मामूली दरी और कुछ हल्के कपड़े डालकर लेटना अच्छा है। सिर थोड़ा ही ऊँचा हो। बल्कि खाट के पायों के नीचे एक-एक ईंट रखकर पैतियाना ऊँचा कर देना चाहिए। ओढ़ने के कपड़े हल्के और ऐसे हों जिनसे बहुत गर्मी पैदा न हो।

(२) मोजन सिर्फ फलों के रस या दालों के पानी के साथ थोड़ा दूध के और कुछ न हो। मासियों का रस भी दिया जा सकता है, लेकिन कोई चीज खट्टी या गरम तासीरवाली न हो।

(३) पेड़ पर कपड़े की गीली पट्टी (पेड़ के चारों तरफ) तीन तीन घंटे बाद आध आध घंटे के लिये रखी जाय। इस पर गरम कपड़ा लपेटने की जरूरत नहीं है। खून बन्द होते ही पट्टी देने का समय बढ़ा देना चाहिये।

(४) पाखाने के लिए बेड-पैन (Bed pan) इस्तेमाल करना चाहिये। अगर स्त्री को दो-तीन दिन लेटे रहना पड़ा और पाखाना न हो तो मामूली ठंडे पानी का (जिसमें ठंड न हो पर गर्मी बिल्कुल ही न हो) हल्का एनीमा दिया जा सकता है।

(५) स्त्री को प्रसन्न रहना चाहिए। उसके परिवार वालों को चाहिए कि वे उसे चिन्तित न होने दें।

जब यह देखा जाय कि गर्भपात न रुकेगा तो पेड़ू पर मिट्टी की गीली पट्टी दिन में कई बार देनी चाहिए। कमजोरी से अगर सिर खाली मालूम हो या बेहोशी सी हो तो सिर और चेहरे को गीले कपड़े से बार बार पोंछना चाहिए। कमजोरी की हालत में पैरों के पास गरम पानी की बोतलों को रखना और गरम कपड़े उढ़ाना चाहिए। ऐसा प्रबन्ध (इन्तजाम) करना चाहिए कि खून से कपड़ा भीगा न रहे या सहूलियत से कपड़े को बदल देना चाहिये। जब गर्भ बिल्कुल गिर जाय तो एक दिन के बाद हल्के गरम पानी से जननेन्द्रिय का डूश देना चाहिये। खून बन्द होने के बाद दो-तीन दिनों तक सिर्फ दूध पर—दिन में दो-तीन बार—और फिर चार-पाँच दिनों तक फल और दूध पर स्त्री को रखना चाहिए। इस दशा में भी आराम की बहुत जरूरत है।

गर्भ का बिल्कुल न रहना—

यह तो कुछ दैवी बात भी है, लेकिन अगर स्त्री और पुरुष दोनों ही अपनी तनदुरुस्ती को बढ़ावें तो बहुतों के सन्तान-सुख जरूर हो सकता है। अक्सर लोग अपने पैसे और समय को बेकार की झाड़-फूंक में खर्च करते हैं। अगर इसके बदले वे उपवास, रसाहार, फलाहार, उचित आहार, कमर-नहान उपस्थ स्नान, कसरत और गहरी सांस से अपनी तनदुरुस्ती को ऊँचे दर्जे की हालत में ले आयें तो सैकड़ों पीछे नब्बे निस्संतानों के अवश्य संतान हो। चाहिए कि स्त्री-पुरुष दोनों ही कम से कम एक साल अपनी तनदुरुस्ती सुधारें और तब वैवाहिक जीवन आरंभ करें।

स्त्रियों के लिए कसरत *

क्या स्त्रियों और लड़कियों के लिए भी कसरतें हैं ? कुछ लोग कहते हैं कि उन्हें कसरत न करनी चाहिए, क्योंकि कसरत से उनके शरीर में अस्वाभाविक कठोरता आती है और कुछ जरूरी शारीरिक यंत्रों में खराबी आ जाती है।

स्त्रियों के लिए कसरतें जरूर हैं और उनके लिए भी कसरत उतनी ही जरूरी है जितनी कि पुरुषों के लिए, लेकिन पुरुषों की सभी कसरतें स्त्रियों के उपयुक्त नहीं हैं। चक्की पीसना, चावल छाँटना, घर के और काम-काज करना कसरत होती हैं, पर जहां ऐसी स्वाभाविक कसरतों का अवसर प्राप्त न हो वहां ऊपरी कसरतें जरूरी हैं। यह धारणा बिलकुल ठीक नहीं है कि कसरत से स्त्रियों के शरीर की स्वाभाविक सुकुमारता जाती रहती है। फिर कीर्य रोगों को दूर करने के लिए तो कसरतें बहुत जरूरी हैं।

यहां कुछ उपयुक्त कसरतें दी जाती हैं। इन कसरतों का पुरुष भी कर सकते हैं, पर स्त्रियां इनसे विशेष लाभ उठावेंगी। इन कसरतों से पूरा लाभ उठाने के लिए यह जरूरी है कि उनके साथ-साथ श्वास-क्रिया भी ठीक ठीक हो। नथने खोल कर धीरे-धीरे सांस लेना और उसे धीरे धीरे बाहर निकालना, फिर कुछ दिन के बाद सांस रोकने का अभ्यास धीरे धीरे डालना—बस, 'श्वास-क्रिया' से यहां इतना ही अभिप्राय है। अब कसरतों को चित्रों के सहारे समझिए—

(१) जमीन पर बैठो, हाथ पीछे जमीन पर रहेंगे, पैर दोनों सामने एक साथ रहेंगे। कमर और पीठ की पकड़ को, सिर पीछे की ओर करते

---

*कोलकत्ता-द्वारा सम्पादित 'हंस' पत्रिका में लेखक का यह लेख प्रकाशित हुआ है।

हुए, पीछे के हाथों के सहारे उठाओ और सांस लेती जाओ। फिर पहली अवस्था में आ जाओ, सांस छोड़ते हुए। अब यह कसरत एक बार पूरी हुई। इस तरह ३-४ बार से धीरे-धीरे बढ़ा कर १२ बार करो।

(२) जमीन पर चित लेट जाओ, एड़ियां मिली होंगी, हाथ बगल में होंगे। अब घुटने को ऊपर उठाओ और सब दूसरे को—इस तरह बाइसिकिल चलाने जैसा १० से २५ बार करो। कुछ दिनों के अभ्यास के बाद घुटने घुमाने से पहले सांस लेकर रोक लो और घुमाना बन्द करने के बाद धीरे-धीरे सांस छोड़ दो।

(३) जमीन पर चित लेटो घुटने ऊपर उठे होंगे और पैर जमीन पर होंगे। बाहुओं को सीने पर एक दूसरे के ऊपर मोड़ लो। अब बीच से धड़ को ऊपर उठाओ और फिर वापस ले जाओ। इस तरह इस कसरत को ६-८ बार से १२ बार करो। कुछ अभ्यास के बाद धड़ को उठाते समय सांस लो और जमीन पर वापस ले जाते हुए सांस निकालो।

(४) जमीन पर कसरत नं० २ की तरह चित लेटो। फिर बारी-बारी से एक-एक पैर को धीरे-धीरे ऊपर उठाओ और नीचे रखो। कुछ अभ्यास के बाद हर पैर को ऊपर उठाते समय सांस लो और उसे नीचे लाते समय सांस निकालो। इसे २ से ५ बार करो।

(५) कमर और पीठ के नीचे २ या ३ तकिया रखो और चित्र में बताए ढंग से लेट जाओ फिर घुटनों को ऊपर उठाकर उन्हें पेड़ू पर मोड़ो और वापस ले जाओ। इस तरह ५ से १२ बार करो। कुछ अभ्यास के बाद घुटनों को ऊपर ले जाते समय सांस लो और वापस लाते समय सांस निकालो।

इन कसरतों से पेट और पेड़ू के कल-पुर्जे ठीक होंगे, जिससे पाचन अच्छा होगा, यकृत अपना काम अच्छी तरह कर सकेगा—पाखाना, पेशाब की क्रियाएँ ठीक ठीक होंगी और साथ ही रीढ़ और दूसरे अवयव पुष्ट होंगे। इन सब का फल होगा—अच्छा स्वास्थ्य। स्त्री-रोग

में यह व्यायाम भोजन-सुधार के साथ विशेष उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

किसी भी कसरत के लाभ उठाने के लिए यह ज़रूरी है कि उसे हर रोज़ किया जाय। यह कसरतें हल्की हैं। अगर लड़के या पुरुष इन्हें करते हैं तो उन्हें चाहिए कि वे अपना खेल-कूद जारी रखें, औरतें भी अपने दूसरे परिश्रम के कामों को या टहलना बन्द न करें।

स्त्रियों के लिए कसरत
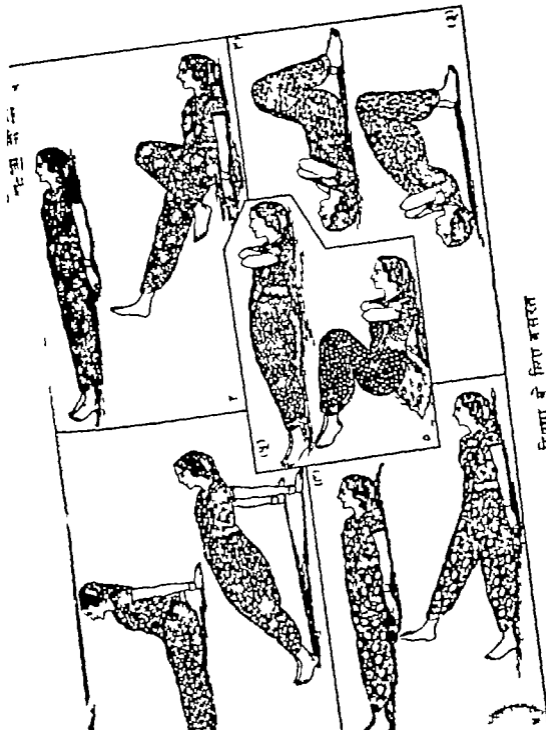
कुछ और बातें

चिकित्सकों के प्रति, सच्ची तन्दुरुस्ती, रोगियों की देख भाल,
प्राकृतिक चिकित्सा में औषधि का स्थान, प्राकृतिक
चिकित्सा का संक्षिप्त इतिहास

चिकित्सकों के प्रति

जो प्राकृतिक चिकित्सा की विधियों को जानकर अपनी या दूसरों की चिकित्सा करना चाहते हैं उनसे कुछ कहना है। सभी ज़रूरी बातें इस किताब में बताई गई हैं, फिर भी बहुत कुछ बाकी रह गया है। वह है अपनी समझ, अपनी ज़िम्मेदारी और अपना अनुभव। चिकित्सकों को सभी बात अच्छी तरह समझनी चाहिए। साथ ही वे अपना अनुभव अच्छी तरह नोट करें। अगर वे इस किताब को बार-बार अच्छी तरह पढ़ गये हैं तो उन्होंने जान लिया होगा कि इस चिकित्सा के सिद्धान्त बहुत मामूली हैं।

लेकिन अगर कोई बहुत ही अच्छा चिकित्सक बनना चाहता है तो उसे दो बातें और जाननी चाहिए—(१) शरीर की रचना और (२) नाड़ी की पहचान। इस किताब में ये दो बातें नहीं दी जा सकीं। पाठकों को अंगरेज़ी और हिन्दी की किताबें इस विषय की पढ़नी चाहिए। 'शरीर-रचना'* पर डॉक्टर घर्मा की एक बड़ी और अच्छी किताब हिन्दी में है। नाड़ी की पहचान किताब के पढ़ने, अच्छे वैद्यों की संगति और अभ्यास से आती है। मुझे नाड़ी देखना मामूली तौर से आता है, जिससे चिकित्सा में बहुत मदद मिलती है।

तीसरी बात यह है कि चिकित्सकों को पहले मामूली रोगों में अनुभव हासिल करना चाहिए। बुख़ार इत्यादि मामूली नए रोग और ऐसे पुराने रोग, जिनमें रोगी बहुत कमज़ोर न हुआ हो या बहुत विषैली दवाएँ न खाई हों, आसानी से दूर किए जा सकते हैं। पहले इन्हीं में अनुभव प्राप्त करना चाहिए। कोई भी नया रोग, चाहे वह कैसा भी

*लेखक की भी 'सरल शरीर-रचना' नाम की एक पुस्तक है—प्रकाशक, नेशनल प्रेस, कटरा, इलाहाबाद।

भयंकर मालूम होता हो, आसान है। अगर उसमें उपवास करा दिया जाय और एनीमा का प्रयोग किया जाय (अस्पताल पर, जैसे हैजा में नहीं), साथ ही मर्दन से ठंडे या गरम पानी का प्रयोग किया जाय तो रोग जल्दी और जरूर जाता है। जिस पुराने रोग के रोगी ने बहुत वर्षों तक विदेशी औषधियों का प्रयोग किया है उसकी चिकित्सा में सावधान होना पड़ता है। पहले कुछ महीनों तक भोजन-सुधार और बीच बीच में फलाहार, उपवास और एनीमा-प्रयोग जारी रखकर तब पानी का इस्तेमाल शुरू करना चाहिए। उपवास और पानी के इस्तेमाल के सम्बन्ध में शरीर की शक्ति और गर्मी का बहुत देख और समझ लेना चाहिए। बहुत ठंड में न तो लम्बा उपवास ही ठीक होता है और न बहुत देर तक पानी में बैठना। फिर जिसका शरीर कमजोरी से ठंडा रहता हो उसे पानी में बैठाने के साथ-साथ पैरों को गरम पानी में रखना चाहिए।

मैं अपनी चिकित्सा में पानी का इस्तेमाल कम करता हूँ। सेंकें पीछे चालीस रोगों में नहीं करता। मालिशों में अपने में सिर्फ पट्टियों से ही काम निकालता हूँ। हाँ, एनीमा-प्रयोग से जरूर सहारा लेता हूँ, पर भी रोगी का बल और शरीर की आवश्यकता देखकर। एनीमा से बढ़ कर और कोई भी उपाय शरीर के अन्दर के सूखे मल को बाहर निकालने और आंतों की नाड़ियों को जगाने का नहीं है।

मैं फिर कहूँगा कि चिकित्सक पहले इस किताब को आदि से अंत तक तीन-चार बार अच्छी तरह जरूर पढ़ लें।

अक्सर ऐसा अवसर आता है कि रोगी के हाथ-पैर ठंडे होने लगते हैं और मालूम होता है कि अब शरीरान्त हो जायगा। ऐसी हालत में घबराना न चाहिए बल्कि उचित उपचार करना चाहिए। गरम पानी की बोतलों को तौलिए में लपेट कर छाती की बगल से कुछ ऊपर, दोनों टांगों के बीच में और दोनों पैरों के पास रखना चाहिए। गरम पानी

की बोतलें रबर की मिलती हैं। उन्हें तीन चौथाई ही भरना चाहिए और उनके मुंह अच्छी तरह बन्द होने चाहिए। रबर की जगह कांच की बोतलें भी काम में आती हैं। उन्हें पहले मामूली गरम पानी से धोकर तब उनमें गरम पानी भरना चाहिए, नहीं तो बोतलें टूट जाती हैं। इन बोतलों को भी अच्छी तरह बन्द करने और तौलिए से लपेटने के बाद काम में लाना चाहिए। बोतलों को शरीर के पास रख कर ऊपर से एक कंबल डाल देना चाहिए। अगर जरूरत हो तो बोतलों को बदलते रहना चाहिए, जिससे कि गर्मी बनी रहे। जब जरूरत न रह जाय तो बोतलों को हटा लेना चाहिए।

ऐसी हालत में काफी (लेकिन सहने लायक) गरम पानी का एनीमा भी बहुत चमत्कार दिखाता है। पर पानी के वापस आने और मल के निकलने के लिए बेड पैन इस्तेमाल करना चाहिए। या उन्हें किसी मोटे कपड़े या मामजामा पर आने देना चाहिए। रोगी को उठना न पड़े, यह देखना जरूरी है। साथ ही उसका शरीर न भीगे न गंदा हो। इस तरह का एनीमा दुहराया नहीं जाता।

दिल की जगह या सीने पर गरम पानी में कपड़ा निचोड़ कर उससे सेंक भी दी सकती है। दस मिनट की सेंक काफी है।

अगर रोगी बेहोश न हो तो गरम पानी में थोड़ा शहद घोल कर पिलाना चाहिए।

इन सभी उपायों को एक साथ करने की जरूरत नहीं है। जो आसानी से हो सके उसे ही शुरू करना चाहिए और फिर और बातों का प्रबन्ध भी करना चाहिए।

चिकित्सक के लिए जरूरी है कि उसे विषय का ज्ञान हो और साथ ही उसमें प्रेम, सहानुभूति और उत्साहित करने की योग्यता हो। उसका बर्ताव ही ऐसा हो कि उसके रोगी के कमरे में जाते ही वहां का वाता

वरण हल्का और उत्साहप्रद हो जाय। उसे बहक कर यह जल्दी जल्दी दुहराने की जरूरत नहीं कि 'तुम मात्र की मात में अच्छे हो जाओगे,' ब उसकी सभी हरकत से उत्साह टपकना चाहिए और तभी तो रोगी और उसके सम्बन्धी उत्साहित होंगे।

जो चिकित्सक परिस्थिति, रोगी की शक्ति इत्यादि देखकर उपचारों का प्रयोग करेंगे वे अवश्य ही सुयश के भाजन बनेंगे।

सच्ची तनदुरुस्ती

इस किताब में जो बातें और नियम बताए गए हैं उनका पालन करने से न सिर्फ रोग ही दूर होंगे बल्कि सच्ची तनदुरुस्ती हासिल होगी। हम में से बहुतों को तनदुरुस्ती का आनन्द नहीं मालूम है। जिन्हें मालूम है उन में बहुतों को पूरी तनदुरुस्ती नहीं, उसके सिर्फ कुछ थोड़े से हिस्से का, आनन्द मालूम है। इसी थोड़े आनन्द से वे फूले नहीं समाते। अगर उन्हें पूरे आनन्द का स्वाद मिल जाय तो वे इस संसार को ही स्वर्ग समझने लगें। सचमुच नरक और स्वर्ग अपने ही अन्दर है, और यह हम पर निर्भर है कि हम नरक का दुख झेलेंगे या स्वर्ग का आनन्द लेंगे।

हम लोगों को, पूरी-पूरी तनदुरुस्ती न रहने के कारण, शरीर और मन की पूरी शक्ति हासिल नहीं हो पाती। अगर तनदुरुस्ती सभी तरह ठीक हो जाय तो हमारा शरीर मजबूत, हट्टा-कट्टा और देखने में सुन्दर होगा और हमरा मन निर्मल, जगा हुआ, तेज और चौकन्ना रहेगा। इन दोनों से जो शक्ति अपने अन्दर आएगी उसका कहना ही क्या है। इस शक्ति को पा जाना हमारा आपका कर्त्तव्य है।

इस शक्ति को पाना असमव (ना-मुमकिन) नहीं है। जो थोड़ी देर के सुख के लिए प्रकृति के नियमों को तोड़ने में ही अपनी मर्दानगी मानते हैं उन्हें यह शक्ति नहीं मिल सकती, लेकिन जो सभी बातों को समझते हैं समझदारी से काम करते हैं और बराबर ही प्रकृति के नियमों का पालन करते हैं उन्हें यह शक्ति आसानी से मिल जायगी।

यह शरीर और मन की शक्ति कैसी है ? इसका एक निश्चित चित्र खींचना कठिन है, लेकिन अगर सिंह का शारीरिक बल, किसी अच्छे वैज्ञानिक की तेज बुद्धि और किसी तत्वदर्शी दार्शनिक का दृष्टिकोण सभी एक साथ मिला दिए जाये तो इस शक्ति का पता चल सकता है। यह

शक्ति सभी को मिल सकती है, पर मिलती उन्हीं को है जो प्रकृति के सा(थ) चलते हैं।

तनदुरुस्ती बनाए रखने के लिए हर रोज़ चिन्ता करने की ज़रूरत नहीं है। जो चिन्ता करेंगे उनकी तनदुरुस्ती न बनेगी, क्योंकि चिन्ता तो स्वयं ही एक रोग है। अपने जीवन के लिए कुछ नियम बना लेना, उनका दृढ़ता के साथ पालन करना और फिर तनदुरुस्ती बनाने की सारी बातों को भुला देना—बस, यही तनदुरुस्ती हासिल करने का सार उपाय है। अगर आप अच्छी चीज़ें नियम के साथ खायेंगे, हर [illegible] कसरत करेंगे और ज़रूरी आराम लेंगे तो शरीर के अन्दर का सब ज़रूर अच्छा होगा, नाड़ी-बल ठीक रहेगा और शरीर के सभी कल-पुर्ज़े अच्छी तरह काम करेंगे। इसी से तनदुरुस्ती ठीक रहेगी। यही चाहिए, और इसमें हर रोज़ चिन्ता करने की कुछ ज़रूरत नहीं।

कुछ लोग कहेंगे कि इस किताब में खाने-पीने के जो कठिन नियम बताए गए हैं उनका पालन करने से जीवन शुष्क हो जायगा। अगर अचार, पकौड़ी, मिठाई, पकवान, चाय, बिस्कुट, डबल रोटी इत्यादि का इस्तेमाल न किया तो ऐसे जीने का मज़ा ही क्या। जो ऐसा कहते हैं उनकी कठिनाई समझी जा सकती है। इतने दिनों से इन चीज़ों का व्यवहार होता आ रहा है और अपने चारों तरफ़ इतने लोग इन चीज़ों को खाते पीते हैं कि हमारी समझ में ही यह नहीं आता कि यह चीज़ें खराब है। फिर हमें बार बार बीमार होने दवा पीकर थोड़े दिनों के लिये बीमारियों को दबा देने और अगर दवाओं ने असर न किया और रोगी मर गया तो भाग्य को बुरा कहने की आदतें इस तरह पड़ गई हैं कि बीमार होना और कुसमय में ही मर जाना हमें अस्वाभाविक नहीं लगता। लेकिन हमें तो यह देखना चाहिए कि क्या पशु पक्षी भी उसी तरह बीमार होते और मरते हैं, जिस तरह आदमी। आदमी सब जीवधारियों में श्रेष्ठ है। उसे तो औरों से ज़्यादा अच्छा रहना चाहिए था, लेकिन इस बात में वह सब से खराब और कमज़ोर है।

नियमों के सम्बन्ध में यह जरूर है कि रोग दूर करने की अवधि में पूरे नियम के साथ रहना चाहिए। रोग के दूर हो जाने पर जब-कभी थोड़ा-बहुत असंयम निभ सकता है। पर आदर्श तो यही है—सदैव ही नियम-पूर्वक रहना। आशा है कि धीरे-धीरे मनुष्य अपने को सुधार लगा और अपने जीवन को फिर से दिव्य और स्वर्गीय बनावेगा।

रोगियों की देखभाल

कुछ ऐसी बातें हैं, जैसे रोगी के कमरे की सफ़ाई, रोगी के कपड़े बदलना, रोगी को पानी पिलाना इत्यादि, जो घर वालों और चिकित्सक दोनों ही को जानना चाहिए। इस सम्बन्ध की मामूली बातें बताई जा रही हैं। तीव्र रोग के रोगियों की, जो खुद अपना काम नहीं कर सकते, अच्छी सेवा कर सकने के लिए इन बातों पर ध्यान देना चाहिए —

(१) रोगी का कमरा अच्छा, साफ़ और हवादार हो। उसमें न बहुत ज्यादा गरमी मालूम हो और न बहुत ठंड।

(२) रोगी का बिस्तर साफ़ और आराम देने वाला हो। बिस्तर के ऊपर की चादर हर रोज़ बदली जाय। बिस्तर बदलने के लिए कमज़ोर रोगियों को उठाना न चाहिये। चादर को लम्बाई से आधा लपेट कर खाट पर लम्बो-लम्बी रखिए और रोगी को खाट के दूसरे किनारे पर कर के लिपटी चादर को खोलिए और पुरानी चादर को सरकाइए। फिर धीरे से रोगी को इधर लाकर चादर को उस किनारे तक ले जाइए।

(३) जिस तरह चिकित्सक ने उपचार बताए हैं उसी तरह ठीक समय पर किए जायँ।

(४) निश्चित समय पर तीव्र रोग के रोगी का शरीर स्पंज करके उसके कपड़े बदल दिये जायँ और बालों में कंघा करा दिया जाय। रोगी के मुँह, दाँत, नाक, आँख—सारे चेहरे—की सफ़ाई हर रोज़ कराना ज़रूरी होता है। शरीर का स्पंज किया जाना भी बहुत रोगों में ज़रूरी होता है।

(५) रोगी को ठीक समय पर पथ्य दिया जाय।

(६) रोगी के सम्बन्ध में जिन बातों को चिकित्सक से कहना है
ो अच्छी तरह नोट कर लिया जाय और उन्हें ठीक-ठीक बताया
। उनके बारे में जैसा चिकित्सक कहे वैसा ही किया जाय।
(७) फैलने वाले या छूत के रोगों के बारे में विशेष ध्यान
ा जाय, जिससे कि और लोग बीमार न हों।
(८) कोई ऐसा काम न किया जाय, जिससे रोगी बिना कारण
या बेचैन हो। जहां तक हो सके रोगी को खुश रक्खा जाय।
(९) रोगी के कमरे में या पास ही हर समय एक स्त्री या पुरुष
-भालने के लिए तैयार रहे।
रोगी की अच्छी देख-भाल और सेवा के लिए, अगर हो सके, तो
दी हुई चीजें हर एक घर में रहें —
(१) अच्छा थर्मामीटर, जिससे बुखार देखा जा सके।
(२) एक नापने वाला गिलास, जिसमें नाप के निशान लगे हों।
स इत्यादि पिलाने के काम आता है।
(३) एक खिलाने वाला प्याला जो कठिन रोगों के रोगियों के
ने-पिलाने के काम आता है। और प्याले, प्लेट और चम्मच,

(४) दो तीन साफ तौलिए।
(५) रोगी के लिए पाखाने और पेशाब करने के बर्तन। ऐसे
मी जो मुंह हाथ धोने के काम आवें।
(६) साबुन।
(७) टब।
(८) एनीमा का यन्त्र।
(९) अच्छी मिट्टी।
(१०) सब तरह की पट्टियों के लिए अलग अलग दो-तीन जोड़
के टुकड़े। साथ ही ऊपर लपेटन के लिए गरम कपड़ों के टुकड़े,
।

रोगी का कमरा—

रोगी को अच्छी हालत में रखने के लिए और रोग को जल्द से जल्द दूर कर सकने के लिए यह जरूरी है कि रोगी का कमरा, जहाँ तक हो सके, अच्छा से अच्छा हो। अच्छे घरों में रोगियों के रहने के लिये एक खास कमरा बहुत सोच विचार कर बनाया जाता है। रोगी के लिए अच्छे कमरे की पहचान यह है :—

(१) कमरा काफी बड़ा हो। अगर हो सके तो उससे लगा हुआ एक छोटा कमरा हो, जिसमें दूध, फल, रोगी के पहनने के कपड़े इत्यादि रखे जांय। एक ही कमरे में रोगी के चारों तरफ इन चीजों के रखने से कमरे की हवा ठीक नहीं रहती। अगर कमरा भरा-भरा है तो रोगी खुश भी नहीं रहता।

(२) कमरा किसी गंदी गली या सड़क से बिल्कुल लगा न हो और न नौकरों के कमरे के पास हो।

(३) कमरा बिलकुल सूखा हो और उसमें न तो सील हो और न सील की बू आती हो।

(४) कमरे में काफी खिड़कियां हों जिनसे हवा और रोशनी आ सके। लेकिन ऐसा भी न हो कि कमरे में सारे दिन धूप बनी रहे या अगर आंधी उठे तो हवा का झोंका रोका न जा सके।

(५) जहां तक हो सके और लोगों के रहने के घरों से रोगी के रहने का कमरा बिलकुल अलग हो।

(६) अगर कोई ऐसा कमरा चुना जाय कि जिसमें बहुत से लोग रहते हों या जिसमें कोई न रहता हो तो कमरे को बिलकुल साफ करके कुछ देर तक दरवाजे और खिड़कियों को खोल रखना चाहिए, जिससे ताजी हवा आकर कमरे को रोगी के रहने लायक बना दे।

(७) कमरे में आग जलाने का प्रबन्ध रहे, जिससे बरसात या जाड़ों में इस तरह आग जलाई जा सके कि धुंआ बिलकुल बाहर निकल जाय।

[८] कमरे से पानी निकलने का रास्ता हो।

कमरे की सफ़ाई—

कमरे की सफ़ाई पर बहुत ध्यान देना चाहिए। रोगी के उसमें आने से पहले उसकी छत, दीवारें और कोने-कोने को साफ कर लेना चाहिए। फ़र्श को धोकर सुखा लेना चाहिए। हर रोज़ यह ख्याल रखना चाहिए कि कमरा अच्छी तरह साफ कर लिया गया है। उसमें जो भी चीजें रखी हों उनको हर रोज़ झाड़ना-पोंछना चाहिए। लेकिन इस तरह झाड़ना न चाहिए कि गर्द रोगी पर पड़े। रोगी के ओढ़ने, बिछाने और पहनने के कपड़ों को भी हर रोज़ बदलना और धोकर या योंही धूप में सुखाना चाहिए। बहुत अच्छा हो अगर रोगी की चारपाई के पास एक तिपाई या मेज़ पर एक गुलदस्ते में खुशनुमा फूल रखे जायें।

कमरे का सामान—

ऊपर बताया गया है कि रोगी के कमरे में बहुत चीजों का रखना अच्छा नहीं है रोगी की चारपाई, दो छोटी-छोटी मेजें, दो कुर्सियां या तिपाई, एक मेज़ा पर सुराही या और बरतन में पीने का पानी और एक गिलास, एक किनार बाल्टी में साफ पानी, जिसका मुंह बराबर ढका रहे, एक तौलिया और किसी जगह ठिकाने से रखा हुआ फूलों का एक गुलदस्ता—बस, इतनी चीजें काफी हैं।

अक्सर लोग रोगी के कमरे में बहुत सी तसवीरें लगा रखते हैं। यह अच्छा नहीं है, क्यों कि उन पर धूल जम जाती है। अगर कोई तसवीर हो तो उसे हर रोज़ पोंछना चाहिए।

रोगी की चारपाई को कमरे के बीच में रखना अच्छा है। ज़रूरत पड़ने पर उसे उठा कर किसी और जगह रख सकते हैं, लेकिन कोशिश यह होनी चाहिए कि चारपाई को उठाने की ज़रूरत ही न पड़े। अगर हवा का तेज़ झोंका आता हो तो खिड़की या दरवाज़ा के सामने उतनी देर के लिए पर्दा डाल सकते हैं।

चारपाई अच्छी, कसी-तनी हो, और न बहुत ऊँची न नीची हो—इतनी चौड़ी भी न हो कि देखने-भालने वाला चारपाई के एक तरफ से दूसरे तरफ न पहुँच सके। रोगी के लिए सब से अच्छी चारपाई लोहे की समझी जाती है। जो लगभग साढ़े तीन फुट चौड़ी होती है और तारों के तारों से बुनी होती है।

अगर रोगी बहुत कमजोर है तो उसके पाखाना पेशाब के लिए बर्तन भी उसी कमरे में रखे जाय। जब जब ये बर्तन काम में लाए जायें इन्हें अच्छी तरह साफ करा लेना चाहिए। वैसे भी सुबह-शाम इनकी सफाई जरूरी है। इसी तरह थूकने या बलगम फेंकने के बरतन को भी साफ रखना चाहिए।

यह कहा जा चुका है कि कुछ जरूरी चीजों को रखने के लिए रोगी के कमरे से लगा हुआ एक दूसरा कमरा होना चाहिए। अगर दूसरा बिलकुल लगा हुआ न हो तो पास के किसी दूसरे कमरे का काम में ला सकते हैं।

रोगी जब अच्छा होने लगता है तो उसका भोजन कुछ और हो जाता है। इस अवस्था में सावधान रहना चाहिए। बहुत से रोगी कुपथ्य (बदपरहेजी) करते हैं, और जो न खाना चाहिए उसे भी खा बैठते हैं। ऐसा करने से रोग फिर हो जाता है। रोगी को कुपथ्य से बचाना चाहिए।

खिलाने के बर्तन की सफाई पर भी ध्यान देना जरूरी है। खिलाने के पहले और बाद बर्तन का अच्छी तरह धो-मांज लेना चाहिए।

आराम—

मामूली रोग की हालत में भी रोगी को अच्छी तरह आराम मिलना चाहिए। आराम की हालत में ही शरीर की भीतरी मरम्मत होती है। रोगी का कमरा, देखने-भालने वालों का बर्ताव, सभी कुछ ऐसा हो कि रोगी को पूरा आराम मिले।

अगर रोगी सोना चाहे तो उसे सोने देना चाहिए। अगर रोगी सो रहा है और उपचार का समय हो गया हो तो उसके लिए भी रोगी को न जगाओ। सोने से जो आराम मिलता है वह बहुत अच्छा उपचार है।

रोगी के कमरे के पास या कमरे में शोरगुल न होना चाहिए। उससे भी रोगी के आराम में खलल पड़ता है। रोगी के कमरे में एक ही साथ बहुत लोगों को न रहना चाहिए। अक्सर लोग वहीं ताश या शतरंज खेलते हैं। यह बुरा है।

रोगी को देखने के लिए बहुत लोग आ जाते हैं, और जो आता है वह रोगी से ही उसका हाल पूछता है। कहने की जरूरत नहीं कि इससे रोगी बहुत थक जाता है। चाहिए तो यह है कि रोगी के कमरे में बहुत कम लोगों को आने दिया जाय। अगर रोग ऐसा है जो छूत से फैलता है तो चिकित्सक और देखने-भालने वाले के सिवा किसी को कमरे में न आना चाहिए।

कुछ रोगी बहुत चिड़चिड़े हो जाते हैं। उनके साथ बहुत प्रेम से बर्ताव करने की जरूरत है।

* * * *

रोगियों की देख-भाल के सम्बन्ध में मामूली तौर पर सभी जरूरी बातें बता दी गईं। इतना और कहना है कि छूत वाले रोग में ज्यादा सावधान होने की जरूरत रहती है। छूत के रोग फैलते हैं, और चिन्ता यह रहती है कि कहीं देखने-भालने वाला या और लोग भी बीमार न हो जायँ।

रोगों से बचने का सब से बढ़िया उपाय यही है कि शरीर में गन्दगी हो ही नहीं। अगर शरीर की भीतरी या बाहरी हालत बिलकुल अच्छी है तो छूत के रोगों का भी असर नहीं या कम होता है, लेकिन यह बहुत

कठिन है कि शरीर बिलकुल अच्छी हालत में रहे। इसीलिए घर में अभी कोई छूत के रोग से बीमार हो तो औरों को सावधान हो जाना चाहिए। दो-तीन दिन के फलाहार और एनीमा प्रथम और फिर नियमित भोजन के साथ-साथ कमर-नहान से छूत की संभावना बहुत कम हो जाती है। कुछ न हो तो मामूली रोटी या चावल और भाजी या दूध पर रहकर पांच सात दिन एनीमा लेना चाहिए।

प्राकृतिक चिकित्सा में औषधि का स्थान

बहुत समय तक मैं यही समझता था कि बिना औषधि-प्रयोग के रोग नहीं जा सकता। यही धारणा साधारण तौर पर प्रायः सभी के हृदय में है। मेरी अपनी आशंकाएं प्रारम्भ से ही चित्त को चंचल करने लगीं। पहले मैं समझता था कि आयुर्वेदिक चिकित्सा ही सब श्रेष्ठ है। उस के लिए मेरी श्रद्धा प्रबल थी। लेकिन कई बार मैंने देखा कि रोग के भगाने में अनुभवी और लब्ध प्रतिष्ठ वैद्य सफल न हुए पर एलोपैथिक डाक्टर सफल हो गए। कुछ रोगों में यह अनुभव हुआ कि एलोपैथिक चिकित्सक सफल न हो सके पर होमियोपैथ महाशय सफल हो गए। कई बार यह भी देखा कि जहां और कोई सफल न हुआ, हकीम साहब बाजी मार ले गये। मैं सचमुच बहुत उधेड़बुन में रहता था। अगर परिवार का कोई बीमार होता तो पहली समस्या चिकित्सा प्रणाली के चुनने के ही सम्बन्ध में खड़ी हो जाती।

अब मैं अच्छी तरह समझ सकता हूँ कि उन दिनों मेरी कठिनाई कैसी रही होगी। एक तो रोग दूर करने के लिए औषधि प्रयोग को अनिवार्य रूप से आवश्यक समझना, दूसरे किसी के बीमार होने पर जल्दी से यह फैसला न कर सकना कि किस चिकित्सा पद्धति को अपनाऊं। वास्तव में यह एक बड़ी उलझन की बात हो जाती थी। बहुतों के सामने ऐसी ही समस्या रहती है, पर बहुत से ऐसे भी हैं कि उनके सामने कोई समस्या नहीं रहती। वे लोग किसी एक पद्धति के अन्ध भक्त बन जाते हैं या एक के बाद दूसरी पद्धति को आजमाते जाते हैं।

मैं बचपन से ही चिकित्सा करने का प्रेमी था। अपने पिता जी के साथ देखा, प्लेग के अवसरों पर पेटेंट दवाइयां बांटता बांटता मैं वैद्यक अध्ययन करने लगा। मैंने कुछ नुस्खे सीखे दवाइयां कूटीं और कुछ रोगियों

को अच्छा किया। मेरा उत्साह बढ़ा, कुछ दिनों के बाद मैं होमियोपैथी की तरफ लिया और अन्त में बायोकेमिक प्रणाली (शुस्लर साहब की १२ दवाइयों की प्रणाली) का अभ्यास=कुशल डाक्टर बन गया। मैंने बहुतों को कठिन रोगोंसे मुक्त किया और समझने लगा कि यही दवाएं परमोपयोगी हैं।

कई साल पहले मैं एक कठिन रोग से पीड़ित हुआ। बारी-बारी से सभी प्रणालियां आजमाई गईं। कोई भी फलवती न हुई। मेरी बायोकेमिक भी असफल ही रही। अन्त में ६–७ महीने तक मेरे कठिन यातना भोगने के बाद प्राकृतिक चिकित्सा आरम्भ हुई लगभग दो साल में मैं पूर्ण स्वस्थ हो सका। प्राकृतिक चिकित्सा आरम्भ करने बाद सज्जन तो दूसरे थे पर कोई तीन हफ्ते के बाद मैं कई कारणों से अपना चिकित्सक आप ही बना। एक-डेढ़ महीने में मैं चलने-फिरने और सभी काम करने लग गया, पर मेरा बांया हाथ बेकार ही रहा। दो साल के अन्दर मैंने प्राकृतिक चिकित्सा की कई पुस्तकें पढ़ डालीं, अपने और परिवार वालों के ऊपर प्रायः सभी प्रयोग किए और स्वयं पूर्ण स्वस्थ होने के पहले न केवल बुखार, अपच इत्यादि के कई रोगियों को अच्छा किया बल्कि कुछ जीर्ण रोगों के रोगियों को भी स्वास्थ्य-लाभ कराने में सहायक हुआ। मैं स्वयं बिना पूर्ण स्वस्थ हुए दूसरों की चिकित्सा न करना चाहता था, पर लोगों ने मुझे बार-बार कर हकीम बनाया। प्राकृतिक चिकित्सक की हैसियत से मुझे एक और रोचक अनुभव हुआ। पहले तो मैं यह समझता था कि रोग को दूर करने के लिए औषधि प्रयोग नितान्त आवश्यक है अब मैं यह जान गया और समझने लगा कि रोग को दूर करने के लिए औषध न केवल अनावश्यक है बल्कि कभी कभी हानिकारक भी है।

वस्तुतः यह एक रोमांचकारी अनुभव था—बिना औषधि-प्रयोग के ही रोग दूर कर सकना। औषधि वाली प्रणालियों के अनुसार पहले रोग को पहचानना 'डायग्नोस' (Diagnose) करना और उसका

नाम धरना होता है और तब विविध रोगों के लिए बताई गई विविध औषधियों का प्रयोग करना होता है। अगर औषधि लग गई और रोग दूर हुआ तो कहा जाता है कि रोग ठीक-ठीक पहचान लिया गया था, 'डायगनोसिस' ठीक हुआ था, पर यदि रोग न गया तो कहा जाता है कि रोग पहचाना न जा सका, डायगनोसिस में भूल हुई। पाठकों को अच्छी तरह मालूम होगा कि इस 'डायगनोसिस' (Diagnosis) के चक्कर में बहुत से विद्वान् डाक्टर और बहुत से अभागे रोगी रहते हैं। एक से एक योग्य चिकित्सक लगते हैं पर अनेकों बीमारियों में 'डायगनोसिस' का ही बखेड़ा लगा रहता है। जब मैंने प्राकृतिक चिकित्सा का रहस्य समझा तो देखा कि इसमें 'डायगनोसिस' की वैसी उलझन नहीं है, इसमें रोग के नाम रखने का मूल्य नहीं है और न खास-खास रोग की खास-खास दवाइयों पर ज़ोर है। इसमें तो *मुख्य सिद्धान्त है– सब रोगों का एकमात्र कारण शरीर* में विजातीय द्रव्य [विकार] का होना है, इसलिए सब रोगों की एकमात्र चिकित्सा उस विजातीय द्रव्य को दूर करना है। कष्ट देने वाले लक्षणों को दूर करने के लिए कई प्रयोगों का सहारा लिया जा सकता है, पर मुख्य चिकित्सा सब रोगों में एक ही रहती है।

उदाहरण के लिए, ज्वर की चिकित्सा लीजिये। ज्वर को दूर करने के लिए प्राकृतिक चिकित्सक यह न सोचेगा कि यह साधारण ज्वर है या पैत्तिक ज्वर है या और कोई ज्वर है। वह समझ जायगा कि प्रकृति से सहारा पाकर शरीर अपने अन्दर के विकार निकालने में लग गया है। इसलिए वह निश्चय करेगा कि प्रकृति से सहयोग और शरीर की सहायता करो। आगे चलकर ज्वर चाहे जो भी हो जाय आरम्भ में तो सब ज्वरों के प्रायः एक से ही ऊपरी लक्षण होते हैं। प्राकृतिक चिकित्सक बिना समय खोये अपना चिकित्सा-क्रम ठीक कर लेगा। उपवास और आवश्यकतानुसार एनीमा-प्रयोग, सारे शरीर का स्पंज, पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी या किसी विशेष स्नान के उपचारों को काम में

लावेगा। उपवास और इन सीधे-सादे उपचारों से ज्वर किस तरह जल्दी दूर होता है, ज्वर में किसी तरह का उपद्रव नहीं होता, ज्वर जाने के बाद रोगी कितना शीघ्र पहले से अधिक स्वस्थ हो जाता है, ये बातें वही जानता है जिसने प्राकृतिक उपचारों से रोग को भगाया है। कुछ रोगों में इनके चमत्कार को देखकर मेरी आँखें खुल गईं। पहले तो ज्वर का नाम सुनते ही मैं उसके नामकरण की चेष्टा में लगता था और तब दवाइयों को निश्चित करने का प्रयास करता था, पर अब ऐसी कोई कठिनाई न रह गई। अब तो औषधि प्रयोग मूर्खता मालूम होने लगी, क्योंकि जब बिना औषधि के ही रोग चला जाता है तो औषधि के लिए क्यों चिंता की जाय।

प्राकृतिक-चिकित्सा-पद्धति के अनुभव से मैंने ये बातें सीखीं—(१) रोग प्राकृतिक नियमों के उल्लंघन से ही होता है। (२) रोग शरीर को विकार मुक्त करता है, इसलिए वह शत्रु नहीं मित्र है। अगर प्राकृतिक नियमों का पालन किया जाय तो रोग हो ही नहीं, पर अगर रोग हो जाय तो उससे लाभ उठाते हुए शरीर को अच्छा बना लेना चाहिए। (३) यह शरीर ऐसा बना है कि वह अपनी सफाई, मरम्मत, अपने अन्दर का रोग भगाना इत्यादि बातें अपने आप ही कर सकता है।

वास्तव में प्राकृतिक-चिकित्सा-पद्धति की यह बहुमूल्य देन है—यह समझ कि अपने आपको ठीक कर लेने में शरीर समर्थ है। इस ज्ञान के महत्व को वे ही जानते हैं, जिन्होंने बिना औषध प्रयोग के सिर्फ पंच तत्त्वों—मिट्टी, आग या धूप के प्रभाव, जल इत्यादि—के सहारे रोगों को भगाया है।

फिर भी कुछ दिनों के बाद मेरे मन में यह प्रश्न उठा कि औषधियों के संबंध में इतने आविष्कार, जो चिकित्सकों ने किये और इतना ज्ञान, जो उन्होंने प्राप्त किया, क्या वे सभी व्यर्थ हैं? पढ़ने और अपने वर्षों के अन्वेषणों से औषधि के सम्बन्ध में मैंने जो सम्मतियाँ समझीं।

एक सम्मति के अनुसार औषधि-प्रयोग की बात सोचना भी प्राकृतिक सिद्धान्तों के विपरीत है। दूसरी सम्मति है कि जो औषधि विष की बनी नहीं है और लक्षणों को नहीं दबाती बल्कि शरीर को अच्छी तरह विकृत करती है, उसका प्रयोग प्राकृतिक चिकित्सा के अन्तर्गत है, पर उसका प्रयोग तभी किया जाय जब कि पानी-मिट्टी का प्रयोग काम न कर रहा हो।

इस दूसरी सम्मति के मूल्य को समझना चाहिए। तीव्र (नये) रोगों में जीवन शक्ति इतनी प्रबल रहती है कि निरे प्राकृतिक उपचारों से जीवन शक्ति की प्रतिक्रिया स्वास्थ्य के रूप में हो जाती है। तीव्र रोग होते भी उसी को हैं, जिसकी जीवन शक्ति साधारणत: अच्छी है। इस शक्ति के प्रभाव से शरीर अपने विकारों को रोग के रूप में बाहर निकाल देता है। जिसकी जीवन-शक्ति क्षीण पड़ जाती है उसको दमा, गठिया इत्यादि जीर्ण रोग [राजरोग] होते हैं। ये रोग भी आरम्भ में निरे प्राकृतिक उपचारों के सहारे वश में किये जाते हैं। पर अगर जीवन शक्ति का बहुत ह्रास हो गया है और रोग बहुत जीर्ण है तो ऐसी औषधियों का प्रयोग, जो विषाक्त नहीं हैं और प्रतिक्रिया उत्पन्न करने में सहायक हैं, प्राकृतिक दृष्टि से सर्वथा उचित हैं। ऐसी औषधियाँ उचित पथ्य और विश्राम इत्यादि के नियमों के साथ बहुत हितकर सिद्ध होती हैं। जहाँ प्राकृतिक उपचारों से समुचित प्रतिक्रिया न होती हो वहाँ औषधियों का प्रयोग आवश्यक ही नहीं प्रशस्त है।

फादर नीप (Father Kniepp) एक बड़े यशस्वी प्राकृतिक चिकित्सक हो गये हैं। वे ऐसी जड़ी-बूटियों के प्रयोग को, जो विषैली नहीं हैं, प्राकृतिक चिकित्सा का अंग समझते थे। डाक्टर हेनरी लिंडलहार, एम॰ डी॰, (H Lindehar) अमेरिका के एक बड़े ही विख्यात और प्रतिष्ठित प्राकृतिक चिकित्सक हुए हैं। वे न केवल जड़ी-बूटियों का बल्कि होमियोपैथिक दवाओं को भी प्राकृतिक बताते हैं। कुछ होमियो-पैथिक दवाइयाँ विषैली होती हैं सही, पर लिंडलहार के अनुसार उनके

दुष्कर्मों के परिणाम से बचना चाहते हैं। जो अति-भोजन करता है वह औषधि का सहारा लेता है और जो औषधियों में विश्वास रखता है वह अति भोजन करने से नहीं हिचकता। जो औषधि का सहारा न लेते हुए स्वस्थ रहना चाहते हैं और रहते हैं वे चरित्रवान् हैं और चरित्रवान ही बिना औषधि के यथार्थ रूप स्वस्थ रह सकते हैं।

प्राकृतिक उपचारों से भी बुराई हो सकती है। ज्वर को बहुत जल्दी (करने के लिए बार-बार ठंडे पानी में कटि-स्नान इसका एक उदा(हरण) है। ज्वर शरीर के अन्दर के विकारों को जलाने के लिए होता है। (चि)कित्सक का कर्तव्य है कि वह ज्वर के ताप को इतना शीघ्र न दूर कर (दे) कि विकार जलने न पावे ऊपरी लक्षण ही दब जायें जैसा कि अप्राकृ(ति)क चिकित्सा में होता है। फिर जो अपने खान-पान के ढंग को ठीक (न)हीं करते और हर रोज मिट्टी की पट्टी का प्रयोग हैं या कटि-स्नान का (स)हारा लेते हैं वे प्राकृतिक उपचारों को करते हुए भी अप्राकृतिक करते हैं। (उन्हों)ने दवा न खाई, 'बाथ' लिया। ऐसी बुराई से बचना चाहिए।

अन्त में मैं कहूँगा कि भले ही प्राकृतिक चिकित्सा में औषधियों का (स्थ)ान हो लेकिन प्राकृतिक जीवन में उनका स्थान नहीं है। अगर (म)नुष्य प्राकृतिक नियमों के अनुसार रहता है, अगर उसका खान-पान ठीक है, अगर वह उचित मात्रा में व्यायाम और पर्याप्त विश्राम करता है और इन सब से अधिक, अगर उसके भाव और विचार ठीक हैं—अगर वह अपने और दूसरों को 'ईश्वर अंश जीव अविनाशी' समझता है और उसी के अनुसार सभी काम करता है तो उसे न रोग सतायेगा और न औषधि की आवश्यकता होगी। इसलिए प्राकृतिक जीवन को अपनाइये, सिर्फ प्राकृतिक चिकित्सा की दुहाई न दीजिए।

—

संक्षिप्त इतिहास*

प्राचीन काल में एक समय ऐसा जरूर रहा होगा जब कि आज की तरह तरह-तरह की औषधियों में से एक भी न रही होगी, फिर भी आदमी सुख से जीते होंगे। भारत में शुरू से ही रमणीय तीर्थ स्थानों में घूमना नदी-तट पर कुछ समय के लिए रहना, व्रत रखना, कम भोजन करना, सप्ताह में एक बार नमक न खाना, सूर्य, अग्नि, जल आदि की पूजा करना इत्यादि बातें स्वास्थ्य प्रद होने के कारण धर्म का अंग मानी गई हैं। इन बातों का प्रभाव भी अच्छा होता था। भारत के पुराने समय में अन्य देशों में भी मनुष्य प्राकृतिक शक्तियों से ही विशेष सहायता लेकर हृष्ट पुष्ट रहते होंगे। उस समय आज के बनावटीपन से दूर रह कर और प्राकृतिक जीवन के कारण मनुष्य को बीमार होने का अवसर ही न होता होगा। अगर किसी प्राकृतिक नियम के तोड़ने से कोई कभी अस्वस्थ हो जाता होगा तो उपवास से और प्राकृतिक पदार्थों का प्रयोग कर या जड़ी बूटी को खाकर वह फिर स्वस्थ हो जाता होगा। इस तरह अनुमान किया जाता है कि उस समय रोग से मुक्त होने के लिए मनुष्य के पास प्राकृतिक उपायों का ही एक-मात्र सहारा रहा होगा।

धीरे धीरे नगर जीवन और बनावटी सभ्यता की वृद्धि के साथ मनुष्यों के रहन-सहन के ढंग बदलने लगे और पहले मामूली जड़ी बूटियाँ व्यवहार में लाई जाकर फिर उनसे तरह तरह की औषधियां आविष्कृत होने लगीं। संसार में सब से पहले औषधियों का पता लगाने का आरम्भ भारत में ही आविष्कार हुआ। आयुर्वेदीय औषधियों का प्रचार धार्मिक उपचारों के साथ साथ होना आरम्भ हो गया। इस बात का

---

*यह अध्याय 'जीवन-सखा' पत्र (बहुत लेखक द्वारा सम्पादित) में प्रकाशित श्रीयुत वृन्दनन्दन प्रसाद के लेखों के आधार पर है।

प्रमाण इंगलैंड के एक बड़े डाक्टर और लेखक वाइज (wise) की
०८ में प्रकाशित पुस्तक History of medicine among Asiatics
(एशियाइयों में औषधि का इतिहास') से मिलता है। अंगरेजी के
। विद्वान् लेखकों ने यह भी लिखा है कि रोम में औषधि शास्त्र के
रक किसी बात का प्रमाण देने के लिए भारतीय औषधि-शास्त्र का
हरण देते थे। ईस्वी सन् १ में औषधि-शास्त्र के प्रकांड पंडित चरक
से संहिता का रूप दिया और सन् २ में सुश्रुत रचा गया। सुश्रुत
चीरा लगाने के सौ यंत्रों का परिचय दिया हुआ है। उनमें से कुछ
ऐसे भी थे, जो बाल को भी दो बराबर टुकड़ों में विभाजित कर
ते थे। भारतवर्ष से इस विद्या को ले जाकर बौद्ध भिक्षुओं ने
का प्रचार चीन देश में किया और भारत से ही यह मिस्र (ईजिप्ट)
को ले जाई गई जहाँ से फिर इसका प्रचार यूनान (ग्रीस) में
।। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस शास्त्र के आविष्कार और सारे
र में प्रचार का श्रेय भारत को ही है, पर साथ ही साथ यह भी न
ना चाहिए कि यदि औषधियों का प्रयोग ठीक नहीं है तो इसका
रत्व भी भारत के ही सिर है।

ईसा के जन्म के चार सौ वर्ष पहले ग्रीस में पेरिक्लीज के समय में
निक, वैज्ञानिक, साहित्यिक और कलाकारों के साथ साथ औषधि
त्र में हिपोक्रेटस (Hippocrates) का नाम पश्चिमीय संसार में
द हो रहा था। उनकी लिखी पुस्तकों से प्रमाणित होता है कि उसके
य तक २६५ औषधियों का आविष्कार हो चुका था, लेकिन ये औष
। मुख्यतः कुछ नये रोगों में ही प्रयोग की जाती थीं। हिपोक्रेटस उन
धियों के गुण में विश्वास करता था, पर उसकी धारणा थी कि
त में ही रोग-निवारण करने की शक्ति है और यह भी कि नये रोग
cute disease) स्वयं ही शरीर में एक प्राकृतिक तरीके से उभाड़
urative crisis) लाकर शरीर के प्राकृतिक मार्गों में से एक या
क के द्वारा विकारों को बाहर फेंकता है।

हिप्पोक्रेटस के अनुसार चिकित्सक का कर्तव्य है कि वह उन तब्दीलियों का अनुमान पहले ही कर ले, जिससे वह उस प्राकृतिक सराक को सफलीभूत होने में सहायता दे, रोकने में नहीं, जिससे कि रोगी चिकित्सक की सहायता से रोग के ऊपर विजय प्राप्त कर सके। जब विकार शरीर से होकर निकलने की चेष्टा करता था तो उस उभार के समय की प्रतीक्षा व्यग्रतापूर्वक की जाती थी और हिप्पोक्रेटस की प्रथा में यह मुख्य बात थी कि उसके अनुयायी चिकित्सक उस उभार के समय का भविष्यज्ञान ठीक-ठीक कर लेते थे। इस तरह वे पहले से ही सतर्क हो जाते थे कि किस प्रकार प्राकृतिक शक्तियों का प्रयोग कर वे रोगी के विकारों को दूर करने में सहायता पहुँचा सकेंगे। रोग के पथ्य न उन निःचयों में अच्छी न थी और न वे शरीर रचना का ही समुचित ज्ञान रखते थे, जिससे यह पता चलता कि किस स्थान में कौन सा विकार इकट्ठा हो गया है। लेकिन यद्यपि हिप्पोक्रेटस और उसके शिष्य रोग के लक्षण और पहचान और शरीर की रचना अच्छी तरह नहीं जानते थे तो भी उन्हें रोगों को अच्छा करने में कोई असफलता नहीं होती थी। आजकल के उच्च उपाधि प्राप्त डाक्टरों में, जो रोगों के नाम, लक्षण और शरीर रचना के अच्छे ज्ञाता समझे जाते हैं, कितने ऐसे हैं जो सब रोगों का अचूक इलाज कर पाते हैं? इंग्लैंड की एलोपैथी के एक सुविख्यात डाक्टर सर विलियम ओस्लर (Sir William Osler) का कहना है, We put drugs of which we know little into bodies of which we know less अर्थात् 'हम लोग औषधि, जिसके बारे में हम कम ज्ञान रखते हैं, शरीर में, जिसके बारे में हम और भी कम ज्ञान रखते हैं, डालते हैं।' अमरीका के डाक्टर क्लार्क (Clark) का कहना है कि चिकित्सकों ने रोगियों को अपने दैवान के प्रयास में उलटा विपरीत बहुत हानि पहुँचाई है। उन्होंने ऐसे एम रोगियों के प्राण लिये, जो यदि प्रकृति के भरोसे छोड़ दिये जाते तो अवश्य आरोग्य हो जाते। जिन्हें हम औषधि समझते हैं

वास्तव में विष हैं और उनकी प्रत्येक मात्रा से रोगी की शक्ति का ह्रास होता है। डाक्टर होम्स (Holmes) का कहना है कि यदि सब औषधियाँ समुद्र में फेंक दी जातीं तो मनुष्य जाति का बड़ा उपकार होता डाक्टर अबरानकी (Oberanki) के विचार में चिकित्सकों की संख्या घटने के साथ ही साथ रोगों की संख्या भी बढ़ती जाती है। हिपाक्रेटस और उसके शिष्य चिकित्सा के समय भोजन देने में भी विशेष ध्यान रखते थे और विविध रोगों में न्यूनाधिक हेर फेर कर के भोजन देते थे। इस तरह रोग-निवारण में प्राकृतिक उपचारों का प्रधानता देकर औषधि को वे दूसरा स्थान देते थे और जीर्ण रोगों में सम्भवत कुछ भी औषधि न देकर केवल नियमित भोजन, व्यायाम और अन्य प्राकृतिक विधियों का व्यवहार कर रोगों को दूर करते थे। हिपाक्रेटस के बाद रोम में अलक-जेन्ड्राइन स्कूल के डाक्टरों ने औषधि प्रणाली की उन्नति और वृद्धि पर ही ध्यान दिया।

धीरे धीरे धातु, नशीले और विषैले पदार्थों से औषधियाँ बन कर व्यवहार में लाई जाने लगीं, जिनका सामूहिक नाम 'एलापैथी' (Allopathy) अर्थात् 'विपरीत प्रभाव का' औषधि पड़ा। उन चिकित्सकों ने, जो केवल जड़ी-बूटी की बनी औषधियाँ ही व्यवहार में लेते थे, इन औषधियों का बड़ा विरोध किया, लेकिन उनका बस न चला। कारण यह था कि नई आविष्कृत औषधियाँ स्थूल दृष्टि से देखने में बहुत जल्द लाभ पहुँचाती थीं। लोग उसी से सन्तुष्ट होने लग और सवदा के लिए आरोग्य कर देने वाली विधियाँ का भूलने लगे।

जैसे जैसे समय बीतता गया एलापैथी का साम्राज्य सारे संसार में होने लगा, लेकिन साथ ही साथ इस प्रणाली के विरोधी भी प्रकट होने लगे। इन लोगों में सबसे प्रथम विगत शताब्दी के आरंभ में जर्मनी के एक डाक्टर हैनीमैन (Hahemann) थे। एम० डी० की डिग्री लेकर १८८४ मे वे ड्रेस्डन (Dresden)में डाक्टरी करने लगे। इनकी प्रैक्टिस खूब चली। इन्हीं दिनों जब यह डबलू० कलन (W Cullan) के द्वारा

रचित डाक्टरी की सब से मुख्य पुस्तक 'मेटीरिया मेडिका' का अनुवाद जर्मन भाषा में कर रहे थे तो यह जान कर चकित हो गये कि यदि कुछ आरोग्य मनुष्य को सिनकोना खाय तो उसके शरीर में वही विकार पैदा हो जायगा, जिसके अच्छा करने के लिए यह दवा एक रोगी को दी जाती है। इसी एक बात से उन्हें अपने तथा अपने पेशे वालों पर बड़ी ग्लानि हुई। उन्हें आश्चर्य हुआ कि वे इतनी अधिक मात्रा में इन विषैली औषधियों को मनुष्य के शरीर में भरते हैं। इनके दिल में यह बात अच्छी तरह बैठ गई कि विष की बनी औषधियाँ विनाश कारिणी होती हैं और रोग को अच्छा करने के बदले वे उसको केवल दबाती और शरीर में जहर भर देती हैं। इस प्रकार रोग से कहीं अधिक घातक ये औषधियाँ हो जाती हैं। हैनीमैन के यह विचार प्राकृतिक चिकित्सक के विचार के बिलकुल अनुकूल हैं, लेकिन हैनीमैन यह भी स्थापित करते हैं कि रोग को आराम करने में केवल प्राकृतिक शक्तियाँ ही पर्याप्त नहीं हैं बल्कि औषधियों से भी थोड़ी सहायता लेना आवश्यक है सो दोनों मतों में भेद पड़ जाता है। हैनीमैन ने औषधि देने का एक नया तरीका सोच निकाला। उन्होंने सोचा कि रोगी को थोड़ी मात्रा में औषधि देकर रोग के साथ छेड़-छाड़ करने से रोग दब जाता है। यदि विकार के विरुद्ध औषधि न दे कर उस के योग्य दवा दी जाय तो उसके उभाड़ने में और भी सहायता मिलेगी और तभी से विकार बाहर निकल आयगा। रोग को उभाड़ कर निकालना प्राकृतिक चिकित्सक के मतानुसार भी ठीक है लेकिन भिन्नता इसी में आ जाती है कि एक तो औषधि देकर रोग को उभाड़ने का प्रयत्न करता है और दूसरा बिना किसी प्रकार की औषधि दिए ही। औषधि से रोग उभड़ कर निकल तो जाता है लेकिन फिर भी औषधि का कुछ अंश शरीर में रह ही जाता है। एक बात यह भी है कि यह शरीर ऐसा बना है कि अपनी सफाई और मरम्मत आप ही कर लेता है। इस तरह हम देखते हैं कि दोनों के उद्देश्य एक से हैं पर साधन में अन्तर जरूर है।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण रखने हुए प्राकृतिक चिकित्सा के लब्धप्रतिष्ठ
डाक्टर के० लक्ष्मण शर्मा

एलोपैथी का बोलबाला इंगलैंड आदि देशों में बहुत था, लेकिन अठारहवीं शताब्दी के अंत में वहां के कुछ प्रमुख एलोपैथिक डाक्टर ही इसके घोर विरोधी हो गए। उनमें से एक लिचफील्ड (Lichfield) के डाक्टर सर जॉन फ्लायर (Sir jahn Floyer) थे। उनको यह पता चला कि उपर्युक्त शहर के पास ही किसी झरने के पानी में स्नान कर के कुछ किसानों ने स्वास्थ्य-लाभ किया है। उन्होंने इस बात की खूब जांच की और तब उन्हें जल का प्रभाव विदित हुआ। दूसरे विरोधी लिवरपूल (Liverpool) के डाक्टर जेम्स करी (James Curie) थे। इन्होंने भी १७९७ में एक पुस्तक प्रकाशित की, जिसमें उन्होंने ज्वर और अन्य रोगों में जल के प्रभाव पर लिखा। कुछ साल बाद ही ये दोनों पुस्तकें जर्मन भाषा में अनुवादित होकर छापी गई और वहां उनका बड़ा आदर हुआ। १८०४ में जर्मनी-अन्तर्गत आंसबैक (Ansback) के प्रोफेसर ऑर्टेल (Ortal) ने जल पीकर सब रोगों को दूर करने की विधि पर बड़ा आन्दोलन किया, जिससे उपर्युक्त दोनों अंग्रेजी पुस्तकों से प्रभावित जर्मन जनता का जल के आरोग्यदायक गुण पर विश्वास बढ़ने लगा। यह सब तो था लेकिन तब तक प्राकृतिक चिकित्सा की किसी नियमित प्रणाली की स्थापना न हुई थी।

जर्मनी अन्तगत सिलेशियन पहाड़ के एक गांव में प्रेसनीज (Vincenz Preissnitz) नामक एक व्यक्ति का जन्म १५५२ ई० में एक साधारण किसान के घर हुआ। लड़कपन में उसे शिक्षा न दी जा सकी। किसान-बालकों की तरह वह अपने गांव के आस-पास के पहाड़ी जंगलों में दिन में गाय चराया करता था। एक दिन, जब वह केवल आठ ही साल का था, अपनी गायों को चराते हुए उसने देखा कि एक हिरनी बुरी तरह लँगड़ाती हुई एक झरने के पास पहुँची और करीब आध घंटे पानी में खड़ी होने के बाद पानी से निकल कर जिधर से आई थी उधर ही चली गई। इस घटना से तीव्र बुद्धि बालक प्रेसनीज के दिल में यह जानने की उत्कंठा हुई कि वह जख्मी हिरनी पानी में इतनी

देर तक क्यों खड़ी रही? उसने सोचा कि दूसरे दिन मैं देखना चाहिए कि हिरनी फिर आती है या नहीं। ऐसा सोचकर दूसरे दिन वह उसी जगह बहुत पहले से ही छिप कर उसके आने की प्रतीक्षा करने लगा। हिरनी करीब-करीब उसी समय पर फिर आई, जिस समय कि पिछले दिन आई थी, और इस बार आध घंटे से कुछ अधिक देर तक पानी में ठहरने के बाद फिर चली गई। इसी तरह रोज तीन सप्ताह तक नियमित समय पर हरनी नित आती रही और प्रेसनीज बहुत ही ध्यानपूर्वक उसे देखता रहा। प्रेसनीज ने यह भी देखा कि हिरनी का लँगड़ाना धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। फिर इस अवधि के अन्त में पानी से निकल कर हिरनी जो चारों पैरों से उछलती हुई भागी तो फिर न आई।

इस एक महत्वपूर्ण घटना के द्वारा आठ साल के बालक प्रेसनीज के हृदय पर पानी का प्रभाव अंकित हो गया। जब प्रेसनीज सोलह साल का था तो एक दिन उसके जंगल में लकड़ी काट कर लौटते समय बड़ गिरने लगी। उस आंधी-बौछार में लुढ़कता हुआ वह पर के पास आ पहुँचा और जब आंधी शांत हुई तो वह एक उमड़े हुए पत्थर के नीचे दबा हुआ पाया गया। जब वह निकाला गया तो उसकी चार पसलियाँ बुरी तरह कुचली पाई गईं। वे उसके शरीर में धुस गई थीं। जब वह पत्थर के नीचे दबा पड़ा था तो उसी समय उसके स्मृति पट में हिरन वाली घटना आई और उसने सोचा कि यदि मैं इसके नीचे से जीवित निकाल लिया गया तो मैं भी उसी तरह अपनी चिकित्सा करके देखूँगा कि क्या प्रभाव होता है। पत्थर के नीचे से निकाले जाने पर सचमुच उसने अपनी चिकित्सा उसी तरह की। हिरनी की तरह पानी में खड़ा रहकर उसको जल का प्रभाव न करना था क्योंकि उसकी पसलियाँ टूटी थीं। सूता करके की गद्दी पानी में भिगोकर वह अपने घायल अंग पर रखने लगा और जब गद्दी सूख जाती तो फिर उस पानी में भिगो कर

रख देता। इस तरह दिन बीतते गए, उसकी पीड़ा कम होती गई उसके विकृत भाग में शक्ति आने लगी और वह बिलकुल स्वस्थ हो गया।

इस तरह सभ्य जीवन से बहुत दूर रहने वाला इस अनुभवशील, धीन, अपढ़ पहाड़ी किसान-बालक ने अपनी विलक्षण तीव्र बुद्धि से जल चिकित्सा-प्रणाली की स्थापना की, जो आज सभ्य संसार में अपूर्व चिकित्सा का एक अंग समझी जा रही है। (कुछ लोगों के मत के अनुसार प्रेसनीज १८०१ में पैदा हुआ और १८२६ में उसने अपने घर पर ही जल-चिकित्सा करना शुरू किया।) इसकी नई विधि से अच्छा होने के लिए बहुत संख्या में दूर-दूर से रोगी इसके घर आते और अच्छे होकर इसके यश की वृद्धि करते। पुराने विचार के लोग, विशेष कर डाक्टरों ने, इस विधि का घोर विरोध किया और इस बेचारे पर सब तरह का दोषारोपण कर इसे कैद की सजा तक दिलवाने की सोची। मामला बहुत बढ़ा, लेकिन इन सब फसादों में इसी की जीत हुई। इस जीत से इसका गौरव और भी बढ़ गया।

प्रेसनीज की चिकित्सा प्रणाली में प्रधानता जल के व्यवहार और भोजन की सादगी की थी। इससे उस प्रणाली को आधुनिक प्राकृतिक-चिकित्सा का एक अंग अर्थात् 'जल-चिकित्सा' कहना चाहिए। लेकिन इसके बाद विभिन्न सज्जनों-द्वारा प्राकृतिक चिकित्सा के अलावा और भी बातें इसमें जोड़ी गई, जैसे उपवास, एनीमा का व्यवहार, भोजन का वैज्ञानिक ज्ञान, प्रकाश, धूप, हवा, भाप और बिजली का प्रयोग, तरह तरह के लेप, स्नान और पट्टियां (packs) आराम (relaxation), व्यायाम इत्यादि। इन बातों के कारण अब प्राकृतिक-चिकित्सा प्रणाली की सम्पूर्णता में कमी न रह गई। दुर्घटना इत्यादि में कभी-कभी सर्जरी (चीरा) से सहायता लेनी होती है, लेकिन इसका अधिकतर काम मिट्टी भाप, उपवास आदि से निकल जाता है। यदि प्राकृतिक नियमों के अनुसार रहा जाय तो फोड़े होवें ही नहीं और सर्जरी की आवश्यकता ही न पड़े।

घड़ियाँ गिनने लगा। लेकिन इसी समय जल-चिकित्सा के द्वारा फ़ि[illegible] अच्छा होने की भनक इसके कानों में पड़ी। उस समय प्रेसनीज़, श्रोथ, नीप आदि के बहुत से अनुयायी हो गए थे, जिनमें मेल्ज़र (Meltzer) थियोडोर हैन (Theodor Hann), रसे (Rausse) आदि बहुत नाम पा रहे थे। कूने सीधा इनके आश्रम में आया और इनके कहे अनुसार अपनी चिकित्सा करने लगा। धीरे धीरे इसकी पीड़ा शान्त होने लगी। इसी समय उसका भाई भी बहुत बुरी तरह बीमार हो गया। उपर्युक्त प्राकृतिक चिकित्सकों से थोड़ा छुटकारा पाकर लुई कूने ने अपनी बुद्धि से कई प्रकार के स्नानों से रोग अच्छा करने की विधि खोज निकाली और प्राकृतिक चिकित्सा के एक अंग अर्थात् जल-चिकित्सा को विशेष सरल और उपयोगी बनाने के साथ साथ उसने अपने और अपने भाई के रोगों को भी अच्छा कर लिया। अपने और अपने भाई के स्वास्थ्य-लाभ का प्रभाव कूने के ऊपर इतना अधिक हुआ कि उसने इस विषय का खूब अध्ययन किया और दूसरों पर भी प्रयोग किया। जब वह इसमें पूर्णरूप से सिद्धहस्त हो गया तो अपने ही नगर में सन् १८८३ में अपना चिकित्सालय स्थापित किया। कूने का सिद्धान्त था Unity of all diseases अर्थात् 'सब रोगों की जड़ एक ही है'—शरीरमें विजातीय द्रव्य का इकट्ठा होना—और यह भी केवल आन्तरिक सफाई से ही रोग अच्छा हो जाता है। विविध प्रकार के स्नानों का आविष्कार करते हुए इसने मिताहार भोजन और शाकाहार पर ज़ोर दिया और चेहरे की बनावट (facial expression) देख कर ही रोग पहचान लेने के तरीके को भी ढूंढ निकाला। इसने अपने सिद्धान्त प्रयोग और आविष्कार को 'दि न्यू साइन्स आफ़ हीलिंग' (The New Science of Healing) और 'दि साइन्स आफ़ फेशियल एक्सप्रेशन' (The Science of Facial Expression) नामक दो पुस्तकों में खूब अच्छा वर्णन किया है।

जर्मनी के ही एलोपैथी के प्रसिद्ध डाक्टर और बाद में प्राकृतिक चिकित्सक हेनरिक लहमन (Henrick Lahmann) ने स्नान और वायु,

वैज्ञानिक-भोजन और स्वास्थ्य-वर्द्धक कपड़े पहनने पर विशेष जोर दिया। इसी देश के एडोल्फ जुस्ट (Adolf Just) नामक एक और साधारण मनुष्य ने प्राकृतिक-चिकित्सा को अपने आविष्कारों से सम्पूर्णता-प्राप्त करने में सहायता दी। जुस्ट प्रकाश तथा वायु-सेवन का प्रबल पक्षपाती था। जुस्ट की यह धारणा है कि यदि प्रौढ़ मनुष्य भी प्राकृतिक जीवन व्यतीत करें तो उसके सारे शरीर में एक नई शक्ति उत्पन्न होकर उसे फिर से जवान बना (rejuvenate) देगी। उसकी पुस्तक 'रिटर्न टू नेचर' (Return to Nature) मशहूर है। जर्मनी का ही रहने वाला प्रोफेसर आर्नोल्ड एहरेट (Arnold Ehret) ने अमेरिका में प्राकृतिक चिकित्सा का अच्छा प्रचार किया। उसने फलाहार और उपवास पर जोर दिया।

अमेरिका के डाक्टर हेनरी लिंडल्हार, एम० डी० (Henry Lindlhar) ने भी प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार खूब किया। यह एक बड़े विख्यात एलोपैथिक डाक्टर थे, पर पीछे प्राकृतिक चिकित्सा के अनुयायी हुए। इनका कहना है कि यदि नया रोग दवा इंजेक्शन आदि से शरीर में दबकर छिप रहा और विकार शरीर से नहीं निकला तो वही जीर्ण रोग के रूप में प्रगट होता है। उसी देश के डाक्टर डिवी (Dewey) ने भोजन और उपवास पर बहुत सी नई बातें खोज निकालीं जिनसे प्राकृतिक चिकित्सा और भी सम्पूर्ण हो सकी।

इसी तरह बहुत से एलोपैथिक डाक्टर और अन्य सज्जनगण हुए, जिन्होंने इस चिकित्सा-विधि की वृद्धि और प्रचार में बड़ी सहायता दी। अमेरिका के डाक्टर केलेब जेक्सन (Caleb Jackson) डाक्टर केल्लोग (Kellogg) डाक्टर टिलडन (Tilden) जर्मनी के डाक्टर श्वेनिंगर (Schweninger) और इङ्गलैण्ड के दो प्रसिद्ध डाक्टर सर विलियम ओस्लर (Sir William Osler) और विलियम आर्बथनॉट लेन (Sir William Arbuthnot Lane), जो अभी १९४४ में, जीवित हैं), के नाम इन प्रचारकों में उल्लेखनीय हैं।